दूरवर्ती–शिक्षा

MAE-205

Self Learning Material

Directorate of Distance Education

SWAMI VIVEKANAND SUBHARTI UNIVERSITY

MEERUT-250005

UTTAR PRADESH

SIM Module Developed by : R.K. Tiwari

Reviewed by :

- B.C. Dubey

Assessed by:

Study Material Assessment Committee, as per the SVSU ordinance No. VI (2).

Copyright © Laxmi Publications Pvt Ltd.

No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior permission from the publisher.

Information contained in this book has been published by Laxmi Publications Pvt Ltd and has been obtained by its authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the publisher and its author shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specially disclaim and implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by : Laxmi Publications Pvt Ltd., 113, Golden House, Daryaganj, New Delhi-110 002.
Tel: 43532500, E-mail: info@laxmipublications.com

DEM-2385-128-DOORVARTI SHIK MAE205
C- 01038/11/18
Typeset at: M2W Media, Delhi
Printed at : Ajit Printing Press, Delhi
Edition : 2019

विषय-सूची
CONTENTS

इकाई–1 दूरवर्ती–शिक्षा का अर्थ 1

इकाई–2 दूरवर्ती–शिक्षा का विकास 47

इकाई–3 दूरवर्ती–शिक्षा में हस्तक्षेप रणनीतियाँ 97

इकाई–4 दूरवर्ती–शिक्षा के माध्यम से शिक्षा 171

SYLLABUS

दूरवर्ती–शिक्षा

इकाई-1 दूरवर्ती–शिक्षा का अर्थ

- शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषा
- शिक्षा एक विकास की प्रक्रिया
- शिक्षा प्रक्रिया की विशेषताएँ
- शिक्षा–एक अध्यापक प्रशिक्षण
- शिक्षा–एक पाठ्यवस्तु
- शिक्षा सामाजिक परिवर्तन एवं नियन्त्रण का एक यंत्र
- शिक्षा सामाजीकरण की एक क्रिया
- शिक्षा एक छलनी
- शिक्षा एक निवेश
- दूरवर्ती–शिक्षा में अनुशासन का अर्थ
- दूरवर्ती–शिक्षा का अर्थ
- दूरवर्ती–शिक्षा की परिभाषाएँ
- दूरगामी–शिक्षा की विशेषताएँ
- दूरवर्ती–शिक्षा के लक्षण
- दूरवर्ती–शिक्षा के महत्व
- दूरवर्ती–शिक्षा और पारम्परिक शिक्षा
- दूरवर्ती–शिक्षा की अवधारणाएँ
- दूरवर्ती–शिक्षा के मूल तत्व
- दूरवर्ती–शिक्षा के उद्देश्य
- दूरवर्ती–शिक्षा के कार्य
- दूरवर्ती–शिक्षा का क्षेत्र
- दूरवर्ती–शिक्षा के सिद्धान्त के आधार
- दूरवर्ती–शिक्षण का सिद्धान्त
- पूर्वानुमानित शिक्षण सिद्धान्त
- दूरवर्ती–शिक्षण का सम्प्रेषण सिद्धान्त
- दूरवर्ती–शिक्षा में आधुनिक प्रवृत्तियाँ
- स्वतंत्र अध्ययन की विशेषताएँ
- दूरवर्ती–शिक्षण प्रणाली का स्वरूप
- आवश्यकता

इकाई-2 दूरवर्ती–शिक्षा का विकास

- दूरवर्ती–शिक्षा का विकास

- भारत में दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली
- मुक्त विश्वविद्यालय और दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय
- भारत में मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना

इकाई-3 दूरवर्ती–शिक्षा में हस्तक्षेप रणनीतियाँ

- समस्याएं और जरूरतें
- दूरवर्ती शिक्षा में सूचना और संचार
- डिजाइनिंग और स्व–निर्देश सामग्री को तैयार करना

इकाई-4 दूरवर्ती–शिक्षा के माध्यम से शिक्षा

- दूरवर्ती–शिक्षा प्रबन्ध और छात्रों की सहायता सेवा
- दूरवर्ती–शिक्षा के लिए कार्यक्रम
- दूरवर्ती–शिक्षा में अध्याय का नियोजन

इकाई-1

दूरवर्ती-शिक्षा का अर्थ

पाठ-संरचना

- शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषा
- शिक्षा एक विकास की प्रक्रिया
- शिक्षा प्रक्रिया की विशेषताएँ
- शिक्षा एक अध्यापक प्रशिक्षण
- शिक्षा एक पाठ्यवस्तु
- शिक्षा सामाजिक परिवर्तन एवं नियन्त्रण का एक यन्त्र
- शिक्षा सामाजीकरण की एक प्रक्रिया
- शिक्षा एक छलनी
- शिक्षा एक निवेश
- दूरवर्ती-शिक्षा में अनुशासन का अर्थ
- दूरवर्ती-शिक्षा' का अर्थ
- दूरवर्ती-शिक्षा की परिभाषाय
- दूरगामी-शिक्षा की विशेषतायें
- दूरवर्ती-शिक्षा के लक्षण
- दूरवर्ती-शिक्षा के महत्व
- दूरवर्ती-शिक्षा और पारम्परिक शिक्षा
- दूरवर्ती-शिक्षा की अवधारणायें
- दूरवर्ती-शिक्ष के मूल तत्व
- दूरवर्ती-शिक्षा के उद्देश्य
- दूरवर्ती-शिक्षा के कार्य
- दूरवर्ती-शिक्षा का क्षेत्र
- दूरवर्ती-शिक्षा के शिक्षा के सिद्धान्त के आधार
- दूरवर्ती-शिक्षण का सिद्धान्त
- पूर्वानूमानित शिक्षण सिद्धान्त
- दूरवती-शिक्षण का सम्प्रेषण सिद्धान्त
- दूरवर्ती-शिक्षा में आधुनिक प्रवृत्तियाँ
- स्वतंत्र अध्ययन की विशेषताएँ
- दूरवर्ती-शिक्षण प्रणाली का स्वरूप
- आवश्यकता

नोट

उद्देश्य एवं परिचय

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप निम्नलिखित निष्कर्षों की व्याख्या कर पाने में समर्थ हो सकेंगे–

- दूरवर्ती शिक्षा का अर्थ एवं प्रकृति तथा शिक्षा का अर्थ
- दूरवर्ती शिक्षा की सीमा और दूसरे दृष्टिकोण
- दूरवर्ती शिक्षा के लक्षण, महत्व, उद्देश्य, कार्य, आदि

शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Education)

शिक्षा शब्द सांस्कृतिक 'शिक्ष्' धातु से बना है जिसका अर्थ है सीखना और सिखाना। शिक्षण शब्द अब शिक्षा के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा है, किनतु अपने मूल अर्थ में यह सीखना और सिखाना और शिक्षण दोनों हैं। शिक्षा शब्द में भी दोनों भाव निहित हैं। सीखने के अर्थ में प्राय: शिक्षा प्राप्त करना और सीखने के अर्थ में शिक्षा प्रदान करना है।

हिन्दी में एक अन्य प्रचलित शब्द है विद्या! विद्या संस्कृत भाषा का शब्द है और यह 'बिद्' धातु से निकला है। विद् धातु के अनेक अर्थ हैं। ज्ञान के अर्थ में वेत्ति, वेद आदि शब्द इसी से बनते हैं, सत्ता के अर्थ में विद्यते रूप चलता है और विद्यमान आदि शब्द बनते हैं, लाभ के अर्थ में विन्दति-ते रूप सम्पन्न होता है, विचारण या सोचने-विचारने के अर्थ में विडक्ते रूप चलता है और चेतना, अनुभूति, आख्यान, कथन, निवास के अर्थ में वेद्यते रूप सम्पन्न होता है। इस प्रकार विद् के कम से कम पाँच अर्थ हैं-ज्ञान, वास्तविकता, उपलब्धि, विचारण और श्रेष्ठ भावनाएँ। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीनकाल में विद्या शब्द इन पाँचों अर्थों में प्रयुक्त होता था और पाँचों का हमारे जीवन में अत्यधिक महत्व है ही।

शिक्षा का अंग्रेजी प्रयोग 'एजुकेशन' लेटिन भाषा में एजुकेटम' या एजुकेयर' से निकला है। पहले इसकी व्युत्पत्ति एजुकेटम से ही मानी जाती थी। एजुकेटम में दो शब्द हैं 'ए' और 'डूको' 'ए' का अर्थ है अन्दर से और 'डूको' का अर्थ है बाहर लाना। इस प्रकार पहली व्युत्पत्ति के अनुसार इसका अंर्थ हुआ 'अन्दर' से बाहर लाना, किन्तु नई विचारधारा के अनुसार यह 'एजुकेयर' से निकला है जिसका अर्थ है पालन-पोषण करना, संवर्द्धन करना या पथ-प्रदर्शन करनां दूसरी व्युत्पत्ति अब शिक्षाशास्त्र में धिक मान्य है।

हिन्दी और अंग्रेजी दोनों व्युत्पत्तियों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक की जन्मजात शक्तियों का विकास किया जाता है।

'शिक्षा' शब्द अधिक व्यापक है। यह तो शाब्दिक अर्थ दिया है, परन्तु इस शब्द का उपयोग अनेक अर्थों में किया जाता है। शिक्षा और जीवन का निकट का सम्बन्ध है। 'शिक्षा' शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया जाता है, उनमें से कुछ प्रमुख कार्यों का उल्लेख यहाँ किया गया है-

1. शिक्षा एक विंकास की प्रक्रिया
   (Education as a Process of Development)
2. शिक्षा एक अध्यापक-प्रशिक्षण
   (Education as Teachers-Training)

नोट

3. शिक्षा एक पाठ्वस्तु (Education as Content and Subject)
4. शिक्षा एक सामाजिक परिवर्तन एवं नियन्त्रण का यन्त्र है। (Education as an instrument of Social change and Social control)
5. शिक्षा सामाजीकरण की सकारात्मक प्रक्रिया है (Education as a Creature and Createor of Society)
6. शिक्षा एक छलनी है (Education as a Filtering Process) तथा
7. शिक्षा एक विनियोग है (Education as an Investment)।

इन सभी अर्थों का संक्षिप्त विवेचन अधोलिखत पंक्तियों में किया गया है। शोध की दृष्टि से तीसरा अर्थ अधिक महत्वपूर्ण है। यहाँ अनुशासन का अर्थ एक स्वतन्त्र-अध्ययन (अध्ययन का विषय) का क्षेत्र माना गया है-

शिक्षा एक विकास की प्रक्रिया (Education As a Process of Development)

अतीत काल से शिक्षा को एक विकास की प्रक्रिया के रूप में प्रयुक्त किया जा रहा है। ज्ञान प्रदान करने वाली सभी संस्थाओं को शिक्षा संस्थायें कहते हैं, चाहे यहाँ शिक्षाशास्त्र विषय पढ़ाया जाता हो अथवा न पढ़ाया जाता हो। महान् शिक्षाशात्रियों तथा दार्शनिकों ने शिक्षा की जो परिभाषयें दी हैं उनमें शिक्षा को विकास की प्रक्रिया ही माना गया है। यहाँ पर कुछ परिभाषयें दी हैं जिनसे यह अधिक स्पष्ट हो जाता है।

कुछ लोग शिक्षा की परिभाषा करते समय ज्ञान को प्रमुख स्थान देते हैं और उनकी समझ में शिक्षा देने और ज्ञान देने में कोई अन्तर नहीहं हैं। यह धारणा भ्रममूलक है क्योंकि शिक्षा एक प्रक्रिया है और ज्ञान इस प्रक्रिया द्वारा उपलब्धि। व्यावहारिक दृष्टि से लोग ज्ञान एवं सूचना में बहुत अन्तर करते हैं। कभी-कभी लोग कुछ कौशल-प्राप्त करने को ही ज्ञान कह बैठते हैं। ज्ञान के स्वरूप पर मतभोद हैं। स्पष्ट है कि शिक्षा की परिभाषा ज्ञान देने तक सीमित नहीं की जा सकती। शिक्षा जब तक जीवन के मूल्यों, आदर्शों एवंमान्यताओं का परिचय नहीं देती तब तक वह 'शिक्षा' नहीं कही जा सकती। इसी प्रकार का विचार डॉ॰ सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने व्यक्त किया है। वे लिखते हैं-

"शिक्षा सूचना प्रदान करने एवं कौशलों का प्रशिक्षण देने तक सीमित नहीं है। इसे शिक्षित व्यक्ति को मूल्यों का विचार भी प्रदान करना है। वैज्ञानिकएवं तकनीकी व्यक्ति भी नागरिक है। अतः जिस समुदाय में वे रहेते हैं उस समुदाय के प्रति उनका भी सामाजिक उत्तरदायित्व है।"

"Education is not limited to the imparting of information of the trainin in skills. It has to give the educated a proper sens of values. Scientiests and technologists are also citiqens and so hwve a social responsibility to the community in which they live." — *-Dr. S. RadhaKrishnan*

आज शिक्षा-प्रणाली इतनी दूषित हो गई है कि इसमें मूल्यों का स्थान नहीं रहा है। भारतीय शिक्षा के इसी दोष की ओर संकेत करते हुए सन् 1952 में कानपुर में हुए अखिल भारतीय

कांग्रेस के 40वें अधिवेशन में अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए सरोजिनी नायडू ने कहा था-

नोट

"हमारी शिक्षा ने हमें उपयुक्त मानसिक मूल्यों एवं पृष्ठभूमि से रहित कर दिया है तथा आत्म-प्रकाशन की अधिकारपूर्ण शैली को खोजने में जो सच्ची लगन एवं मौलिकता की अपेक्षा है उससे भी वंचित कर दिया है।"

*"Our education has fobbed us of our proper mental values and prespectives and diprived us of all tru initiative and originally in seeking authentic modes of self-expression."—**Sarojini Naidu***

सरोजिनी रायडू की उपयुक्त वाणी में 'शैली' (मोड) शब्द ध्यान देने योग्य है। इसी को दूसरे शब्दों में प्रसिद्ध हाइटहेड ने भी कहा है कि हाइटहेड के अनुसार-शिक्षा द्वारा शैली (स्टाइल) का निर्माण करना चाहिए। यह शैली क्या है? इस प्रश्न का उत्तर हाइटहेड के निम्नलिखित विचार से स्पष्ट हो जायेगा। ये लिखते हैं-

"अपने सर्वोत्तम अर्थ में शैली ही एक शिक्षित मस्तिक की अन्तिम प्राप्ति है, यह सर्वाधिक उपयोगी भी है। यह पूर्वदृष्टि लक्ष्य की सरल, सार्थक एवं प्रत्यक्ष-प्राप्ति की प्रशंसा पर आधारित सौन्दर्यानुभूति है। कला में शैली, विज्ञान में शैली तथा तर्क में शैली-व्यर्थता से घृणा करती है। (अर्थात शक्ति के अपव्यय से हमें बचाती है) शैली मन की चरम नैतिकता है। शैली से आप अपने लक्ष्य की ओर केवल लक्ष्य को ही प्राप्त करते हैं।"

*"Style in its finest sense is the last acquirement of the educated mind, it is also the most useful. It is an aesthetic sense, based on admiration for the direct attainment of a foreseen end, simply and without waste. Style in art, style in literature, style in science, style in logic hates waste. Style is the ultimate morality of mind. With style you attain your end and noting but your end."—**A.N. Whitehead:Aims of Education***

प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो के अनुसार-शिक्षा उस प्रशिक्षण को कहेंगे जो बच्चों में उचित आदत उत्पन्न करके सद्गुणों का विकास कर सके। यह कार्य विवेक से होना चहिए। नैतिक आदतों का निर्माण यान्त्रिक नहीं हो सकता। अत: प्लेटो कहता है-

"शिक्षा द्वारा युवक उस उचित तर्क की ओर प्रेरित होते हैं तो नियमानुमोदित है तथा जो वयोवृद्ध एवं उत्तम व्यक्तियों के अनुभवों द्वारा सच्चे अर्थ में समर्पित हैं।"

*"Education is the constraining and directing of youth towards the right reason which the liaffirms and which the experience of the eldest and best has agreed to be truely right."—**Plato***

आरस्तु के अनुसार शिक्षा एक व्यावहारिक एवं सामाजिक कला है। यह राजनीति का अंग है। अरस्तू के अनुसार शिक्षा की व्यवस्था राज्य द्वारा होनी चाहिए। अरस्तु यहाँ तक कहते हैं कि-"सब लोगों का रुचिकर वस्तुओं में प्रशिक्षण सभी के लिए एक ही प्रकार का होना चाहिए।"

*"The training in the things which are the common interest should be the same for all."—**Aristotle.***

वर्तमान काल में शिक्षा के क्षेत्र में जॉन डीवी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। डीवी के विषय में हम आगे विस्तार से अध्ययन करेंगे। यहाँ पर इतना ही कह देना उपयुक्त है कि डीवी के अनुसार शिक्षा और जीवन में कोई अन्तर नहीं है। वह शिक्षा को जीवन की तैयारी के

रूप में स्वीकार नहीं करते हैं। इसलिए जॉन डीवी शैक्षिक उद्देश्यों को शिक्षा-प्रक्रिया में ही बताते हैं। एक अन्य स्थान पर वे कहते हैं कि-शिक्षा को अनुभव की सतत् पुनर्रचना समझना चाहिए और शिक्षा-प्रक्रिया तथा शैक्षिक उद्देश्य को एक ही समझना चाहिए।

नोट

- *"Education is a process of living.*
- *"Education is preparation for future living."*
- *"The Educational process has no end beyond itself, it is its own end ."— Deway: Democracy and Education*
- *"Education must be conceived as a continuing reconstruction of experience; the process and the goal of education are on and the same thing."—**Deway***

श्रीमद्भागवद्गीता के अध्ययन द्वारा यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि गीता निष्काम कर्म की शिक्षा देती है और उसके अनुसार आत्म-ज्ञान एवं विराट पुरुष का ज्ञान प्राप्त करना ही शिक्षा है।

बोद्ध दर्शन के अनुसार भी केवल विद्वान बनने की प्रक्रिया शिक्षा नहीं कही जा सकती। इस सन्दर्भ में नवरत्नम् कहती है कि बुद्ध का यह सन्देश शिक्षा के लिए बहुत सार्थक है कि व्यक्ति को सत्यान्वेषण करना चाहिए और नैतिक गुणों को व्यवहार में उतारना चाहिए।

- *"Education according to the Buddhist way of life, therefore, should cencern itself with selective cultivation. The man who is liberated is one who is no more becoming. Merely to have become a scholar or a mendicant is not the final goal. It may be a tremendous achievement for man to have probed into earth's oute space, but it is not the be-all and end-all of his existence. Buddha's message that man's significant efforts should be directed to the pursuit of truth and to the practice of moral vitues has tremendous significance to education today."—Ratan Navaratnam. New Frontiers in East-West Philosophies of Education.*

1. मानव द्वारा प्रकृति, अपने साथियों व विश्व की चरम सत्ता के साथ सामंजस्य स्थापित करना ही शिक्षा है।—**एच्एचन्हॉर्न**
2. शिक्षा से मेरा अभिप्राय उस प्रशिक्षण से है जो अच्छी आदतों के द्वारा बच्चों में अच्छी नैतिकता का विकास करती है।—**प्लेटो**
3. स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिक की रचना ही शिक्षा है।—**अरस्तू**
4. व्यक्ति की उस पूर्णता का विकास, जिस पर वह पहुँच सकता है शिक्षा कही जाती है।—**काण्ट**
5. व्यक्ति के अन्दर निहित पूर्णता का उद्घाटन ही शिक्षा है। —**स्वामी विवेकानन्द**
6. शिक्षा से मेरा तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जो बालक एवं मनुष्य के शरीर, मन आत्मा के सर्वोत्कृष्ट रूपों को प्रस्फुटित कर दे।—**महात्मा गांधी**

फ्रोबेल-"शिक्षा एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक की आन्तरिक शक्तियों को बाहर लाया जाता है।"

नोट

- *"Education is a process by which a child makes his internal, an external."—**Forbel***

गांधी-"शिक्षा से मेरा अर्थ उस प्रक्रिया से है जो बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा के रूपों का सर्वांगीण विकास करें।"

- *"By education I mean all round drjing our the best in child and man-body, mind and soul."— **M.K. Gandhi***

इतना ही नहीं शिक्षा प्रक्रिया के रूपों का भी उल्लेख किया गया है। शिक्षा प्रक्रिया के निम्न रूप मानते हैं-

1. शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है (Education is a dynamic process),
2. शिक्षा एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है (Education is continuous process),
3. शिक्षा एक त्रि-पदी प्रक्रिया है (Education is a purposeful process)A

इस सन्दर्भ में शिक्षा एक ज्ञान प्रदान करने वाली विकासात्मक प्रक्रिया मानी जाती है। 'शिक्षा' प्रक्रिया के तीन अंग होते हैं-शिक्षण, प्रशिक्षण तथा अनुदेशन।

1. **शिक्षण (Teaching):** शिक्षा की वह क्रिया है जो कक्षगत शिक्षण एवं छात्र के मध्य अन्त:क्रिया होती है जिससे दोनों का विकास होता है।
2. **प्रशिक्षण (Trainigng):** प्रशिक्षण शिक्षा की दूसरी क्रिया है जिससे शिक्षकों को प्रशिक्षण देकर अध्यापन के लिए तैयार किया जाता है।
3. **अनुदेशन (Instruction):** यह पाठ्य सामग्री है जिससे शिक्षक निर्माण करता है और छात्र उसका अध्ययन करता है।

शिक्षा प्रक्रिया की विशेषताएँ (Characteristics of process of Education)

शिक्षा की प्रक्रिया की अपनी कुछ विशेषताएँ हैं जिनका विहंगावलोकन कर लेने पद इसके अर्थ को भली प्रकार समझा जा सकता है। ये विशेषताएँ अग्रलिखित हैं-

1. शिक्षा एक त्रिभुजी प्रक्रिया है। एडम ने इसे द्विभुजी प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया था, किन्तु जॉन डीवी के अनुसार यह त्रिभुजी प्रक्रिया है इसके तीन ध्रुव हैं-(अ) अध्यापक (ब) शिक्षार्थी, और (स) पाठ्क्रम।
2. शिक्षा एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है। यह जन्म से मृत्युपर्यान्त अबाध गति से चलती रहती है।
3. शिक्षा संकुचित और व्यापक दोनों रूपों में होती हैं संकुचित रूप में यह कक्षा के अन्दर सीखी जाने वाली प्रक्रिया है तो व्यापक रूप में यह यात्रा, भ्रमण, बारात, कक्षा विद्यालय, क्रीडांगन आदि कभी स्थानों पर प्राप्त होने वाला अनुभव है। व्यापक अर्थ में यह जीवन के साथ चलने वाली प्रक्रिया है।
4. यह एक गतिशील प्रक्रिया है। स्थिरता की स्थिति में शिक्षा की प्रक्रिया समाप्त हो जाती है। जीवन में गति है अत: जीवन-भर चलती है मृत्यु अगति का द्योतक है तो शिक्षा की समाप्ति का भी द्योतक है।

5. यह व्यक्ति के वैयक्तिक विकास की प्रक्रिया है।

नोट

शिक्षा एक अध्यापक प्रशिक्षण (Education as Teacher Training)

अध्यापक को प्रशिक्षण देने वाली संस्थाओं 'शिक्षा-महाविद्यालय' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इन प्रशिक्षण संस्थाओं के शिक्षण में सिद्धान्त तथा शिक्षण के अभ्यास पर अधिक बल दिया जाता है। इन विद्यालयों का मुख्य उद्देश्य प्रभावशाली शिक्षक तैयार करना है। बी०एड० तथा एम०एड० कक्षाओं की व्यवस्था करने वाली संस्थाओं में शिक्षा-विभाग पृथक् रूप में होते हैं। इन शिक्षा विभागों का भी उद्देश्य शिक्षकों को प्रशिक्षण देना होता है। इस सन्दर्भ में शिक्षा शब्द को शिक्षक-प्रशिक्षण अथवा अध्यापक-शिक्षा के अर्थ में प्रयोग किया जाता है।

शिक्षा एक पाठ्यवस्तु (Education as Teacher Training)

'शिक्षा' शब्द का प्रयोग, इण्टर, बी०ए० तथा एम०ए० के पाठ्यक्रमों को एक पृथक् विषय के रूप में भी किया जाता है। एम० ए० की उपाधि अन्य विषयों की भाँति 'शिक्षाशास्त्र' में भी दी जाती है। शिक्षाशास्त्र को बी०ए० तथा इण्टर में भी पृथक् विषय के रूप में पढ़ाया जाता है।

शिक्षा और जीवन में कोई अन्तर नहीं है, अत: जीवन की सभी समस्याएँ बन जाती हैं। मानव जाति ने अब तक जो भी अनुभव संचित किये हैं, वे इतने अधिक हैं कि किसी व्यक्ति के लिए सम्पूर्ण अनुभवों पर समान क्षमता से अधिकार प्राप्त करना असम्भव-सा है, अत: अनुभवों को खण्डों में बाँट दिया गया है। समस्त संचित ज्ञान-राशि को कई भागों में विभक्त कर दिया गया है। इन भागों को 'विषय' (Subject) कहा जाता है। वस्तुत: अनेक विषयों का अस्तित्व नहीं है किन्तु सुविधा के लिए ज्ञान को कई खण्डों में बाँटकर प्राप्त किया जाता है। कुछ व्यक्ति ज्ञान की किसी शाखा का अध्ययन करते है। तो कुछ अन्य व्यक्ति दूसरी शाखाओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार विशेष योग्यता सम्भव होती है तथा संचित ज्ञान-राशि के कुछ अंश को प्राप्त काके उसी अंश की समृद्धि भी सरलता से की जा सकती है। इससे ज्ञान-कोष के विकास में सहायता मिल जाती है, अन्यथा ज्ञान की वर्तमान मात्रा में वृद्धि नहीं हो सकती। इस दृष्टि से शिक्षा भी ज्ञान की एक शाखा के रूप में विकसित हो रही है जिससे इस बात पर विचार किया जाता है कि अब तक के प्राप्त ज्ञान को नई पीढ़ी को किस प्रकार प्रदान किया जाये।

जहाँ तक शिक्षा की विषय-वस्तु का प्रश्न है, सम्पूर्ण जीवन ही शिक्षा की विषय-सामग्री हे। जैसा कि ह्वाइटहेड ने लिचा है-

"शिक्षा के लिए केवल एक ही विषय-वस्तु है वह है-सभी पक्षों में प्रस्फुटित जीवन।"

- "There is only one subject-matter for education, and that is life in all its manifestations."— ***-A.N. Whitehead***

शिक्षा विषय की पाठ्यवस्तु के दो पक्ष होते हैं-

1. सैद्धान्तिक पक्ष (Theoritical Aspect)।
2. व्यावहारिक पक्ष (Practical Aspect)।

नोट

सिद्धान्त में हम यह अध्ययन करते हैं कि शिक्षा, कब, कैसे और क्यों दी जाए तथा प्रयोग में हम उन सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप प्रदान करते हैं।

कुछ समय पहले शिक्षा केवल शिक्षण (टीचिंग) तक सीमित थी और अध्यापक प्रशिक्षण पर विशेष बल दिया जाता था। तब, यह सोचा जाता था कि अध्यापक को प्रशिक्षित किया जा सकता है और उसकी शिक्षण-विधियों में पर्याप्त अन्तर केवल कुछ शिक्षण-नियमों को बता देने से आ जाता है। अब यह धारणा भ्रमात्मक समझी जाती है और यह सोचा जाता है कि अध्यापक को प्रशिक्षित (ट्रेण्ड) करने तक ही शिक्षाशास्त्र को सीमित करना अवांछनीय है। अध्याक को केवल यह शिक्षा देना कि अमुक-अमुक विधियाँ हैं और अमुक-अमुक शिक्षण-सूत्र तथा शिक्षण के सोपान हैं, पर्याप्त नहीं है। यह भी पर्याप्त नहीं है कि उसे दो-एक विषयों की शिक्षा-पद्धति से परिचित कराकर उन पद्धतियों के अनुसार शिक्षणाभ्यास करा दिया जाए और उन्हें अध्यापकत्व की मान्यता दे दी जाये।

यह मान्यता बड़ी हानिकारक सिद्ध हो सकती है, क्योंकि शिक्षक ने केवल प्रविधि का ज्ञान प्राप्त किया है और परिस्थितियों पर बिना ध्यान दिये हुए वह सर्वत्र उन्हीं प्रविधियों का प्रयोग करना चाहेगा, किन्तु अध्यापन कार्य मीटर की ड्राइवरी नहीं है जिसमें मोटर के पुर्जों का ज्ञान प्राप्त करके तथा कुछ संकेतों का ज्ञान प्राप्त करके मोटर चलाने का लाइसेंस ले लिया जाये। अध्यापक कार्य में तो जीवित एवं स्वचालित चेतन्य मोटरों से पाला पड़ता है और इन सजीव मोटरों का विकास भी होता है। इसलिस अब शिक्षा-शास्त्र केवल शिक्षण तक सीमित नहीं है। अध्यापक की तैयारी के लिए भी अब माना जाता है कि अध्यापक को केवल शिक्षण-प्रविधियों का ज्ञान देना पर्याप्त है। इस दृष्टि से शिक्षा-शास्त्र का विकास हो रहा है और इसमें अनेकानेक बातों का समावेश हो रहा है एवं इसकी विषय-सामग्री बढ़ती जा रहीं है।

सामान्य रूप से देखने पर शिक्ष-शास्त्र अभी निर्माणावस्था में है। इसके रूप का निखार अभी नहीं हुआ है, किन्तु यह बात केवल शास्त्र के विषय में कही जा रही है। क्रिया या प्रक्रिया के रूप में शिक्षा का प्रारम्भ सृष्टि के आदिकाल से ही हो गया थां शास्त्र के रूप में इसका विकास करने की पहले आवश्यकता नहीं प्रतीत हुई थी। तब शिक्षा का कार्य समाज के अत्यन्त मेधावी व्यक्तियों के हाथ में था और वे जीवन की गुत्थियों को सुलझाने में मौलिक विधियों का आश्रय लेते थे।उस समय शिक्षा का प्रसार भी अधिक नहीं था। आज, स्थिति बदल गई है अत: अब इस आवश्यकता की अनुभूति हो रही है कि शिक्षा-शास्त्र का विकास हो, ताकि सामान्य लोग भी इससे लाभान्वित हो सकें और अध्याक कार्य सुचारू रूप से कर सकें।

'शिक्षा-शास्त्र' की पाठ्वस्तु के प्रमुख अंग इस प्रकार हैं-

1. **शिक्षा-दर्शन:** शिक्षा के कार्यों का सैद्धान्तिक विवेचन, शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण, पाठ्क्रम, शिक्षण-विधि आदि पर दार्शनिक दृष्टिकोण से विचार-विमर्श शिक्षा-दर्शन में होता है।
2. **शिक्षा समाजशास्त्र:** समाज और शिक्षा का सम्बन्ध शैक्षिक समाजशास्त्र का विषय है। इसमें आज की आवश्यकताओं का विश्लेषण होता है, सामाजिक अन्त:क्रिया का अध्ययन होता है, समाज का छात्रों पर क्या प्रभाव पड़ता है और समाजीकरण की क्या प्रक्रिया है-इसका विचार शैक्षिक समाजशास्त्र में होता है।
3. **शिक्षा का इतिहास:** शिक्षा का अपना इतिहास है। किस प्रकार वर्तमान शिक्षा का उदय हुआ और किन-किन सोपानों में शिक्षण-प्रक्रिया गुजरी है, इसका पता हमें शिक्षा के इतिहास से चलता है।

नोट

4. **शिक्षा की समस्याएँ:** विभिन्न शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन इस शाखा में होता है। अनुशासनहीनता, अपव्यय एवं अवरोधन, प्राथमिक शिक्षा की समस्याएँ, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा की समस्याएँ, शिक्षा में गुणात्मक ह्रास की समस्या, शैक्षिक अवसर की असमानता आदि पर इस शाखा में विचार किया जाता है।
5. **शिक्षा मनोविज्ञान:** बालक की प्रकृति, उसकी बुद्धि, संवेदना, प्रत्यक्षीकरण, अवधान, रुचि, अभिवृद्धि, सीखना आदि का ज्ञान शिक्षा मनोविज्ञान से प्राप्त होता है। यह शाखा अब पर्याप्त प्रगति कर गई है और इसका विशाल साहित्य निर्मित हो चुका है।
6. **तुलनात्मक शिक्षा:** विभिन्न देशों की शिक्षा-प्रणालियों का ज्ञान हमें तुलनात्मक शिक्षा के अध्ययन से प्राप्त होता है। देश-विदेश में शिक्षा की प्रगति की कहानी बड़ी रोचक होती है। इससे स्वदेश की शैक्षिक समस्याओं का अवबोध अच्छा होता है।
7. **शैक्षिक प्रशासन:** शिक्षा की व्यवस्था, संगठन, विद्यालय-प्रबन्ध, अध्यापन, छात्र, भवन, समय-सारणी, निरीक्षण, पर्यवेक्षण आदि पर विचार इस शाखा में होता है।
8. **शिक्षण विधियाँ:** भाषा, इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, गणित, विज्ञान, वाणिज्य, संगीत, कला, अर्थशास्त्र आदि विषयों को किस प्रकार पढ़ाया जाये, इसकी जानकारी शिक्षण-विधि विज्ञान से मिलती है। इस शाखा का सहित्य भी बहुत व्यापक है।
9. **अन्य भाषाएँ:** कुछ अन्य भाषाएँ भी उदित हो रही हैं, इन्हें उपर्युक्त शाखाओं के अर्न्तगत रखा जा सकता है। बाल-मनोविज्ञान, किशोर-शिक्षा, सांख्यिकी, अनुसंधान आदि शाखाएँ पृथक् रूप से अस्तित्व न रखकर उपर्युक्त शाखाओं की उपजीव्य शाखाएँ हैं।

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन एवं नियन्त्रण का एक यन्त्र (Education as an Instrument for Social Change and Social Control)

अतीत में सामाजिक परिवर्तन युद्ध तथा महायुद्धों से होते थे। महाभारत में नये समाज के निर्माण की आशाा की गई थी। परन्तु आज यदि सामाजिक परिवर्तन लाना हो तो शिक्षा के द्वारा लाया जा सकता है तथा सामाजिक समस्याओं पर नियन्त्रण भी शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है। गांधी जी छुआछूत को समाज से दूर नहीं कर सके, परन्तु शिक्षा द्वारा ही इसे दूर किया गया। नारी शिक्षा द्वारा सामाजिक रूढ़िवाद का अन्त हुआ। पति-पत्नी की शिक्षा और दोनों की नौकरी से बच्चें के सामाजिकरण की समस्या का समाधान पूर्व प्राथमिक कक्षाओं की सुविधा से किया जा रहा है। अत: शिक्षा एक सामाजिक परिवर्तन का यन्त्र है।

शिक्षा सामाजीकरण की एक प्रक्रिया (Education is the Creator and Creature of the Society)

शिक्षा द्वारा नये समाज का निर्माण होता है और समाज की शिक्षा की व्यवस्था करता है। राजीव गांधी ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) का स्वरूप इसलिये दिया कि 21वीं शताब्दी में कस प्रकार के नागरिक चाहिये, इसके लिये शिक्षा रूप विकसित करना चाहिए। शिक्षा की प्रकृति भविष्यात्मक (Future Oriented) होती है। शिक्षा, सदैव भविष्य के लिए तैयार की जाती है तथा भविष्य के लिये ही प्रदान की जाती है। इस प्रकार शिक्षा समाज निर्माण की एक प्रक्रिया है।

छात्र क्रियाकलाप

1. शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषा बतायें?

2. दूरवर्ती शिक्षा क्या है? बतायें।

शिक्षा एक छलनी (Education as Filtering Process)

नोट

प्रजातन्त्र में नागरिकों द्वारा ही शासन किया जाता है तथा वे ही नागरिकों का मार्गदर्शन करते हैं और जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में नेतृत्व प्रदान करते हैं तथा उन्हें शिक्षा भी देते हैं। देश में सभी को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है परन्तु प्राथमिक कक्षाओं की पाँचवी कक्षा को कितने बालक प्रतिशत पास कर पाते हैं। उसके बाद उनमें से माध्यमिक कक्षा (छः से आठवीं) को कितने प्रतिशत बालक पास कर पाते हैं। पास करने वालों में से कितने बालक हाईस्कूल की परीक्षा में उत्तीर्ण होते हैं। इस प्रकार इण्टर स्नातक तथा परास्नातक परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने वाले छात्रों का प्रतिशत कम होता जाता है। परीक्षाओं द्वारा छंटते जाते हैं। उच्च शिक्षा ग्रहण करने वालों का प्रतिशत बहुत कम होता हैं यही व्यक्ति नेतृत्व तथा मार्गदर्शन देने में सक्षम होते हैं। अन्य पदों के लिये परीक्षार्थी की व्यवस्था है। इस प्रकार प्रजातन्त्र में शिक्षा एक छलनी का कार्य करती है।

शिक्षा एक निवेश (Education as an Investment)

निवेश शब्द अर्थशास्त्र एवं वाणिज्य शास्त्र का है। इस निवेश से तात्पर्य लागत से अधिक उत्पादन है। निवेश का अर्थ होता है किसी मद में जो व्यय किया जाये अथवा लागत लगाई जाय और उस मद से अधिक पूँजी प्राप्त हो तो उसे निवेश (Future Oriented) कहते हैं। शिक्षा पर कोई अभिभावक इसलिये व्यय करता है क्योंकि उसके बदले में जो उसे प्राप्त होता है, लागत से कहीं अधिक होता है। प्रत्येक माता-पिता अपने बालकों एवं बालिकाओं की शिक्षा व्यय करने के लिये तत्पर रहते हैं। शिक्षा द्वारा जो लाभांश प्राप्त होता है वह गुणत्मक एवं संख्यात्मक होता है। शिक्षा के किसी विशेष पक्ष पर जो व्यय किया जाता है उस पर भी विशिष्ट लाभ प्राप्त होता है। इस प्रकार शिक्षा एक उत्तम निवेश के प्रत्यय को एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है।

पं॰ मोतीलाल नेहरू के एक मित्र ने पूछा कि जवाहर को ऑक्फोर्ड विश्वविद्यालय लन्दन पढ़ने के लिए कितनी पूँजी की व्यवस्था की है? उन्होंने कहा कि अभी दो लाख रुपये की व्यवस्था की है। उनके मित्र ने कहा कि मेरी दृष्टि में इंग्लैण्ड पढ़ने भेजना उचित लगता है क्योंकि शिक्षा पूर्ण करने के बाद चार अंकों में वेतन कहीं नहीं मिलेगा। यदि दो लाख रुपये बैंक में जमा कर दिये जायें तब प्रतिमाह दो हजार रुपये ब्याज प्राप्त होता रहेगा और मूल भी सुरक्षित रहेगा। मोतीलाल जी ने कहा यह तुम्हारी समझ से बाहर बात है। क्योंकि उनके मित्र शिक्षा निवेश को भौतिक प्रदा तक ही सोच सके। शिक्षा निवेश का लाभ भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों ही प्रकार का है। गुणत्मक भावी प्रदा का अनुमान लगाना उनकी समझ से परे था। जबकि मोतीलाल ने इसी गुणात्मक प्रदा को महत्व दिया था।

दूरवर्ती-शिक्षा में अनुशासन का अर्थ (Meaning of Discipline in Distance Education)

अनुशासन शब्द का अर्थ यहाँ एक अध्ययन के क्षेत्र या विषय वस्तु से है, जिसकी अपनी पाठ्यवस्तु, अपनी प्रविधियाँ तथा अपने मूल्य होते हैं। "सीखा हुआ ज्ञान या अनुशासन" मानवीय अनुभवों, प्रयासों तथा मानसिक विकास का परिणाम समझा जाता है। विद्यालयों,

नोट

महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में जो विषय पढ़ाये जाते हैं वे इस अर्थ में अनुशासन ही हैं। शैक्षिक जगत में भी 'अनुशासन' का अर्थ इसी प्रकार लगाया जाता है। मानवीय ज्ञान के अध्ययन के एक स्वतन्त्र क्षेत्र को अनुशासन (विषय) की संज्ञा दी जाती है। आदि काल से मानव अपने अनुभवों को संचित करता है और मानवीय ज्ञान का विभाजन सुगमता की दृष्टि से, 'अनुशासनों' के रूप में किया गया है। प्रत्येक स्वतंत्र अनुशासन किसी सामाजिक 'अनुशासनों' के रूप में किया गया है। प्रत्येक स्वतंत्र अनुशासन किसी सामाजिक व्यावसायिक क्रिया से सम्बन्धित होता है। उदाहरण के लिये, कृषि विज्ञान का सम्बन्ध 'खेती' से, वाणिज्य शास्त्र का सम्बन्ध 'व्यापार' से, मनोविज्ञान का सम्बन्ध 'व्यवहार' से, इसी प्रका शिक्षा का सम्बन्ध 'शिक्षण' से है। कभी-कभी ज्ञान की दो शाखाओं के मिलने से एक स्वतन्त्र अध्ययन के क्षेत्र का विकास हो जाता हे। इस प्रकार के उदाहरण सभी अनुशासनों में मिलते है; जैसे- सामाजिक-मनोविज्ञान, आर्थिक भूगोल, जीव-रसायनशास्त्र इसी प्रकार शिक्षा के अन्तर्गत शैक्षिक-समाजशास्त्र, शिक्षा-दर्शन आदि आते हैं। इस प्रकार के नवीन अध्ययन क्षेत्र का महत्व जब जीवन की उपयोगिता की दृष्टि से स्पष्ट हो जाता हे तब उसे एक नये 'अनुशासन' के रूप में मान्यता दी जाती है।

जब दो अनुशासनों के मिलने से तीसरे अनुशासन का विकास होता है तब उस समय वह ज्ञान राशि दोनों ही अनुशासन की पाठ्यवस्तु मानी जाती है।

एक अनुशासन की विशेषताएँ

(Characteristics of a Discipline)

प्रत्येक अनुशासन की अपनी विशेषताएँ होती हें, जिसके आधार पर उसे अन्य अनुशासनों से भिन्न समझा जाता है। प्रत्येक अनुशासन की अधोलिखित विशेषताएँ होती हैं-

1. **निजी पाठ्वस्तु:** प्रत्येक अनुशासन की अपनी पाठ्वस्तु होती है। शिक्षा की भी अपनी निजी पाठ्वस्तु है। इस पाठ्वस्तु के अर्न्तगत हम शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षा के सिद्धान्त, पाठ्क्रम, शिक्षक व्यवहार, शैक्षिक निर्देशन, परीक्षाएँ, मूल्यांकन तथा शैक्षिक तकनीकी, अध्यापक-शिक्षा आदि को सम्मिलित करते हैं।
2. **निजी क्षेत्र:** प्रत्येक अनुशासन की पाठ्वस्तु किसी सामाजिक तथा व्यावसायिक क्रिया से सम्बन्धित होती है। शिक्षा की समस्त पाठ्वस्तु प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप में 'शिक्षण क्रिया सामाजिक तथा व्यावसायिक दोनों ही हैं। शिक्षण को 'कला' तथा 'विज्ञान' दोनों ही मानते हैं।
3. **निजी विधियाँ:** प्रत्येक अनुशासन के अध्ययन की निजी विधियाँ होती हैं। इसी प्रकार शिक्षा-शास्त्र की भी अपनी विधियाँ हैं। चूँकि शिक्षा की पाठ्वस्तु सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों ही हैं इसलिए शिक्षा में दो प्रकार की विधियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं। छात्रों को पाठ्वस्तु का अध्ययन करना होता है और कक्षा में पाठ्यवस्तु का शिक्षण भी करना होता है। परीक्षाओं में भी सैद्धान्तिक एवं प्रयोगात्मक दोनों पक्षों पर बल दिया जाता है। प्रयोगात्मक परीक्षा को भी समान महत्व दिया जाता है।
4. **शोध की निजी विधियाँ:** एक स्वतन्त्र अनुशासन के शोध का भी निजी क्षेत्र तथा शोध की विधियाँ होती हें। शिक्षा सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों ही हैं। इसलिए शिक्षा के शोध कार्य मं सर्वेक्षण विधि, ऐतिहासिक विधि तथा प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग किया जाता है। साधारणत: विज्ञान के विषयों के शोध कार्य में प्रयोगात्मक

विधि का प्रयोग किया जाता हे। चूँकि शिक्षा को कला तथा विज्ञान दोनों ही माना गया है, इसयि शिक्षा के शोध कार्य में दोनों प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जाता है।

नोट

5. **चिन्तन क्षेत्रः** प्रत्येक अनुशासन का चिन्तन क्षेत्र पृथकं होता है। प्रत्येक अनुशासन के अपने मूल्य होते हैं ओर उनका अपना प्रभाव होता है। शिक्षा का चिन्तन क्षेत्र बालक में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाने से संम्बन्धित होता है। शिक्षाशास्त्री इस दिशा में चिन्तन करता हे और बालक के विकास के लिये नवीन विधियों के लिये प्रयास करता हैं स्पष्ट है कि शिक्षा के छात्रों एवं शिक्षाशास्त्रियों की कार्य शैली, व्यवहार, समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण को अन्य अनुशासनवेत्ताओं से भिन्न होता है।
6. **निजी शोध क्षेत्रः** प्रत्येक अनुशासन के अपने शोध कार्य के निजी क्षेत्र होते हैं। शिक्षाशास्त्र के शोध क्षेत्र, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया, शिक्षक-व्यवहार, शिक्षक-प्रभावशीलता, शैक्षिक प्रशासन एवं व्यवस्था, अभिक्रमित-अनुदेशन, शैक्षिक-तकनीकी, परीक्षा-प्रणाली, पाठ्य-पुस्तक, शैक्षिक निर्देशन, अध्यापक-शिक्षा, शिक्षण-विधियाँ आदि प्रमुख हैं।
7. **स्वतंन्त्र संकायः** विश्वविद्यालय के सभी अनुशासनों को संकायों में विभाजित किया जाता है; जैसे-कला-संकाय के अर्न्तगत सामाजिक विषय, सभी साहित्यों तथा शिक्षा को भी सम्मिलित विज्ञान, गणित तथा सांख्यिकी को सम्मिलित करते हें। बी०ए० तथा एम०ए० शिक्षा को कला-संकाय में रखते हैं। परन्तु अधिकांश विश्वविद्यालयों ने शिक्षा-संकाय (Faculty of Education) की अलग से व्यवस्था की है। उनका तर्क है कि शिक्षा कला तथा विज्ञान दोनों ही हैं, इसलिये शिक्षा-संकाय पृथक रूप से ही होनी चाहिए। शिक्षा को कला-संकाय अथवा विज्ञान संकाय में सम्मिलित करना उचित नहीं है।

उपर्युक्त विशेषताओं से यह स्पष्ट हो जाता हे कि शिक्षा एक स्वतन्त्र अनुशासन है किन्तु इस सम्बन्ध में कुछ मतभिन्नता है-

1. कुछ विद्वान इसे एक स्वतन्त्र अनुशासन नहीं मानते हैं।
2. कुछ इसे विकासमान अनुशासन मानते हैं।
3. कुछ इसे पूर्णरूपेण एक स्वतन्त्र अनुशासन मानते हैं।

वे इसके विकास स्रोत के लिये अन्य अनुशसानं; जैसे-दर्शन, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, धर्म, विज्ञान, राजनीति-शास्त्र आदि को गिनते हैं। इसके अतिरिक्त अब शिक्षा में अपने ज्ञान के विशिष्ट क्षेत्रों का विकास किया गया है जिनके फलस्वरूप हमें कई नवीन ज्ञान-विज्ञान मिलते हैं; जैसे-शैक्षिक-मनोविज्ञान, शैक्षिक-मापन एवं मूल्यांकन पाठ्क्रम, अध्यापक शिक्षा, शैक्षिक-निर्देशन, शैक्षिक प्रशासन, शिक्षण-तकनीकी, अभिक्रमित-अनुदेशन, (Programmed Instruction) आदि। मानव जीवन के विकास, समाज की प्रगति, अध्यापकों का व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा विद्यालयों की प्रशासनिक समस्याओं के समाधान की दृष्टि से इस अनुशासन का विशेष महत्व है। इस अनुशासन पर राष्ट्र की विशिष्टताओं का गहरा प्रभाव पड़ता है और शिक्षा का वही उद्देश्य हो जाता है जो राष्ट्र का होता हें एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र की शिक्षा-प्रणाली को पूर्णरूपेण नहीं अपना सकता। इसलिए वह अपनी आवश्येकताओं की पूर्ति करने के लिये शिक्षा के सैद्धान्कि एवं व्यावहारिक स्वरूप का विकास करता है।

नोट

दूरवर्ती-शिक्षा' का अर्थ (Meaning of Distance Education)

''दूरवर्ती-शिक्षा'' शब्द के अनेक अर्थ हैं। यह अनेक नामों से जाना जाता है जैसे- 'पत्रचार शिक्षा'' (Correspondence education), 'मुक्त अधिगम' (Open Learning) 'ग्रह अध्ययन' (Home study) ए 'स्वतन्त्र अध्ययन' स्वाध्याय (Independent Study) ए 'बाह्य अध्ययन' (External study) ए 'परिसर से बाहर अध्ययन' (Off-Campus study)। कंछ देशों में यह पत्राचार शिक्षा के नाम से ही जाना जाता है। इसे शिक्षा की बाह्या प्रणाली भी कहा जाता है। उत्तरी अमेरिका में इसे 'स्वतन्त्र अध्ययन' कहा जाता है। दूरवर्ती-शिक्षा न केवल मुद्रित माध्यम (Print media) पर जोर देती है बल्कि दूसरे माध्यमों जैसे अमुद्रित माध्यम (Non-Print Media) आदि। इसे बहुमाध्यम उपागम (Multi-Media approach) भी कह सकतें हैं।

दूरवर्ती-शिक्षा की परिभाषायें (Definition of Distance Education)

1. **वेडमीयर (Wedemeyer) के अनुसार:** वेडमीयर ने दूरवर्ती-शिक्षा सम्बन्धी अपने कार्यों में तीन शब्द 'मुक्त अधिगम' (Open learning), 'दूरवर्ती शिक्षा' (Distance education), तथा स्वतन्त्र अध्ययन शब्द को ही अधिक महत्व दिया है। उसने स्वतन्त्र अध्ययन को निम्नलिखिम ढ़ंग से पभिाषित किया है-
   ''स्वतंत्र अध्ययन के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की शिक्षण-अधिगम व्यवस्थाओं का समावेश होता है जिससे शिक्षक एवं शिक्षार्थी एक-दूसरे से अलग रहते हुये भी अपने कार्य एवं अपने उत्तरदायिसत्वों का निर्ववहन करतें हैं एवं विविध सम्प्रेष्ण तरीकों का प्रयोग रते हैं। इसका उद्देश्य शिक्षाथीयों को स्कूली कक्षा के अनुप्युक्त स्थानों अथवा प्ररूपों से मुक्त रखना, विद्यालय से बाहर के शिक्षार्थीयों को उनके वातावरण में अध्ययन जारी रखने का अवसर प्रदान करना तथा सभी शिक्षार्थीयो में स्वत: निर्देशित अधिगम के द्वारा आगे बढ़ने की श्रमता को विकास करना है।''
2. **मूरे (Moore) के अनुसार:** दूरवर्ती-शिक्षा को अनुदेशन विधियों के समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है इसमें शिक्षण व्यवहार, अधिगम व्यवहार से अलग अर्थात् कहीं दूर पर सम्पन्न किये जातें हैं। इसके अन्तर्गत छात्र की उपस्थिति में सम्पन्न हाने वाली प्रक्रियाऐं भी सम्मिलित होती हैं। अत: शिक्षक एवं विाार्थी के बीच सम्प्रेषण को मुद्रित सामग्री, इलेक्ट्रोनिक, यान्त्रिक एवं अन्य साधधनों के ुम बनाया जा यकता है।''
3. **डोहमेन (Dohmen) के अनुसार:** ''दूरवर्ती-शिक्षा स्वत: अध्ययन का एक विधि वत् संगठित रूप है जिसमें छात्र परामर्श'' अधिगम सामग्री का प्रस्तुतीकरण तथा छात्रों को सफलता का सुनुश्चितीकरण एवं निरीक्षण शिक्षकों के समूह द्वारा किया जाता है तथा प्रत्येक शिक्षक का अपना उत्तरदायित्व होता है। संचार माध्यमों द्वारा बहुत दूर रहने वाले शिक्षार्थीयों के लिए इसे सम्भव बनाया जाता है।''
4. **पीटर्स (Peteres) के अनुसार:** ''दूरवर्ती-शिक्षा ज्ञान, कौशल एवं अभिवृत्ति प्रदान करने की एक विधि है जिसे तकनीकी संचार माध्यमों के व्यापक प्रयोग के साथ-साथ क्षम विभाजन एवं संगठनात्मक सिद्धान्तों के प्रयोग द्वारा तर्क संगत बनाया जाता है। इसमें विशेष रूप से उच्चस्तरीय शिक्षण सामग्री के पुननिर्माण का उद्देश्य

निहित होता है जिससे छात्रों की बहुल संख्या को एक ही समय में, जहाँ पर भी वह रह रहे हों, अनेदेशन प्रदान करना सम्भव होता है। यह शिक्षण एवं अधिगम का एक औद्योगिक रूप हैं।''

नोट

5. **होमबर्ग (Holmberg) के अनुसार:** ''दूरवर्ती शिक्षा के अन्तर्गत शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन के विभिन्न प्रकार, उन विद्यार्थीयों के लिए जो शिक्षकों के निरन्तर एवं तुरन्त निरिक्षण में नही होते हैं प्रयुक्त किये जाते है, किनतु जो किसी भी प्रकार से शैक्षणिक संस्थाओं के नियोजन, निर्देशन एवं शिक्षण से कम लाभ नही प्रदान करतें हैं।''

दूरगामी-शिक्षा की विशेषतायें (Characterstics of Distance education)

होल्मबर्ग, वेदिमायर, मुरे, पीटर्स तथा कीगन आदि चिवद्वानों ने दूरवर्ती-शिक्षा की निम्नलिखित विशेषताऐं बतायी हैं-

1. अधिगम प्रक्रिया के समय शिक्षक तथा छात्र का अर्ध-स्थायी अलगाव : यह शिक्षत की पाम्परागत आमने-सामने तथा मौखिक शब्द संचार व्रक्रिया से अलग करता है।
2. अधिमग सामग्री की योजना तथा तैयारी व छात्र सहायक सेवसओं में शिक्षा संगठन का प्रभाव होता है। यह निजी अध्ययन तथा स्वाध्याय से बलग है।
3. तकनीकी माध्यमों का प्रयोग या मुद्रित व अमुद्रित जैसे रेडियो, टेलीविजन या कम्प्यूटर, अध्यापक तथा छात्र को जोडने के लिए तथा प्राठ्क्रमों को पहुचानें के लिए किया जाता है।
4. द्वि-मार्गी संचार का प्रावधान, ताकी छात्र लाभ प्राप्त कर सके यह शिक्षा में अन्य तकनीकी के प्रयोग से ि्ज्ञन्न प्रकार हैं।
5. अधिगम प्रक्रिया के समय में अधिगम समुह की अर्ध-स्थायी अनुपस्थिति जिसके लोगों को अधिकतर एक व्यक्ति क रूप में पड़या जाता है, नाकि समूह के रूप में।

दूरवर्ती-शिक्षा के लक्षण (Features of distance education)

चार्ल्स वेदिमायर ने भी दूरवर्ती-शिक्षा के निम्नलिखित दस लक्षण बताये हैं-

1. अनुदेशन वहां उपलब्ध होना चाहिए जहां पर अनेक छात्र या केव्ल एक मात्र हो उस समय या स्थान पर अथवा हो अथवा नहीं हो।
2. अनुदेशन सामग्री के अद्वययन उत्तरदायित्व छात्रों का अधिक होना चाहिये। अनुदेशन योजना या प्रणाली को विभागीय सदस्यों को संरक्षता सम्बन्धी कर्तव्य से मुक्त करना चाहिए जिससे शिक्षक या छात्र अपना अपना अधिक से अधिक समय शैशिक्ष कार्यक्रम को दे सके।
3. अनुदेशन प्रणाली, छात्रों को व्यापक अवसर चुनाव का दें। विषय में अनेक प्रकार की सामग्री का प्रारूप तथा विधियाँ प्रयोग की जाती हैं।
4. अनुदेशन प्रणाली को सभी शिक्षण माध्यमों तथा विधियों में जो प्रभावशाली प्रमाणित हो चुके हैं, का प्रयोग करना चाहिए।
5. अनुदेशन प्रणाली को माध्यम तथा संचार का मिश्रण करके जोड़ना चाहिए जिससे प्रत्येक विषय या विषय की इकाई को अधिक प्रभावशाली ढ़ंग से पड़या जा सके।

नोट

6. प्रयोग किया जाने वाला माध्यम तथा तकनीकी की रचना तथा प्रयोग में 'स्पष्ट' होना चाहिए, जिससे विभिन्न माध्यम तथा तकनीकी एक दूसरे को पूर्नबलन प्रदान का सके।
7. व्यक्तिगत छात्रों तथा शिक्षकों के माध्य अन्तरों को अपनाने के लिए अनुदेशन प्रणालीको संरक्षण देने तथा बढावा देने का असर देना चाहिए।
8. अनुदेशन प्रणाली को छात्रों की उपब्धि का मुल्यांकन, छात्रों के अध्ययन के स्थान, उनके अध्ययन की दर, उनके जहां तक सम्भव हो प्रत्येक रूप से मुल्यांकन किया जाना चाहिए।
9. इस प्रणाली द्वारा छात्रों को अधिगम प्रारम्भ करने, व समाप्त करने की अपनी क्षमता के अनुसार स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

इस प्रकार दूरगामी शिक्षा के अन्तर्गत सभी स्तरों के बहुत से रूप आतें है जो कि अध्यापकों के निरन्तर तथा तात्कालिक निरिक्षण में नही होते हैं, लेकिन जो एक शैक्षिक संगठन की योजना, निर्देशन तथा शिक्षण से किसी प्रकार कम लाभकारी नही होते हैं। होलमबर्ग ने अपनी परिभाषा में इसे स्वीकार किया है। दूरवर्ती-शिक्षा छात्रों की क्रियाओं को बड़ती है, इसकी यह प्रमुख विशेषता है।

दूरवर्ती-शिक्षा के महत्व (Importance of Distance Education)

दूरवर्ती-शिक्षा की अन्य बहुत-सी परिभाषाऐं भी हैं जिनके विशलेषण से दूरवर्ती-शिक्षा के महत्वपुर्ण आव्श्यक प्रारूप मिलते हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. अध्यापक तथा छात्र का पृथकीकरण,
2. शिक्षण संगठन की भुमिका,
3. तकनीकी माध्यम का स्थान,
4. द्वि-मार्गी संचार तथा प्रसार,
5. छात्र को अपने समूह से पृथकीकरण, तथा
6. तकनीकी माध्यमों का उपयोग।

इनको संक्षिप्त में इस प्रकार समझा जा सकता है-

1. शिक्षक व छात्र एक दूसरे से पृथक रहते हैं, इस प्रकार की शिक्षा का प्रधान लक्षण हैं।
2. दूरवर्ती-शिक्षा एक प्रकार की संस्थागत शिक्षा प्रणाली है। इसी कारण वह साध्याय से भिन्न है।
3. दूरवर्ती-शिक्षा में अनेक विकसित तकनीकी माध्यमों, जैसे मुद्रित, टेलीफोन, श्रव्य-दृष्य, प्रसारण, कम्प्यूटर आदि का प्रयोग होता है।
4. यह एक द्विमार्गी सम्प्रेष्ण है क्योंकि इसमें छात्र किसी उत्तर-पत्रिका पर या अन्य माध्यमों के द्वारा उत्तर देने में सक्षम हैं जिससे वह पृष्ठ-पोषण प्राप्त कर सकता है। इसमें छात्र संस्था से भी वार्तालाप कर सकता है।
5. प्रत्येक छात्र को उसके समूह से प्रथक् किया जाता है वैसे भी जनसंख्या के सब छात्रों के बीच आमना-सामना नही हो सकता है। इसी कारण दूरवर्ती-शिक्षा एक व्यक्तिगत अधिगम प्रणाली है। दूरवर्ती-शिक्षा के अधिगम कार्यक्रमों में अध्ययन के

लिए समूह बनाये जा सकतें हैं लेकिन यह अनिवार्य नहीं है तथा छात्र पूर्ण रूप से स्वयं कार्य करने के लिए स्वतन्त्र है।

6. दूरवर्ती-एक विशेष आवश्यकता का विशिष्ट उत्तर है। आधुनिक औद्योगिक समाज की आवश्यकताअें ने इस प्रकार की नई शिक्षा को जन्म दिया है, और इसी समाज ने कुछ आवश्यक तकनीनीयों का विकास किया है तथा इससे वे शिक्षा की आवश्यकताओं की पुर्ति करते हैं।

नोट

इस सन्बर्भ में, हम कह सकतें हैं कि दूरवर्ती/शिक्षा एक विशिष्ट औद्योगिक विकास है। इसी कारण कहा जाता है कि दूरती-शिक्षा, शिक्षण प्रयास का वे क्षेत्र है जिसमें-

1. पूरी अधिगम प्रक्रिया में छात्र तथा अध्यापक का अर्थ-स्थायी पृथकीकरण होता है।
2. सम्पूर्ण अधिगम प्रक्रिया में छात्र को उसके समूह से अर्थ-स्थायी रूप में अलग रहता है।
3. पारस्परिक स्मप्रेश्ण के स्थान पर तकनीकी माध्यमों का उपयोग किया जाता है।
4. शिक्षण अधिगम प्रक्रिया संस्थागत होती है। छात्रों के स्वाध्याय को प्रोत्साहित किया जाता है।
5. शिक्षण तथा छात्र के मध्य द्विमार्गी संचार सम्भव है। (जो इसे अन्य शिक्षण तकनीकीयों से अलग करता है)।

इसका सारांश है कि यह शिक्षण प्रक्रिया के व्यक्तिगत रूप को प्रदर्शित करता है। अन्त में यह पहचानना होगा कि दूरवर्ती-शिक्षा का प्रयत्न का आधार एक सार्वलौकिक विचार है, जो इसे सबसे अलग बनाता है। जो भी एक अध्यापक कक्षा में कहता है मौखिक रूप से या संचार माध्यम से एक रूप में व्यक्तिगत है क्योंकि कुछ निश्चित व्यत्यिों तक ही ही सीमित रहता है तथा इनका किसी भी रूप में पुनर्निरीक्षण या संशेधन नही किया जा सकता है।

दूसरी ओर दूरवर्ती-शिक्षा के अधिगम कार्यक्रमों में जो सूचनाऐं प्रदान की जाती हैं वह भी के लिए होती हैं। इन अधिगम उपायों की सार्वजनिक आलोचना हो सकती है तथा समय समय पर इनका आवलोकन तथा संशोधन किया जा सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि दूरवर्ती-शिक्षा के माध्यम में शिक्षा प्रक्रिया में सार्वलौकिकता सम्भव है।

दूरवर्ती-शिक्षा और पारम्परिक शिक्षा (Distance Education and Traditional Education)

शिक्षा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

यह समाजशास्त्र की एक प्रभावशाली शाखा है। यह समाजशास्त्र के उद्देश्यों को शैक्षिक क्रिया द्वारा, जो व्यक्ति तथा समाज क मध्य होती है, प्राप्त करने की चेष्टा करता है। यह इस विषय का विकास भी आधुनिक काल में बड़ी शीघ्रता से हुआ है। इस विकास के सम्बन्ध में कुछ मुख्य शिक्षाशास्त्रियों के नाम उल्लेखनीय है–जार्ज, पायन, जॉन डीवी, डेविड स्नेडेन, सी. सी. पीटर्स, फ्रेडरिक ई. बोल्टन, लायड एलैन कुक, बिलार्ड बॉलर, चार्ज काउन्ट्स, एलसीन डेविस हिन्डा टाबा, हैविडर्स्ट, डोलार्ड, स्यॉलसन, हेलेन जेनिग्स, रॉस फिने अमेरिका के दुर्खीम, फ्रांस के मैक्स बेबर जर्मन के, तथा सर फ्रेड क्लार्क, ओटावे, कार्ल मानहेम इंग्लैण्ड के है। शिक्षा के समाजशास्त्र की इस महान् प्रगति का संर्वाधिक श्रेय जॉन डीवी तथा पेयन महोदय को

नोट

है। जॉर्ज पेयन ने 1928 ई॰ 'दि प्रिंसिपिल्स ऑफ एजूकेशनल सोशियोलॉजी' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में उन्होंने सामूहिक जीवन पर शिक्षा का प्रभाव तथा शिक्षा पर सामूहिक जीवन के प्रभाव के सम्बन्ध में प्रकाश डाला। उन्होंने सामाजिक प्रतिक्रिया के ज्ञान को शिक्षा द्वारा अध्ययन करना सामाजिक प्रगति का एक आवश्यक अंग माना। उन्होंने प्रतिपादित किया कि शिक्षा का मूल उद्देश्य, व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास, तभी सफलतापूर्वक प्राप्त किया जा सकता है, जब मानव के ऊपर सामाजिक शक्तियों के प्रभाव का गहन अध्ययन किया जाए। इस दृष्टिकोण से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास सामाजिक वातावरण के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रिया पर ही आधारित है।

जॉन डीवी ने भी सामाजिक प्रवृत्तियों का शिक्षा में बहुत महत्वपूर्ण स्थान माना है। उन्होंने अपनी पुस्तकों 'दि स्कूल एण्ड सोसायटी' तथा 'डेमोक्रेसी एण्ड एजूकेशन' द्वारा शिक्षा में व्यक्ति को सामाजिकता के महत्व पर प्रकाश डाला है। उन्होंने कहा कि "व्यक्ति द्वारा जाति की सामाजिक चेतना में भाग लेने से शिक्षा का पूर्ण विकास होता है।" तात्पर्य यह है कि शिक्षा की क्रिया एक सामाजिक प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया पाठशाला द्वारा अपने गन्तव्य को पहुँचती है। अत: पाठशाला एक सामाजिक संस्था है जो समाज को शुद्ध तथा प्रगतिशील बनाती है तथा व्यक्ति को सामाजिकता से परिचित करती है।

शिक्षा के समाजशास्त्र का अनौपचारिक विकास कुछ प्राचीन एवं मध्ययुगीन विचारकों के व्यक्त विचारों में भी दिखाई देता है। लेकिन इसका व्यवस्थित एवं औपचारिक प्रारम्भ वास्तव में आधुनिक समाजशास्त्रियों एवं सामाजिक मानव-शास्त्रियों ने ही किया। फ्रांस के प्रख्यात समाजशास्त्री इमाइल दुर्खीम इनमें अग्रणी थे।

दुर्खीम फ्रांस के बोर्डियेक्स एवं सोहबो विश्वविद्यालयों से क्रमश: 1887 से 1902 एवं 1902 से 1917 तक समाजशास्त्र के प्राध्यापक रहे थे। सोहबो विश्वविद्यालय में वे समाजशास्त्र के साथ ही शिक्षाशास्त्र के प्राध्यापक भी रहे। बोर्डियेक्स विश्वविद्यालय में कार्य करते समय वे फ्रांस की प्राथमिक पाठशालाओं के कुछ अध्यापकों को प्रत्येक सप्ताह में एक घण्टा शिक्षा सम्बन्धी भाषण दिया करते थे। दुर्खीम ने अपने शिक्षा के समाजशास्त्र सम्बन्धी विचारों को 'एजुकेशन एण्ड सोशियोलॉजी' नामक पुस्तक में रखा है।

समाजशास्त्रियों की सबसे बड़ी संस्था ने 1960 में 'शिक्षा के समाजशास्त्र' का एक पृथक् विभाग स्थापित किया। इस विभाग में लगभग 500 सदस्य है। 1963 से ए.एस.ए ने 'सोशियोलॉजी ऑफ एजुकेशन' के नाम से एक पत्रिका भी प्रकाशित करनी प्रारम्भ कर दी, जो कि मूलत: इसी विषय से सम्बन्धित लेखों के प्रकाशन का कार्य करती है।

भारत में 'शिक्षा के समाजशास्त्र' के विकास में आई. पी. देसाई का योगदान उल्लेखनीय है। आई. पी. देसाई ने 1952 में ही 'स्कूलिंग एण्ड सोश्यल चेंज' पर एक अध्ययन सम्पादित किया था। कोरमैक ने इस सम्बन्ध में प्रथम सम्पूर्ण अध्ययन 'भारतीय विद्यार्थी एवं सामाजिक परिवर्तन' के नाम से 1961 में प्रस्तुत किया। 1964 में शाह ने गुराजत के महाविद्यालयी छात्रों के सामाजिक परिवर्तन' का अध्ययन प्रस्तुत किया। बाई. बी. दामले ने पूना के कॉलेज के छात्रों का अध्ययन 1966 में किया।

एम. एस. गोरे ने 1970 में 'शिक्षा के समाजशास्त्र' के क्षेत्र में महत्वपूर्ण क्षेत्रीय कार्य प्रस्तुत किया। इसके बाद शिक्षा समाजशास्त्र के क्षेत्र में अनेक अध्ययन समय-समय पर प्रस्तुत किये गए। इस प्रकार भारत में शिक्षा का संगठन आरम्भ से ही सामाजिकता की भावना से पूर्ण रहा

नोट

है। सामाजिक भावना का प्रभाव शिक्षा पर पड़ा, और शिक्षा ने समाज की उन्नति का ध्येय को सामने रखा। शिक्षा के उद्देश्यों में व्यक्तिगत तथा सामाजिक उत्थान एक परम उद्देश्य माना गया है। कर्त्तव्य को महान् महत्ता प्रदान करके भारत के ऋषियों ने समाज सेवा की भावना को भारतवासियों की नस-नस में भर दिया था परन्तु ब्रिटिशकालीन भारत में भारतीय समाज की पूर्ण अवहेलना की गई। यहाँ के नागरिकों पर एक ऐसी शिक्षा प्रणाली थोपी गई जिसका आधार पाश्चात्य सामाजिक जीवन था। फलस्वरूप, शिक्षा प्रणाली दोषों से परिपूर्ण हो गई। स्वतंत्रता के पश्चात् अब इस बात की चेष्टाएँ की जा रही है कि शिक्षा-प्रणाली में सुधार हो, और यह सामाजिक सुधार की भावना से युक्त हो तथा इसकी जड़ें भारतीय समाज के सुन्दर आदर्श, नियम, परंपराओं इत्यादि पर ही रखी हों। अतएव वर्तमान काल में समाज विज्ञान का प्रभाव भारतीय शिक्षा पर शीघ्रता से बढ़ रहा है। इसी कारण एक भावी शिक्षक के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह शिक्षा-समाज-विज्ञान से पूर्णरूपेण अवगत हो।

दूरस्थ शिक्षा

दूसरस्थ शिक्षा वह है जो शिक्षा ग्रहण करने वाले व शिक्षा देने वाले, एक-दूसरे से दूर होते हैं। इसमें सीखने व सिखाने की प्रक्रिया बिना किसी बाधा के चलती रहती है। यह एक सोद्योश्य प्रणाली है। इसकी अपनी विशिष्ट शिक्षण-विधियाँ एवं तकनीक है। सामाजिक दृष्टि से इस शिक्षा का महत्व "सबों को शिक्षा प्रदान करना' है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह शिक्षा सीखने वालें की आवश्यकताओं, रूचियों व क्षमता पर आधारित है। इस शिक्षा का साधन पत्राचार, रेडियों और दूरदर्शन आदि हैं। इसे अन्य अनेक नामों से पुकारा जाता है--पत्राचार-शिक्षा, गृह-अध्ययन, स्वतंत्र अध्ययन, आजीवन शिक्षा, बाह्य अध्ययन, दुरस्थ अधिगम या शिक्षण और खुली या मुक्त शिक्षा।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि शिक्षा के अनेक प्रकार हैं। यह व्यक्ति की रूचि व क्षमता और समाज की व्यवस्था पर निर्भर करता है कि कौन सा प्रकार कारगर व उपयोगी होगा। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में शिक्षा व्यवस्था एक उप-सामाजिक व्यवस्था के रूप में विद्यमान है। साथ ही सामाजिक व्यवस्था के अन्य कई उप-व्यवसथाएँ हैं, जैसे परिवार, धर्म, जाति, आर्थिक, राजनीति, कानून, अधिकारी तंत्र आदि। शिक्षा का इन उप-सामाजिक व्यवस्था से परस्पर सम्बन्ध का होना स्वाभाविक है, इसलिए शिक्षा के अनेक रूप हैं।

पारम्परिक शिक्षा के प्रकार या स्वरूप

शिक्षा के अनेक रूप बतलाये जाते हैं। यह नियमित रूप में दिया जाता है तथा अनियमित यानि स्वाभाविक रूप में भी। यह प्रत्यक्ष रूप में दिया जाता है। तथा अप्रत्यक्ष रूप में भी। यह वैयक्तिक होता है व सामूहिक भी। यह सामान्य होता है व विशिष्ट भी। इस प्रकार शिक्षा के प्रकार को निम्नांकित रूप में समझा जा सकता है--

औपचारिक शिक्षा व अनौपचारिक शिक्षा

अनौपचारिक शिक्षा वह है, जो व्यक्ति को निश्चित ध्येय व निश्चित योजना के अनुसार दी जाती है। यह कुछ विशेष संस्थाओं--स्कूल, कॉलेज एवं युनिवर्सिटी आदि--के माध्यम से दी जाती है। यह प्राय: 3 वर्ष की आयु से प्रारम्भ होता है और प्राय: 25 वर्ष की आयु तक चलता रहता है। इस शिक्षा के मूल त्तव शिक्षार्थी, शिक्षक और शिक्षण-सामग्री माने जाते हैं। यह व्यवसायोन्मुख होता है।

छात्र क्रियाकलाप

1.दूरवर्ती-शिक्षा में अनुशासन का अर्थ बतायें?

2. दूरवर्ती-शिक्षा और पारम्परिक शिक्षा में अन्तर की चर्चा करें?

अनौपचारिक शिक्षा वह है जो व्यक्ति को समाजीकरण के क्रम में दी जाती है। इसे व्यक्ति परिवार, पड़ोस, खेल-समूह, यात्रा, पर्व-त्योहार आदि के संदर्भ में प्राप्त करता है। यह जन्म से शुरू हो जाता है तथा जीवन भर चलता रहता है। इसका सम्बन्ध व्यक्ति के सामाजिक, नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों के विकास से है।

नोट

प्रत्यक्ष शिक्षा व अप्रत्यक्ष शिक्षा

प्रत्यक्ष शिक्षा वह है जो शिक्षार्थी और शिक्षक के बीच आमने-सामने की स्थिति में प्रदान की जाती है। शिक्षक अपने ज्ञान-विज्ञान, अनुभव, आदर्श और उद्देश्य के माध्यम से शिक्षार्थी के ज्ञान का विकास करता है, ताकि वह अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सके। वर्तमान में यह शिक्षा स्कूल, कॉलेज व विश्वविद्यालय के माध्यम से दी जाती है।

अप्रत्यक्ष शिक्षा वह है, जो शिक्षार्थी को अप्रत्यक्ष माध्यम से प्राप्त होता है। इसमें परम्परा, प्रथा, मूल्य, विश्वास, आदि की विशेष भूमिका होती है। इसमें शिक्षण व उपदेश महत्वपूर्ण नहीं होता, बल्कि व्यवहार महत्वपूर्ण होता है। उदाहरणस्वरूप–यदि शिक्षार्थी में समय-निष्ठा व कर्तव्यनिष्ठा को देना है, तो शिक्षक स्वयं समय व कर्त्तव्य का पालन कर शिक्षार्थी को प्रभावित कर सकता है।

वैयक्तिक शिक्षा और सामूहिक शिक्षा

वैयक्तिक शिक्षा वह है जो विद्यार्थी को व्यक्तिगत रूप से और अकेले दी जाती है। इसमें शिक्षार्थी की रूचि, प्रकृति, योग्यता व विभिन्नता का पूरा ध्यान रखा जाता है। इसके अनुकूल ही शिक्षा-विधियों का उपयोग किया जाता है। आज इससे सम्बन्धित अनेक शिक्षण-पद्धतियों की खोज की गई है।

सामूहिक शिक्षा वह है, जो शिक्षार्थियों के समूह को एक साथ दी जाती है। आज स्कूल व कॉलेज में बहुत से शिक्षार्थी को एक साथ वर्ग में बैठकर शिक्षा दी जाती है। इस तरह की शिक्षा में एक ख़ास रुचि व उद्देश्य से सम्बन्धित शिक्षार्थियों का एक वर्ग बन जाता है और इस प्रकार रुचि व उद्देश्य के अनुसार अनेक वर्गों का निर्माण होता है।

सामान्य शिक्षा व विशिष्ट शिक्षा

सामान्य शिक्षा वह है जो सामान्य ज्ञान के लिए दी जाती है। इसके अन्तर्गत अनेक विषयों की जानकारी प्रदान की जाती है। इसका उद्देश्य व्यक्ति के सामान्य बुद्धि को तीव्र करना है। यह शिक्षार्थी को किसी विशेष व्यवसाय के लिए तैयार नहीं करती है।

विशिष्ट शिक्षा वह है, जो विशेष लक्ष्य को ध्यान में रखकर प्रदान की जाती है। इसका उद्देश्य शिक्षार्थी को किसी निश्चित कार्य व व्यवसाय के लिए तैयार करना है। इस शिक्षा की प्राप्ति के बाद व्यक्ति जीवन के एक विशेष क्षेत्र में कार्य करने योग्य समझा जाता है। इंजीनियरिंग, डॉक्टरी, वकालत व एक विशेषीकरण (फैशन यांत्रिकी, बायोटेक्नोलॉजी, एम. बी. ए. आदि) वाले व्यवसाय विशिष्ट शिक्षा के उदाहरण हैं।

अच्छे नागरिकों के निर्माण में सहायक

शिक्षा का प्रकार्य अच्छे नागरिकों का निर्माण करना है। हमारा भारत धर्म-निरपेक्ष प्रजातन्त्र व कल्याणकारी राज्य की स्थापना पर आधारित है। स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व प्रजातन्त्र की आधारशिला है। इस सन्दर्भ में शिक्षा व्यक्ति में स्पष्ट विचार, अनुशासन, सहनशीलता, सहयोग,

देश-प्रेम, आदि अच्छे नागरिकों के गुणों का निर्माण करता है। ऐसे गुणों से युक्त नागरिक ही समाज व राष्ट्र का भला करता है।

नोट

व्यावहारिक ज्ञान के विकास में सहायक

शिक्षा का एक प्रमुख प्रकार्य व्यक्ति को व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना रहा है। सभी प्रगतिशील समाजों में इसे महत्ता प्रदान की गई है। व्यावहारिक ज्ञान–उठना-बैठना, अभिवादन के ढंग, दूसरों के प्रति मानवीयता, समाज में अपने स्थान को दर्शाना आदि–जीने का ढंग है। व्यक्ति को परिवार, समाज, राष्ट्र व मानव-स्तर पर व्यावहारिकता को प्रदर्शित करना है। कंचनलता सबरवाल ने लिखा है, "वह शिक्षा जो व्यक्ति को अक्षर-ज्ञान भले ही करा देती है, किनतु जीवन की रंगशाला में अपना ठीक-ठाक स्थान प्राप्त करना नहीं सिखाती, अपना उद्देश्य किसी प्रकार भी पूरा नहीं कर पाती।"

समाजीकरण में सहायक

व्यक्ति के समाजीकरण में शिक्षा व शिक्षण संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण है। शिक्षा के चार अंग हैं–शिक्षक, साथी, पुस्तक एवं स्कूल व कॉलेज का वातावरण। शिक्षक का व्यक्तित्व शिक्षार्थी को प्रभावित व निर्देशित करता है, फिर स्कूल व कॉलेज के साथी से वह बहुत कुछ सीखता है। पुस्तक के माध्यम से बच्चे अपने ज्ञान-विज्ञान को विकसित करते हैं। इसी क्रम में उसकी बौद्धिक व मानसिक क्षमता का विकास होता है।

सामाजिक परिवर्तन में सहायक

सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में शिक्षा की भूमिका महत्वपूर्ण है। शिक्षा तकनीकी नवीनताओं के लिए आवश्यक दक्षता और अभिरूचियाँ पैदा करती हैं। इसके फलस्वरूप सामाजिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। शिक्षा के प्रभाव में ही खेती में आधुनिक प्रविधियों का उपभोग बढ़ा है। यातायात के नये साधनों, संचार के नये साधनों, अणु शक्ति, स्वास्थ्यवर्द्धक ज्ञान, आदि का विकास शिक्षा की ही देन है। इस सबों के प्रभाव में समाज में चौतरफा परिवर्तन आया है।

संस्कृति का हस्तान्तरण

शिक्षा का एक प्रमुख प्रकार्य मानव संस्कृति का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित करना है। शिक्षा ज्ञान-विज्ञान का आधार है। यह अतीत की महत्वपूर्ण सांस्कृति तत्वों को स्वीकारती है, वर्तमान में उसकी महत्ता को उजागर करती है और फिर उसमें अपना अनुभव जोड़कर उसे आगमी पीढ़ी को हस्तांतरित कर देती है। इस क्रम में संस्कृति उन्नत होती चली जाती है। शिक्षा इस सिद्धान्त में विश्वास करती है कि पुरानी हर चीजें पुरानी नहीं होती है। इसलिए संस्कृति की अच्छाइयों को स्वीकारना और फिर उसे और अधिक अच्छाई के साथ जोड़कर आगे बढ़ाना ही कारगर है।

आर्थिक विकास में सहायक

शिक्षा का एक खास प्रकार्य आर्थिक विकास से है। इसे शिक्षा का विकासपरक स्वरूप कहा जा सकता है। आर्थिक समस्या मानव की सबसे बड़ी समस्या है। आज शिक्षाको अधिकाधिक व्यवसायोन्मुख बनाया जा रहा है। "ज्ञान केवल ज्ञान के लिए' को पर्याप्त नहीं माना जाता है।

अब शिक्षा व्यक्ति को व्यावसायिक ज्ञान एवं प्रशिक्षण देकर अपना तथा अपने आश्रितों का भरण-पोषण करके योग्य बनाती है। दूसरी ओर इस ज्ञान ने आर्थिक व प्रौद्योगिकीय क्षेत्र में गति दी है। आज इसी के बल पर खेती का आधुनिकीकरण हुआ और समाज में औद्योगीकरण का विकास हो रहा है।

नोट

सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता में सहायक

सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भारतीय समाज विभिन्नताओं से युक्त है। यहाँ बहुत से धर्म, परम्पराएँ, भाषाएँ, जातियाँ-जनजातियाँ, प्रजातियाँ, रीति-रिवाज, आदि हैं। शिक्षा का आधार ज्ञान-विज्ञान है। व्यक्ति को ज्ञान के विकास के क्रम में उसमें एक भावना यह बनती है कि वह एक भारतीय है। नागरिक के रूप में उसके दायित्व व कर्तव्य बनते हैं। इस प्रकार की भावनाएँ ही व्यक्तियों में एकता बनाए रखती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि व्यक्ति व समाज व राष्ट्र तीनों ही स्तर पर शिक्षा की महत्ता या प्रकार्य देखे जाते हैं। शिक्षा के अभाव में स्वस्थ व्यक्तित्व व स्वस्थ समाज व स्वस्थ राष्ट्र की कल्पना भी व्यर्थ है।दूरवर्ती-शिक्षा और पारम्परिक शिक्षा (Distance Education and Traditional Education)

शिक्षा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

यह समाजशास्त्र की एक प्रभावशाली शाखा है। यह समाजशास्त्र के उद्देश्यों को शैक्षिक क्रिया द्वारा, जो व्यक्ति तथा समाज क मध्य होती है, प्राप्त करने की चेष्टा करता है। यह इस विषय का विकास भी आधुनिक काल में बड़ी शीघ्रता से हुआ है। इस विकास के सम्बन्ध में कुछ मुख्य शिक्षाशास्त्रियों के नाम उल्लेखनीय है--जार्ज, पायन, जॉन डीवी, डेविड स्नेडेन, सी. सी. पीटर्स, फ्रेडरिक ई. बोल्टन, लायड एलैन कुक, बिलार्ड बॉलर, चार्ज काउन्ट्स, एलसीन डेविस हिन्डा टाबा, हैविडर्स्ट, डोलार्ड, स्यॉलसन, हेलेन जेनिग्स, रॉस फिने अमेरिका के दुर्खीम, फ्रांस के मैक्स बेबर जर्मन के, तथा सर फ्रेड क्लार्क, ओटावे, कार्ल मानहेम इंग्लैण्ड के है। शिक्षा के समाजशास्त्र की इस महान् प्रगति का संर्वाधिक श्रेय जॉन डीवी तथा पेयन महोदय को है। जॉर्ज पेयन ने 1928 ई॰ 'दि प्रिंसिपिल्स ऑफ एजूकेशनल सोशियोलॉजी' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में उन्होंने सामूहिक जीवन पर शिक्षा का प्रभाव तथा शिक्षा पर सामूहिक जीवन के प्रभाव के सम्बन्ध में प्रकाश डाला। उन्होंने सामाजिक प्रतिक्रिया के ज्ञान को शिक्षा द्वारा अध्ययन करना सामाजिक प्रगति का एक आवश्यक अंग माना। उन्होंने प्रतिपादित किया कि शिक्षा का मूल उद्देश्य, व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास, तभी सफलतापूर्वक प्राप्त किया जा सकता है, जब मानव के ऊपर सामाजिक शक्तियों के प्रभाव का गहन अध्ययन किया जाए। इस दृष्टिकोण से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास सामाजिक वातावरण के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रिया पर ही आधारित है।

जॉन डीवी ने भी सामाजिक प्रवृत्तियों का शिक्षा में बहुत महत्वपूर्ण स्थान माना है। उन्होंने अपनी पुस्तकों 'दि स्कूल एण्ड सोसायटी' तथा 'डेमोक्रेसी एण्ड एजूकेशन' द्वारा शिक्षा में व्यक्ति को सामाजिकता के महत्व पर प्रकाश डाला है। उन्होंने कहा कि "व्यक्ति द्वारा जाति की सामाजिक चेतना में भाग लेने से शिक्षा का पूर्ण विकास होता है।" तात्पर्य यह है कि शिक्षा की क्रिया एक सामाजिक प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया पाठशाला द्वारा अपने गन्तव्य को पहुँचती है। अत: पाठशाला एक सामाजिक संस्था है जो समाज को शुद्ध तथा प्रगतिशील बनाती है तथा व्यक्ति को सामाजिकता से परिचित करती है।

नोट

शिक्षा के समाजशास्त्र का अनौपचारिक विकास कुछ प्राचीन एवं मध्ययुगीन विचारकों के व्यक्त विचारों में भी दिखाई देता है। लेकिन इसका व्यवस्थित एवं औपचारिक प्रारम्भ वास्तव में आधुनिक समाजशास्त्रियों एवं सामाजिक मानव-शास्त्रियों ने ही किया। फ्रांस के प्रख्यात समाजशास्त्री इमाइल दुर्खीम इनमें अग्रणी थे।

दुर्खीम फ्रांस के बोर्डियेक्स एवं सोहबो विश्वविद्यालयों से क्रमश: 1887 से 1902 एवं 1902 से 1917 तक समाजशास्त्र के प्राध्यापक रहे थे। सोहबो विश्वविद्यालय में वे समाजशास्त्र के साथ ही शिक्षाशास्त्र के प्राध्यापक भी रहे। बोर्डियेक्स विश्वविद्यालय में कार्य करते समय वे फ्रांस की प्राथमिक पाठशालाओं के कुछ अध्यापकों को प्रत्येक सप्ताह में एक घण्टा शिक्षा सम्बन्धी भाषण दिया करते थे। दुर्खीम ने अपने शिक्षा के समाजशास्त्र सम्बन्धी विचारों को 'एजुकेशन एण्ड सोशियोलॉजी' नामक पुस्तक में रखा है।

समाजशास्त्रियों की सबसे बड़ी संस्था ने 1960 में 'शिक्षा के समाजशास्त्र' का एक पृथक् विभाग स्थापित किया। इस विभाग में लगभग 500 सदस्य है। 1963 से ए.एस.ए ने 'सोशियोलॉजी ऑफ एजुकेशन' के नाम से एक पत्रिका भी प्रकाशित करनी प्रारम्भ कर दी, जो कि मूलत: इसी विषय से सम्बन्धित लेखों के प्रकाशन का कार्य करती है।

भारत में 'शिक्षा के समाजशास्त्र' के विकास में आई. पी. देसाई का योगदान उल्लेखनीय है। आई. पी. देसाई ने 1952 में ही 'स्कूलिंग एण्ड सोश्यल चेंज' पर एक अध्ययन सम्पादित किया था। कोरमैक ने इस सम्बन्ध में प्रथम सम्पूर्ण अध्ययन 'भारतीय विद्यार्थी एवं सामाजिक परिवर्तन' के नाम से 1961 में प्रस्तुत किया। 1964 में शाह ने गुराजत के महाविद्यालयी छात्रों के सामाजिक परिवर्तन' का अध्ययन प्रस्तुत किया। बाई. बी. दामले ने पूना के कॉलेज के छात्रों का अध्ययन 1966 में किया।

एम. एस. गोरे ने 1970 में 'शिक्षा के समाजशास्त्र' के क्षेत्र में महत्वपूर्ण क्षेत्रीय कार्य प्रस्तुत किया। इसके बाद शिक्षा समाजशास्त्र के क्षेत्र में अनेक अध्ययन समय-समय पर प्रस्तुत किये गए। इस प्रकार भारत में शिक्षा का संगठन आरम्भ से ही सामाजिकता की भावना से पूर्ण रहा है। सामाजिक भावना का प्रभाव शिक्षा पर पड़ा, और शिक्षा ने समाज की उन्नति का ध्येय को सामने रखा। शिक्षा के उद्देश्यों में व्यक्तिगत तथा सामाजिक उत्थान एक परम उद्देश्य माना गया है। कर्त्तव्य को महान् महत्ता प्रदान करके भारत के ऋषियों ने समाज सेवा की भावना को भारतवासियों की नस-नस में भर दिया था परन्तु ब्रिटिशकालीन भारत में भारतीय समाज की पूर्ण अवहेलना की गई। यहाँ के नागरिकों पर एक ऐसी शिक्षा प्रणाली थोपी गई जिसका आधार पाश्चात्य सामाजिक जीवन था। फलस्वरूप, शिक्षा प्रणाली दोषों से परिपूर्ण हो गई। स्वतंत्रता के पश्चात् अब इस बात की चेष्टाएँ की जा रही है कि शिक्षा-प्रणाली में सुधार हो, और यह सामाजिक सुधार की भावना से युक्त हो तथा इसकी जड़ें भारतीय समाज के सुन्दर आदर्श, नियम, परंपराओं इत्यादि पर ही रखी हों। अतएव वर्तमान काल में समाज विज्ञान का प्रभाव भारतीय शिक्षा पर शीघ्रता से बढ़ रहा है। इसी कारण एक भावी शिक्षक के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह शिक्षा-समाज-विज्ञान से पूर्णरूपेण अवगत हो।

दूरस्थ शिक्षा

दूसरस्थ शिक्षा वह है जो शिक्षा ग्रहण करने वाले व शिक्षा देने वाले, एक-दूसरे से दूर होते हैं। इसमें सीखने व सिखाने की प्रक्रिया बिना किसी बाधा के चलती रहती है। यह एक सोद्योश्य प्रणाली है। इसकी अपनी विशिष्ट शिक्षण-विधियाँ एवं तकनीक है। सामाजिक दृष्टि से

छात्र क्रियाकलाप

1. दूरवर्ती-शिक्षा के लक्षण के स्वरूप का वर्णन करें?

2. दूरवर्ती-शिक्षा के महत्व की चर्चा करें?

नोट

इस शिक्षा का महत्व "सबों को शिक्षा प्रदान करना' है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह शिक्षा सीखने वालें की आवश्यकताओं, रूचियों व क्षमता पर आधारित है। इस शिक्षा का साधन पत्राचार, रेडियों और दूरदर्शन आदि हैं। इसे अन्य अनेक नामों से पुकारा जाता है–पत्राचार-शिक्षा, गृह-अध्ययन, स्वतंत्र अध्ययन, आजीवन शिक्षा, बाह्य अध्ययन, दुरस्थ अधिगम या शिक्षण और खुली या मुक्त शिक्षा।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि शिक्षा के अनेक प्रकार हैं। यह व्यक्ति की रूचि व क्षमता और समाज की व्यवस्था पर निर्भर करता है कि कौन सा प्रकार कारगर व उपयोगी होगा। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में शिक्षा व्यवस्था एक उप-सामाज़िक व्यवस्था के रूप में विद्यमान है। साथ ही सामाजिक व्यवस्था के अन्य कई उप-व्यवसथाएँ हैं, जैसे परिवार, धर्म, जाति, आर्थिक, राजनीति, कानून, अधिकारी तंत्र आदि। शिक्षा का इन उप-सामाजिक व्यवस्था से परस्पर सम्बन्ध का होना स्वाभाविक है, इसलिए शिक्षा के अनेक रूप हैं।

पारम्परिक शिक्षा के प्रकार या स्वरूप

शिक्षा के अनेक रूप बतलाये जाते हैं। यह नियमित रूप में दिया जाता है तथा अनियमित यानि स्वाभाविक रूप में भी। यह प्रत्यक्ष रूप में दिया जाता है। तथा अप्रत्यक्ष रूप में भी। यह वैयक्तिक होता है व सामूहिक भी। यह सामान्य होता है व विशिष्ट भी। इस प्रकार शिक्षा के प्रकार को निम्नांकित रूप में समझा जा सकता है–

औपचारिक शिक्षा व अनौपचारिक शिक्षा

अनौपचारिक शिक्षा वह है, जो व्यक्ति को निश्चित ध्येय व निश्चित योजना के अनुसार दी जाती है। यह कुछ विशेष संस्थाओं–स्कूल, कॉलेज एवं युनिवर्सिटी आदि–के माध्यम से दी जाती है। यह प्राय: 3 वर्ष की आयु से प्रारम्भ होता है और प्राय: 25 वर्ष की आयु तक चलता रहता है। इस शिक्षा के मूल त्तव शिक्षार्थी, शिक्षक और शिक्षण-सामग्री माने जाते हैं। यह व्यवसायोन्मुख होता है।

अनौपचारिक शिक्षा वह है जो व्यक्ति को समाजीकरण के क्रम में दी जाती है। इसे व्यक्ति परिवार, पड़ोस, खेल-समूह, यात्रा, पर्व-त्योहार आदि के संदर्भ में प्राप्त करता है। यह जन्म से शुरू हो जाता है तथा जीवन भर चलता रहता है। इसका सम्बन्ध व्यक्ति के सामाजिक, नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों के विकास से है।

प्रत्यक्ष शिक्षा व अप्रत्यक्ष शिक्षा

प्रत्यक्ष शिक्षा वह है जो शिक्षार्थी और शिक्षक के बीच आमने-सामने की स्थिति में प्रदान की जाती है। शिक्षक अपने ज्ञान-विज्ञान, अनुभव, आदर्श और उद्देश्य के माध्यम से शिक्षार्थी के ज्ञान का विकास करता है, ताकि वह अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सके। वर्तमान में यह शिक्षा स्कूल, कॉलेज व विश्वविद्यालय के माध्यम से दी जाती है।

अप्रत्यक्ष शिक्षा वह है, जो शिक्षार्थी को अप्रत्यक्ष माध्यम से प्राप्त होता है। इसमें परम्परा, प्रथा, मूल्य, विश्वास, आदि की विशेष भूमिका होती है। इसमें शिक्षण व उपदेश महत्वपूर्ण नहीं होता, बल्कि व्यवहार महत्वपूर्ण होता है। उदाहरणस्वरूप–यदि शिक्षार्थी में समय-निष्ठा, व कर्तव्यनिष्ठा को देना है, तो शिक्षक स्वयं समय व कर्त्तव्य का पालन कर शिक्षार्थी को प्रभावित कर सकता है।

नोट

वैयक्तिक शिक्षा और सामूहिक शिक्षा

वैयक्तिक शिक्षा वह है जो विद्यार्थी को व्यक्तिगत रूप से और अकेले दी जाती है। इसमें शिक्षार्थी की रूचि, प्रकृति, योग्यता व विभिन्नता का पूरा ध्यान रखा जाता है। इसके अनुकूल ही शिक्षा-विधियों का उपयोग किया जाता है। आज इससे सम्बन्धित अनेक शिक्षण-पद्धतियों की खोज की गई है।

सामूहिक शिक्षा वह है, जो शिक्षार्थियों के समूह को एक साथ दी जाती है। आज स्कूल व कॉलेज में बहुत से शिक्षार्थी को एक साथ वर्ग में बैठकर शिक्षा दी जाती है। इस तरह की शिक्षा में एक खास रुचि व उद्देश्य से सम्बन्धित शिक्षार्थियों का एक वर्ग बन जाता है और इस प्रकार रुचि व उद्देश्य के अनुसार अनेक वर्गों का निर्माण होता है।

सामान्य शिक्षा व विशिष्ट शिक्षा

सामान्य शिक्षा वह है जो सामान्य ज्ञान के लिए दी जाती है। इसके अन्तर्गत अनेक विषयों की जानकारी प्रदान की जाती है। इसका उद्देश्य व्यक्ति के सामान्य बुद्धि को तीव्र करना है। यह शिक्षार्थी को किसी विशेष व्यवसाय के लिए तैयार नहीं करती है।

विशिष्ट शिक्षा वह है, जो विशेष लक्ष्य को ध्यान में रखकर प्रदान की जाती है। इसका उद्देश्य शिक्षार्थी को किसी निश्चित कार्य व व्यवसाय के लिए तैयार करना है। इस शिक्षा की प्राप्ति के बाद व्यक्ति जीवन के एक विशेष क्षेत्र में कार्य करने योग्य समझा जाता है। इंजीनियरिंग, डॉक्टरी, वकालत व एक विशेषीकरण (फैशन यांत्रिकी, बायोटेक्नोलॉजी, एम. बी. ए. आदि) वाले व्यवसाय विशिष्ट शिक्षा के उदाहरण हैं।

अच्छे नागरिकों के निर्माण में सहायक

शिक्षा का प्रकार्य अच्छे नागरिकों का निर्माण करना है। हमारा भारत धर्म-निरपेक्ष प्रजातन्त्र व कल्याणकारी राज्य की स्थापना पर आधारित है। स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व प्रजातन्त्र की आधारशिला है। इस सन्दर्भ में शिक्षा व्यक्ति में स्पष्ट विचार, अनुशासन, सहनशीलता, सहयोग, देश-प्रेम, आदि अच्छे नागरिकों के गुणों का निर्माण करता है। ऐसे गुणों से युक्त नागरिक ही समाज व राष्ट्र का भला करता है।

व्यावहारिक ज्ञान के विकास में सहायक

शिक्षा का एक प्रमुख प्रकार्य व्यक्ति को व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना रहा है। सभी प्रगतिशील समाजों में इसे महत्ता प्रदान की गई है। व्यावहारिक ज्ञान–उठना-बैठना, अभिवादन के ढंग, दूसरों के प्रति मानवीयता, समाज में अपने स्थान को दर्शाना आदि–जीने का ढंग है। व्यक्ति को परिवार, समाज, राष्ट्र व मानव-स्तर पर व्यावहारिकता को प्रदर्शित करना है। कंचनलता सबरवाल ने लिखा है, "वह शिक्षा जो व्यक्ति को अक्षर-ज्ञान भले ही करा देती है, किनतु जीवन की रंगशाला में अपना ठीक-ठाक स्थान प्राप्त करना नहीं सिखाती, अपना उद्देश्य किसी प्रकार भी पूरा नहीं कर पाती।"

समाजीकरण में सहायक

व्यक्ति के समाजीकरण में शिक्षा व शिक्षण संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण है। शिक्षा के चार अंग हैं–शिक्षक, साथी, पुस्तक एवं स्कूल व कॉलेज का वातावरण। शिक्षक का व्यक्तित्व शिक्षार्थी को प्रभावित व निर्देशित करता है, फिर स्कूल व कॉलेज के साथी से वह बहुत कुछ

सीखता है। पुस्तक के माध्यम से बच्चे अपने ज्ञान-विज्ञान को विकसित करते हैं। इसी क्रम में उसकी बौद्धिक व मानसिक क्षमता का विकास होता है।

नोट

सामाजिक परिवर्तन में सहायक

सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में शिक्षा की भूमिका महत्वपूर्ण है। शिक्षा तकनीकी नवीनताओं के लिए आवश्यक दक्षता और अभिरूचियाँ पैदा करती हैं। इसके फलस्वरूप सामाजिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। शिक्षा के प्रभाव में ही खेती में आधुनिक प्रविधियों का उपभोग बढ़ा है। यातायात के नये साधनों, संचार के नये साधनों, अणु शक्ति, स्वास्थ्यवर्द्धक ज्ञान, आदि का विकास शिक्षा की ही देन है। इस सबों के प्रभाव में समाज में चौतरफा परिवर्तन आया है।

संस्कृति का हस्तान्तरण

शिक्षा का एक प्रमुख प्रकार्य मानव संस्कृति का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित करना है। शिक्षा ज्ञान-विज्ञान का आधार है। यह अतीत की महत्वपूर्ण सांस्कृति तत्वों को स्वीकारती है, वर्तमान में उसकी महत्ता को उजागर करती है और फिर उसमें अपना अनुभव जोड़कर उसे आगमी पीढ़ी को हस्तांतरित कर देती है। इस क्रम में संस्कृति उन्नत होती चली जाती है। शिक्षा इस सिद्धान्त में विश्वास करती है कि पुरानी हर चीजें पुरानी नहीं होती है। इसलिए संस्कृति की अच्छाइयों को स्वीकारना और फिर उसे और अधिक अच्छाई के साथ जोड़कर आगे बढ़ाना ही कारगर है।

आर्थिक विकास में सहायक

शिक्षा का एक खास प्रकार्य आर्थिक विकास से है। इसे शिक्षा का विकासपरक स्वरूप कहा जा सकता है। आर्थिक समस्या मानव की सबसे बड़ी समस्या है। आज शिक्षाको अधिकाधिक व्यवसायोन्मुख बनाया जा रहा है। "ज्ञान केवल ज्ञान के लिए' को पर्याप्त नहीं माना जाता है।

अब शिक्षा व्यक्ति को व्यावसायिक ज्ञान एवं प्रशिक्षण देकर अपना तथा अपने आश्रितों का भरण-पोषण करके योग्य बनाती है। दूसरी ओर इस ज्ञान ने आर्थिक व प्रौद्योगिकीय क्षेत्र में गति दी है। आज इसी के बल पर खेती का आधुनिकीकरण हुआ और समाज में औद्योगीकरण का विकास हो रहा है।

सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता में सहायक

सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भारतीय समाज विभिन्नताओं से युक्त है। यहाँ बहुत से धर्म, परम्पराएँ, भाषाएँ, जातियाँ-जनजातियाँ, प्रजातियाँ, रीति-रिवाज, आदि हैं। शिक्षा का आधार ज्ञान-विज्ञान है। व्यक्ति को ज्ञान के विकास के क्रम में उसमें एक भावना यह बनती है कि वह एक भारतीय है। नागरिक के रूप में उसके दायित्व व कर्तव्य बनते हैं। इस प्रकार की भावनाएँ ही व्यक्तियों में एकता बनाए रखती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि व्यक्ति व समाज व राष्ट्र तीनों ही स्तर पर शिक्षा की महत्ता या प्रकार्य देखे जाते हैं। शिक्षा के अभाव में स्वस्थ व्यक्तिव व स्वस्थ समाज व स्वस्थ राष्ट्र की कल्पना भी व्यर्थ है।

दूरवर्ती-शिक्षा की अवधारणायें (Assumpation of Distance Education)

नोट

दूरवर्ती-शिक्षा की प्रमुख आवधारणायें निम्नलिखित हैं-

1. शिक्षा को पहले अनेक अवरोधों तथा परिसिीतियों का सामना करना पढ़ा, जिस कारण ये समाज की आवश्यकताओं को र्ण करने तथा समाज को बदलने में असमर्थ है। कुछ स्थितियों मं शिक्षा प्रणाली स्वराज्य व सामाजिक अवरोधन प्राप्त कर सकती है, अपन चारों तरफ के संसार के स्वरूप से अलग विकास कर सकती है।
2. सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक मांगों के प्रति शिक्षा के जो दायित्व हैं, वह मुख्य रूप से समाज के स्वरूप पर निर्भर करतें हैं तथा विकास जो समाज द्वारा मान्य है। इस विचार के अनुसार काई भी भारत की शैक्षि प्रणाली को देख सकता है जो कि भारतीय समाज की रूढिवादिता को प्रतिबिम्बित करता है। यह किसी नये परिवर्तन को जन्म नही देगा जब तक की समाजिक-राजनीतिक समूह केमूल्य अतीत की बाधाओं को दूर नही करते तथा भविष्य के लिए नयें विकल्पों का चुनाव नही करतें इसलिए दूरवर्ती-शिक्षा द्वारा प्राप्त उपाधि भारतीय समाज पर कुछ समय तक एक कलंक है, जब तक राजनैतिक दबाव से सारा सामाजिक स्वरूप उन्नति न करें। जब भी जिस प्रकार से इसका प्रचार हुआ है, उससे प्रतीत होता है कि भारत में दूरवर्ती-शिक्षा तीव्रता से विकास कर रही है।
3. शिक्षकों का यह उत्तरदायित्व है कि उन्हें एक नये समाज तथा अच्छें भविष्य की स्थापना करनी है जिसमें शिक्षा सभी के लिए व्यापक रूप से उपलब्ध होगी तथा समाजिक विकास में सभी व्यक्तियों का सहयोग करेंगे।

इस प्रकार वह कह सकतें हैं कि दूरवर्ती-शिक्षा नीति साधनों व महत्वों के सम्बन्ध को नही प्रदर्शित करती है। यह गहराई में उन प्रशनों से सम्बन्धि है जो सामाजिक भगों से जुडें है। इन मांगों को, प्रभाव समूह की रूचियों व राजनैतिक शक्तियां तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहायता के जाल से अलग नही किया जा सकता है। इसलिए शिक्षा के लिए कार्यक्रम पर वाद-विवाद उसके द्वारा दर्शाई गई सामाजिक सीमाओं तक ही सीमित है।

सामाजिक आवश्यकताओं को दर्शाने के अतिरिक्त, शैक्षिक योजना को वास्तविक होने के लिए न केवल उपलब्ध समाजों बल्कि सरलता से न हटने वाले अवरोंधों तथा उद्देश्य प्राप्त करने में सहायक माध्यमों की ओर ध्यान देना होगा। दूरवर्ती-शिक्षा एक ऐसा विल्प देती है जो साधनों तथा वर्तामान अवरोधों की चुनौति को स्वीकार करती है तथा उपलब्ध साधनों को आवश्यक अनेदेशान देने के लिए प्रयोग करती है। इस प्रकारदूरवर्ती-शिषक्षा, यथार्थ आवश्यकता के लिए एक समाधान है और शिक्षा नीतिं में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है।

दूरवर्ती-शिक्षा क विषय-वस्तु निम्नलिखित अवधारणाओं पर आधारित है-

1. छात्र अधिगम के लिए शिक्षण की विि व माध्यम प्रभावशाली है।
2. मुद्रित व अमुद्रित संचार माध्यम दूरवर्ती छात्रों के लिए प्रभावशाली है।
3. दूरवर्ती-शिक्षा के लिए कौशलों का प्रयास व प्रयोग के अवसर प्रदान करना।
4. पृष्ठ-पोषण प्रणाली व तकनीकी माध्यम का दूरवर्ती-शिक्षण में प्रयोग करना।
5. दूरवर्ती-शिक्षा की सहायता से सामाजिक व राष्ट्रीय उद्देश्यों की पुर्ति करना।

दूरवर्ती-शिक्षण की प्रमुख अवधारणायें निम्नांकित हैं-

नोट

1. दूरवर्ती-शिक्षण में अन्त: प्रकिया पाठ्यवसतु के प्रस्तुतिकरण से होता है जो अनुकरणीय परिस्थिति होती है। विशेषकर छात्रों को पाठ्यक्रमों से अन्त: प्रकिया करनी होती है।
2. जो अध्ययन तथा अध्यापन समूहों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध उनकी भावात्मक लगन पर निर्भर होते हैं, जिसे शिक्षण तथा अधिगम का आनन्द कह सकते हैं।
3. अधिगम का आनन्द ही छात्रों को अध्ययन हेतू अभिप्रेरित करता है।
4. छात्रों का अध्ययन में सक्रिय होना ही छात्रों की अभिप्रेरणा का सूचक होता है।
5. छात्रों की अभिप्रेरणा की उनके अध्ययन में सहायक होती है।?
6. शिक्षण की प्रभावशीलता का मानदण्ड 'छात्रों का अधिगम होता है।
7. मधुर सम्बन्ध, सरल पहुँच तथा पाठ्यक्रम का व्यवस्थित स्वरूप मे छात्रों को अध्ययन से आनन्द मिलता है।
8. दूरवर्ती-शिक्षण में एक-मार्गीय तथा द्विमार्गीय सम्प्रेषण प्रयुक्त करना चाहिए। द्वि-मार्गीय-सम्प्रेषण द्वारा छात्रों को अध्ययन हेतू परामर्श तथा निर्देशन देना चाहिए।

दूरवर्ती-शिक्षा के मूल तत्व (Basic Elements of Distance Education)

संगठन व संरचना की दृष्टि से दूरवर्ती-शिक्षा बहुत ही व्यापक प्रणाली है। संचार के यह छात्र तथा शिक्षक के मध्य की दूरी को पुरी करता है।

दूरवर्ती-शिक्षा की कार्यविधियों में एक प्रकार की संरचना देख सकतें है। इस संरचना की व्याख्या करने के लिए हमें इसके प्रमूख तत्वों की सहायता लेनी होगी, यह तत्व निम्नलिखित हैं-

1. **मुद्रित सामग्री:** इसमें पत्रिकायें, पुस्तकें तथा स्वत- शिक्षण की संक्षिप्त पुस्तके तथा निर्देशिका सम्मिलित की जाती है। यह मुद्रित सामग्री दूरवर्ती-शिक्षा की अधिगम आव्यूह का प्रमुख अंग है।
2. **श्रव्य-दृश्य सामग्री:** इसमें स्लाइड्स, चलचित तथा श्रव्य-दृष्य टेप आते हैं। यह एक प्रकार का अप्रत्यक्ष शिक्षण है।
3. **रेडियो एवं दूरदर्शन:** इसमें सभी के लिए माध्यमों का प्रयोग अधिगम कार्यक्रमों के सारण व प्रदर्शन के किया जा सकता है। इनके द्वारा घर में परिसर का सा माहौल बन जाता है। यह एक प्रकार के अध्ययन तथा गृहकार्य का कार्यक्रम देते हैं।
4. **कम्प्यूटर की सहायता से अधिगम:** यह भी एक प्रकार का अप्रत्यक्ष अधिगम है, आजकल इसका प्रयोग अधिकता से हो रहा है।
5. **अध्ययन समूह:** यह छात्रों के बच अनौपचारिक आमना-सामना कराता है जो स्वयं अपनी कठिनाईयों को समझने के लिए आतें हैं।

संरचना के इन मूलभमत तत्वों का दूरवर्ती-शिक्षा का दूरवर्ती-शिक्षण अधिगम प्रणाली कहा जा सकता है। इन्होंनें ही दूरवर्ती-शिक्षण संस्था जिन्हें मुक्त विश्वविद्यालय कहा जाता है, यह दूरवर्ती-शिक्षा का प्रणाली का व्यवहारिक रूप है।

दूरवर्ती-शिक्षण प्रणाली अन्तर्राष्ट्रीय स्तर बहुत प्रसिद्ध है परन्तु अलग-अलग देशों में भिन्न-भिन्न नामोंसे जानी जाती है, जो मिन्मलिखित हैं-

1. **बाहा प्रणाली/अध्ययन:** इन शब्दों का प्रयोग ऑस्ट्रैलिया में किया जाता है। यदी किसी व्यक्ति को गड़बड़ी में डाल सकता है जब वह लंदन वाली बाहा प्रणाली के अबारे में सोचे। लंदन प्रतिमान की 'बाह्य प्रणाली' ने छात्रों का प्रमाणित परिक्षाओं में

छात्र क्रियाकलाप

1. दूरवर्ती-शिक्षा की अवधारणाये बतायें?

2. दूरवर्ती-शिक्षा के मूल तत्व का वर्णन करें?

नोट

बैठना सम्भव कर दिया है, लेकिन इस प्रणाली से आवश्यक रूप से शिक्षण जुडा हंआ नही है। ऑस्ट्रेलिया ने इस शब्द का प्रयोग प्रत्यक्ष कारणों सक किया है।

2. **एक्ट्रा-म्यूरल प्रणाली:** इस शब्द का प्रयोग न्यूजीलैंड में हुआ।
3. स्वतन्त्र अध्ययन वैडमेयर द्वारा लिखित दूरवर्ती-शिक्षा की परिभाषा में हमने इस शब्द को पिस्तार से पढ़ा। वास्तव में वैडमंयर के लेखों के द्वारा यह शब्द 'उत्तर अमेरिका' में प्रसिद्ध हुआ।
4. **गृह अध्ययन:** यह शब्द केवल युरोप में ही सीमित है, सम्भवत: पत्राचार कार्यक्रमों के स्वीडिश स्कूलों के प्रभव से। तब भी, इसका कनाडा के कुछ स्थानों में व अमेरिका में होता है।
5. **परिसर के बाहर अध्ययन:** शिक्षा संस्थाओं के परिसर के अन्तर्गत शिक्षण नही होता है, अपितु छात्र अपने घरों पर, अध्ययन केंद्रों पर तथा पुस्तकालयों के अध्ययन करते है, परन्तु उन्हें अध्ययन के सभी सुविधाऐं प्रदान की जाती हैं।

दूरवर्ती-शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Distance Education)

दूरवर्ती-शिक्षा के निम्नलिखित मुख्य उद्देश्य हैं-

1. ज्ञान व अधिगम को विभिन्न उपायों से बढ़ना और भिन्न-भिन्न स्थानों तक पहुंचाना।
2. अध्ययन के लिए दुसरा अवसर प्रदान करना जो पहले अवसर को खों चुकें हैं।
3. उन लोंगों को शिक्षा के अवसर प्रदान करना जो शिक्षा की रूढिवादी प्रणाली में नही जा सकते, परन्तु शिक्षण ग्रहण करना चाहतें हैं।
4. कुछ उद्देश्यों में वैज्ञानिक तथा तकनीकी मानव शक्त की कमी है तथा परम्परागत प्रणाली इस मांग को पूरा करने में असमर्थ है। दूरवर्ती शिक्षा तथा मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना इन लोंगों को पूरा करने के लिए हुई है।
5. शिक्षा वेस्तर को सुंधारने के लिए यह आवश्यक है कि देश की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा प्रदान की जाये तथा कार्यरत व्यक्तियों व ग्रहिणयों को जीवनपर्यनत शिक्षा प्रदान की जाये।
6. दूरवर्ती-शिक्षा तथा मुक्त विश्व्वविद्यालयों को बनेक उद्देश्य माध्यमिक स्तर पर छात्रो के अबाव को कम करता है।
7. इन्द्रा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालयों के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-
   - अधिकांश जनसंख्या को उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करना है।
   - शिक्षा के स्तर को उठाना है।
   - दूरवर्ती-शिक्षा प्रणाली को बढावा देना है।
   - देश में शिक्षा के स्तर को निर्धारित करना व बनाये रखना है।
8. वह हमारे संविधान के प्रविधान को बढावा देता है, जोकि सभी को शिक्षा के सतान अवसर प्रदान करना है।

दूरवर्ती-शिक्षा के कार्य (Functions of Distance Education)

औपचारिक शिषक्षा समाज के उच्च स्तर तक सीमित रही है। परम्परागत शिक्षा व्यक्तिगत

संचार पर आधारित है तथा दूरवर्ती-शिक्षा औद्योगिक तथा तकनीकी संचार पर आधारित है। दूरवर्ती-शिक्षा की प्रकृति दूरवर्ती-शिक्षा के मीलभूत स्वरूप पर प्रकाश डालती है, जैसे कि-

1. प्रवेश के विभेदीकरण की आवश्यकता की पुर्ति करना।
2. सभी का शिक्षा ग्रहण करने का समान अवसर प्रदान करना।
3. संवारत छात्रों के लिए सफलता पर आधारित कार्यक्रम तैयार करना।
4. विविध प्रकार की शिक्षण आव्युहों क प्रयोग करना जो छात्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके
5. समानता के प्रत्यय का विकास करना।
6. यह सबसे लचीला शैक्षिक कार्यक्रम है जिसेसमय व स्थान पर सीमित नही किया जाता।
7. इसे प्राथमिक शिक्षा से उच्च स्तर की शिक्षा तक प्रयोग किया जा सकता है।
8. इस प्रणाली के अन्तर्गत छात्र अनी गति के अनुसार प्रगति करता है। स्वाध्याय को प्रोत्साहित किया जाता है।
9. यह नियमित छात्रों की शिक्षा को एक अलग प्रणाली के रूप में स्थानान्तरित करता है।
10. यह शैक्षिक प्रणाली में मुद्रित तथा अमुद्रित संचार का प्रयोग करता है।
11. यह भारतीय संविधान क आवश्यकताओं को पूरा करता है तथा शिक्षा को मितव्ययी बनाता है।

नोट

दूरवर्ती-शिक्षा का क्षेत्र (Scope of Distance Education)

यह अवधारणा है कि दूरवर्ती-शिक्षा कुछ प्रमुख व चेने हूए विषयों के लिए ही उचित है। इस सन्दर्भ में विषयों के स्वरूप को महत्व नही दिया जाता, कुछ अन्य कारणों से दूरवर्ती-शिक्षा को कुछ विषयों के लिए उपयुक्त माना जाता है जो पूर्ण स्प से पाठ्य सामर्गी पर आधारित है जैसे कि ज्ञानात्मक उद्देश्य तथा अधिगम प्रमुख रूप से कला विषयों में। श्रव्यटेप, प्रयोगशाला, कम्प्यूटर कार्यक्रम, टेलीफोन सम्पर्क और अन्य माध्यमों के द्वारा बहुत से अन्य विषयों को दूरवर्ती-शिक्षा द्वारा पढाया व लिखाया जा सकता है। वास्तव में दूरवर्ती-शिक्षा पाठ्क्रमों के माध्यम से भाषा अधिगम के परिणाम असधारण रूप से अच्छें हैं, जहां तक उच्चारण से सम्बन्ध है।

1. कुछ कार्य जिनमें उपकारणों की आवश्यकता होती है तथा दूरी के छात्र को उपलब्ध नही होते, या कुछ प्रयोग जो कि हानिकारक सिद्ध हो सकतें हैं, जब तक की वह किसी विषय विशेषज्ञ के पर्यवेक्षण न किये जाये तथा इसके लिए आनमें -सामनें शिक्षण की व्यवस्था होना आवश्यक है।
2. विकाशील देशों तथा अन्य स्थानों पर कौशलों का प्रशिक्षण, जो कि क्रियात्मक पक्ष है तथा जिसकी सबसे अधिक आवश्यकता प्राथमिक स्तर पर होती है इसको प्रदान करना एक समस्या है।
3. दूरवर्ती-शिक्षा यह दावा करती है कि वह छात्र जो आनमे-सामने के अनुदेशन से लाभ नही उठा पा रहें है उन्हें इसके द्वारा लाभ पहुचाया जा सकता है। जब तक की काई विशेष साधनों का प्रयोग न किया जाये, यह एक व्यक्तिगत क्रिया है और प्रमुख

नोट

रूप से प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए अध्ययन का साधन है, जो कि अपना अधिगम का मार्ग स्वयं निर्धारित करतें हैं।

4. दूरवर्ती-शिक्षा प्रौढ व्यत्यिों, सेवारत, व्यक्तियों, समाजसेवियों, महिलायों तथा देश के आन्तरिक क्षेत्रों में रहने वालों को अधिक अधिक आक़र्षित करती है। दूरचर्ती-शिक्षा विद्यालयी छात्रों के लिए भी प्रयुक्त की जाती है, परतु इसका प्रयोग विशिष्ट परिस्थितियों में ही किया जाता है
5. दूरवर्ती-छात्र की परिपक्कता इस सन्दर्भ में छात्र स्वतन्त्रता की योग्यता को दर्शाती है। सूक्षम में इसका अर्थ अध्ययन कार्यक्रम की स्वतन्त्रता से है। जैसे की कहां और कब अधिगम किया जाये एक समय में कितने पाठ का अध्ययन किया जाये, कब और कितना विश्राम किया जाये, कब और कितने अन्तराल पर पाठ दुहराया जाये व अभ्यास किया जाये आदि। यह स्वतन्त्रता बहुत आगे तक जा सकती है, पूर्ण रूप से अपनी क्षमता के अनुसार परिक्षा समय का स्वतन्त्र चुनाव, अधिगम, उद्देश्य का पाठ् वस्तु का चुनाव करना है। छात्र स्वतन्त्रता कितंनी दूर तक जानी चाहिये व जा सकती है, यह झगडे की जड़ है। इतना कहना पार्याप्त है है कि नि:सन्देह दूरवर्ती-शिक्षा में छात्र स्वतन्त्रता के लिए विशेष स्थान है।

   दूरर्ती-शिक्षा में भावात्मक-अधिगम को भी महत्व दिया जाता है, जबकि पत्राचार शिक्षा में ज्ञानात्मक-अधिगम को भी महत्व देते हैं। छात्रों की अभिवृत्तियों तथा मुल्यों का विकास किया जाताहै। इस प्रकार के शौध कार्य स्वीडन, ब्रिटेन में हुये हैं। दूरदर्शन पर जो कार्यक्रम दिये जातें हैं उनके माध्यम से भावात्मक पक्ष को विकास होता है। इस प्रकार दूरवर्ती-शिक्षा से ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक तउद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। यही उद्देश्य परम्परागत शिक्षा द्वारा प्राप्त किये जातें हैं।
6. इसी प्रकार, दूरवर्ती-शिक्षा की प्रकृति में- यह व्यक्तिगत छात्र को स्वाध्याय में सहायता पहुंचाती है जो ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा पक्षों से सम्बन्धित है। अधिक आर्थिक लाभ के संचार का एक माध्यम है। व्यक्तिगत इकाई और सभी के लिए संचार एक प्रकार के समस्या के रूप में सामने आ सकता है। व्यक्तिगत पहुंच और और बोलचाल के प्रकार अनेक प्रकार के हैं। सभी के संचार कार्यक्रम बनाने में व्यवहारिक औ़गिक विधियों में योजना विचारयुक्त विधि, श्रम का विभाजन, मशीनीकरण और नियन्त्रण व जाँक को महत्व दिया है। पीटर ने इन विधियों पर यथाक्रम अध्ययन किया है तथा इनकी तुलना औद्योगिक कार्यो से ही है। इन्होंनें दूरवर्ती अध्ययन को शिक्षण व अधिगम को औद्योगिक रूप में समझाया है।
7. प्रयुक्त की गयी तकनीकी की पहुँच, व्यक्तिगत संचार की वार्तालाप प्रगति को दूरवर्ती अध्ययन के प्रभावशाली लक्षण से अलग नही करती है। यह कम्प्यूटर संचार के समय में भी प्रयुक्त होती है।
8. दूरवर्ती-संस्थान स्वाध्याय है लेकिन छात्र अकेला नही होता। उसको पाठ्पस्तु तथा अध्यापक से परस्पर सम्बन्ध और सहायक प्रणाली जो कि दूरवर्ती शिक्षण संस्थानों द्वारा प्रयोग की जाती हैं, उससे अधिक लाभ पहुचता है। द्वि-मार्गी संचार से एक प्रकार का वार्तालाप होता है जो लिखित या अन्य माध्यमों द्वारा छात्र व उसके अध्यापक व कुछ अन्य सहायक संबगठन के बीच होता है। अगर इस एक-मार्गी संचार को निजी पहुंच कहें तो इसमें छात्र पाठ्वस्तु पर स्वयं वाद-विवाद करतें हैं।

इसलिए यह वार्तालाप वास्तविक और बनावटी दोनों हैं। यह बनावटी वार्तालाप न केवल लुइस द्वारा कहा गया, अन्त ही वार्तालाप है जो कि पाठ् के अध्ययन उप्तन्न हाती है बल्कि यीह पाठ् मिर्माताओं व छात्र के बीच सम्बन्ध है। प्रस्तुतीकरण का यह ढंग क्रियाओं को प्रोत्साहित करता है, विचार-शक्ति लागु करता है। समर्थन व विरोध में वाद-विवाद पुँरानों अनुभवों से सम्बन्ध रखता है और इसी कारण विचारों की श्रंख्ला का त्याग करता है।

यह वाद-विवाद दर्शाता है कि दूरवर्ती-शिक्षा का बहुत अधिक प्रयोग सम्भावित है न वेवल स्वतन्त्र अध्ययन जो प्रौढो को आकर्षित करता है बल्कि सभी के शिक्षा जिसे औद्योगिक विधि यों के स्प से बताया गया है तथा उच्च व्यक्तिगत अध्ययन के लिए और निजि पहुंच, शिक्षण व अधिगम् के बीच अधिक सम्बन्ध के साथ प्रदान करता है।

दूरवर्ती-शिक्षा के सिद्धान्त के आधार (Basis of a Theory Ditance Education)

दूरवर्ती-शिक्षा के सिद्धान्त में दूरवर्ती छात्र के शिक्षण तथा अधिगम सम्वन्धी चरों के सम्बन्ध ों तथा उनके पुर्वानुमानों की व्याख्या हाती है। यहों पर दूरवर्ती-शिक्षा तथा अधिगम के चरों सम्बन्धों अपार्थन करने का प्रयास किया गया है। इस स्तर पर दूरवर्ती-शिक्षा के सम्बन्ध में विचारों को व्यवस्थित किया गया है। इसके अन्तर्गत दूरवर्ती-शिक्षा की विशेशषताओं पर ही विचार किया है। पशिचिम देशों में विकसित विचार अय विकासशील देशों में सार्थक हो सकतें हैं। इन विचारों को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है-

सामान्य अधिनियम, सिद्धान्त के आधार के रूप में

व्यक्तिगत अधिगम, सहायक अध्ययन, सम्प्रेष्ण प्रणली तथा छात्र की स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में अनेक आधार हैं जो दूरवर्ती-शिक्षा के सिद्धान्त के प्रतिपादन में उपयोगी है-

1. अधिगम मूल रूप में व्यक्तिबत प्रक्रिया है। अध्ययन की सहायक सुविधायें व्यक्तिगत अधिगम प्रक्रिया, शिक्षा का अभिन्न अंग है।
2. व्यक्तिगत अधिगम के लिए लगातार सहायक प्रणली की आवश्यकता नही होती है- जैसा औपचारिक शिक्षण में किया जाता है। दूरवर्ती-शिक्षा में छात्रों की आवश्यकताओं के अनुरूप समुचित सहायक प्रणाली प्रयुक्त की जाती है।
3. छात्रों के अध्ययन के लिए एक-मार्गीय प्रस्तुतीकरण पार्याप्त होता है, परन्तु अन्त-प्रक्रिया के लिए तथा सहायक अध्ययन प्रणाली हेतु द्वि-मार्गी सम्प्रेशण का प्रयोग किया जाता है।
4. द्वि-मार्गीय सम्प्रष्ण के अन्तर्गत निर्देशन तथा परामर्श किया जाता है जिससे छात्रों को लिखने में सफलता होती है।
5. दूरवर्ती-शिक्षा में अधिगम तथा सहायक प्रणाली की व्यवथा सतत् नहीं होती है, यह इसकी प्रमुख विशेषता मानी जाती है।
6. दूरवर्ती-शिक्षा में छात्रों की विशिष्ट क्षमताओं के विकास के लिये अवसर दिया जाता हे। छात्र स्वयं अपने उद्देश्यों के अनुरूप पाठ्यक्रमों का चयन करते हैं। इस प्रकार की सुविधायें तथा अवसर उपलब्ध होने चाहियें।

नोट

दूरवर्ती-शिक्षा की विधियों का माध्यम

शिक्षण वह प्रक्रिया तथा साधन माना जाता है जिसके द्वारा सीखने हेतु समुचित परिस्थिति उत्पन्न की जाती है। शिक्षण में अभिप्रेरणा तथा पुर्नबलन से अधिगम को बढ़ावा मिलता है। छात्रों के अधिगम से अध्ययन के उद्देश्यों की प्राप्ति होती है तथा पाठ्यवस्तु का बोध होता है।

शिक्षण विधियों तथा माध्यमों की सहायता से छात्रों से सम्पर्क किया जाता है जिससे भावनाओं तथा अपनेपन के सम्बन्धों का विकास होता है; सहायक प्रणाली में शिक्षण विधियों का उपयोग होता है। छात्रों को प्रेरणा तथा पुनर्बन सहायक प्रणाली के द्वारा दिया जाता है।

एक-मार्गीय सम्प्रेषण

दूरवर्ती-शिक्षा के अन्तर्गत पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण हेतु विभिन्न माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। सबसे महत्वपूर्ण 'मुद्रित-माध्यम' माना जाता है। छात्र स्वयं अध्ययन करके सीखने का प्रयास करता है। अन्य माध्यमों से सुनता और देखता है। शिक्षक अपने ढंग से पाठ्यवस्तु की व्यवस्था करता है और छात्र अपने ढंग से सीखने का प्रयास करता है।

द्वि-मार्गीय सम्प्रेषण-दूरवर्ती

इस परिस्थिति में छात्रों एवं अध्यापक के मध्य अन्त: प्रक्रिया होती है। जिसकी व्यवस्था सहायक अध्ययन प्रणाली में की जाती है। गृह कार्यों के माध्यम से भी सम्पर्क होता है। इस प्रकार के सम्प्रेषण हेतु अनेक माध्यम भी प्रयुक्त किये जाते हैं; परन्तु भारतीय परिस्थिति में व्यक्तिगत सम्पर्क तथा अध्ययन केन्द्रों द्वारा ही द्वि-मार्गीय सम्प्रेषण किया जाता है।

दूरवर्ती-शिक्षा सम्प्रेषण

दूरवर्ती-शिक्षा में एक व्यवस्थित व प्रशासनिक प्रारूप की आवश्यता है जिसमें अधिगम सामग्री को तैयार किया जा सके, उसका समुचित वितरण हो सके, अत: प्रक्रिया की व्यवस्था की जा सके तथा छात्रों को समुचित निर्देशन तथा परामर्श की सुविधायें दी जा सकें। इसके अतिरिक्त अन्य किसी सामाजिक, शैक्षिक अथवा परीक्षा सम्बन्धी क्रियाओं की व्यवस्था भी की जाये। विश्वविद्यालय तथा संस्थायें यह निर्णय भी लेती हैं तथा नीति-निर्धारण करती हैं जिससे दूरवर्ती छात्रों को अध्ययन हेतु अधिक से अधिक स्वतंत्रता दे सकें तथा अन्य कठोर नियन्त्रण रखना चाहती है। सहायक व्यवस्था प्रणाली भी प्रयुक्त की जाती है।

दूरवर्ती-शिक्षण का सिद्धान्त (Theory of Distance Teaching)

दूरवर्ती-शिक्षा की प्रकृति समझने हेतू आवश्यक है कि दूरवर्ती-शिक्षण के सिद्धान्त को समझा जाये। शिक्षण द्वारा अधिगम हेतू परिस्थिति उत्पन्न की जाती है जो छात्र के सीखने में सहायक होती है।

शिक्षण तथा छात्रों के मध्य अन्त:किया होती है जिसमें छात्रों को ज्ञान प्रदान करता है तथा विशिष्ट नये व्यवहारों को सिखाता है। अत: शिक्षण 'ज्ञान प्रदान करने' अथवा 'तथ्यों एवं सूचनाओं के समप्रेषण की' प्रकिया है। शिक्षण द्वारा अधिागम या शिक्षण द्वारा अधिगम या शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास किया जाता है।

छात्र क्रियाकलाप

1. दूरवर्ती-शिक्षा के कार्य बतायें?

2. दूरवर्ती-शिक्षा के शिक्षा के सिद्धान्त के आधार की चर्चा करें?

नोट

स्वतन्त्र अध्ययन का सिद्धान्त-चार्ल्स वैडमेयर

चार्ल्स वैडमेयर शिक्षण के प्रोफेसर संयुक्त राज्य अमेरिका के विकॉनसिन विश्वविद्यालय में हैं। इन्होंने दूरवर्ती- शिक्षा के सैद्धान्तिक पक्ष का विश्लेषण करने का प्रयास किया। इन्होंने तीन बिन्दुओं पर विश्लेषण किया और अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है-

1. छात्र को अध्ययन की स्वतन्त्रता,
2. शिक्षक तथा छात्रों के मध्य भौतिक दूरी तथा
3. दूरवर्ती-शिक्षा प्रणाली का स्वरूप।

पुनरावलोकन स्वतन्त्र अध्ययन का सिद्धान्त-माइकल मुरे

मुरे ने कई विश्वविद्यालयों में कार्य किया तथा ब्रिटेन के मुक्त विश्वविद्यालय में (1981) में कार्य किया है। इस अनुभव के आधार पर इन्होंने दूरवर्ती-शिक्षा के सिद्धान्त के प्रतिपादन में महत्वपूर्ण योगदान किया है। इन्होंने कोई नवीन प्रत्यय नहीं दिया, अपितु इस प्रणाली का विश्लेषण बड़ी सूझ-बूझ से किया है। वैडमेयर के सिद्धान्त का निखार किया है।

मुरे ने दूरवर्ती-शिक्षा प्रणाली तथा औपचारिक शिक्षा में अन्तर का विवेचन 'स्वतन्त्र अध्ययन' के अतिरिक्त अनेक चरों की दृष्टि से किया है। औपचारिक शिक्षा में 'विद्यालय का वातावरण' भी शिक्षण-अधिगम क्रियाओं को प्रभावित करता है। छात्रों पर प्रभाव दोनों प्रकार का होता है, जबकि दूरवर्ती-शिक्षण में पत्राचार मुक्त विश्वविद्यालय तथा बाह्य कार्यक्रमों द्वारा छात्र स्वयं सीखता है। इन कार्यक्रमों को दो चरों में विभाजित कर सकते हैं-दूरी एवं स्वतन्त्रता। इन दोनों चरों का प्रयोग एक साथ किया जाता है। इसकी प्रमुख तीन विशेषतायें होती है।-

1. वार्तालाप,
2. व्यक्तिगत भिन्नतायें तथा
3. स्वरूप

औपचारिक शिक्षा की भी यह विशेषतायें होती हैं परन्तु इनके स्तर अथव गहनता में अन्तर होता है।

शिक्षण-अधिगम का औद्योगिकरण का सिद्धान्त-आटो पीटर

पीटर पश्चिमी जर्मनी के 'मुक्त विश्वविद्यालय' के प्रथम कुलपति नियुक्त किये गये तथा दूरवर्ती-शिक्षा संस्थान में भी कार्य किया, वहां से इन्हें दूरवती-शिक्षा की सूझबूझ हुई। उन्होंने अनुभव किया कि एक विशाल औद्योगिक समाज को विविध प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता है। जनसंख्या में वृद्धि भी बड़ी तेजी से हो रही है। ऐसी परिस्थिति में औपचारिक शिक्षा पर्याप्त नहीं है। इसलिये शिक्षा में नये आयामों का विकास करना होगा। इन आयामों की प्रकृति भी औद्योगिक होनी चाहिए तभी समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकेगी।

उपरोक्त विचारों का आधार यह है कि पीटर ने एक व्यापक सर्वेक्षण में किया था। इन्होंने दूरवर्ती-शिक्षा सिद्धान्त के प्रतिपादन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन्होंने औद्योगिक सन्दर्भ में शिक्षण अधिगम का स्वरूप विकसित किया। सर्वेक्षण से निष्कर्ष निकाला कि दूरवर्ती-शिक्षण अधिगम का प्रारूप औद्योगिक है।

पीटर ने दूरवर्ती-शिक्षा का सैद्धान्तिक आधार प्रतिपादित करने में औपचारिक शिक्षा के सैद्धान्तिक पक्ष को भी ध्यान में रखा था। उनका मुख्य आधार यह रहा है कि दूरवर्ती-शिक्षा का स्वरूप औद्योगिक ढंग से विकसित हुआ और परम्परागत शिक्षा प्रणाली से बिल्कुल ही भिन्न

प्रकार का है-

1. दूरवर्ती-शिक्षा में शिक्षक का ज्ञानात्मक पक्ष, क्रियात्मक तथा भावात्मक पक्ष की अपेक्षा अधिक प्रबल होना चाहिए।
2. दूरवर्ती-शिक्षा की अध्ययन सामग्री में अधिक विषमता नहीं होनी चाहिए, जबकि परम्परागत शिक्षा की पाठ्यवस्तु में अधिक विषमता होती है।
3. दूरवर्ती-शिक्षा में नवीन शिक्षण विधियों तथा माध्यमों का प्रयोग किया जाता है, जिन्हें परम्परागत शिक्षण प्रयुक्त नहीं करते हैं।
4. दूरवर्ती-शिक्षा का छात्र भी परम्परागत से भिन्न प्रकार का होता है। छात्र अधिक परिपक्व होता है। सामाजिक, आर्थिक दृष्टि से करीब होता है। स्वत: अभिप्रेरणा अधिक होती है।

नोट

पीटर दूरवर्ती-शिक्षा सिद्धान्त का विकास औद्योगिक सिद्धान्त तथा अनुभवों से किया है।

पूर्वानुमानित शिक्षण सिद्धान्त (Predictive Theory of Teaching)

शिक्षण का अभी कोई अन्तिम सिद्धान्त विकसित नहीं हो पाया है, शिक्षण के सिद्धान्त दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक हो सकते हैं। शिक्षण का स्वरूप दार्शनिक सिद्धान्तों पर अधिक आधारित है तथा शिक्षण की प्रक्रिया में प्रयुक्त होता है। यह सिद्धान्त तर्क पर आधारित है। इस प्रकार के सिद्धान्तों की विशेषतायें इस प्रकार है-

1. तार्किक प्रणाली में आन्तरिक समरूपता होती है।
2. शिक्षण तथा अधिगम की प्रक्रिया में व्यावहारिक सम्बन्ध स्थापित किए जाते हैं।
3. पूर्वानुमान हेतु परिकल्पनाओं का प्रतिपादन भी किया जाता है।
4. ऐसे प्रदत्तों तथा प्रमाणों को एकत्रित किया जाता है जिनके आधार पर परिकल्पनाओं की पुष्टि की जाती है अथवा उन्हें निरस्त भी किया जाता है।

ब्रूनर ने अनुदेशन के सिद्धान्त हेतु चार प्रमुख आवश्यकताओं का उल्लेख किया है-

1. व्यक्तिगत छात्रों के अध्ययन एवं अधिगम के सम्बन्ध में अनुभवों का विशिष्टकरण किया जाये।
2. पाठ्यवस्तु के स्वरूप का विश्लेषण तथा संश्लेषण करके तार्किक ढंग से इस प्रकार व्यवस्थित किया जाए जो छात्रों के अध्ययन की दृष्टि भी अनुरूप हो अथवा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वैध होना चाहिए।
3. अधिक प्रभावशाली पाठ्यवस्तु के क्रम का विशिष्टीकरण किया जाये।
4. छात्रों के अध्ययन गति के लिये आन्तरिक तथा बाह्य पुनर्बलन की प्रकृति का भी विशिष्टीकरण किया जाए।

इन तत्वों का विशिष्टीकरण ही अनुदेशन-सिद्धान्त के प्रतिपादन में सहायक हो सकता है।

दूरवर्ती-शिक्षण का सम्प्रेषण सिद्धान्त (Communication Theory of Distance Teaching)

इस सिद्धान्त का सम्बन्ध शिक्षण प्रभावशीलता से है। इसको वास्तविक भावनाओं के प्रभाव एवं सहयोग तथा वास्तविक सम्प्रेषण के आधार पर विकसित किया गया है। सम्प्रेषण से सीखने

नोट

की परिस्थिति उत्पन्न की जाती है। इस सिद्धान्त की मुख्य अवधारणा इस प्रकार है-

1. पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण इसलिये किया जाता है जिससे शिक्षा के उद्देश्य प्राप्त होंगे उनका मूल्यांकन किया जा सकेगा।
2. पाठ्यवस्तु का स्वरूप बड़ी सावधानी से पूर्व अनुभवों के आधार पर किया जा सकता है।
3. पाठ्य सामग्री की रचना परम्परागत ढंग से ही की जाती है। इसमें छात्रों के भावात्मक पक्ष को विशेष महत्व दिया जाता है।
4. प्रस्तुतीकरण का ढंग अधिक सरल तथा छात्र के पहुँच के अर्न्तगत हो। मुद्रित पाठ्य सामग्री पढ़ने में सुगम तथा सरल होनी चाहिए।
5. मुद्रित पाठ्य सामग्री में समुचित मानचित्र, आकृदियाँ, ग्राफ तथा चार्ट का प्रयोग करना चाहिए जिससे सीखने में सुगमता हो।
6. सम्प्रेषण माध्यम के चयन में छात्रों की आवश्यकताओं एवं सुविधाओं को महत्व देना चाहिए। विभन्न माध्यमों के क्रम को छात्रों के अनुरूप ही प्रयुक्त करना चाहिए।
7. सम्प्रेषण की सुविधायें छात्र को सदैव उपलब्ध रहनी चाहियें। छात्र अपनी आवश्यकतानुसार निर्देशन तथा परामर्श ले सकें।
8. छात्रों के गृह कार्यों तथा अभ्यास हेतु प्रश्न देते रहना चाहिए जिससे छात्र उन्हें हल करके सीखते रहें और उनका मूल्यांकन भी किया जाये।
9. छात्रों के गृह कार्यों के मूल्यांकन पर ऐसी टिप्पणी दी जाए जो उन्हें पुनर्बल प्रदान करें तथा सुधार हेतु सुझाव भी दिये जायें।
10. छात्रों के अभ्यास-उत्तरों तथा गृह कार्यों के मूल्यांकन में तत्परता होनी चाहिए।
11. स्वत: मूल्यांकन का अवसर भी दिया जाये जिससे छात्र अभ्यास करें।

दूरवर्ती-शिक्षा में आधुनिक प्रवृत्तियाँ (Emerging Trends in Distance Education)

विश्व के विभिन्न देशों में दूरवर्ती-शिक्षा के विकास का विश्लेषण करने पर, इसकी कुछ प्रवृत्तियों पर विचार करने एवं इस आधुनिक शिक्षण अधिगम पद्धति के भावी स्वरूप का अनुमान लगाने में सहायता मिली है। विश्व में दूरवर्ती-शिक्षा की स्थिति पर विचार करने के बाद हम निम्न निर्णय पर पहुँचते हैं-

1. दूरवर्ती-शिक्षा ने अपने शैक्षिक एवं आर्थिक उपयोगिता के सिद्धान्त को अधिक उपयोगी बनाया है। शिक्षा के नये विकल्प को खोज निकाला है। इसमें सम्प्रेषण की तकनीकी का प्रयोग करके शिक्षण सामग्री एवं शिक्षण के सभी क्षेत्रों में गुणात्मक विकास किया है।
2. इसमें शैक्षिक अवसरों की समानता एवं विस्तार तथा शिक्षा को समाज के उपेक्षित वर्ग यहाँ तक कि दूर-दराज के क्षेत्रों में रहने वाली जनसंख्या तक ले जाने का प्रयास किया है।
3. विशेषकर प्रौढ़, औपचारिक शिक्षा से एवं कार्यशील व्यक्तियों के लिए उचित है।
4. सभी स्तरों पर विभिन्न प्रकार की शिक्षा प्रदान करती है।
5. सामान्य शिक्षा, आधारभूत शिक्षा, निरन्तर शिक्षा, व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा

जिनमें अन्तर्सेवा प्रशिक्षण, पाठ्यक्रम शिक्षा, पाठ्यक्रम आदि सम्मिलित हैं।

6. विशेषत: विकासशील देशों की बढ़ती शैक्षिक आवश्यकताओं के अनुरूप है।
7. औपचारिक पारम्परिक विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विद्यालयों जिनमें केवल सीमित सामर्थ्य ही है, के दबाब को कम कर सकती है।
8. शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार तथा नवीन परिवर्तन लाने की सामर्थ्य रखती है।
9. अपेक्षकृत अधिक अधिगमकर्ता उन्मुखी है और इस कारण अधिगमकर्ता को अधिक आत्मविश्वासी बनाती है।
10. अधिगमकर्ता के अध्ययन क्षेत्र के चयन-पाठ्यक्रम की अवधि आदि सम्बन्धी समुचित नवनीयता प्रदान करती है।
11. उन व्यक्तियों को अवसर प्रदान करती है जो उच्च शिक्षा की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु औपचारिक शिक्षा की योग्यता नहीं रखते हैं।

नोट

इस प्रकार समाज की शैक्षिक आवश्यकताओं एवं अधिगमकर्ताओं की अपेक्षाओं के प्रत्युत्तर में दूरवर्ती शिक्षा का निरन्तर क्रमिक विस्तार हो रहा है। यह एक अत्यन्त प्रगतिशील एवं स्वास्थ्य प्रवृत्ति है, जो व्यवस्था की प्रमाणिकता को बढ़ाने एवं परिणामस्वरूप अधिगमकर्ता के लिये लाभप्रद होने हेतु बाध्य है। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि शिक्षण अधिगम के दूरवर्ती रूप का केवल गृह अध्ययन, स्वतन्त्र अधिगम, पत्राचार शिक्षा से बहुमाध्यम शिक्षण अधिगम व्यवस्था में विकास हुआ है। संचार तकनीकी के क्षेत्र में हुए विस्फोट ने नवीन संचार माध्यमों में दूरवर्ती-शिक्षा के साथ एकीकरण की प्रेरणा दी है, जिसके फलस्वरूप नवीन प्रकार की दूरवर्ती-शिक्षा संस्थानों; जैसे-यूनिवर्सिटी ऑफ एंअर एवं औपचारिक प्रवेश योग्यता, निवास स्थान, लिंग अधिगम गति या पूर्ण करने की अवधि आदि की अपेक्षा किये बिना सभी के लिये प्रवेश देती है, उन्हें अध्ययन के अवसर प्रदान करती है।

दूरवर्ती-शिक्षा व्यवस्था विशेष रूप से अध्यापकों के प्रशिक्षण तथा सेवारत शिक्षकों को अभिनव प्रदान करने में उपयोगी सिद्ध हुई है। विशेष रूप से उन देशों में जहाँ अध्यापकों का अभाव है और सुप्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता है, इस दिशा में उपयोगी सिद्ध हुई है। पालेस्टेनियन अध्यापकों के लिए यूनेस्को योजना एवं अफ्रीकी अध्यापकों के लिए समान कार्यक्रमों को महान सफलता मिली है।

इससे भी अधिक उपयोगी क्षेत्रीय राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापना एवं दूरवर्ती-शिक्षा संस्थानों के मध्य एवं सहयोग ने पाठ्यक्रमों एवं शिक्षण अधिगम विधियों आदि के सुधार के सम्बन्ध में सार्थक सामूहिक चिन्तन एवं अनवरत प्रयासों को दिशा प्रदान की है। यहाँ यह भी बताना उचित होगा कि कुछ देशों में जहाँ निजी उपक्रमों का दूरवर्ती-शिक्षा में विचारणीय योगदान है; निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में लाभप्रद सहयोग प्रदर्शित हुआ है। क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर बढ़ते सहयोग एवं विकास के लिये एक सुदृढ़ अन्तर्राष्ट्रीय संघ की स्थापना के साथ दूरवर्ती-शिक्षा एक उचित समयाबद्ध के अन्दर प्रौढ़ अधि गम के सिद्धान्तों पर आधारित एक विशिष्ट शिक्षण अधिगम की प्रविधि के रूप में विकसित होगी। पारम्परिक शिक्षा व्यवसाी आधुनिक समाज एवं कार्यशील जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिये अत्यधिक शक्तिशाली है, जबकि दूरवर्ती-शिक्षा अपने उन्मुकता, नवीनयता एवं बहुमाध्यम शिक्षण अधिगम विधियों के गुणों के कारण शिक्षा प्रदान करने की अवस्था के पुनर्निर्माण एवं शिक्षा को अधिगमकर्त्ताओं की असवश्यकताओं के अनुरूप एवं उत्तरदायी बनाने तथा भविष्य में एक महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करने हेतु अग्रसर है।

नोट

इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए दूरवर्ती-शिक्षा के अन्तर्गत एक वैकल्पिक माध्यम से पारम्परिक शिक्षा के विस्तार के बजाय एक वैकल्पिक प्रकार की शिक्षा अथवा पाठ्यवस्तु के विकास के प्रयास किये जा रहे हैं। इस दिशा में विगत दो शताब्दियों के दौरान हुए प्रत्यक्ष विकास का स्पष्ट प्रमाण सम्पूर्ण विश्व में से भी अधिक मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना है।

विशाल जनसंख्या वाले देश विशेषकर विकासशील देश निरन्तर बढ़ती जनसंख्या की शिक्षा की माँग की पूर्ति केवल तब ही करने में समर्थ होंगे जब वे दूरवर्ती-शिक्षा को एक विशाल रूप में प्रयोग करेंगे। शीघ्र ही भारत मुक्त विश्वविद्यालयों एवं दूरवर्ती-शिक्षा संस्थानों की सर्वाधिक वाले कुछ विकासशील देशों में से एक होगा, लेकिन मुक्त विश्वविद्यालयों की सफलता पारम्परिक दृढ़ शिक्षा व्यवस्था से बाहर निकलने हेतु उत्साह एवं नवीन परिवर्तन की भावना पर निर्भर करेगी। भविष्य में मुक्त विश्वविद्यालयों को एक ऐसी श्रृंखला की भी आवश्यकता होगी, जो नीचे से ऊपर की ओर वास्तविक दूरवर्ती-शिक्षा व्यवस्था के निर्माण में सहायक होगा।

यह एक शुभ संकेत है कि विभिन्न प्रकार की अध्ययन केन्द्र; जैसे सूचना, विस्तार, परामर्श, चलायमान, अधिगम केन्द्र गृहकार्यों के न्यूनतम समय में प्रभावी मूल्यांकन, टेलीफोन द्वारा शिक्षण, विभिन्न माध्यमों द्वारा अनुमोदन आदि के संगठन एवं दृढ़ीकरण की ओर जागरूकता एवं उत्साह बढ़ रहा है। इन सेवाओं को दूरवर्ती-शिक्षण में व्यक्तिगत अधिगम से समूहिक अधिगम का विकास लायेगी। यह शिक्षा को न केवल अन्त:प्रक्रिया अपितु प्रतिक्रियात्मक एवं सृजनात्मक भी बनाती है।

दूरवर्ती-शिक्षा एक स्वतन्त्र अनुशासन के रूप में उभर रही है तथा इस नवीन पद्धति के विभिन्न पक्षों पर अन्यधिक अनुसन्धान किए जा रहे हैं। यह व्यवस्था आज सरलता से उपलब्ध नवीन संचार माध्यमों के विभिन्न प्रकारों में सुधार एवं एकीकरण लाने हेतु वचनबद्ध है। दूरवर्ती-शिक्षकों के लिए दूरवर्ती-शिक्षा पाठ्क्रमों का विकास किया गया है, जिससे उचित प्रकार के कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षण दिया जा सके।

दूरवर्ती-शिक्षा पाठ्क्रम का क्षेत्र, विस्तार एवं प्रकार नित्य विस्तीर्ण होने वाले हैं। इसके द्वारा शिक्षा के समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने, पाठ्क्रम का विकास करने तथा विद्यार्थियों की उपलब्धि के मूल्यांकन के सुधार लाने में सहायता मिलेगी।

स्वतंत्र अध्ययन की विशेषताएँ (Characteristics of Independent Study)

1. विद्यार्थी को अपने तरीके से व गति से अध्ययन का मौका दिया जाता है।
2. विद्यार्थी की जरूरतों तथा रुचियों के अनुरूप पाठ्क्रमों का चयन करता है।
3. विद्यार्थी अपने अध्ययन में विभिन्न साधनों तथा माध्यमों का उपयोग करता है। अध्ययन हेतु उसका स्वयं का उत्तरदायित्व है। अध्ययन में स्वत: मूल्यांकन विधि का प्रयोग करता है।
4. छात्र अपने अध्ययन में अनेक साधनों और माध्यमों का उपयोग करता है, अध्ययन हेतु उसकी स्वयं की जिम्मेदारी होती है। अध्ययन में स्वत: मूल्यांकन विधि का प्रयोग करता है।
5. विद्यार्थी परिपक्व होता है, स्वत: की अभिप्रेरणा होती है, स्वतंत्र अध्ययन से उसे पुनर्बलन प्राप्त होता है।

दूरवर्ती-शिक्षा का विद्यार्थी वास्तव में एक प्रौढ़ व्यक्ति है जिसे स्वत: अध्ययन में रुचि होती है किन्तु दूरवर्ती-शिक्षा में उसे अध्ययन की सुविधायें व साधन उपलब्ध किये जाते हैं। दूरवर्ती-शिक्षा में छात्र बिना शिक्षक के सीखता है। अनुदेशन प्रक्रिया का उपयोग होता है। परम्परागत कक्षा-शिक्षण में इसकी अवधारणा अलग है। कक्षा शिक्षण के चार मुख्य घटक हैं- नोट

1. शिक्षक,
2. छात्र
3. पाठ्यवस्तु
4. सम्प्रेषण प्रणाली।

कक्षा-शिक्षण में 'औपचारिक कक्षा-शिक्षण परिस्थिति' प्रतिमान अधिक-प्राचीन तथा मुख्य है। जिसे सभी ने मान्यता दी है। यह शिक्षण का सार्वभौमिक प्रतिमान है। वैड मेयर का मानना है कि आज के परिवेश में यह प्रतिमान पर्याप्त नहीं है। इसमें सुधार और परिवर्तन नहीं हुआ है सामाजिक क्रान्ति के विषय में कक्षा-शिक्षण के विकल्प की खोज हुई है और प्रभावशाली साबित हुआ है।

शिक्षण प्रक्रिया में चार घटकों की विवेचना की गई। परम्परागत शिक्षण प्रक्रिया में ये घटक एक-दूसरे पर निर्भर होते हैं, लेकिन दूरवर्ती-शिक्षण में ये स्वतंत्र होते हैं। मुख-माध्यम के अलावा उपलब्ध माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। कक्षा-शिक्षण में छात्र व शिक्षक की अन्त:क्रिया होती है, लेकिन दूरवर्ती-शिक्षा में विद्यार्थी के अध्ययन की स्वतन्त्रता को बहुत महत्व देते हैं। कक्षा-शिक्षण की मुख्य विशेषताएँ मानी जाती हैं-

1. विद्यार्थी को अध्ययन की स्वतन्त्रता होती हे। अपनी सफलता अथवा असफलता की जिम्मेदारी स्वयं विद्यार्थी की होती है।
2. विद्यार्थियों को उसी के भौगोलिक, सामाजिक आक्र आर्थिक माहौल में सीखने का मौका तथा सुविधाएँ दी जाती हैं।
3. छात्रों को सम्प्रेषण के लिये सभी सम्भव माध्यमों का प्रयोग करने का प्रयत्न किया जाता है।
4. अधिगम प्रक्रिया में छत्र की व्यक्तिगत जरूरतों को महत्व दिया जाता है। अधिगम क्रियायें ज्यादा महत्व रखती हैं।

दूरवर्ती-शिक्षण प्रणाली का स्वरूप (Nature of Distance Teaching System)

विद्यार्थी तथा शिक्षक की संस्कृति, आचरण व उत्तरदायित्व में परिवर्तन अपेक्षित है, इसलिये दूरवर्ती-शिक्षा को पुन: परिभाषित करनी होगी क्योंकि शिक्षण में लगातार सम्प्रेषण न होने पर भी प्रक्रिया प्रभावित होती है। इस नवीन प्रणाली में निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. पहले की तुलना में इसमें विद्यार्थी की जिम्मेदारी अधिगम के विषय में अधिक होती है।
2. छात्र की अध्यय विधि और पाठ्यवस्तु चयन का व्यापक क्षेत्र होता है।
3. छात्र की व्यक्तिगत भिन्नताओं तथा ज़रूरतों को प्राथमिकता दी है।
4. विद्यार्थी के अपने तरीके से पाठ्य-सामग्री अध्ययन करने और सीखने का मौका व सुविधायें दी जाती हैं।

नोट

5. विद्यार्थी को सीखने का मूल्यांकन भी स्वतन्त्र रूप से होता है। छात्र स्वत: भी अपने अध्ययन का मूल्यांकन करते हैं जिससे उन्हें पुनर्बल मिलता है।
6. अध्यापक का दायित्व होता है कि विद्यार्थियों हेतु पाठ्यवस्तु सामग्री की व्सवस्था करें, जबकि कक्षा-शिक्षा में अध्यापक की जिम्मेदारी प्रस्तुतीकरण करके सही ज्ञान प्रदान करना है।
7. अध्यापक को माध्यमों की भूमिका को स्वीकारना होगा। इन माध्यमों का सहायक प्रणाली में महत्व ज्यादा होता है।
8. शिक्षा की क्रियायें शिक्षण विधियों व माध्यमों से ज्यादा प्रभावित होती हैं। पाठ्यक्रमों हेतु पाठ्यक्रम सामग्री तैयार करना शिक्षक का मुख्य कार्य है।
9. विद्यार्थियों की जरूरत क अनुरूप इस प्रणाली को कार्य करना चहिये। विद्यार्थियों को अध्ययन की स्वतन्त्रता देनी चाहिए। स्वाध्याय को प्राथमिकता दी जाती है।
10. विद्यार्थी जहाँ भी इस दशा में हैं, अगर वह सीखना चाहता है तो उसे उसी को ही परिस्थितियों में सीखने का/मौका दिया जाये।

पुनरावलोकन स्वतंत्र अध्ययन का सिद्धान्त (माइकल मुरे)

मुरे ने कई विश्वविद्यालयों में कार्य किया ब्रिटेन के मुक्त विश्वविद्यालयों में कार्य किया। इस अनुभव द्वारा मुरे दूरवर्ती-शिक्षा के सिद्धान्त के प्रतिपादन में मुख्य योगदान किया है। मुरे ने कोई नवीन प्रत्यय नहीं दिया बल्कि इस प्रणाली का विश्लेषण बहुत सूझ-बूझ से किया है। मुरे ने दूरवर्ती-शिक्षा प्रणाली और औपचारिक शिक्षा में अन्तर का व्याख्या स्वतंत्र अध्ययन के अलावा अनेक चरों की दृष्टि से किया है। औपचारिक शिक्षा में विद्यालय का माहौल भी शिक्षण अधि गम क्रियाओं को प्रभावित करता है। विद्यार्थीपर दोनों तरह का प्रभाव होता है। जबकि दूरवर्ती-शिक्षा में पत्राचार मुक्त विश्वविद्यालय और बाह्य कार्यक्रमों द्वारा विद्यार्थी स्वयं सीखता है। इन्हें दो चरों दूरी तथा स्वतंत्रता में बाँट सकते हैं। इन चरों का प्रयोग एक साथ होता है। इनकी विशेषताएँ क्रमश: इस प्रकार हैं-(1) वार्तालाप(2) व्यक्तिगत भिन्नताओं और (3) स्वरूप।

1. **वार्तालाप:** यहाँ वार्तालाप से अभिप्राय विद्यार्थी तथा अध्यापक आमने-सामने की दशा में होते हैं तभी वार्तालाप अथवा अन्त: क्रिया होती है। अन्य साधनों द्वारा भी वार्तालाप की जाती है। दूरवर्ती-शिक्षा में पत्राचार, दूरदर्शन, अभिक्रमिक अनुदेशन और कम्प्यूटर के माध्यम से अनुदेशन से वार्तालाप होती है। जबकि कक्षा-शिक्षण में सम्प्रेषण मुख्य है।
2. **व्यक्तिगत भिन्नताएँ:** दूरवर्ती शिक्षा में शैक्षिक कार्यक्रमों में व्यक्तिगत भिन्नताओं पर विशेष जोर दिया जाता है। पाठ्क्रम के उद्देश्यों, विधियों, अभ्ययन सामग्री और मूल्यांकन की प्रक्रिया पर भी ध्यान देते हैं। छात्रों की स्वतन्त्रता में उनकी व्यक्तिगत भिन्नताओं की मुख्य भूमिका होती है। दूरवर्ती-शिक्षा में स्वरूप भी इसी नजर से किया जाता है।
3. **दूरवर्ती-शिक्षा का स्वरूप:** औपचारिक शिक्षा का स्वरूप पूर्ण रूप से निश्चित होता है। पाठ्क्रम के उद्देश्य, विधियाँ अध्ययन सामग्री व मूल्यांकन प्रणाली का स्वरूप पहले से निश्चित होता है। पाठ्यक्रम के विकास में भौगोलिक, सांस्कृतिक आर्थिक दशाओं पर ध्यान नहीं देते हैं। लेकिन देरवर्ती-शिक्षा में छात्रों की जरूरतों का ध्यान रखा जाता है।

नोट

शिक्षण अधिगम का औद्योगिकरण का सिद्धान्त (आटो पीटर)

आटो पीटर जर्मनी के मुक्त विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति थे और दूरवर्ती-शिक्षा संस्थान में कार्य करते थे, वहाँ इन्हें दूरवर्ती-शिक्षा की जानकारी मिली। उन्होंने महसूस किया कि एक विशाल औद्योगिक समाज की विविध प्रकार की शिक्षा की जरूरत है। जनसंख्या में वृद्धि भी महुत तेजी से हो रही है। ऐसी दशा में औपचारिक शिक्षा पूर्ण नहीं है। इसयि शिक्षा में नवीन आयाम विकसित करना होगा। इन आयामों की प्रकृति भी औद्योगिक होनी चाहिये तभी समाज की जरूरतें पूर्ण होंगी। पीटर ने दूरवर्ती-शिक्षा का सैद्धान्तिक आधार प्रतिपादित करने में औपचारिक शिक्षा के सैद्धान्तिक पक्ष को भी ध्यान में रखा है। उनका आधार था कि दूरवर्ती-शिक्षा का स्वरूप औद्योगिक तरीके से विकसित हुआ व परम्परागत शिक्षा से बिल्कुल ही अलग प्रकार का है-

1. दूरवर्ती-शिक्षा के शिक्षक का ज्ञानात्मक पक्ष, क्रियात्मक पक्ष और भावात्मक पक्ष की तुलना में ज्यादा मजबूत होना चाहिये।
2. दूरवर्ती-शिक्षा की अध्ययन सामग्री में ज्यादा विषमता नहीं होनी चाहिये, जबकि परम्परागत शिक्षा की पाठ्यवस्तु में ज्यादा विषमता होती है।
3. दूरवर्ती-शिक्षा में नयी शिक्षण व माध्यमों का प्रयोग किया जाता है, जिन्हें परम्परागत शिक्षण प्रयुक्त नहीं करते हैं।
4. दूरवर्ती-शिक्षा का विद्यार्थी भी परम्परागत से अलग होता है। विद्यार्थी ज्यादा परिपक्व होता है। सामाजिक, आर्थिक दृष्टि से करीब होता है। स्वत: अभिप्रेरणा अधिक होती है।
5. पीटर दूरवर्ती-शिक्षा सिद्धान्त का विकास औद्योगिक सिद्धान्त और अनुभवों से किया है।

सिद्धान्त के महत्वपूर्ण पक्ष निम्नलिखित हैं-

1. दूरवर्ती-शिक्षा में शैक्षिक सम्प्रेषण और संचार दिखावटी होता है, इसमें मुद्रित व अमुद्रित माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रणाली में विद्यार्थी की जिम्मेदारी होती है।
2. दूरवर्ती-शिक्षा में शिक्षक की भूमिका एक मैनेजर की है, शिक्षा के अलावा सभी घटकों पर विचार करना होता है तथा उनकी व्यवस्था करनी होती है।
3. दूरवर्ती-शिक्षा प्रणाली में ज्यादातर विद्यार्थी औपचारिक शिक्षा से ही आते हैं, अत: यह प्रणाली इन्हें अच्छी लगती है। दूसरे यह प्रणाली कक्षा-शिक्षण के बन्धनों से आजाद होती है। समय का स्थान का और पाठ्क्रम का कोई बन्धन नहीं होता है। जब चाहे उसे छोड़ सकता है या आरम्भ कर सकता है।

इस प्रणाली में छात्र का उत्तरदायित्व और भूमिका की नहीं बदली है बल्कि छात्र की प्रकृति में परिवर्तन आया है क्योंकि औपचारिक शिक्षा में विद्यार्थी शिक्षा के अनुसार कार्य करते हैं, जबकि दूरवर्ती-शिक्षा में शिक्षक, विद्यार्थी के अनुरूप कार्य करने का प्रयत्न करते हैं। अध्यापक विभिन्न माध्यमों से विद्यार्थी तक पहुंचने का प्रयत्न करता है, जबकि परम्परागत शिक्षा में छात्र का प्रयत्न होता है कि वह शिक्षा तक पहुँचे।

निर्देशित द्वि-मार्गीय वार्तालाप का सिद्धान्त (बोर्जी होमबर्ग)

दूरवर्ती-शिक्षा सिद्धान्त में बोर्जी होमबर्ग का महत्वपूर्ण योगदान है। वह आरम्भ में अंग्रेजी के

नोट

प्रवक्ता को तथा बाद में स्विट्जरलैण्ड में पत्राचार संस्था में कार्य किया तथा वे 1965 में इसके निर्देशक नियुक्त किये गये और प० जर्मनी में दूरवर्ती-शिक्षा के प्रोफेसर नियुक्त हुए अपने इन अनुभवों के आधार पर दूरवर्ती-शिक्षा की प्रकृति की विवेचना की है। होमबर्ग का मानना है कि मुख्य लक्ष्य विद्यार्थी को सिखाना है। दूरवर्ती-शिक्षा के सन्दर्भ में यह स्वीकार करना चाहिये कि व्यक्तिगत सीखने के लिये समुचित दशाओं की सुविधा देता है। इसमें छात्र स्वत: सीखता है कक्षा शिक्षण आपसी अन्त:प्रक्रिया पर आश्रित नहीं होता है। विद्यार्थी को अपनी जरूरतों के अनुरूप मौजूद साधनों में चुनाव की स्वतंत्रता होती है, जिससे वह आसानी से सीख सकता है। सीखने का या अध्ययन की जिम्मेदारी विद्यार्थी की होती है। अपितु उसके लिये अनुदेशन सामग्री, माध्यम, शिक्षक, जाँचकर्ता, निर्देशक और परामर्शदाता भी रहते हैं जो विद्यार्थी में सीखने में मदद करते हैं। व्यक्तिगत परीक्षा देने वाले विद्यार्थी से दूरवर्ती-छात्र की स्थिति अलग होती है। दूरवर्ती-विद्यार्थी को अध्ययन हेतु अधिक से अधिक मदद प्रदान की जाती है लेकिन सीखने के लिये अध्ययन स्वत: ही करना होता है। विद्यार्थी तथा शिक्षा संस्था में शैक्षिक सम्बन्ध होते हैं जो उसके लिये हितकारी होते हैं। होमबर्ग ने इस विषय को निर्देशित द्वि-मार्गीय वार्तालाप कहा है। इस वार्तालाप का एक प्रकार है, जिसमें द्वि-मार्गीय वार्तालाप लिखित सामग्री या टेलीफोन के द्वारा विद्यार्थी एक अध्यापक के बीच अन्त:प्रक्रिया होती है। इसके अलावा अन्य मददगार व्यवस्था और साधनों का प्रयोग किया जाता है। यह वार्तालाप पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण हेतु की जाती है, जिससे विद्यार्थी सीखने का प्रयत्न करते हैं। यह वार्तालाप वास्तविक तथा दिखावटी दोनों की तरह का होता है।

बनावटी वार्तालाप अनुदेशन सामग्री के द्वारा शिक्षक तथा छात्रों के बीच होता है। इस प्रकार के प्रस्तुतीकरण के विद्यार्थी कार्य आरम्भ करता है। उसमें दिये अभ्यासों को करने का प्रयत्न करता है तथा उनकी जाँच भी अपने आप करता है।

द्वि-मार्गीय डाक सम्प्रेषण का सिद्धान्त (जॉन बॉथ)

जॉन बॉथ ने स्वीडन में पत्राचार शिक्षा तथा दूरवर्ती-शिक्षा का कार्य किया। इन्होंने अपने अनुभवों व सूझ-बूझ से दूरवर्ती-शिक्षा के प्रतिमान की व्याख्या की है। जॉन बॉथ द्वि-मार्गीय सम्प्रेषण को दूरवर्ती-शिक्षा हेतु मुख्य मानता है। इनकी मान्यता है कि दूरवर्ती-शिक्षा अथवा पत्राचार शिक्षा एक जनसमूह की शिक्षा का एक साधन है। दूरवर्ती अध्ययन में शिक्षा का औद्योगीकरण हुआ है। इसमें व्यक्तिगत स्वतंत्र अध्ययन जरूरी होता है। दूरवर्ती-शिक्षा शिक्षा शिक्षक छात्रों को प्रोत्साहन रचनात्मक आलोचना और लगन से अध्ययन के लिये प्रेरित करता है। डाक सम्प्रेषण से शिक्षण प्रणाली को कम किया जा सकता है क्योंकि प्रस्तुतीकरण विस्तार में किया जाता है।

अध्यापक टिप्पणी की महत्ता

पत्राचार शिक्षा में अध्यापक विद्यार्थियों के गृहकार्यों पर टिप्पणी करता है उसका शैक्षिक महत्व ज्यादा होता है। शिक्षक विद्यार्थियों को जो ज्यादा होता है जबकि औद्योगिक प्रणाली में कोई स्थान नहीं होता है। इसे मददगार प्रणाली में शामिल किया जाता है, अगर गृह कार्यों को कार्यों को जरूरी कर दिया जाये, द्वि-मार्गीय सम्प्रेषण की द्वितीय कड़ी का काम करेगी। अध्यापक उनका मूल्यांकन करके लौटता है तब वह तृतीय कड़ी होगी। विद्यार्थियों के उत्तरों को मूल्यांकित करके अध्यापक सिर्फ ग्रेड देल है। वह विद्यार्थियों को पुनर्बलन देता है। शैक्षिक मूल्य

छात्र क्रियाकलाप

1. स्वतंत्र अध्ययन की विशेषताएँ की चर्चा कीजिए?

2. दूरवर्ती-शिक्षण प्रणाली का स्वरूप क्या है?

नोट

नहीं होता है, अगर शिक्षक मूल्यांकन के साथ अपनी टिप्पणी भी करता है तथा सुझाव भी रखता है, उससे छात्र को विकास और अध्ययन के लिये निर्देशन मिलता है, इसकी शैक्षणिक सार्थकता होती है। विद्यार्थियों की अधिगम में प्रगति होती है।

बॉथ अध्यापक की टिप्पणी की शैक्षिक सार्थकता को ज्यादा महत्व देता है। जबकि डाक सम्प्रेषण को कम करने की प्रवृति में होती है। विद्यार्थियों को स्वत: अथवा मूल्यांकन का मौका दिया जाता है, किन्तु द्विमार्गीय सम्प्रेषण विद्यार्थियों के अधिगम हेतु जरूरी है।

परामर्श की प्रक्रिया

बॉथ ने दूरवर्ती-शिक्षा विश्लेषण शिक्षण प्रतिमानों की नजर से किया है। बॉथ ने दूरवर्ती-शिक्षा हेतु दो प्रतिमानों का सुझाव दिया है-

1. वे प्रतिमान जो अधिगम को नियंत्रित करते हैं तथा निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति में मददगार होते हैं।
2. वे प्रतिमान जो अधिगम को कम नियंत्रित करते हैं तथा निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मददगार होते हैं।

बॉथ ने उपरोक्त प्रतिमानों की पहचान की है, जिसमें प्रथम शिक्षण अधिगम सामग्री के निर्माण को महत्व देती है, जिससे विद्यार्थियों व अध्यापक के बीच अन्त:प्रक्रिया हो। द्वितीय प्रकार के प्रतिमान में शिक्षण-अधिगम प्रणाली में सम्प्रेषण किया जा सके। इन दोनों की बिना तुलना किये कोई निर्णय नहीं दिया जा सकता। बॉथ प्रयोजनवादी विचारधारा के हैं, इसलिये उसका सुझाव शिक्षण-अधिगम सामग्री मुख्य है, किन्तु द्विमार्गीय सम्प्रेषण भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। ये दोनों घटक दूरवर्ती-शिक्षा की सफलता तथा विकास हेतु जिम्मेदार हैं। इन्होंने एक अन्य घटक परामर्श प्रक्रिया की महत्ता दी है। इससे विद्यार्थियों के सीखने में मदद मिलती है। दूरवर्ती-शिक्षा का विद्यार्थी परिपक्व होता है इसी कारण उसे ज्यादा मदद की जरूरत है।

औद्योगिक रूप से शिक्षण-अधिगम के अन्तर्गत मानवी तत्व (डेविड स्वार्ट)

डेविड स्वार्ट ने ब्रिटेन के मुक्त विश्वविद्यालय में कार्य किया था। इनका अनुभव शिक्षण सेवाओं को रहा जो दूरवर्ती-छात्रों को दी जाती है। अध्ययन केन्द्रों व क्षेत्रीय केन्द्रों पर विश्वविद्यालय शिक्षण सुविधाओं की व्याख्या करता है। उनका अनुभव व विश्वास रहा कि दूरवर्ती-शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है। विद्यार्थियों के अध्ययन में निरन्तरता बनी रहती है। अध्ययन की निरन्तरता का सम्बन्ध मानवीय तत्वों का होता है। जबकि औद्योगिक वातावरण में शिक्षा की प्रक्रिया यान्त्रिक तरीके से की जाती है। स्वार्ट के विचार जॉन बॉथ के निकट है किन्तु मानवीय तत्वों को ज्यादा महत्व दिया गया है। इनके अनुसार अध्ययन सामग्री का स्वरूप ऐसा हो जो अनेक प्रकार के विद्यार्थियों की जरूरतों को पूरा कर सकें। इसके माध्यम से छात्रों व अध्यापकों के माध्यम अन्त:प्रक्रिया होनी चाहिये। इसके लिये अनुदेशन प्रणाली का प्रारूप ज्यादा मनोवैज्ञानिक होना चाहिये।

स्वार्ट ने कुछ समस्यायें भी बतायी हैं-

1. तुरन्त पृष्ठ-पोषण की कमी होती है।
2. समान आयु-वर्ग के साथियों के अन्त:क्रिया की पूरी तरह कमी होती है।
3. उपरोक्त समस्याओं पर अन्य विद्वानों ने विचार नहीं किया तथा इन्हें महत्व नहीं दिया। स्वार्ट ने इन्हें प्राथमिकता दीं इन समस्याओं के शिक्षाविद् दो भागों में बंट गये हैं-

4. एक समूह है जो शिक्षा प्रणाली में मानवीय तत्वों को महत्व देता है। अधिगम की सभी प्रक्रिया में मानवीय तत्वों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। अन्त:प्रक्रिया और भावनाओं का विकास मानवीय तत्वों से किया जाता है।
5. दूसरा समूह है जो दूरवर्ती-शिक्षा में मानवीय तत्वों को महत्व कम देता है। दूरवर्ती-शिक्षा में कम से कम मानवीय तत्वों का उपयोग किया जाता है।
6. शिक्षा में नवीन सम्प्रेषण तकनीकी का प्रयोग किया जाना चाहिये। दूरवर्ती-शिक्षा में इन्हीं तकनीकियों का प्रयोग किया जाता है।
7. शिक्षा का स्वरूप प्रजातान्त्रिक हो। शिक्षा प्रणाली की प्रमुख धारा के अध्ययन वंचित रह गये हैं। उन्हें भी शिक्षा ग्रहण का मौका देना चाहिये। दूरवर्ती-शिक्षा इस तरह चुनौतियों की पूर्ति करती है।
8. व्यक्ति के आर्थक और अन्य साधन भी सीमित रहते हैं। ऐसी दशा में दूरवर्ती-शिक्षा अध्ययन के मौके प्रदान करती है।

नोट

स्वार्ट अपने सिद्धान्त में मानवीय तत्वों की भूमिका को बहुत महत्व देता है। दूरवर्ती-शिक्षा का यह विशेष गुण है कि मानवीय तत्वों को ध्यान में रखकर एक नयी प्रणाली का विकास हुआ है। यह इन बातों को महत्व देता है।

1. अनन्त विशेषताओं और समस्याओं का अधिगम में ध्यान देना।
2. विद्यार्थियों को जल्दी पृष्ठ-पोषण देना व
3. अपनी उम्र के विद्यार्थियों में अन्त:प्रक्रिया का मौका देना है।

आवश्यकता (Need of distance Education)

वैश्वीकरण, सूचना-उम्र और उपभोक्ता जागरूकता प्रवृत्तियों, जीवन शैली और शिक्षा के मानकों में एक बदलाव की वर्तनी है। परिदृश्य गवाहों में बढ़ती आबादी के बीच एक सोच, मानसिकता में संक्रमण और बढ़ती महत्वाकांक्षा के बारे में परिवर्तन नए जमाने की आबादी के लिए उच्च शिक्षा के लिए एक संभावित विधा के रूप में दूरस्थ शिक्षा मंत्र।

सांख्यिकीय अध्ययन के अनुसार, उच्च शिक्षा के लिए 26,000 और अजीब संस्थानों के बावजूद 2020 तक 40 लाख तक बढ़ने की उम्मीद है, जो वर्तमान में उच्च शिक्षा में 16 लाख छात्रों, गुणवत्ता संसाधनों की कमी कर रहे हैं और गरीब एक्सेसिबिलिटी दाखिले जुटाने में असफल। विजन 75 के सर्वेक्षण में भारतीय आबादी का बहुमत 60 प्रतिशत युवा है पता चलता है। इस पात्र श्रेणी, जर्मनी के लिए केवल 12 प्रतिशत खाते शिक्षित और undereducated के बीच एक बड़ा डिवाइड बनाने।

इसके अतिरिक्त, वर्तमान परिदृश्य में, उच्च कट-ऑफ प्रतिशत और महंगी फीस संरचना भी मेधावी छात्रों के लिए कैंपस में प्रवेश पाने के लिए एक बाधा बन गया है। इसके अलावा भारतीय समाज का बड़ा सामाजिक-आर्थिक खंड के जीवन स्तर बराबर के नीचे है, विचार है कि एक युवा उम्र से काम शुरू करने के लिए प्राप्त करने के लिए एक अधिक आवश्यकता होती हे। यह आगे undereducated बड़े पैमाने पर रहने का एक ही घटिया तरीके से जारी रखने के साथ, सामाजिक-आर्थिक खाई को चौड़ी करना और वैश्वीकरण द्वारा जुटाए संक्रमण एक और सभी के लिए रोजगार के अवसरों के साथ, प्रत्येक क्षेत्र में सक्रिय रूप से कारोबार की एक भीड़ पैदा की है। एक पूर्व विश्वविद्यालय पारित-बाहर, एक पोस्ट ग्रेजुएट या किसी भी

नोट

विषय से स्नातक समान रूप से रोजगार और सतत शिक्षा के हैं, प्रगति के लिए एक छोर देता है। के रूप में उल्लेख लेकिन, उच्च शिक्षा भी अभिजात वर्ग या मध्यम वर्ग के बीच, कैरियर की खातिर एक सीट वापस लेने के लिए हो सकता है। कारणों परिसर में अध्ययन के लिए कमरे नहीं देते, जो समय या वित्तीय बाधाओं और अन्य प्रतिबद्धताओं के कारण हो सकता है। ऐसी स्थितियों में, दूरी कार्यक्रम मे कदम, एक के अपने आराम के स्तर पर एक कैरियर पथ और एक समानांतर शैक्षणिक ट्रैक, चार्ट में मदद करने के लिए। दूरस्थ शिक्षा के रूप में अच्छी तरह से ज्ञान की क्षमता और खाड़ी सामाजिक-आर्थिक खाई को मदद करने के लिए उच्च शिक्षा के लिए व्यवहार्य मार्ग के रूप में मार्ग प्रशस्त। दूरस्थ शिक्षा के फायदे समाज के विभिन्न वर्गों की जरूरतो का पता है, जो कई हैं।

दूरस्थ शिक्षा के लिए एक बहु-आयामी आधार पर काम करता है। विस्तृत करने के लिए काम कर रहे पेशेवर काम करते समय पर पढ़ाई का पीछा कर सकते हैं, और फ्रेशर्स, काम हाथ में ले लिया, नियमित रूप से होने वाली आय को आकर्षित और एक ही समय में अध्ययन का पीछा कर सकते हैं। ऐसे मामलों में दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से एक प्रमाण पत्र/ डिग्री अनुभव, विशेषज्ञता और पाठ्क्रम के शैक्षणिक डिग्री के रास्ते में, एक की प्रोफाइल पर मूल्य कहते हैं। और सब से ऊपर, दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम सस्ती है।

इसके अरिरिक्त प्रौद्योगिकी का धावा साथ, शिक्षा खण्ड में दूरस्थ शिक्षा ऑनलाइन इंटरफेस पर एकाग्र छात्रों, जो टयूटर्स, शैक्षिक exponents, के एक "जी नेटवर्क" का हिस्सा है। इस प्रकार की गुणवत्ता, वितरण और छात्र-प्रतिबद्धता पर समझौता किया है जो दूरस्थ शिक्षा के तत्कालीन कमियां, प्रौद्योगिकी के माध्यम से दूर कर रहे हैं। जानकारी ऑनलाईन संसाधन के छात्रों और पेशेवर काम कर रहे हैं, दोनों के लिए किसी भी दूरस्थ शिक्षा विश्वविद्यालय सुलभ बना देता है। एक सक्रिय ऑनलाइन इंटरफेस पर वितरित करने के लिए अध्यापक, संकाय और संदर्भ - संक्षेप में ऑनलाइन दूरस्थ शिक्षा संसाधनों का सबसे अच्छा तैनात।

लघु-विकल्पीय प्रश्न

1. दूरवर्ती शिक्षा का सर्वप्रथम विकास हुआ–
   (अ) इंग्लैण्ड में (ब) अमेरिका में
   (स) जापान में (द) भारत में
2. दूरवर्ती शिक्षा की विशेषता है-
   (अ) शिक्षा की मित्तव्ययी प्रणाली
   (ब) संविधान के प्रावधान की पूर्ति करती है
   (स) सभी को शिक्षा का समान अवसर प्रदान करती है
   (द) उपरोक्त सभी
3. दूरवर्ती शिक्षा को औद्योगिक समाज से जोड़ा है-
   (अ) बोर्जो होमबर्ग ने (ब) होडमेन ने
   (स) पीटर ने (द) वैडमेयर ने
4. दूरवर्ती शिक्षा में प्रयुक्त करते हैं–
   (अ) बहु-माध्यम (ब) मुद्रित माध्यम
   (स) मुख माध्यम (द) अमुद्रित माध्यम

5. दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली का प्रयुक्त करते हैं–
   (अ) स्वाध्याय (ब) गृह अध्ययन
   (स) उपरोक्त सभी (द) वैडमेयर ने
6. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम में प्रयुक्त करते हैं–
   (अ) मौखिक संचार (ब) बहुमाध्यम को
   (स) मुद्रित माध्यम को (द) अनुदेशन प्रणाली को

कुंजी– 1. (अ) 2. (द) 3. (स) 4. (अ) 5. (द) 6. (अ)

नोट

लघु-उत्तरी• •प्रश्न

1. दूरवर्ती शिक्षा का अर्थ समझाइए।
2. दूरवर्ती शिक्षा की विशेषताएं दीजिए।
3. दूरवर्ती शिक्षा के मूल तत्व बताइए।
4. दूरवर्ती शिक्षा के उद्देश्य बताइए।

अधिगम अभ्यास

1. दूरवर्ती शब्द की व्याख्या कीजिए। दूरवर्ती शिक्षा के प्रत्यय को समझाइए तथा दूरवर्ती शिक्षा की विशेषताओं को बताइए।
2. दूरवर्ती शिक्षा तथा पारम्परिक शिक्षा में अन्तर बताइए। मुक्त अधिगम शब्द को समझाइए।
3. दूरवर्ती शिक्षा के महत्वपूर्ण स्वरूप की व्याख्या कीजिए तथा दूरवर्ती शिक्षा के विभिन्न तत्वों को बताइए।
4. दूरवर्ती शिक्षा के उद्देश्यों तथा कार्यों का उल्लेख कीजिए।

इकाई-2

नोट

दूरवर्ती-शिक्षा का विकास

पाठ-संरचना

- दूरवर्ती-शिक्षा का विकास
- भारत में दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली
- मुक्त विश्वविद्यालयों और दूरवर्ती शिक्षा निदेशलय
- भारत में मुक्त विश्वविद्यालों की स्थापना

उद्देश्य एवं परिचय

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप निम्नलिखित निष्कर्षों की व्याख्या कर पाने में समर्थ हो सकेंगे–

- दूरवर्ती शिक्षा का विकास
- भारत में दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली
- मुक्त विश्वविद्यालयों का महत्व, उद्देश्य, कार्य, आदि

दूरवर्ती-शिक्षा का विकास (Growth of Distance Education)

इंग्लैण्ड में दूरवर्ती-शिक्षा

सन् 1969 में इंग्लैण्ड में केन्यीज मिल्टन ने दूरवर्ती-शिक्षा के विकास के रूप में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की। इसके द्वारा शिक्षा में महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना सिद्ध हुई। इस विश्वविद्यालय ने व्यक्तियों की उम्र, लिंग निवास स्थान एवं उनकी औपचारिक शैक्षिक योग्यता को पृथक् कर सभी व्यक्तियों के लिए प्रभावी पाठ्क्रम-सामग्री तैयार करके विश्वव्यापी प्रभाव डाला है। इस विश्वविद्यालय में साठ हजार से अधिक छात्रों को प्रवेश दिया गया। विश्वविद्यालय के दूरदर्शन तथा रेडियो द्वारा प्रसारित कार्यक्रम उच्च शैक्षिक मूल्यों पर आधारित होते हैं, तथा सभी ने इसमें अत्याधिक रुचि ली। इस विश्वविद्यालय ने अनेक विकासशील देशों में मुक्त विश्वंविद्यालयों तथा दूरवर्ती-शिक्षा संस्थानों की स्थापना हेतु मार्गदर्शन प्रदान किया है। इसने अपने शैक्षिक कार्यक्रमों के लिए अत्यधिक बहु-माध्यम का विकास किया। उदाहरणार्थ-इसने जो एक अत्याधिक परिवर्तनीय अस्थिर दृश्य-श्रव्य शिक्षण माध्यम को

विकसित किया जोकि पारम्परिक टेलीविजन सेट, प्रमाणिक ऑडियो केसेट तथा सूक्ष्म कम्प्यूटर पर आधारित है।

नोट

इंग्लैण्ड के मुक्त विश्वविद्यालय की पाठ्यक्रम-सामग्री ने कुछ अमरीकी विश्वविद्यालयों, विशेष रूप से उत्तरी अमेरीका के टेंगस्टन विश्वविद्यालय तथा न्यूजर्सी के स्टेट विश्वविद्यालयों का ध्यान आकर्षित किया। इन विश्वविद्यालयों ने प्रयोग के रूप में अपने छात्रों को चयनित ब्रिटिश मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्क्रम प्रस्तावित किये। इनमें अधिकांश पाठ्क्रमों को बाद में ग्रहण कर लिया।

इतना ही नहीं कनाडा में अथावास्का विश्वविद्यालय तथा ब्रिटिश कोलम्बिया में नॉर्थ आइसलैण्ड कॉलेज द्वारा भी अपने कार्यक्रमों में कुछ मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों को ग्रहण किया गया। वास्तव में इन विश्वविद्यालयों ने अपने छात्रों की विशिष्ट आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए इन ग्रहण किये गये पाठ्क्रमों की पूरक सामग्री को तैयार किया।

कैम्ब्रिज का एक अन्य संस्थान एक जैसा सुपरिचित संस्थान है, जो दूरवर्ती शिक्षा पाठ्क्रमों को सुविधा प्रदान करने के अतिरिक्त कुछ विशेष कार्यक्रमों का आयोजन करती है। विशेषकर अफ्रीका को दूरवर्ती-शिक्षा संस्थानों के संगठन हेतु परामर्श एवं मार्गदर्शन प्रदान करती है। यह संस्थान लन्दन विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग के सहयोग से विकासशील देशों के लिए दूरवर्ती-शिक्षा के विषय में एक अत्यन्त उपयोगी समाचार-पत्र प्रकाशित करता है। यह दूरवर्ती-शिक्षा के लिए एक पाठ्क्रम भी चलाता है।

इंग्लैण्ड में बहुत बड़ी संख्या में ऐसे प्राइवेट पत्राचार शिक्षा संस्थान हैं, जो बाहरी छात्रों को विभिन्न पब्लिक स्कूलों, विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं के लिए तैयार करते हैं, तथा विभिन्न प्रकार के पत्राचार पाठ्क्रम की सुविधा प्रदान करते हैं। इन संस्थानों के माध्यम से अपेक्षित मानदण्डों को बनाये रखने का कार्य करती है।

जापान में दूरवर्ती-शिक्षा

जापान विश्वविद्यालय स्तर के पत्राचार पाठ्क्रम एवं विश्वविद्यालयों के संस्थागत पाठ्क्रमों में यह पाठ्क्रम संकायों का एक महत्वपूर्ण अंग है। इसके अतिरिक्त भी पत्राचार पाठ्क्रमों का कार्य संचालन पत्राचार शिक्षा द्वारा किया जाता है। विद्यालय स्तर के पत्राचार पाठ्क्रमों का प्रारम्भ युद्ध के बाद शैक्षिक सुधार कार्यक्रमों के एक भाग के रूप में हुआ। उच्च माध्यमिक पत्राचार विद्यालय के यहाँ अपने निजी संगठन हैं।

यद्यपि विश्वविद्यालयों के विभागों के समान, पत्राचार पाठ्क्रमों के लिए भी शैक्षिक योग्यता अनिवार्यत: निर्धारित की गई है, तथापि समाज शिक्षा के उद्देश्य से चलाए जा रहे केन्द्रों के द्वारा औपचारिक प्रवेश की शैक्षिक योग्यता न होने पर भी विद्यार्थी को प्रवेश के लिए मुक्त हैं। इनमें विद्यार्थी अपनी सुविधानुसार निर्धारित पाठ्क्रम को सम्पूर्ण अथवा आंशिक रूप में ले सकते हैं। यहाँ यह भी बताना उचित होगा कि विद्यार्थी द्वारा प्रसारित विश्वविद्यालय पत्राचार व्याख्यान द्वारा लाभान्वित हो सके। आरम्भ में पत्राचार शिक्षा का तीव्रता से विस्तार हुआ किन्तु विद्यार्थियों के प्रवेश में अनेक उतार-चढ़ाव आये। अन्तिम रूप में 1960 के बाद व्यावसायिक एवं औद्योगिक क्षेत्रों द्वारा अपने कर्मचारियों की पुनर्शिक्षा, अध्यापकों के प्रशिक्षण एवं पुर्नशिक्षण तथा महिलाओं में इसके लोकप्रिय होने से विद्यार्थियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होने लगी। इससे जापान में मुक्त शिक्षा व्यवस्था के सम्बन्ध में नई जागृति आयी। सन् 1978 ई0 में शिक्षा

नोट

मन्त्रालय के नियन्त्रण में राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों के सहयोगी संगठन के रूप में "द नेशनल इन्स्टीट्यूट फॉर डेवलेपमेंट ऑफ ब्राडकॉस्टिंग एज्यूकेशन" नामक सरकारी एवं निजी दोनों प्रकार के विश्वविद्यालयों के साथ सहयोगात्मक रूप से कार्य करने वाले विशिष्ट संस्था द्वारा स्थापित मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की दिशा में एक सुनियोजित कदम था। इस संस्था में छात्रों का पंजीकरण सर्वप्रथम अप्रैल 1985 में प्रारम्भ हुआ। यह अनुमान लगाया गया कि इस विश्वविद्यालय के माध्यम से छः लाख बीस हजार विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करेंगे।

संयुक्त राज्य अमेरिका में दूरवर्ती-शिक्षा

अमरीकी दूरवर्ती-शिक्षा कार्यक्रम अपने आकार, शैक्षिक उपागम एवं प्रशासनिक प्रक्रिया की व्यापक भिन्नता के लिए सुविख्यात है। विश्वविद्यालयों द्वारा संचालित होने पर भी पाठ्क्रम विश्वविद्यालय स्तर के पाठ्क्रमों तक सीमित नहीं है।

अन्य शब्दों में, विश्वविद्यालय, विद्यालय स्तर के पाठ्क्रमों की सुविधा भी प्रदान करते हैं। यहाँ यह बताना भी आवश्यक होगा कि अमेरिका में कुछ विश्वविद्यालया ब्रिटिश मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा तैयार की हुई पाठ्क्रम सामग्री का उपयोग करते हैं।

यद्यपि संयुक्त राज्य अमेरिका में दूरवर्ती-शिक्षा की सीमित भूमिका है, तथापि अन्य देशों की तुलना में यह अधिक व्यापक है। विशेष रूप से सशत्र बल सेनायें दूरवर्ती-शिक्षा का सर्वाधिक उपयोग कर लाभान्वित होती हैं।

संयुक्त राज्य का सशक्त बल संस्थान

यह दूरवती-शिक्षा का एक ऐसा अद्वितीय संगठन है जो सशत्र सेना के कर्मचारियों को माध्यमिक, उत्तर माध्यमिक व्यावसायिक एवं परम्परागत शिक्षा प्राप्त करने के लिए विस्तृत पत्राचार पाठ्क्रमों की सुविधा प्रदान करती है। अन्य शब्दों में इसके द्वारा चलाये जा रहे दूरवर्ती-शिक्षा कार्यक्रम का मुख्य प्रेरणा स्रोत सक्रिय सेवा से निवृत्त होने के पश्चात् सिपाहियों, नाविकों एवं वायुयान चालकों की सुविधाओं की पुनः प्रतिस्थापना को सुगम बनाना है। यहाँ यह कहना उचित होगा कि सेना दूरवर्ती-शिक्षकों के द्वारा निर्मित 'इण्टर कॉरस्पोन्डेंस एक्सचेन्ज' नामक संस्था दूरवर्ती-शिक्षा के सम्बन्धी विचारों एवं अनुसन्धानों के आदान-प्रदान का कार्य करती है। दो करोड़ से अधिक रक्षा सेवा कर्मचारी के द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न सेना विशेषज्ञ इन विषयों का लाभ उठाते हैं।

व्यावसायिक क्षेत्रों में भी दूरवर्ती-शिक्षा की मुख्य भूमिका है। संयुक्त राज्य अमेरिका में दूरवर्ती-शिक्षा जिन क्षेत्रों में मुख्य योगदान देती है तथा उन्होंने प्रोढ़ एवं सतत शिक्षा में योगदान दिया है। ज्ञान के तीव्र विकास विशेषकर व्यावसायिक क्षेत्रों में सतत एवं जीवनपर्यन्त अधिगम के प्रत्यय को लोकप्रिय बनाने में बहुत सहायता की है। अत्यधिक जटिल मशीनों के प्रयोग ने भी कार्यशील लोग अपने-अपने अवकाश का अपने ज्ञान एवं कौशल को बढ़ोत्तरी अथवा अपने कैरियर को सुधारने हेतु नवीन कौशल विकसित करने के लिए प्रयोग करना चाहते थे। इस प्रकार अन्य प्रकार अन्य विकसित देशों की तरह संयुक्त राज्य अमेरिक में भी शिक्षा प्रणाली ने प्रौढ़ जनसंख्या की विविध शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रत्यक्ष रूप से इसने दूरवर्ती-शिक्षा का अद्भूत विकास किया।

विश्वविद्यालयों के प्रसार विभाग एवं स्वतन्त्र अध्ययन संस्थान लोगों को अपने व्यवसाय की अधुवातन जानकारी रखने हेतु निरन्तर/सतत् शिक्षा पाठ्क्रमों के अतिरिक्त अत्यधिक विविध

तापूर्ण व्यावसायिक एवं तकनीकी एवं आजीविकोन्मुखी पाठ्क्रम की सुविधा प्रदान करते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के पत्राचार पाठ्क्रमों के सन् 1982 में किये गये सर्वेक्षण के अनुसार 71 अमरीकी संस्थान थे जिनमें 24,488 छात्रों ने प्रवेश किया था।

नोट

संयुक्त राज्य अमेरिका के ऐसे दस निम्नलिखित विश्वविद्यालयों के पत्राचार संस्थान, निदेशालय अथवा विभाग सुपरिचित है, जिनमें प्रतिवर्ष 17,500 से लेकर 80,000 तक भिन्न-भिन्न संस्थाओं में प्रवेश किये जाते हैं-

1. विंघम यंग यूनिवर्सिटी,
2. मिसौरी यूनिवर्सिटी,
3. नेवरास्का यूनिवर्सिटी,
4. इन्डियाना यूनिवर्सिटी,
5. पेनिसिलवानिया स्टेट यूनिवर्सिटी,
6. टेक्सास टेक्निकल यूनिवर्सिटी,
7. विस्कान्सिन यूनिवर्सिटी,
8. ल्यूसाना स्टेट यूनिवर्सिटी,
9. मिनीसोटा यूनिवर्सिटी तथा
10. कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी।

विस्कोन्सिल विश्वविद्यालय के संचार कार्यक्रम विभाग ने टेलीफोन को एक शैक्षिक प्रभावी उपकरण के रूप में विकसित करने की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है। इसका देश में व्यापक कार्यक्रम है। जो पट्टे पर ली गयी व्यावसायिक टेलीफोन सेवा के प्रयोग द्वारा एक साथ विभिन्न स्थानों पर असंख्य कक्षाओं तक दृश्य-श्रव्य सामग्री प्रसारित करना चाहता है।

दृष्टिहीनों हेतु हैडली विद्यालय

दृष्टिहीनों के लिए हैडली स्कूल, विनेरका, इल्नोसिस में अन्धों एवं अपंगों के नाम की संस्था में संयुक्त राज्य अमेरिका में दूरवर्ती शिक्षा की एक विशेषता है। इस संस्था का आरम्भ सौ छात्रों के प्रवेश से शुरू हुआ, जिसकी संख्या 4,000 तक पहुँच गयी है। इसके छात्र पूरे राज्य तथा अन्य 55 देशों में फैले हैं। इस विद्यालय को सन् 1970 में 'नेशनल एक्रीडिशन कौंसिल फॉर द ब्लाइन्ड एण्ड विजुएली हैण्डीकैप्ट; तथा सन् 1978 में 'नार्थ सेन्ट्रल एंसोशियेशन ऑफ कॉलेज एण्ड स्कूल्स' द्वारा प्रमाणित किया गया। यह स्कूल दृष्टिहीनों को ब्रेल पद्धति सीखने में सहायक पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त 100 से अधिक ऐसे विभिन्न प्रकार के हाईस्कूल स्तर के पाठ्क्रमों की सूविधा प्रदान करता है, जो विकलांग व्यक्तियों को उनके शैक्षिक लक्ष्यों को प्राप्त करने अथवा व्यावसायिक स्तर के पाठ्क्रमों की सूविधा प्रदान करता है। स्कूल का अपना एक सम्पन्न विकसित रेडियो स्टेशन है। छात्र संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रतिदिन 8 घण्टे के लिए उपलब्ध पाठ्यक्रम के माध्यम से स्कूल स्टाफ के साथ विचार कर सकते हैं। छभत्र माइक्रो कम्प्यूटर एवं संश्लेषण के माध्यम से सरलता से सूचनायें एवं जानकारियाँ प्राप्त करते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका में लगभग सभी स्वतन्त्र अध्ययन कार्यक्रम सम्पूर्ण अथवा विस्तृत रूप में स्वावलम्बी है। इन कार्यक्रमों को चलाने के लिये पूर्णकालिक कर्मचारी प्राय: बहुत कम संख्या में रहते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका में ऐसे दो सुपरिचित राष्ट्रीय स्तर की संघ या संगठन हैं जो दूरवर्ती शिक्षा कार्यक्रमों के मानदण्डों को बनाये रखने के लिए, विकास करने के लिए उनमें समन्वय करने में संलग्न हैं। ये दोनों संस्थायें हैं-

नोट

1. नेशनल होम स्टडी कौंसिल (एन०एच० एस०सी०)-जो वाशिंगठन में है तथा सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त है। परिषद् का सुसंगठित आयोग है जिसने सन् 1985 में अपनी 30वी वर्षगाँठ मनाई।
2. नेशनल यूनिवर्सिटी कन्टिन्यूइंग इड्यूकेशन एसोसियेशन- यह भी वाशिंगटन में ही स्थित है। ये दोनों संस्थायें दूरवर्ती शिक्षकों के लाभ हेतु नियमित रूप से, सेमिनार वर्कशॉप एवं सम्मेलन आदि का आयोजन करती है।

रूस में दूरवर्ती शिक्षा

सन् 1920 ई० में रूस में दूरवर्ती-शिक्षा का अभ्युदय उस समय हुआ जब देश की अधिकांश जनता लगभग 76 प्रतिशत प्रौढ़ों को शिक्षित करने के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ी। इस प्रकार अशिक्षित लोगों को शिक्षित करने के लिये शिक्षकों को पत्राचार कार्यक्रम द्वारा शिक्षित किया गया जिसका प्रभाव यह देखने को मिला कि दो दशकों के भीतर काफी लोग शिक्षित हो गये।

पत्राचार शिक्षा की इस सफलता के बाद इस प्रकार के अनौपचारिक प्रशिक्षण का अधिक विस्तार हुआ, क्योंकि परम्परागत शिक्षण के द्वारा प्रत्येक लोगों को न तो प्रशिक्षित किया जा सकता है और न ही उनके अन्दर सामाजिक, राजनैतिक एवं अन्य प्रकार की जागरूकता प्रत्येक आयु समूह के अन्दर लायी जा सकती है जिसके लिये राज्य सरकार का दायित्व है। इसलिए यह निर्णय किया गया कि तीन प्रकार के चैनलों को मुख्य रूप से शिक्षण-प्रशिक्षण के लिये शुरू करना चाहिए।

पत्राचार शिक्षा रूस की संघीय व्यवस्था के अनुसार पाठ्क्रमों का निर्धारण करती है। विश्वविद्यालय एवं बहु-तकनीकी शिक्षा संस्थान राष्ट्रीय पाठ्क्रम का अनुसरण करते हैं और इसका उत्पादन एवं वितरण शिक्षा मन्त्रालय द्वारा किया जाता है।

विभिन्न गणराज्यों एवं स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्क्रम में सुधार आवश्यक है तथा उसको किया जाता है। 1970 के मध्य पत्राचार पाठ्क्रम ने अत्यधिक छात्रों को अपनी ओर आकर्षित किया। इस प्रकार विभिन्न विश्वविद्यालयों से लगभग 500 विभाग सम्बन्धित हो गये। इसके द्वारा विभिन्न प्रकार के तकनीकी एवं अन्य उच्च शिक्षा का भी श्री गणेश हुआ। पत्राचार छात्रों को एक वर्ष से अधिक का समय अन्य छात्रों की अपेक्षा लगता है। लेकिन उनको अनेक प्रकार के उद्दीपनों को इसके द्वारा प्रदान की जाती है।

चीन में दूरवर्ती-शिक्षा

पत्राचार शिक्षा की चीन में एक लम्बी परम्परा रही है। इसका प्रारम्भ बीसवीं सदी के प्रारम्भ में हुआ। सन् 1960 के मध्य प्रौढ़ों, छात्रों के शैक्षिक स्तर में सुधार हेतु एक सुविधाजनक माध्यम के रूप में, बीजिंग संघाई, शीयांग जैसे अनेक नगरों में इसकी स्थापना हुई। समाजवादी आधुनिक योजना ने सामान्य जनता के लिए व्यापक शिक्षा सुविधाओं की माँग करते हुए सन् 1979 में बीजिंग में सेन्ट्रल रेडियो एण्ड टेलीविजन यूनिवर्सिटी की स्थापना की प्रेरणा दी। यह विश्वविद्यालय वर्तमान में विश्व के दूरवर्ती-शिक्षा संस्थाओं में एक है, जिसमें छात्रों

की संख्या एक करोड़ से भी अधिक है। यह विश्वविद्यालय सम्पूर्ण चीन के कर्मचारियों को शैक्षिक अवसर प्रदान करती है। यह आशा की जाती है कि सन् 2000 तक छात्रों की संख्या 2 करोड़ तक हो जायेगी।

नोट

इस विश्वविद्यालय में प्रवेश मुख्यत: प्रवेश परीक्षा के आधार पर किया जाता है। अनुदेशन मुख्यत: दूरदर्शन के माध्यम से दिया जाता है तथा लिखित पाठ्क्रम सामग्री एवं सत्रों के आयोजन द्वारा व्यक्तिगत सम्पर्क किया जाता है। विश्वविद्यालय द्वारा विज्ञान एवं तकनीकी एवं सामाजिक विज्ञान आदि क्षेत्रों में स्नातक कार्यक्रम भी चलाये जाते हैं। सन् 1982 से 1983 एवं 1985 में चार करोड़ स्नातक पूरे देश में निकले। यह संख्या इन कार्यक्रमों से लाभ उठा रही है एक करोड़ स्वतन्त्र दर्शकों के अतिरिक्त थी।

दूरवर्ती-शिक्षण विश्वविद्यालय

नवीन सार्वजनिक दूरवर्ती-शिक्षण विश्वविद्यालयों में शिक्षण माध्यम के रूप में रेडियो तथा टेलीविजन को अधिक उपयोग में लिया जाता था। ब्रिटेन में मुक्त विश्वविद्यालय के लिए बनाई गई मूल योजना में इसे 'यूनिवर्सिटी ऑफ एअर' कहा गया है। यह 1961 में सरकार द्वारा प्रकाशित श्वेत पत्र का शीर्षक था, जिसमें उन हजारों प्रतिभाशाली छात्रों की क्षमताओं एवं योग्यताओं के विकास हेतु शिक्षा प्रबन्ध के लिए परम्परागत विश्वविद्यालयों में प्रवेश लेने में असमर्थ थे। एक मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हेतु नवीन तकनीकी का विकास किया गया तथा नई योजनाओं की रूपरेखा बनाई थी। पश्चिमी जर्मनी में हेगन नामक स्थान पर दूरवर्ती-शिक्षा विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। नवीन दूरवर्ती-शिक्षण विश्वविद्यालयों ने बहुत शीघ्र छपे हुए एवं लिखित शब्द को अपना मुख्य माध्यम बना लिया। दूरवर्ती-शिक्षण विश्वविद्यालयों की स्थापना अधोलिखित कारणोंवश हुई थी-

1. अनेक देशों द्वारा सामान्य रूप से विश्वविद्यालय शिक्षा की सुविधा में वृद्धि करने की आवश्यकता का अनुभव किया जाना।
2. इस बात का अनुभव होना कि परिवार नौकरी एवं समाज के प्रौढ़ व्यक्ति विशाल अंशकालिक विश्वविद्यालय छात्र-समूह का निर्माण करते हैं।
3. पिछड़े वर्ग के प्रौढ़ों को अध्ययन के अवसर प्रदान कर व्यक्ति एवं समाज की सेवा की अभिलाषा पूरी करना।
4. अनेक व्यवसायों में एक उच्च स्तर पर आगे शिक्षण की आवश्यकता का पाया जाना।
5. नवीन शैक्षिक परिवर्तन अधिक उपयोगी सिद्ध होना।
6. मितव्ययी आयोग की सम्भावना का विश्वास होना।

उपर्युक्त वर्णित उद्देश्यों दूरवर्ती-शिक्षण विश्वविद्यालयों के मार्गदर्शक लेखों में विभिन्न रूप ग्रहण किये कभी-कभी विशिष्ट शिक्षण की आवश्यकताओं को पूरा करना होता है।

इन विश्वविद्यालयों के सम्बन्ध में जानकारी एकत्र की गई है। परम्परागत विद्यालयों अथवा विश्वविद्यालयों की संख्या के समान विश्वभर के दूरवर्ती-शिक्षण संस्थानों की संख्या का होना अत्यन्त कठिन कार्य है। पश्चिमी जर्मनी के फर्न यूनिवर्सिटी में किये गये अन्तर्राष्ट्रीय दूरवर्ती-शिक्षा के तुलनात्मक अध्ययन के लगभग 1,500 दूरवर्ती-शिक्षण संस्थानों की तालिका दी गई है। छात्रों की प्रवेश संख्या पूछे जाने पर कुछ सीमित संख्या में संस्थानों ने कुछ छात्रों की संख्या सूचित की। सन् 1986 में लगभग छ: करोड़ थी। सन् 1970 में स्थापित सुप्रसिद्ध

नोट

दूरवर्ती-शिक्षण विश्वविद्यालय निम्नलिखित थे-

1. अलामा इकबाल ओपेन यूनिवर्सिटी पाकिस्तान (1974) इस्लामाबाद।
2. अथावास्का यूनिवर्सिटी अलवार्टा कनाडा (1975)।
3. सेन्ट्रल ब्राडकास्टिंग एण्ड टेलीविजन विश्वविद्यालय चरसा (1979)।
4. इब्रीमैन विश्वविद्यालय, इजरायल (1974)।
5. फर्न यूनिवर्सिटी, वेस्ट जर्मनी (1985)।
6. इन्दिरा गांधी ओपेन यूनिवर्सिटी, इण्डिया (1985)।
7. कोरिया एअर एण्ड कॉरेस्पान्डेन्स यूनिवर्सिटी, साउथ कोरिया (1982)।
8. वयोंगि ओपेन यूनिवर्सिटी, साउथ कोरिया (1980)।
9. नेशनल ओपन यूनिवर्सिटी, ताइवान (1982)।
10. ओपेन यूनिवर्सिटी, हटलिन, नीदरलैण्ड्स (1983)।
11. ओपेन यूनिवर्सिटी मिल्टन केन्यीज (1969) ब्रिटेन में।
12. श्री लंका इन्स्टीटयूट ऑफ डिस्टेन्स एजुकेशन (1982)।
13. श्री लंका ओपन यूनिवर्सिटी।
14. सुकोथाई थामिृथेट ओपेन यूनिवर्सिटी थाईलैण्ड (1978)।
15. टेली-यूनिवर्सिटी डिस्टेन्स-टीचिंग इन्स्टीट्यूशन।
16. यूनिवर्सियाद इंस्टल डिस्टानिका, कोस्तारिका (1978)।
17. यूनिवर्सिदाद नाइकोनाल एवेरता, वेनेजुएला (1978)।
18. यूनिवर्सिदाद निंकोनाल दि एजुकेशन ए डिस्टेन्स, स्पेन (1973)।
19. यूनिवर्सिटी टरवुका, इन्डोनेसिया (1984)।
20. यूनिवर्सिटी ऑफ एअर, जापान (1983)।
21. यूनिवर्सिटी ऑफ साउथ अफ्रीका, प्रिटोरिया (1982) तथा
22. ओपेन यूनिवर्सिटी ऑफ हैदराबाद, इण्डिया (1981)।

अनेक ऐसे दूरवर्ती-शिक्षण संस्थायें हैं जो इन विश्वविद्यालयों के समान कार्य करते हैं तथा जिन्हें इस सूची में सम्मिलित किया गया है। ऑस्ट्रेलिया के समान ये तथाकथित विश्वविद्यालय से सम्बन्ध है जो दूरवर्ती-शिक्षा के प्रति विशेष रूप से समर्पित है।

भारत में दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली (Distance Learning System in India)

भारत में दूरवर्ती शिक्षा का इतिहास

विभिन्न देशों में दूरवर्ती-शिक्षा में तीव्रता से प्रगिति हो रही है। इसके प्रसार तथा लोकप्रियता का प्रमाण है। भारत में सन् 1960 के आस-पास केवल चार विश्वविद्यालय ऐसे थे जो आंशिक रूप से इस प्रकार की दूरवर्ती-शिक्षा प्रदान कर रहे थे। आज भारत में 31 ऐसे अधिक विश्वविद्यालय दूरवर्ती-शिक्षा की व्यवस्था कर रहे हैं। जो स्पष्ट रूप से दूरवर्ती-शिक्षा की अद्भुत प्रगति प्रदर्शित करते हैं। भारत की शिक्षा प्रणाली में दूरवर्ती-शिक्षा ने अपना विशिष्ट स्थान बना लिया है।

लगभग 30 वर्ष पूर्व भारत में दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा पत्राचार-शिक्षा की एक योजना के रूप में लिया गया। इस प्रयोग की सफलता ने देश के अन्य अनेकों विश्वविद्यालयों को

दूरवर्ती-शिक्षा की प्रणाली के माध्यम से अनुदेशन को प्रोत्साहित किया। दूरवर्ती-शिक्षा के अतिहास में सर्वप्रथम सन् 1982 में "आन्ध्र-प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। इस प्रकार विशविद्यालय के स्तर की एक स्वतन्त्र स्वायत्त संस्था की स्थापना हुई। सन् 1970 से 1980 की अवधि में अनेक प्रादेशिक विश्वविद्यालयों द्वारा पत्राचार शिक्षा के संस्थान/निदेशालय प्रारम्भ किए गए जिन्होंने दूरवर्ती-शिक्षा को प्रोत्साहन प्रदान किया। इससे विभिन्न राज्यों द्वारा एक ऐसे विश्वविद्यालय की स्थापना की प्रबल माँग को बल मिला जो देश के सभी निदेशालयों के कार्यों में समन्वय कर सके। यह भी अनुभव किया गया कि इस प्रकार की दूरवर्ती-शिक्षा के विकास में पूर्णत: समर्पित संलग्न संस्थान अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा।

परिणामत: सितम्बर, 1985 में भारत सरकार ने इन्दिरा गांधी ओपेन यूनिवर्सिटी (इग्नों) की स्थापना का निर्णय लिया। राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना एक महत्पवूर्ण प्रयास है, क्योंकि पूर्णत: दूरवर्ती-शिक्षा के प्रति समर्पित विश्वविद्यालयों की स्थापना परम्परागत विश्वविद्यालय संरचना के कारण दूरवर्ती शिक्षा के विकास में आने वाली बाधायें दूर हो जायेंगी। पिछले दशक में आन्ध्र-प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय के अतिरिक्त भारत में चार अन्य मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई है, जिनके नाम हैं-कोटा यूनिवर्सिटी, नालन्दा ओपेन यूनिवर्सिटी, यशवन्त राव चव्हाण ओपेन यूनिवर्सिटी तथा इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय हैं। राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय का उत्तरदायित्व सम्पूर्ण देश के मुक्त विश्वविद्यालयों एवं अन्य दूरवर्ती-शिक्षा संस्थाओं के मानदण्डों/प्रतिमानों का निर्धारण, उनका निर्वाह करना तथा समन्वय करना है। इसके साथ-साथ यह भी वाँछनीय है कि विभिन्न दूरवर्ती शिक्षा संस्थानों द्वारा चलाये जा रहे पाठ्यक्रमों में यथासम्भव पुनरावृत्ति को रोका जा सक, जिससे विभिन्न पाठ्क्रमों की पाठ्वस्तु को पुष्ट किया जा सके।

अतीत काल से औपचारिक विश्वविद्यालयों के निम्नलिखित कार्य सुनिश्चित किये गये हैं-

1. ज्ञान का संचय करना,
2. नवीन ज्ञान का संवर्धन करना,
3. ज्ञान का विस्तार अथवा प्रसार करना तथा
4. विस्तार क्रियाओं का संचालन करना।

आज तक दूरवर्ती-शिक्षा एवं मुक्त विश्वविद्यालयों के कार्य ठीक प्रकार से परिभाषित नहीं किये गए हैं। इस प्रणाली का अभी विकास हो ही रहा है। भारत में दूरवर्ती शिक्षा के विकास का तीन अवस्थाओं में अवलोकन किया जा सकता है।

1. **पूर्व टेप की अवस्था:** इस अवस्था का ज्ञान भारत में 1960 के दशक में किये गए प्रयासों से होता है। इस समय में जब केवल चार पत्राचार पाठ्यक्रम संस्थाओं, दिल्ली (1962), पटियाला पंजाब (1968), मेरठ (1969) एवं मैसूर (1969) की स्थापना हुई। इस प्रकार 1960 के दशक का वह समय था जबकि दूरवर्ती-शिक्षा का प्रयोग किये जाने का विचार किया तथा इसने भारत भूमि में अपनी जड़ें जमानी आरम्भ कर दी। इस दृष्टि से भारत में दूरवर्ती-शिक्षा की क्रांति आरम्भ की थी तथा इसमें क्रमश: धीरे-धीरे गति आती गयी, जिससे यह प्रीटेप अवस्था में पहुँच गयी।
2. **टेप की अवस्था:** सन् 1970-80 के दशक के मध्य 19 विश्वविद्यालयों ने पत्राचार पाठ्क्रम के संस्थान/निदेशालय प्रारम्भ किए और इस प्रकार दूरवर्ती-शिक्षा

नोट

को एक प्रोत्साहन मिला। इस अवधि के दौरान स्थापित संस्थानों एवं निदेशालयों ने उच्च शिक्षा पाठ्क्रम एवं कुछ डिप्लोमा पाठ्क्रमों को भी शुरू किए थे।

इस दशक में कुछ दूरवर्ती-शिक्षा इकाइयाँ स्थापित की गई पंजाब एवं हिमाचल प्रदेश (1971), आन्ध्र एवं वेंकटेश्वर (1972), हैदराबाद, पटना (1974), भोपाल, उत्कल एवं मुम्बई (1975), मदुरई, कामराज, जम्मू, काश्मीर एवं राजस्थान (1976), उस्मानिया एवं केरल (1977), इलाहाबाद एवं मुम्बई (1978), अन्नामलाई एवं उदयपुर (1970-79) के दशक में दूरवर्ती-शिक्षा को अधिक बढ़ावा मि3ला। अधिकांश विश्वविद्यालयों ने दूरवर्ती-शिक्षा प्रणाली को शिक्षा की एक वैकल्पिक प्रतिविधि के रूप में ग्रहण किया। इससे भी अधिक जहाँ 1960 के दशक में प्रयोगात्मक रूप में केवल पूर्व स्नातक पाठ्क्रम ही प्रारम्भ किये गए थे। सन् 1970 के दशक में पत्राचार पाठ्क्रम के संस्थानों/निदेशालयों द्वारा डिग्री एवं डिप्लोमा प्रमाण-पत्र हेतु पाठ्क्रम भी प्रारम्भ किये गये।

3. **विकासोन्मुखी अवस्था:** सन् 1970 के दशक के अन्त तक दूरवर्ती-शिक्षा परम्परागत शिक्षा प्रणाली से सम्बद्ध हो गयी थी। इस कारण इसे परम्परागत विश्वविद्यालयों की परिधि में काम करना था। भारत में दूरवर्ती-शिक्षा के अतिहास में प्रथम बार आन्ध्र प्रदेश सरकार ने सन् 1982 में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना करने का महत्वपूर्ण निर्णय किया। इस प्रकार दूरवर्ती-शिक्षा के विकास के लिये एक विश्वविद्यालय स्तर की स्वायत्तशासी संस्था की स्थापना हुई। इससे भी विभिन्न देशों में ऐसे मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की माँग होने लगी जिससे देश भर के निदेशालयों के कार्यों में समन्वय कर सकें। इस बात का अनुभव किया गया कि इस प्रकार की दूरवर्ती शिक्षा के विकास हेतु पूर्णत: समर्पित एक सर्वोच्च संस्था अत्यन्त उपयोगी होगी।

इसके परिणामस्वरूप सितम्बर, 1985 में भारत सरकार ने इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्याल की स्थापना का निर्णय लिया। इस विश्वविद्यालय के उद्देश्यों में मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं-

1. मुक्त विश्वविद्यालय एवं दूरवर्ती-शिक्षा प्रणाली का विकास करना।
2. इस प्रकार की प्रणाली में, शिक्षा मूल्यांकन एक अनुसंधान के प्रतिमान निर्धारित करना।
3. नियमानुसार महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों एवं उच्च अधिगम के प्रतिमान निधारित करना।

भारतवर्ष में पत्राचार दूरवर्ती शिक्षा संस्थानों की राज्यवार सूची

दिल्ली

1. दिल्ली विश्वविद्यालय (1962)
2. जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय
3. इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यलय (1985)

हरियाणा

1. कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र (1970)

छात्र क्रियाकलाप

1. भारत में दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली का अर्थ बतायें?

2. दूरवर्ती-शिक्षा का विकास क्या है? बतायें।

नोट

हिमाचल प्रदेश

1. हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय (1971)

जम्मू एवं कश्मीर

1. जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू (1976)
2. कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर (1976)

पंजाब

1. पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला (1968)
2. पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ (1971)

राजस्थान

1. राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (1976)
2. मोहनलाल सुखाड़ियो विश्वविद्यालय, उदयपुर (1979)
3. मुक्त विश्वविद्यालय, कोटा (1980)

उत्तर प्रदेश

1. मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ (1969)
2. इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (1978)
3. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (1999)

मध्य प्रदेश

1. भोपाल विश्वविद्यालय, भोपाल (1975)

महाराष्ट्र

1. बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई (1978)
2. एस॰एन॰डी॰टी॰ महिला विश्वविद्यालय, बम्बई (1978)
3. पुणे विश्वविद्यालय, पुणे
4. यशवन्त राव चव्हाण मुक्त विश्वविद्यालय

आसाम

1. गुवाहाटी विश्वविद्यालय गुवाहाटी

बिहार

1. पटना विश्वविद्यालय, पटना (1974)
2. राँची विश्वविद्यालय, राँची
3. नार्थ ईस्टर्न हिल यूनिवर्सिटी

उड़ीसा

1. उत्कल विश्वविद्यालय, भुवनेश्वर (1975)

आन्ध्र प्रदेश

1. आन्ध्र विश्वविद्यालय, विसाखापट्नम (1972)
2. श्री वेंक्टेश्वर विश्वविद्यालय, तिरुपति (1972)
3. सेन्ट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ इंगलिश एण्ड फारेन (1973)

4. लैंग्वजेज, हैदराबाद
5. उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद (1977)
6. आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद (1977)

नोट

कर्नाटक

1. मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर (1969)
2. बंगलौर विश्वविद्यालय, बंगलौर (1980)

केरल

1. केरल विश्वविद्यालय, त्रिवेन्द्रम (1977)
2. कोचीन विश्वविद्यालय, कोचीन
3. कालीकट विश्वविद्यालय, कालीकट

तमिलनाडु

1. मदुराई कामराज विश्वविद्यालय, मदुदई (1976)
2. अन्नामलाई विश्वविद्यालय(1979)
3. मद्रास विश्वविद्यालय, मद्रास (1982)

भारतीय शिक्षा नीति निर्धारण में दूरवर्ती शिक्षा का महत्व

किसी राष्ट्र की शिक्षा नीति केवल संसाधनों एवं प्राथमिकताओं से सम्बन्धित बातों पर ही प्रकाश नहीं डालती है अपितु यह सामाजिक मांगों से सम्बन्धित प्रश्नों से बहुत गहराई तक जुडी हुई होती है। इन मांगों को समाज क प्रभावशाली समूहों के निहित स्वार्थों एवं उनकी राजनैतिक शक्ति तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहायता प्रदान करने वाले अभिकरण तंत्र से भी अलग नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार किसी भी शैक्षिक कार्यक्रम पर सामाजिक लक्ष्यों की परिधि में ही चर्चा की जा सकती है। सामाजिक आवश्यकताओं पर प्रकाश डालने के साथ-साथ शैक्षिक नियोजन में यर्थाथवादी दृष्टिकोण भी होना चाहिए। इसके लिए शैक्षिक नियोजन में केवल उपलब्ध विकल्पों पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए।

अत: भारतीय शिक्षा नीति निर्धारण में निम्नांकित बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए–

1. भारतीय शिक्षा पूर्वकाल में ही थोपे गये अनेक प्रतिबन्धों एवं समझौते से बहुत अधिक प्रभावित हुई है जिसके कारण यह समाज में हो रहे परिवर्तनों एवं नवीन आवश्यकताओं के अनुरूप सफल सिद्ध नहीं हो पा रही है। अत: इसे अधिक स्वायत्तता की आवश्यकता है।
2. सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक आवश्यकताओं के प्रति शिक्षा का दायित्व मुख्य रूप से समाज के स्वरूप तथा उसे स्वीकार्य विकास के प्रकार पर निर्भर करता है। इस दृष्टि से वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था, रूढ़िवादी भारतीय समाज की ओर ही संकेत करती है। अत: इसमें कोई मूलभूत परिवर्तन तब तक स्वीकाय्र नहीं हो सकता है जब तक कि 'प्रतिनिधि सामाजिक-राजनैतिक समूहों' के मूल्य पूर्वकालीन प्रतिबन्धों से मुक्त नहीं हो पाते तथा भविष्य के लिए नये विकल्पों से युक्त नहीं हो जाते हैं।
3. एक विकाशील समाज में सभी के लिए शिक्षा की सुलभता आवश्यक है जिससे

शिक्षा को विकास से जोड़ा जा सके तथा प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक उन्नति में भागीदारी सुनिश्चित हो सके। अत: इस के लिए शिक्षाविदों द्वारा अच्छे भावी समाज के निर्माण के प्रति उपयुक्त दृष्टिकोण अपनाने पर बल दिया जाना चाहिए।

नोट

उपर्युक्त बिन्दुओं पर विचार करने से स्पष्ट है कि हमारी वर्तमान परम्परागत शिक्षा प्रणाली नवीन भारतीय समाज की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम नहीं है। अत: किसी विकल्प की आवश्यकता है। दूरवर्ती शिक्षा ऐसा ही विकल्प है जो हमारी नवीन मांगों को पूर्ण कर सकता है तथा सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति सम्भव हो सकती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि दूरवर्ती शिक्षा में वर्तमान अवरोधों की चुनौतियों को स्वीकार करके उनका सम्यक् उत्त देने की पर्याप्त क्षमता है। यह उपलब्ध संसाधनों का अधिक से अधिक उपयोग करके आवश्यक अनुदेशनात्मक सामग्री प्रदान करने में सक्षम है। यह प्रमुख अवरोधों जैसे–विद्यालय भवनों की कमी, वित्तीय संकट, कुशल शिक्षकों का अभाव तथा औपचारिक शिक्षा के अनेक प्रतिबन्धों आदि चुनौतियों का सामना कर सकती है।

इस प्रकार दूरवर्ती शिक्षा हमारी अनिवार्य आवश्यकताओं का सम्यक् समाधान है। अत: शिक्षा नीति निर्धारण में इस पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

भारत में पत्राचार शिक्षा के विकास हेतु विभिन्न आयोगों की संस्तुतियाँ

भारत सरकार के तत्कालीन मंत्री डॅ० के०एल० श्रीमाली द्वारा 1962 ई० में भारत में पत्राचार शिक्षा के शुभारम्भ के समय इसके उद्देश्यों को निम्नलिखित रूप में दिया था–

1. राष्ट्रीय विकास के सन्दर्भ में उच्च शिक्षा के स्तर पर एक सक्षम कम खर्चीली शिक्षण प्रणाली प्रदान करना।
2. उन सभी योग्य एवं इच्छुक व्यक्तियों को उच्च शिक्षा ग्रहण करने हेतु अवसर प्रदान करना जो व्यक्तिगत एवं आर्थिक कारणों अथवा किसी अन्य कारण से नियमित विश्वविद्यालयों शिक्षा हेतु प्रवेश नहीं ले सके थे।
3. रोजगार में लगे हुए शिक्षित लोगों को उनके रोजगार या कार्य में बिना कोई बाधा पहुँचाये शैक्षिक उन्नति के अवसर प्रदान करना।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भी पत्राचार शिक्षा प्रारम्भ करने हेतु बल प्रदान करते हुए कहा है कि ये पाठ्यक्रम निम्नलिखति श्रेणी के विद्यार्थियों की अपेक्षाओं को सफलतापूर्वक पूर्ण कर सकते हैं–

1. ये विद्यार्थी जिन्हें आर्थिक एवं कुछ दूसरे कारणों से अपनी औपचारिक शिक्षा को बीच में छोड़ना पड़ा हो।
2. भौगालिक दृष्टि से दूर-दराज के क्षेत्रों में रहने वाले विथार्थी;
3. ऐसे विद्यार्थी जिन्हें अभियोग्यता एवं अभिप्रेरणा के अभाव में औपचारिक शिक्षा छोड़नी पड़ी हो किन्तु अब वे शिक्षा के लिए स्वत: अभिप्ररित हो; और उच्च शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक हों।
4. ऐसे विद्यार्थी जो आवश्यक न्यूनतक योग्यता रखते हुए भी सीटों की कमी के कारण विश्वविद्यालयों में वांछित पाठ्यक्रम में प्रवेश नहीं पा सकें हो;
5. ऐसे व्यक्ति जो शिक्षा को जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया के रूप में देखते हैं तथा अपने वर्तमान विषय के ज्ञान में वृद्धि करना चाहते हैं अथवा किसी नवीन क्षेत्र का ज्ञान करना चाहते हैं तथा

6. सेवारत व्यक्ति जो उच्च शिक्षा प्राप्त करके अपनी शैक्षिक एवं व्यावसायिक उन्नति करना चाहते हैं।

नोट

दूरवर्ती शिक्षा के इस प्रारम्भिक रूप अर्थात् पत्राचार शिक्षा की क्षमताओं एवं सम्भावनाओं से प्रभावित होकर भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) ने भी इस प्रणाली को सुदृढ़ बनाने हेतु अपनी संस्तुति प्रदान की है। आयोग ने इस सम्बन्ध में कहा है कि–

"पत्राचार अथवा गृह अध्ययन पाठ्यक्रम एक अच्छी तरह आँकी एवं परखी हुई प्रणाली है। संयुक्त राज्य अमेरिका, स्वीडन, सोवियत रूस, जापान एवं आस्ट्रेलिया जैसे विश्व के दूसरे देशों में इस प्रणाली को एक लम्बे समय से प्रयोग किया जा रहा है। उनके द्वारा प्राप्त सफलता हमें यह संस्तुति करने को प्रेरित करती है कि भारत में व्यापक उद्देश्यों के लिए इस प्रणाली का पूरी तरह उपयोग किया जाना चाहिए। ऐसा कोई आधार नहीं है जिससे पत्राचार पाठ्यक्रम को औपचारिक शिक्षा से कम माना जा सके। दूसरे देशों के अनुभव एवं भारत में किये गये प्रयोगों के परणिाम पत्राचार शिक्षा प्रणाली को सुदृढ़ करने की ओर ही संकेत करते हैं।.....अतः सायंकालीन कक्षाओं एवं पत्राचार पाठ्यक्रम के माध्यम से अंशकालीन शिक्षा के यथासम्भव अधिक से अधिक अवसर प्रदान किये जाने चाहिए। इस पाठ्यक्रम के अन्तर्गत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की शिक्षा के पाठ्यक्रमों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए। ये पाठ्यक्रम नामांकन बढ़ने पर शिक्षा की लागत को एक सीमा तक कम कर सकेंगे। जो लोग अपनी आर्थिक आवश्यकताओं के कारण स्कूली शिक्षा के बाद ही रोजगार/कार्य करने को विवश होते हैं किन्तु आगे अध्ययन करने की इच्छा रखते हैं, उन्हें उच्च शिक्षा प्रदान करने का यह सबसे अच्छा अवसर है। अतः हम सुझाव देते हैं कि सन् 1986 ई० तक उच्च शिक्षा के सम्पूर्ण नामांकन का कम से कम एक तिहाई पत्राचार पाठ्यक्रम प्रणाली एवं सायंकालीन कक्षाओं के माध्यम से उच्च शिक्षा प्राप्त करने का लाभ प्राप्त करें।"

उपर्युक्त सुझावों से प्रोत्साहित होकर अनेक उच्च शिक्षा संस्थानों द्वारा पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारम्भ किये गये। शिक्षा आयोग की संस्तुति के अनुसार 1986 ई० तक उच्च शिक्षा में कुल नामांकन का एक तिहाई का लक्ष्य पत्राचार शिक्षा के अन्तर्गत सम्मलित तो नहीं किया जा सका किन्तु उस समय तक 34 विश्वविद्यालयों द्वारा पत्राचार शिक्षा की सुविधा प्रदान जाने लगी तथा बी०ए०, एम०ए०, एम०कॉम०, बी०एस०सी०, एम०एस०सी०, एम०एड०, एल०एल०बी० (शैक्षिक) तथा कुछ व्यावसायिक पाठ्यक्रम जैसे–एम०बी०ए०, बी०टेक०, आदि पाठ्यक्रम भी प्रदान किये जाने लगे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एवं दूरवर्ती शिक्षा

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 स्पष्ट रूप से मुक्त विश्वविद्यालय की ओर दूरवर्ती अधिगम तथा संचार माध्यमों की भूमिका के महत्व को मान्यता प्रदान करती है। मुक्त विश्वविद्यालय के बारे में राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रतिवेदन में स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि–

"The Open University System has been initiated in order to augment Opportunites for higher education and as an instrument of democratising education. The Indira Gandhi National Open University, established in 1985 in fulfilment of these objectives will be strenghened. Theis powerful instrument will have to be diveloped with care and extend with education." -NPE(1986)

अतः राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार मुक्त विश्वविद्यालय का प्रारम्भ उच्च शिक्षा के लिए

नोट

अवसरों के विस्तार तथा शिक्षा के लोकतंत्रीकरण के एक प्रभावशाली साधन के रूप में किया गया है। 1985 ई॰ में स्थापित इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय को इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सुदृढ़ किया जायेगा। इस शक्तिशाली साधन का विकास एवं विस्तार बहुत सावधानीपूर्वक एवं अच्छी देखरेख के साथ किया जाना होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के विकास समानता के लिए शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, महिला शिक्षा, तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा, शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाने, शिक्षा की विषयवस्तु एवं प्रक्रिया को नया मोड़ देने तथा शिक्षा की प्रबन्धन व्यवस्था का पुनर्गठन करने पर विशेष बल प्रदान किया गया है। इन कार्यक्रमों के दूरवर्ती शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

मुक्त विश्वविद्यालयों और दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय (Open Universities and Directorate of Distance Education)

मुक्त-शिक्षा

इस क्षेत्र में शब्दावली सम्बन्धी एक क्रमिक विकास हुआ है जो 'पत्राचार शिक्षा' से प्रारम्भ होकर दूरवर्ती शिक्षा व इससे मुक्त अधिगम तक है। यह स्पष्टता प्रधान शौक्षिक योग्यता, अधिगम का स्थान, पहुँच, विषयों का चुनाव, अनुदेशन रचनाओं में भिन्नता, शिक्षा यान्त्रीकरण के प्रतिपादन में लचीलापन और छात्रों को अपनी क्षमता के अनुसार सीखने का अवसर दिया जाता है। व्यवहारिक रूप में मुक्त अधिगम का सारांश यह है–

'दूरवर्ती शिक्षा' में बहु-माध्यमों का उपयोग किया जाता है, जैसे-मुद्रित सामग्री, श्रव्य-दृश्य कैसेट, रेडियो और दूरदर्शन कार्यक्रम आदि का प्रयोग करना और इन अध्ययन सामग्री के कार्यक्रम को सम्पर्क-कार्यक्रमों से जोड़ना होता है।

मुक्त अधिगम प्रणाली तथा अनौपचारिक शिक्षा

मुक्त अधिगम, अनौपचारिक शिक्षा की अपेक्षा लचीली तथा छात्र-केन्द्रित है। जब तक अनौपचारिक शिक्षा में दूरवर्ती शिक्षा की विधियों का प्रयोग नहीं होता है तब तक उसे मुक्त अधिगम नहीं कहा जा सकता है।

मुक्त अधिगम प्रणाली तथा दूरवर्ती शिक्षा

मुक्त अधिगम प्रणाली में दूरवर्ती शिक्षा की विधियों का प्रयोग होता है, किन्तु दूरवर्ती शिक्षा मुक्त शिक्षा नहीं हो सकती है क्योंकि सभी छात्र इसके पाठ्यक्रमों में भाग ले सकते हैं। इस प्रकार सतत् शिक्षा के व्यावसायिक कार्यक्रम उस व्यवसाय के कुछ सदस्यों तक ही सीमित रह जाते हैं, ये मुक्त शिक्षा के अन्तर्गत नहीं आते हैं।

मुक्त अधिगम प्रणाली तथा पत्राचार शिक्षा

पत्राचार शिक्षा एक प्रकार की दूरवर्ती शिक्षा है, लेकिन इसे मुक्त अधिगम नहीं कह सकते जब तक उसमें संस्थागत पाठ्यक्रम के नियम लागू न हों जैसे पाठ्यक्रम, प्रवेश का आधार आदि। पाठ्यक्रम, अध्ययन सामग्री मूल्यांकन विधि के आधार पर यह पाया जाता है कि मुक्त अधिगम प्रणाली तथा कठोर अनौपचारिक संस्थागत प्रणाली से भिन्न प्रकार की है।

नोट

पारम्परिक शिक्षा प्रणाली की सीमाएँ

पारम्परिक विश्वविद्यालों तथा शैक्षिक संस्थाओं की निम्नलिखित सीमायें होती हैं–

1. शैक्षिक संस्थायें पारम्परिक विश्वविद्यालयों के सम्बन्धित जानी जाती हैं। वे अपने शैक्षिक पाठ्यक्रमों को निर्धारित करने के लिए स्वतन्त्र नहीं हैं।
2. उनके पाठ्यक्रम, प्रवेश के नियम तथा अन्य नीतियां दूसरों के हाथ में होती हैं। पाठ्यक्रम कठोर तथा नियमित छात्रों के लिए बनाये गये हैं।
3. इन शैक्षिक संस्थाओं में मुद्रित माध्यम तथा पत्राचार शिक्षा ही अनुदेशन की प्रमुख विधि हैं।
4. पारम्परिकप्रणाली के शिक्षक तथा प्रसाशक पत्राचार शिक्षा प्रणाली को एक दूसरे स्तर की प्रणाली मानते हैं।

इन सीमाओं को ध्यान में रखते हुए, शिक्षा की नयी मुक्त शिक्षा प्रणाली का शुभारम्भ किया जा रहा है।

मुक्त शिक्षा प्रणाली की व्यवहारिक नीतियां

सन् 1986 में मुक्त अधिगम प्रणाली से सम्बन्धित जो नीति संस्तुति पत्र है तथा आठवीं योजना से सम्बन्धित लेखों का वर्णन किया गया है।

शिक्षा की राष्ट्रीय प्रणाली

जीवन-पर्यन्त शिक्षा, शैक्षिक प्रक्रिया का एक उद्देश्य है। इसके द्वारा विश्वव्यापी साक्षरता प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि इससे महिलाओं, युवकों, कृषकों तथा औद्योगिक श्रमिकों तथा व्यवसायियों की इच्छानुसार तथा क्षमतानुसार शिक्षा में लगे रहने का अवसर प्राप्त होगा।

प्रौढ़ शिक्षा एक व्यापक कार्यक्रम है, प्रौढ़ तथा सतत् शिक्षा को जिसे अनेक ढंगों तथा दिशाओं से लागू किया जा सकता है–

1. शिक्षा में लगे रहने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में केन्द्रों की स्थापना करना।
2. रोजगार प्रदान करने वालों ट्रेंड यूनियनों तथा सरकार से सम्बन्धित संस्थाओं द्वारा श्रमिकों की शिक्षा।
3. उच्चतर माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं का विकास।
4. पुस्तकों, पुस्तकालयों तथा पढ़ने के कमरों का व्यापक विस्तार करना।
5. रेडियो, दूरदर्शन तथा चलचित्रों का समूह अधिगम माध्यम के रूप में प्रयोग करना।
6. सीखने वालों के समूह का निर्माण व संगठन करना।
7. दूरवर्ती अधिगम के कार्यक्रम की व्यवस्था करना।
8. स्वाध्याय हेतु व्यवस्था करना।
9. आवश्यकता तथा रुचि पर आधारित रोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रमों की व्यवस्था करना।

अनौपचारिक शिक्षा

अनौपचारिक शिक्षा के केन्द्रों पर अधिगम वातावरण में सुधार के लिए आधुनिक तकनीकी सामग्री का प्रयोग किया जा सकता है। स्थानीय समुदाय के होनहार तथा समर्पित युवकों, पुरुषों तथा महिलाओं का चयन शिक्षण के लिए किया जा सकता है, लेकिन उनके प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान देना होगा। औपचारिक प्रणाली में योग्य व्यक्तियों के प्रवेश को सरल

बनाने के लिए सोपान होने चाहियें। अनौपचारिक शिक्षा को औपचारिक शिक्षा के समान बनाने के लिए आवश्यक मानदण्डों का उपयोग करना चाहिए।

नोट

व्यावसायीकरण

अनौपचारिक, लचीले तथा आवश्यकता पर आधारित व्यावसायिक कार्यक्रम-नये साक्षर युवक जो प्राथमिक शिक्षा पूरी कर चुके हैं, जो विद्यालय छोड़ चुके हैं, व्यक्ति जो कार्य में पूर्ण या आंशिक रूप से लगे हैं तथा बेरोजगारों के लिए होने चाहियें। इस सन्दर्भ में महिलाओं पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये।

मुक्त विश्वविद्यालयों तथा दूरवर्ती शिक्षा

1. मुक्त विश्वविद्यालय प्रणाली का आरम्भ उच्च शिक्षा तथा सभी को समान शिक्षा के अवसर प्रदान करने के लिये किया गया।
2. इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए (1985) में स्थापित इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय को अधिक विकासशील बनाया जाए।
3. इस शक्तिशाली साधन का विकास व विस्तार सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

नौकरियों से शैक्षिक उपाधियों का अलगाव

इस प्रत्यय का अर्थ होता है कि–

1. कुछ चुने हुए क्षेत्रों में डिग्री की व्यवसाय से पृथक करने का शुभारम्भ किया जा सकता है।
2. कुछ विशिष्ट व्यवसायी पाठ्यक्रमों जैसे प्रौद्योगिकी, मेडिकल, कानून तथा अध्यापन आदि पर यह प्रस्ताव लागू नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार शैक्षिक योग्यता पर आधारित कुछ विशिष्ट नौकरियों में सामाजिक विज्ञान तथा विज्ञान आदि की आवश्यकता रहेगी।
3. केवल उन नौकरियों में यह अलगाव लागू किया जा सकता है, जिनमें विश्वविद्यालयी डिग्री की आवश्यक योग्यता नहीं है। इसे लागू करने पर, उन अभ्यर्थियों को अधिक न्याय मिलने की आशा है जो नौकरियों के लिए उपयुक्त होते हुए भी, नौकरी नहीं ले पाते, क्योंकि स्नातक अभयर्थियों को अनावश्यक प्राथमिकता दी जाती है।
4. अलगाव के साथ-साथ एक उचित राष्ट्रीय परीक्षण सेवायें उचित अवस्थाओं में स्थापित की जायें, जो परीक्षण के आयोजन के द्वारा अभ्यर्थियों की योग्यता नौकरियों के लिए निर्धारित करेगी तथा यह परीक्षण राष्ट्रीय स्तर पर होगा।

तकनीकी तथा प्रबन्ध शिक्षा

वर्तमान समय में औपचरिक पाठ्यक्रमों जैसे तकनीकी तथा प्रबन्धकीय शिक्षा कार्यक्रमों में प्रवेश सम्बन्धी कठोर आवश्यकताओं के कारण बहुत कम व्यक्तियों को स्थान मिल पाता है। दूरवर्ती-अधिगम प्रक्रिया द्वारा अधिकांश व्यक्तियों तक यह कार्यक्रम पहुंचाये जा सकते हैं। पोलीटेक्निक में शिक्षा के साथ तकनीकी तथा प्रबन्धीय शिक्षा कार्यक्रम लचीले प्रतिमान पर आधारित होंगे साथ ही अनेक प्रकार से प्रवेश का प्रावधान होगा। निर्देशीय व परामर्शीय सेवाये भी प्रदान की जायेंगी।

महिलाओं के लिए, आर्थिक तथा सामाजिक रूप से कमजोर व्यक्तियों के लिये तथा

शारीरिक अपंग व्यक्तियों के लिए उपयुक्त औपचारिक तथा अनौपचारिक तकनीकी शिक्षा के कार्यक्रम अधिक लाभप्रद होंगे।

नोट

माध्यम तथा शैक्षिक तकनीकी

आधुनिक संचार तकनीकियों में इतनी क्षमता है कि वह अतीत से चली आ रही विकास की बहुत सी स्थितियों व उनके क्रम को छोड़ सकें। समय व दूरी दोनों अवरोधों को एक साथ समन्वय कर सकते हें। संरचनात्मक द्विरूप को समाप्त करने के लिये आधुनिक शिक्षण तकनीकी को दूर के क्षेत्रों में पहुंचाना चाहिये।

विश्वविद्यालयों में मुक्त शिक्षा

विश्वविद्यालय की डिग्रियों तथा डिप्लोमा के लिए पारम्परिक आकर्षण तथा उनके माध्यमिक प्रमाण-पत्र प्राप्त करने की इच्छा तथा रोजगार के साथ-साथ अधिक योग्यता प्राप्त करने के कारण 'बाहरी डिग्री पाठ्यक्रमों की मांग तथा प्रावधान रखा गया। पत्राचार पाठ्यक्रमों में सुधार लाया गया। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा भारतीय विश्वविद्यालयों में पत्राचार पाठ्यक्रमों के लिये मार्ग दर्शाया गया। (1989-90) में विभिन्न क्षेत्रों में स्नातक, परा-स्नातक तथा डिप्लोमा तथा सर्टिफिकेट स्तरों पर 38 विश्वविद्यालयों में पत्राचार पाठ्यक्रम संस्थापित किये गये।

सन् (1982) में प्रथम मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना आन्ध्र प्रदेश में की गयी, इसके पश्चात (1985) में इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई इसके बाद जिन विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई उनमें कोटा (1987), नालन्दा (1987), तथा यशवंतराव महाराष्ट्र मुक्त विश्वविद्यालय तथा नासिक (1989) प्रमुख हैं। वर्तमान समय में, लगभग पांच लाख विद्यार्थी मुक्त तथा पत्राचार प्रणाली में नामांकित हैं। यह उच्च शिक्षा में नामांकित 42 लाख का लगभग 12 प्रतिशत है। मुक्त विश्वविद्यालयों में लगभग एक चौथाई उच्च शिक्षा के लिए गैर-संस्थागत पाठ्यक्रमों में नामांकित हैं, तथा शेष परम्परागत पत्राचार पाठ्यक्रमों में नामांकित हैं।

मुक्त शिक्षा प्रणाली के उद्देश्य

भारत में मुक्त विश्वविद्यालय प्रणाली की शीघ्र आवश्यकता है। यह देश की सामाजिक, आर्थिक तथा राष्ट्रीय आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. देश के नागरिको को शिक्षा के समान अवसर प्रदान करने में सहायता प्रदान करना।
2. जनसंख्या के अधिकांश भाग को शिक्षा तथा प्रशिक्षण के साथ पूर्व दिशा प्रदान करना ताकि वह प्रबन्धकीय कौशलों में स्वयं रोजगार प्राप्त कर सकें।
3. प्रवेश के साधन, स्मृति शैक्षिक उपलब्धि के सन्दर्भ मे प्राथमिक शिक्षा तथा प्रौढ़ साक्षरता के सार्वभौमिकरण के लिए शैक्षिक कार्यों की क्षमता का निर्माण करना।
4. मुक्त शिक्षा के परिणामस्वरूप, जो माध्यमिक शिक्षा तथा उच्च शिक्षा की मांग बढ़ी है, उसके लिए प्रावधान करना।
5. माध्यमिक व उच्च स्तरों की शैक्षिक व व्यवसायिक शिक्षा प्रदान करना ताकि उत्पन्न हो रही व्यक्तिगत, सामाजिक व आर्थिक वृद्धि की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।

6. अनेक स्तरों तथा अनेक शैक्षिक अवसरों का मिलान करना, जिससे कि जीवन स्तर को राष्ट्र के सन्दर्भ में, ऊँचा उठाया जा सके।
7. उच्च शिक्षा को अधिकांश जनसंख्या तक पहुंचाना तथा साथ ही शिक्षा के उच्च स्तरों को बनाये रखना।

नोट

विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान किये जाने वाले पाठ्यक्र••

राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा जनवरी 2000 से निम्नलिखित कार्यक्रमों को प्रारम्भ किया गया है–

स्नातक कार्यक्रम

1. स्नातक कला
2. स्नातक वाणिज्य
3. स्नातक पर्यटन अध्ययन
4. एकल विषय में प्रोफिएन्सी

इस सभी कार्यक्रमों हेतु प्रवेश की पात्रता इण्टरमीडिएट उत्तीर्ण है तथा अनुदेशन माध्यम हिन्दी एवं अंग्रेजी है। कार्यक्रम को पूर्ण करने की न्यूनतम अवधि 3 वर्ष तथा अधिकतम अवधि 6 वर्ष है।

स्नातकोत्तर कार्यक्रम

1. पत्रकारिता एवं जनसंचार में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
2. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातक
3. वित्तीय प्रबन्धन में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
4. अनुवाद में स्नातकोत्तर डिप्लोमा

इन कार्यक्रमों में प्रवेश पात्रता स्नातक उपाधि है। कार्यक्रम की अवधि 1 वर्ष है किन्तु इसे पूरा करने हेतु तीन वर्ष की अधिकतम छूट प्रदान की गई है। अनुवाद में पी०जी० डिप्लोमा के अतिरिक्त अन्य तीन कार्यक्रमों का अनुदेशन माध्यम अंग्रेजी है। प्रथम तीन कोर्सेस में प्रोजेक्ट कार्य पूर्ण करना भी अनिवार्य है।

प्रमाण-पत्र कार्यक्रम

1. पर्यटन पाठ्यक्रम प्रमाणपत्र
2. शिशुपालन एवं पोषण में प्रमाणपत्र
3. पोषण एवं आहार में प्रमाणपत्र

इन तीनों प्रमाण-पत्र कार्यक्रमों में प्रवेश पात्रता इण्टरमीडिएट या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण होना है। ये पाठ्यक्रम 6 महीने के हैं किन्तु इन्हें 2 वर्ष में पूरा करने की छूट प्रदान की गई है। पहले एवं दूसरे पाठ्यक्रम का अनुदेशन माध्यम हिन्दी है जबकि तीसरे पाठ्यक्रम का माध्यम केवल अंग्रेजी ही है।

सामान्य डिप्लोमा कार्यक्रम

1. स्वास्थ्य शिक्षा एवं पोषण में डिप्लोमा
2. पर्यटन अध्ययन में डिप्लोमा
3. अंग्रेजी में रचनात्मक लेखन डिप्लोमा

छात्र क्रियाकलाप

1. मुक्त विश्वविद्यालयों और दूरवर्ती शिक्षा निदेशलय का अर्थ व एवं परिभाषाएं बतायें?

2. भारतीय शिक्षा नीति निर्धारण में दूरवर्ती शिक्षा के महत्व की चर्चा करें?

4. हिन्दी में रचनात्मक लेखन डिप्लोमा
5. ग्रामीण विकास में डिप्लोमा
6. अन्तराष्ट्रीय बाजार एवं व्यापार में डिप्लोमा

नोट

इन कार्यक्रमों की न्यूनतम अवधि 1 वर्ष की है किन्तु इसे अधिकतम 3 वर्ष में पूरा करने की छूट प्रदान की जाती है। इनके लिए प्रवेश पात्रता इण्टरमीडिएट या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण होना है। अनुदेशन माध्यम हिन्दी/अंग्रेजी है।

कम्प्यूटर शिक्षा कार्यक्रम

1. कम्प्यूटर प्रयोग में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
2. कम्प्यूटर्स में बेसिक डिप्लोमा
3. कार्यालय प्रबन्धन में कम्प्यूटर का डिप्लोमा
4. लेखा विधि में कम्प्यूटर का डिप्लोमा
5. डेस्क टॉप पब्लिशिंग में डिप्लोमा
6. इण्टरनेट बेबसाइट डिजाइनिंग और प्रबन्ध में डिप्लोमा
7. आधुनिक कार्यालय एवं कार्यालय 2000 में डिप्लोमा
8. कम्प्यूटर में सर्टिफिकेट कोर्स
9. डेस्क टॉप पब्लिशिंग में सर्टिफिकेट कोर्स

इन सभी कार्यक्रमों की अवधि 1 वर्ष की है तथा अधिकतम 3 वर्ष के अन्दन इनहें पूर्ण करना अनिवार्य है। पी०जी०डी०सी०ए० की प्रवेश पात्रता किसी भी स्नातक उपधि के साथ इण्टर में विज्ञान विषयों का होना अनिवार्य है। अन्य सभी कार्यक्रमों में प्रवेश हेतु इण्टर या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। न्यूनतक अवधि 1 वर्ष की है तथा अधिकतम 3 वर्ष में कार्यक्रमों को पूरा करना अनिवार्य है। सभी पाठ्यक्रमों को अनुदेशन माध्यम अंग्रजी है। केवल डी०सी०ओ०एम० एवं सी०सी०सी० कार्यक्रमों का माध्यम अंग्रेजी/हिन्दी है।

व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम

1. व्यावसायिक कला में डिप्लोमा
2. फैशन डिजाइनिंग में डिप्लोमा
3. आन्तरिक डिजाइन में डिप्लोमा
4. टेक्सटाइल डिजाइन में डिप्लोमा

इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश पात्रता इण्टरमीडिएट या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण होना है। इनकी न्यूनतम अवधि 1 वर्ष की किन्तु 3 वर्षों के अन्दर पूरा किया जा सकता है। अनुदेशन माध्यम केवल अंग्रेजी है।

उपर्युक्त पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त आगामी वर्षों में विश्वविद्यालय की कुछ और कार्यक्रमों (जिनमें विज्ञान स्नातक, आधुनिक भारतीय भाषाओं में डिप्लोमा, एम०सी०ए० आदि सम्मिलित है।) को प्रारम्भ करने की योजना है।

कार्यक्षेत्र–यह विश्वविद्यालय राज्य स्तरीय है। अत: इसके अध्ययन केन्द्र केवल उत्तर प्रदेश राज्य में ही स्थित होंगे किन्तु राज्य से बाहर के विद्यार्थी भी अपनी सुविधानुसार प्रवेश ले सकते हैं।

संगठनात्मक स्वरूप–यह विश्वविद्यालय अभी प्रारम्भिक अवस्था में है तथा इसके

संगठनात्मक स्वरूप का धीरे-धीरे विकास हो रहा है। प्रशासनिक एवं शैक्षणिक स्तर पर सर्वोच्च अधिकारी कुलपति होता है। प्रशासनिक कार्यों का संचालन कुलसचिव द्वारा किया जाता है। शैक्षिक कार्यों का निष्पादन संविदा के आधार पर विभिन्न परम्परागत विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजो के शिक्षकों द्वारा किया जाता है।

नोट

अन्य सुविधाएँ–विश्वविद्यालय द्वारा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के विद्यार्थियों को शासन द्वारा अनुमन्य सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं।

प्रवेश फार्म एवं विवरणिका के वितरण की व्यवस्था इलाहाबाद बैंक के माध्यम से कराई जाती है। उत्तर प्रदेश के किसी भी जनपद के मुख्यालय में स्थित इलाहाबाद बैंक की मुख्य शाखा से रु॰ 155/- शुल्क भुगतान करके प्रवेश फार्म प्राप्त किये जा सकते हैं। किन्तु कार्यक्रम शुल्क किसी भी राष्ट्रीयकृत बैंक द्वारा ड्राफ्ट के माध्यम से जमा किया जा सकता है।

प्रवेश फार्म का प्रारूप इण्टरनेट पर भी उपलब्ध होता है किन्तु इसके माध्यम से आवेदन करने वालों को कुलसचिव उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय को इलाहाबाद पर देह रु॰ 200/- का बैंक ड्राफ्ट भी भेजना अनिवार्य है।

भारत में मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना (Open Schooling (NIOS and BBOSE) [Bihar Board of Open Schooling and Examination])

जैसा कि हम पूर्व में उल्लेख कर चुके हैं कि सन् 1980 ई॰ तक भारत में दूर शिक्षा, पत्राचार शिक्षा के रूप में परम्परागत विश्वविद्यालयों से ही सम्बद्ध रही तथा उन्हीं से जुडे हुए निदेशालयों/संस्थानों द्वारा संचालित की जाती रही। किन्तु इसके बाद के काल को दूरवर्ती शिक्षा के विकास की मुहिम अवस्था (Stage of drive towards growth of Distance Education) कहा जा सकता है। यद्यपि 1976 ई॰ में भारत सरकार द्वारा जी॰ पार्थसारथी की अध्यक्षता में गठित समिति की संस्तुति के आधार पर एक राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हेतु एक विधेयक का प्रारूप तैयार किया था, किन्तु कुछ कारणवश उसे संसद में प्रस्तुत नहीं किया जा सका था। इसी दौरान विभिन्न राज्यों द्वारा भी उच्च शिक्षा की बढ़ती माँग को पूरा करने तथा उच्च शिक्षा के लोकतंत्रीकरण हेतु मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना के सम्बन्ध में कुछ प्रयास एवं विचार विमर्श किये जा रहे थे। 1969 ई॰ में ब्रिटेन में स्थापित मुक्त विश्वविद्यालय की सुलभत से उन्हें और बल मिल रहा था। आन्ध्र प्रदेश राज्य द्वारा भी मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित करने हेतु 1978 ई॰ से ही प्रयास किया जा रहा था जिसके फलस्वरूप 1982 में हैदराबाद में देश का पहला मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित हुआ। इसकी थोड़ी चर्चा हम निम्नांकित पंक्तियों में कर रहे हैं।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

वर्तमान शिक्षा प्रणाली की अपनी कुछ सीमायें हैं, और भारतीय संविधान में शिक्षा की सुविधाओं की पूर्ति नहीं कर पा रही हैं। आधुनिक सम्प्रेषण तथा संचार तकनीकी को प्रयोग में लाने के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए मुद्रित तथा अमुद्रित माध्यमों के द्वारा शिक्षा प्रसार

नोट

के उद्देश्य से, एक नवीन प्रकार की शिक्षा प्रणाली का विकास किया गया। इसे दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली कहते हैं, जो औपचारिक शिक्षा प्रणाली का विकल्प भी माना जाता है। इस प्रणाली के क्रियान्वयन हेतु मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई है। इन विश्वविद्यालों का उच्च सतत् शिक्षा में महत्वपूर्ण योगदान किया है। दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली के उदाहरण यूरोप के मुक्त विश्वविद्यालय हैं।

सर्वप्रथम ब्रिटेन में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना (1969) की गई, इस दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली का श्रीगणेश यहीं से हुआ। यह मुक्त विश्वविद्यालय सभी को उच्च शिक्षा की सुविधायें तथा अवसर प्रदान करते हैं। यह शिक्षा प्रणाली अपेक्षाकृत लचीली है। शिक्षा नीति निधारण में इस प्रणाली को अधिक बढ़ावा दिया है। यूरोप में इस प्रकार के विश्वविद्यालयों के प्रसार तथा विकास का अधिक प्रयत्न किया जा रहा है।

राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय का उदगम

शिक्षा-मन्त्रालय ने सन् (1970) में मुक्त विश्वविद्यालय प्रकरण पर एक विचार-गोष्ठी का आयोजन किया था, इसमें इस प्रकार के विभिन्न पक्षों पर विचार-विमर्श हुआ, और भारत में इनको आरम्भ करने पर विचार किया गया तथा इसके लिये प्रारूप भी विकसित किया गया। इसकी अध्यक्षता बी.के.आर.बी. राव ने की थी। यह निष्कर्ष निकाला गया, कि मुक्त विश्वविद्यालय में आधुनिक तकनीकी का प्रयोग करके एक नवीन विश्वविद्यालय प्रणाली आरम्भ किया जाना चाहिए, जिससे एक विशाल जनसंख्या को उच्च शिक्षा की सुविधायें तथा अवसर प्रदान किये जा सकते हैं। इस गोष्ठी ने संस्तुति की कि यूरोप जैसे मुक्त विश्वविद्यालय राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित किये जायें।

बहुत सी सिफारिशें तथा सुझाव इसके उद्देश्यों, संगठन, वित्त और प्रणाली के विषय में दिए गए। इस सभा की सिफारिशों के आधार पर, भारत सरकार ने आठ सदस्यों की कार्यकारिणी परिषद के अध्यक्ष (चैयनमेन) श्री जी. पार्थसारथी, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के कुलपति थे। इस सभा ने देश की उच्च शिक्षा प्रणाली की जांच में पाया कि–

"इस प्रकार की अवस्था में जबकि उच्च शिक्षा के प्रसार में विद्यार्थियों की संख्या बड़ी तेज गति से बढ़ रही है और जहां पर मनुष्यों और धन के साधन सीमित हैं, एक स्पष्ट समाधान मुक्त विश्वविद्यालय हैं, जिनमें उच्च शिक्षा अंशकालीन या पूर्ण कालीन दी जाए, परन्तु इन्हें उचित स्तर पर बनाये रखना होगा तथा विभिन्न वर्गों के लोगों की उच्च शिक्षा की मांग को पूरा करना होगा। अतः इस कार्यकारिणी परिषद ने सिफरिश की है। भारतीय सरकार जल्द से जल्द संसद के कानून के द्वारा मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना करे। इस विश्वविद्यालय का कार्य क्षेत्र सम्पूर्ण देश होना चाहिए, जिससे जब यह पूर्णरूप से विकसित हो तब देश के दूर से दूर कौने के विद्यार्थी भी इसके द्वारा शिक्षा व डिग्री प्राप्त कर सकें।"

इस कार्यकारिणी सभा ने जिसने (1975) में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, विश्वविद्यालय की प्रकृति, संगठन और वित्तीय मामलों में बहुत से सुझाव9 दिए। ऐसा विश्वास किया जाता है कि (1976) में एक बिल राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना के लिए पास किया गया था, परन्तु कुछ अस्पष्ट कारणों से बाद में इसके विषय में कोई और जानकारी नहीं मिल पाई। तत्पश्चात देश की शिक्षा की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सन् (1982) में एक समिति माधुरी शाह की अध्यक्षता में केन्द्रीय विश्वविद्यालय की कार्य प्रणाली की जांच हेतु

गठित की गई, उसने सिफारिश की कि राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए, बिना किसी विलम्ब के प्रयोगात्मक कदम उठाये जायें।

नोट

राष्ट्रीय स्तर पर पहले के सभी प्रस्ताव जबकि केवल कागजी कार्यवाही तक ही सीमित होकर रह गए और पार्थसारथी रिपोर्ट पर भी कोई कार्यवाही नहीं की गई, न ही डॉफ्ट बिल की तैयारी की गई। सन् (1984) में यह विचार दोबारा से उठाया गया। प्रधानमन्त्री राजीव गांधी ने जनवरी सन् (1989) के अपने राष्ट्र के नाम प्रथम सन्देश में नीति निर्धारण के रूप में इसका उल्लेख किया। तब उन्होंने नई शिक्षा नीति के हिस्से के रूप में राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना के विषय में कहा। इसको आगे बढ़ाते हुए शिक्षा मन्त्रालय द्वारा प्रमुख शिक्षाशास्त्रियों की एक समिति बैठाई गई। इस समिति ने एक ड्राफ्ट बिल बनाने के अतिरिक्त अपनी एक प्रौजेक्ट रिपोर्ट भी प्रस्तुत की जिसमें मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना के विभन्न पहलुओं जैसे इसके उद्देश्य, पाठ्यक्रम, अध्यापकों की नियुक्ति, शिक्षा प्रणाली, प्रसारण माध्यमों से सम्बन्धित वित्तीय अनुमान आदि के विषय में अपनी संस्तुति दी। सरकार जिसने देश में दूरवर्ती शिक्षा की जड़ मजबूत करने के लिए तत्पर हुई। संसद में तुरन्त एक बिल प्रस्तुत किया, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय का बिल दोनों सदनों द्वारा अगस्त (1985) में पारित किया गया और 20 सितम्बर सन् (1985) में यह विश्वविद्यालय स्थापित हो गया। इस प्रकार राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय का विचार जो (1970) में प्रारम्भ हुआ था, सन् (1985) में वास्तविक रूप बन पाया।

इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय के उद्देश्य

इस विश्वविद्यालय की स्थापना निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए हुई–

1. जनसंख्या के एक बड़े हिस्से को उच्च व्यावसायिक शिक्षा एवं तकनीकी शिक्षा को उपलब्ध कराना।
2. ऐसे अभावग्रस्त व्यक्तियों को विशेषत: ग्रामीण क्षेत्रों मे रहने वाले, अध्यापकों तथा महिलाओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विशेष शिक्षा का प्रबन्ध करना।
3. सभी पाठ्यक्रमों को व्यक्तियों व संस्थाओं को देश के विकास से सम्बन्धित करना।
4. नवीन विचार, जिनमें लचीलापन हो और मुक्त शिक्षा प्रणाल, दूरवर्ती शिक्षा के माध्यम से तथा आधुनिक संचार व्यवस्था का शिक्षा में प्रयोग करते हुए उन्हें अवसर उपलब्ध कराना।
5. प्रौढ़-शिक्षा तथा शिक्षा के विकास को जारी रखना तथा विशेष ध्यान इस बात पर दिया जाये कि प्रौढ़ों को नयी निमुणता में शिक्षा दी जाय ताकि वे बढ़ती हुई विशिष्ट परिस्थितियों में अपने को ढाल सकें।
6. ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में स्नातकोत्तर अध्ययन तथा खोज के अवसर उपलब्ध कराये जायें, विशेषत: तकनीकी शिक्षा, दूरवर्ती शिक्षा तथा दूरसंचार के विकास को प्रयुक्त करना।

इस प्रकार इसने तकनीकी एवं व्यावसायिक विषयों और व्यावाहरिक विषयों की आवश्यकता को पूरा किया है। इस विश्वविद्यालय से यह आशा की गई कि वह कम खर्च से अधिक ज्ञान का प्रसार करेगा और प्रयास किया गया कि यह निर्धारित मात्रा में ही स्वालम्बी बनें।

विश्वविद्यालय से यह अपेक्षा की गई कि वह ग्रामीण व शहरी दोनों की जनसंख्या को

छात्र क्रियाकलाप

1. भारत में मुक्त विश्वविद्यालों की स्थापना का वर्णन करें?

2. इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय के उद्देश्यों की चर्चा करें?

बराब अवसर प्रदान करे और भारतीय संविधान की इस आवश्यकता को पूरा करे कि सबको शिक्षा के समान अवसर प्रदान किये जायें।

नोट

इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्याल की स्थापना एक महान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए की गई तथा इसका कार्य क्षेत्र विस्तृत है जो कानून की इस धारा का अनुसरण करता है–

"विश्वविद्यालय का यह उद्देश्य होना चाहिए कि अपने विभिन्न साधनों के द्वारा उच्च अधिगम और ज्ञान को प्रदान करे, कोई भी दूरसंचार तकनीकी का प्रयोग करते हुए तथा एक जनसंख्या के बड़े अंश को उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करे एवं शिक्षा को समाज के उत्थान के लिये प्रयोग किया जाये। आज की शिक्षा प्रणाली में मुक्त विश्वविद्यालयों और दूरवर्ती शिक्षा को स्थान दे तथा इस प्रणाली में इनका समायोजन किया जाये।"

विश्वविद्यालय का दूसरा उद्देश्य है कि शिक्षा के द्वारा रोजगार की आवश्यकता तथा राष्ट्र निर्माण कार्यों को उत्साहित करे और लोगों के ज्ञान और दक्षता के उत्थान के लिए अवसर प्रदान करें। शिक्षा की पूर्णता के अवसर प्रदान करे। इसका उद्देश्य है कि अपने कार्यक्रमों के द्वारा राष्ट्रीय एकता की भावना तथा मानव व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करें।

इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय का एक आकर्षक कार्य-क्षेत्र है। परम्परागत विश्वविद्यालयों के विपरित इसका कार्य-क्षेत्र पूरा भारतवर्ष ही है। यद्यपि केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की स्थापना राष्ट्रीय संस्थानों के रूप में ही की गई थी परन्तु उसमें से कुछ केवल उसी क्षेत्र के विद्यार्थियों को आकर्षित कर पाये, जिस क्षेत्र में वे स्थापित थे। इस प्रकार वे अपने राष्ट्रव्यापी उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर पाये लेकिन इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय भारत के सभी ग्रामीण, शहरी, पहाड़ी और मैदानी भागों को शिक्षा प्रदान करेगा। इसकी शाखायें भविष्य में सम्पूर्ण देश में फैलेंगी, देश के विभिन्न भागों में वहां की जरूरतों को ध्यान मे रखते हुए शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की जाए, ऐसा कानून पास किया जायेगा। इस कानून में विभिन्न शिक्षा केन्द्रों के बीच समन्वय बनाने का प्रबन्ध किया जायेगा।

विश्वविद्यालय के संगठन का प्रारूप

राजकीय और केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की अपनी योजनाओं और कार्यक्रमों को स्वरूप प्रदान करने हेतु शासकीय और प्रबन्धकीय समितियां होती हैं। इस प्रकार इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय अपने संगठित प्रायप मे इन विश्वविद्यालयों से भिन्न हैं।

इस विश्वविद्यालय का एक महत्वपूर्ण पहलू इसका लचीलापन है, जो इस विश्वविद्यालय के प्रारूप को आवश्यकता के अवसर प्रदान करता है। विश्वविद्याल के अधिकार (क्षेत्र) निम्नलिखित हैं–

1. कार्यकारिणी परिषद,
2. शैक्षिक परिषद ,
3. योजना परिषद ,
4. वित्त समिति तथा
5. मान्यता विभाग।

इस विश्वविद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रम विभिन्न शिक्षा विभागों से लिए गये हैं। इसमें परम्परागत विश्वविद्यालयों की तरह किसी उच्च परिषद का पूर्व प्रबन्ध नहीं किया गया था। ऐसा समझा गया कि इस परिषद का विश्वविद्यालय में कोई महत्व नहीं है तथा केन्द्रीय

विश्वविद्यालयों से भी इसे हटाने का प्रस्ताव रखा गया है।

प्रबन्धकीय परिषद्

नोट

यह केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की प्रशासकीय सभा प्रबन्धकीय परिषद के समान होती हैं जैसा कि इसके नाम से ही विदित हो रहा है, प्रबन्धकीय परिषद, शासकीय कार्यकारिणी है और विश्वविद्यालय के संगठन और कार्यों में निर्णायक है। शैक्षिक सभा विश्वविद्यालय की शैक्षिक योजनाओं को बनाती है और उसे निर्देशित करती हैं। यह विश्वविद्यालय की सम्पूर्ण शैक्षिक योजनाओं का परिवेक्षण करती है। योजना परिषद का मुख्य कार्य विश्वविद्यालय के विकास हेतु उचित योजनाये बनाना है। यह उन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जिनके हेतु विश्वविद्यालय की स्थापना हुई है, प्रबन्धक परिषद और शैक्षिक सभी को सलाह देने का कार्य करेगा। वित्त समिति का कार्य वित्तीय मामलों को देखना है और मान्यता सम्बन्धी परिषद विश्वविद्यालयों को मान्यता देने का कार्य करती है।

भारत के राष्ट्रपति विश्वविद्यालय के 'विजिटर' होते हैं। विश्वविद्यालय के दूसरे अधिकारियों में कुलपति, उपकुलपति, निर्देशक, कुल सचिव, वित्त अधिकारी होते हैं। दूसरे केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की तरह इसमें कुलपति की कोई व्यवस्था नहीं की गई है। ऐसा देखा गया है कि सर्वोच्च अधिकारी का विश्वविद्यालय के कार्य-क्षेत्र में कोई विशिष्ट स्थान नहीं है और न ही कोई उत्तरदायित्व है। उप-कुलपति की नियुक्ति केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की तरह ही होती है। उसकी नियुक्ति 'विजिटर' के द्वारा एक समिति से होती है, जिसमें कम से कम तीन व्यक्ति होते हैं। और इस समिति में तीन सदस्यों में से दो बोर्ड ऑफ मैनेजमेंट ओर एक विजिटर द्वारा नामांकित होता है और विजिटर द्वारा मनोनीत सदस्य की ही इस समिति की प्रमुख भूमिका होती है। उपकुलपति पूर्ण कालिक वेतन प्राप्ति अधिकारी होता है। उसकी नियुक्ति पांच वर्ष के लिए होती है या 65 साल पूरे होने तक अर्थात इनमें से जो शर्त पहले पूरी हो जाये। वह बोर्ड ऑफ मैनेजमेंट (प्रबन्धकीय समिति), एकेडेमिक कॉन्सिल (शैक्षिक सभा), प्लानिंग बोर्ड (योजना परिषद) और फाइनैनशियल कमेटी (वित्तीय समिति) का पदाधिकारेण अध्यक्ष होता है। उपकुलपति विश्वविद्यालयों के सभी मामलों पर नियन्त्रण रखता है तथा सभी अधिकारियों द्वारा लिए गए निष्कर्षो का मार्ग प्रशस्त करता है। विश्वविद्यालय से सम्बन्धित मामलों तथा अनुशासन की उचित व्यवस्था रखता है।

सबसे अधिक ध्यान देने योग्य बात यह है कि एक से अधिक कुलपति की भी व्यवस्था की गई है। विश्वविद्यालय के विस्तृत कार्यो को देखते हुए यह आवश्यक समझा गया। इसका कार्य-क्षेत्र बहुत फैला हुआ है तथा निर्देश देने का तरीका भी पारम्परिक विश्वविद्यालयों से भिन्न है। इसमें आधुनिकतम संचार तकनीकी, उच्च कोटि का सर्वेक्षण तथा कक्षा नयकी एवं उचित और स्थिर निर्देशन इसका प्रयोग किया गया है। प्रो. उपकुलपति की नियुक्ति की संस्तुति पर बोर्ड ऑफ मैनेजमेंट के द्वार की जाती है। इसका कार्यकाल भी इसी के द्वारा निश्चित किया जाता है और वह तीन वर्ष से अधिक नहीं होता। उपकुलपति की नियुक्ति दोबारा भी की जा सकती है। प्रो. उपकुलपति का सहायक होता है। यह उसकी उन मामलों में सहायता करता है जो विशेषत: उपकुलपति के द्वारा समय-समय पर पत्रों द्वारा भेजे जाते हैं तथा इसके अतिरिक्त कुछ अधिकार और कार्य भी करता है, जो उपकुलपति उसे सौंपते हैं। इस समय विश्वविद्यालय में दो प्रो. उपकुलपति हैं–एक शैक्षिक मामलों के लिए तथा दूसरा योजनाओं और प्रबन्धकीय कार्यो की देखभाल करता है।

इस प्रकार से विश्वविद्यालय के नियमों में एक से अधिक कुल सचिवों का प्रावधान है, जोकि पारम्परिक विश्वविद्यालयों से अलग है। यह अनुभव किया गया कि इस विश्वविद्यालय में प्रबन्ध को देखते हुए एक से अधिक कुल सचिवों की आवश्यकता होती है। बाद में यह सोचा गया कि इन उच्च अधिकारियों को विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों जैसे प्रबन्ध विभाग, शैक्षिक विभाग, मूल्यांकन विभाग का अध्यक्ष बनाया जाए। ये सभी अध्यक्ष कुल सचिव के समान पद वाले ही हों, जो इस विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों को समानता तथा एकरूपता देते हैं। इस प्रकार ये विभिन्ताएं इस विश्वविद्यालय में जानबूझकर रखी गई हैं।

नोट

पारम्परिक विश्वविद्यालयों के विपरित, जिनमें शैक्षिक गतिविधियों को विभागों के रूप में रखा गया है, राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय में इन्हें स्कूलों के रूप में बनाया गया है। इन स्कूलों का मुख्य महत्व यह निश्चित करना है कि विश्वविद्यालय के बहु-आयामी कार्यक्रम तथा आन्तरिक कार्यक्रम क्या होंगे? जिन्हें वह विषयों को देने में करेगी। दूसरी पारम्परिक विश्वविद्यालयों के जो अनुशासन के तरीके हैं, वह इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के लिए सही नहीं है, प्रत्येक स्कूल का एक अध्यक्ष होगा, इस स्कूल या (विभाग) का जो अध्यक्ष होगा, वह शैक्षिक तथा प्रशासकीय दोनों ही कार्यों को करेगा, इसलिए इसका नाम 'डीन' से 'निर्देशक' कर दिया गया है। तकनीकी विभागों के अध्यक्ष जैसे कम्प्यूटर केन्द्रों के अध्यक्षों को भी निर्देशक ही कहा जाएगा। यह एक निश्चित रूप में समरूपता लाता है।

शैक्षिक कार्यक्रम अथवा अध्ययन विषय

मुक्त विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करते हैं, तथा एक नये ओर लचीले शैक्षिक कार्यक्रम को बढावा देते हैं। इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए की गई है। यह विभिन्न कार्यक्रमों को प्रदान करता है--

1. दीर्घकालीन तथा अल्पकालीन कार्यक्रम सामान्य शिक्षा के क्षेत्र में,
2. सतत् शिक्षा,
3. शिक्षा का विस्तार, तथा
4. शोध के लिए अवसर प्रदान करना।

इन कार्यक्रमों के द्वारा प्रमाण-पत्र, डिप्लोमा, स्नातक एवं स्नातकोत्तर उपाधियां तथा शोध की उपाधियां प्रदान की जाती हैं। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय अपने लचीलेपन के कारण ही वास्तव में एक मुक्त विश्वविद्यालय है। इसका लचीलापन कार्यक्रमों को प्रदान करने में, विषयों को चुनने में, एक कार्यक्रम से दूसरे कार्यक्रम मे विद्यार्थियों की गतिशीलता में और पारम्परिक से गैर-पारम्परिक विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों की गतिशीलता आदि में दिखाई पड़ता है। यह लचीलापन है कि अध्ययन की समयाधि में तथा विद्यार्थियों को प्रमाण-पत्र, स्नातक और स्नातकोत्तर उपाधियां प्राप्त करने में। इसका सबसे महत्वपूर्ण कार्य प्रवेश नियमों को लचीला बनाना है, समाज के प्रत्येक क्षेत्र के व्यक्ति जैसे कामकाजी, कार्यरत व्यक्ति, गृहणियों को असुविधाजनक परिस्थितियों में भी सुविधा प्रदान करना है। सर्वप्रथम यह विश्वविद्यालय अपने दो क्षेत्रों में डिप्लोमा या डिग्री देता था। दूरवर्ती शिक्षा और मैनेजमेंट में। दूरवर्ती शिक्षा में प्रमाण-पत्र केवल उन्हीं लोगों की सहायता से लिये दी जाती है जो अपना कैरियर दूरवर्ती-शिक्षा से पूर्णकालिक और अर्द्धकालिक रूप में चाहते हैं, जैसा कि सम्पूर्ण देश में बहुत लोग मुक्त विश्वविद्यालय या पत्राचार कार्यक्रम में संलग्न हैं।

यह आवश्यक समझा गया है कि दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र का विस्तृत ज्ञान उन्हें दे दिया

नोट

जाए। आज तक 1200 विद्यार्थी विश्वविद्यालय में भाग ले चुके हैं। बिजनैस मैनेजमेंट (व्यापार प्रबन्ध) का कोर्स केवल उन्हीं व्यक्तियों के लिए हैं जो 3 वर्ष या 5 वर्ष का अनुभव सुपरवाइजरी (परिवेष) के क्षेत्र में रखते हैं। 3 वर्ष का अनुभव स्नातक श्रेणी के व्यक्तियों के लिए है। 3300 व्यक्ति इस विषय में प्रवेश ले चुके हैं। यह विषय प्रतिमान (मोड्यूलर) है, जो अन्त: परास्नातक-उपाधि प्रदान करता है।

इसके अतिरिक्त दूसरे डिप्लोमा कार्यक्रम, जिन्हें अभी तैयार किया जा रहा है वे हैं, रूलर डवलैपमेंट (ग्रामीण उत्थान), कम्प्यूटर शिक्षा, न्यूटरीशन एण्ड हैल्थ (पोषक एवं स्वास्थ्य) क्रिएटिव राइटिंग और प्री स्कूल शिक्षा (पूर्व प्राथमिक शिक्षा), इनमें से प्रत्येक विषय की अवधि नौ माह है। इसके अतिरिक्त 'ग्रामीण उत्थान' तथा 'पोषण एवं स्वास्थ्य' में सर्टिफिकेट कोर्स भी तैया किए जा रहे हैं।

इसके अतिरिक्त उच्च शिक्षा और 'योजना एवं प्रबन्ध' विषयों में भी डिप्लोमा कोर्स तैयार किया जा रहा है। रक्षा विभाग में कार्यरत व्यक्तियों की जरूरत को देखते हुए भी कुछ विशेष कार्यक्रम तैयार किए जा रहे हैं। ऐरोनोटीकल इन्जीनियरिंग (विमानों से सम्बन्धित) कोर्स की शुरूआत की जा चुकी है।

यह विश्वविद्यालय स्नातक स्तर पर बी.ए., बी.एस-सी., और बी.कॉम. विषयों को शुरू करने में काफी कार्य कर चुकी है। बी.ए. एवंम बी.कॉम. विषय सभी के लिए मुक्त हुए हैं। विद्यार्थियों की दो धारायें हैं, अनौपचारिक (जिनके पास कोई शैक्षिक योग्यता नहीं) तथा दूसरे वह जिनके पास आवश्यक शैक्षिक योग्यता (10+2) है। अनौपचारिक विद्यार्थी बी.ए. और बी. कॉम. के योग्य हो सकते हैं, जबकि वे विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा को उत्तीर्ण कर लेते हैं। इस विषय की समयाविधि 3 वर्ष है, परन्तु एक विद्यार्थी अपनी सुविधा के अनुसार 8 वर्ष के अन्दर उसे पूरा कर सकता है।

इस विश्वविद्यालय के स्नातक तक के विषयों की मुख्य विशेषता यह है कि कुछ बेसिक (फाउन्डेशन) विषय इन विषयों से सम्बन्धित है, जैसे इण्डियन सिविलाइजेशन एण्ड कल्चर (भारतीय सभ्यता और संस्कृति) तथा विज्ञान और तकनीकी का महत्व और उदगम की जानकारी रखते हैं। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी की शिक्षा से मुख्य तथा प्रादेशिक विषय भी जुड़े हैं। इसका दूसरा मुख्य पहलू यह है कि सभी विषयों को 'क्रैडिटस' के रूप में तैयार किया जाता है, तथा विद्यार्थियों को स्नातक स्तर तक की शिक्षा पूरी करने के लिए 96 'क्रैडिट' दिये जाते हैं।

देश के विभिन्न विद्यालयों, महाविद्यालयों और दूसरी शिक्षण संस्थाओं में हजारों व्यक्ति लाइब्रेरियन का कार्य कर रहे हैं। उनमें से अधिकतर के पास व्यावसायिक शिक्षा की योग्यता नहीं है, बहुत से उनमें से व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं, परन्तु वह अपना कार्य छोड़ कर शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते और इसी कारणवश दो पारम्परिक पद्धति से कहीं प्रवेश नहीं ले पाते हैं। इस प्रकार के व्यक्तियों की सहायता के लिए एक स्नातक स्तर का उपाधि की योजना (पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान) के नाम से बनाया गया है।

इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय ने (1992) से शुरू करने वाले कार्यक्रमों की एक रूपरेखा बनाई और उनका वर्गीकरण किया है। इन विषयों को 'स्कूल्स' में वर्गीकृत किया गया है, जो इस प्रकार है–

1. **स्कूल्स और ह्यूमन्टीस:** इसके अन्तर्गत अंग्रेजी, हिन्दी और दूसरी भाषायें (बंगाली,

गुजराती, कन्नड, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, तमिल, तेलगू, उर्दू) सम्मिलित की गई।

नोट

2. **स्कूल्स ऑफ सोशल साइन्सिज:** इसके अन्तर्गत निम्नलिखित विषय सम्मिलित किये गये, राजनीतिशास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, पब्लिक एडमिन्सिट्रेशन, लाइब्रेरी एण्ड इन्फोरमेशन साइन्सिज।
3. **स्कूल ऑफ साइन्स:** इसके अन्तर्गत गणित, भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, और जीव विज्ञान सम्मिलित किये गये हैं।
4. **स्कूल ऑफ कन्टीन्यूइंग एडयूकेशन:** इसके अन्तर्गत स्त्री-शिक्षा और ग्रामीण विकास आते हैं।
5. **स्कूल ऑफ कम्प्यूटर एण्ड इन्फोरमेशन साइन्स:** इसके अन्तर्गत निम्मलिखित कार्यक्रम आते हैं–डॉटा प्रोसेसिंग, इन्फोरमेशन- प्रोसेसिंग, प्रोडक्टीविटी टूल्स, मोर्डन ऑफिस आदि।
6. **स्कूल ऑफ एज्यूकेशन:** इसके अन्तर्गत उच्च शिक्षा, अध्यापक शिक्षा तथा दूरवर्ती शिक्षा आते हैं।
7. **स्कूल ऑफ मैनेजमेंट स्टैडीज:** इसके अन्तर्गत वाणिज्य एवं प्रबन्धन आते हैं।

इन सभी विषयो के डिग्री, डिप्लोमा और प्रमाण-पत्र दिए जाते हैं। विश्वविद्यालय मुख्यत: उन क्षेत्रों में जहां महिलायें हैं, उनकी आवश्यकतानुसार, अध्यापक प्रशिक्षण तथा टीचर्स ओरियन्टेशन नामक विषयों को लागू करती है। विश्वविद्यालय दूरवर्ती शिक्षा और प्रबन्ध में (1987) से डिप्लोमा स्तर के विषय चला रही है, तथा विश्वविद्यालय को अधिकार है कि वह देश भर में दूरवर्ती-शिक्षण अधिगम कार्यक्रम को लागू करे तथा उसका स्तर बनाए रखे।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय-शिक्षण विषय

इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय में निम्नलिखित विषयों को रखा गया है–

1. **स्कूल ऑफ ह्यूमनटीज:** इसके अन्तर्गत अंग्रेजी के प्रथम व द्वितीय बेसिक विषय, अंग्रेजी लिखना, पढ़ना, गद्य एवं पद्य आदि कुल 64 क्रैडिट होते हैं। इसके अतिरिक्त हिन्दी में गद्य, पद्य बेसिक विषय, हिन्दी का इतिहास, हिन्दी का भूत एवं वर्तमान महत्व, व्याख्या एवं लेखन कुल 60 क्रैडिट होते हैं। विभिन्न भाषाओं में असमी, बंगाली, गुजराती, कन्नड, मलयालम, मराठी, उडिया, पंजाबी, तमिल, तेलगू एवं उर्दू के 44 क्रैडिट होते हैं।
2. **स्कूल ऑफ सोशल साइन्स:** राजनीतिशास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र, पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, समाजशास्त्र, लाइब्रेरी एण्ड इन्फोरमेशन साइन्स के 220 क्रैडिअ होते हैं। सभी विषय डिग्री अथवा इलैक्टिव स्तर के होते हैं।
3. **स्कूल ऑफ साइन्स:** इसके अन्तर्गत गणित के 40 क्रैडिट, भौतिकी के 24, रसायनशास्त्र के 24 तथा जीव विज्ञान के 32 क्रैडिट होते हैं। सभी विषय डिग्री एवं इलैक्ट्रिक स्तर के हैं।
4. **स्कूल ऑफ कन्टीन्यूइंग एज्यूकेशन:** इसमें ग्रामोत्थान के 32, स्त्री-शिक्षा के 24 क्रैडिट होते हें, कुछ सर्टिफिकेट स्तर के विषय भी हैं।
5. **स्कूल ऑफ कम्प्यूटर एण्ड इन्फोरमेशन साइन्स:** इसमें कुछ विषय, डेटा-प्रोसेसिंग, इन्फोरमेशन प्रोसेसिंग, ऑफिस प्रोडक्टीविटी टूल, कम्प्यूटर एप्लीकेशन इन ऑफिस

छात्र क्रियाकलाप

1. प्रबन्धकीय परिष्द् का अर्थ बतायें?

2. शैक्षिक कार्यक्रम अथवा अध्ययन विषय को परिभाषित करें?

एवं माडर्न ऑफिस के 30 क्रैडिट हैं।

6. **स्कूल ऑफ एज्यूकेशन:** इसके अन्तर्गत दूरवर्ती शिक्षा के 30 क्रैडिट, उच्च शिक्षा के 24, शिक्षा के 16 क्रैडिट होते हैं, डिप्लोमा एवं सर्टिफिकेट स्तर के विषय हैं।
7. **स्कूल ऑफ मैनेजमेंट स्टैडीज:** इसके अन्तर्गत कॉमर्स के 60 क्रैडिट तथा मैनेजमेंट में 156 क्रैडिट होते हैं। मैनेजमेंट में विभिन्न विषयों के डिप्लोमा, डिग्री एवं पोस्ट ग्रेज्यूएट डिग्री भी दी जाती है।

नोट

प्रवेश की प्रक्रिया

इन्दिार गांधी मुक्त विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए किसी भी प्रारम्भिक शिक्षा का होना आवश्यक योग्यता में नहीं आता, भले ही वह बेसिक प्रारम्भिक शिक्षा हो अथवा विश्वविद्यालय स्तर के डिग्री, डिप्लोमा या सर्टिफिकेट कोर्स क्यों न हो, किसी के लिए भी योग्यता प्रमाण-पत्र की आवश्यकता नहीं होती। प्रवेश का यह नया रूप लाखों की सहायता करता है जो किसी कारणवश दूसरे विश्वविद्यालयों की आवश्यक शर्तों के कारण डिग्री व डिप्लोमा प्राप्त नहीं कर सके जबकि ये लोग काफी परिपक्व भी थे और शिक्षा की इच्छा भी रखते थे।

मुक्त विश्वविद्यालय का उद्देश्य अधिक से अधिक व्यक्तियों को उचच शिक्षा के अवसर प्रदान करना है। ये वो व्यक्ति हैं जिन्हें स्नातक व स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा के योग्य नहीं समझा गया था।

प्रवेश की योग्यता के इस विचार को मदुराई एवं मैसूर के विश्वंविद्यालयों द्वारा स्वीकृत किया गया। आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय ने अपना कार्य (1983) में शुरू किया तथा कोई भी व्यक्ति जो 20 साल की उम्र पूरी कर चुका है वह स्नातक स्तर के कार्यक्रम में भाग लेने के लिए प्रार्थी हो सकता है, ऐसी धारणा की। यदि किसी विद्यार्थी ने माध्यमिक शिक्षा उत्तीर्ण नहीं की हुई है तब उसे विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा को उत्तीर्ण करना आवश्यक हो जाता है। सभी मुक्त विश्वविद्यालयों की तरह इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय ने भी डिग्री एवं सर्टिफिकेट कोर्स में प्रवेश हेतु यही शर्त रखी है।

क्षेत्रीय व अध्ययन केन्द्र

विद्यार्थियों को अध्ययन में सहयोग देने के उद्देश्य से प्रशिक्षण केन्द्रों तथा शिक्षण क्षेत्रों का एक जाल सा फैलाया गया है। पूरा क्षेत्र पांच क्षेत्रों (रीजन) में बांटा गया है उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम तथा केन्द्र का भाग। अभी तक 60 केन्द्र हैं जिन्हें 100 तक बढ़ाने का निर्णय लिया गया है। एक स्टैडी सैण्टर किसी शिक्षा संस्था में बनाया जाता है उसमें एक पुस्तकालय, एक दृश्य श्रव्य उपकरण तथा एक कॉन्सलर होता है जिसका कार्य इस सैंटर प्रधान एक समन्वयक होता है जिसका कार्य अध्ययन केन्द्र का प्रबन्ध करना होता है। मुख्य अध्ययन केन्द्र निम्नलिखित हैं–

1. दक्षिण में हैदराबाद, त्रेवेन्द्रम, बैंगलोर, मद्रास मुख्या अध्ययन केन्द्र हैं। इसमें हैदराबाद से जुड़ा हुआ तिरूपति तथा विजयवाड़ा के केन्द्र हैं तथा मद्रास से जुड़ा हुआ कोयम्बटूर का केन्द्र है।
2. पूर्व में गुहाटी, कलकत्ता, भूवनेश्वर व कटक के मुख्य अध्ययन केन्द्र हैं तथा गुहाटी से जुड़े हुए इम्फाल तथा शिलांग के केन्द्र हैं।

नोट

3. पश्चिम में अहमदाबाद का मुख्य केन्द्र तथा उससे जुड़ा हुआ बड़ोदरा का केन्द्र है। बम्बई का मुख्य केन्द्र तथा जुडा हुआ मारगोआ एवं पूना का केंद्र है।
4. उत्तर में श्रीनगर, जम्बूतावी, चण्डीगढ़, शिवाजी कॉलिज दिल्ली, विश्व युवक केंद्र नई दिल्ली, तथा श्री वैंकटेश्वर कॉलिज नई दिल्ली के मुख्य केंद्र हैं तथा शिमला, कुरूक्षेत्र, जयपुर, देहरादून के जुडे हुए उपकेन्द्र हैं।
5. केंद्र में पटना, भोपाल, जबलपुर, वाराणसी के मुख्य केंद्र एवं ग्वालियर, दुर्ग, लखनऊ, इलाहबाद, कानपुर, आगरा, बरेली उपकेन्द्र हैं।

इन प्रशिक्षण केन्द्रों का कार्य क्षेत्रीय केंद्रों से सम्बन्ध बनाए रखना है। क्षेत्रीय केंद्रों का अध्यक्ष क्षेत्रीय निदेशक होता है जिसकी सहायता के लिए पूर्ण-कालिक कार्यकर्ताओं को रखा जाता है। विद्यार्थियों को छूट है कि वे किसी भी कार्यरत शिक्षण संस्था को अपने गृह कार्य और प्रत्युत्तर भेजने के लिये चयन कर लें। क्षेत्रीय केन्द्रों का कार्य विद्यार्थी द्वारा भेजे गये उत्तरों तथा सूचनाओं जिज्ञासाओं का निवारण करना है। विद्यार्थियों की कठिनाइयों को हल करने के लिये दो या दो से अधिक दिनों का एक कार्यक्रम सप्ताह में एक बार रखा जाता है जिसमें उनसे मिलकर कार्य किया जाता है। कुछ 'अ-अध्ययन केंद्र' भी हैं जिनमें विद्यार्थियों द्वारा भेजे गये गृह कार्यों की जांच करके भेजा जाता है।

अनुदेशन विधियाँ

दूसरे मुक्त विश्वविद्यालयों की तरह इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय भी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए एक अलग प्रकार के अनुदेशन विधियां को प्रयुक्त करती हैं। यह विश्वविद्यालय आधुनितम संचार तकनीकी का उपयोग करते हैं तथा दूरवर्ती शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को हर सम्भव विकासात्मक शिक्षा प्रदान करते हैं। दूरवर्ती छात्रों को अध्ययन की सभी प्रकार की सुविधायें देती हैं।

यह विश्वविद्यालय बहु-आगामी होते हैं, यह मुद्रण पुस्तकें, रेडियो और दूरदर्शन, संचार माध्यम, दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री और अध्यापन तथा गृह प्रयोगात्मक सामग्री का प्रयोग करती हैं। इन विभिन्न माध्यमों का प्रयोग विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुसार किया जाता है। इस समय यह विश्वविद्यालय दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री और पुस्तकों का प्रयोग कर रहा है। आगामी वर्षों में जब दृश्य-श्रव्य पाठ्यक्रम शुरू हो जायेंगे तब दूरदर्शन एवं रेडियो का भी प्रयोग किया जायेगा।

पाठ्य-सामग्री की रचना

सर्वप्रथम एक कार्यक्रम को नामांकित किया जाता है फिर उसकी रचना दूसरे विश्वविद्यालयों के विशेषज्ञों की सहायता से की जाती है। एक बार कार्यक्रम की अनुमति के बाद एक विषय दल की नियुक्ति की जाती है, जिसमें एक लेखक और एक एडीटर होता है, जिसका कार्य समन्वय करना है। विषय-वस्तु पारम्परिक विश्वविद्यालयों के विशेषज्ञों के दल के द्वारा तैयार किया जाता है। उनकी सहायता के लिए शिक्ष तकनीकी के विशेषज्ञ होते हैं, जो दूरवर्ती शिक्षा विभाग से चुने जाते हैं। दृश्य-श्रव्य सामग्री का (पैकेज) भी उन्हीं के द्वारा निश्चित किया जाता है।

कार्यकर्त्ताओं का चयन

विश्वविद्यालय में तीन प्रकार के व्यक्ति कार्यरत होते हैं–शैक्षिक कार्य हेतु तकनीकी कार्य

हेतु, तथा गैर-शैक्षिक कार्य हेतु। उनकी नियुक्ति के लिए शैक्षिक अर्हरता और वेतनमान दूसरे विश्वविद्यालयों की ही तरह होता है। इसमें 53 पूर्णकालिक तथा 269 अर्द्धकालिक शैक्षिक कार्य हेतु कर्मचारी तथा अध्यापकगण होते हैं। तकनीकी तथा गैर-शैक्षिक कर्मचारियों में 320 पूर्ण कालिक और 53 अर्द्धकालिक सदस्य होते हैं। आने वाले समय में शैक्षिक तथा गैर शैक्षिक कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि हो जायेगी। पूर्णकालिक सदस्यों की नियुक्ति भारतीय सेवा आयोग के आधार पर की जाती है तथा अंशकालिक कर्मचारियों को पारम्परिक विश्वविद्यालयों से लिया जाता है जो इस विश्वविद्यालय की विभिन्न प्रकार से सहायता करता है, जैसे–परामर्शदाता, समन्वयक, लेखक, एडीटर आदि।

नोट

व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम

अध्यापन की पारम्परिक विधि में छात्रों को पूरा पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है, लेकिन दूरवर्ती शिक्षा में सम्पूर्ण विषय को मुद्रित अथवा अमुद्रित माध्यम के द्वारा समाप्त करवाया जाता है। उनकी सभी समस्यायें प्रश्न और कठिनाइयां इस माध्यम के द्वारा पूरी तरह से दूर नहीं की जा सकती हैं, इसलिए लघु अवधि वाले सम्पर्क कार्यक्रम आवश्यक हो जाते हैं। सम्पर्क कार्यक्रम के द्वारा भी पूरी की पूरी विषय-वस्तु का शिक्षण करना सम्भव नहीं है, इसलिए विषय-वस्तु मे पाठ छोटे रूप मे प्रस्तुत किये जाते हैं और मुख्य बिन्दुओं की व्याख्या की जाती है। इस प्रकार विद्यार्थियों को पाठ्यवस्तु का सम्पूर्ण बाह्य स्वरूप मिल जाता है, जिसकी सहायता से वह घर पर स्वयं उसे तैयार कर सकता है।

व्यक्तिगत सम्पर्क कार्य के उद्देश्य

किसी शैक्षिक संस्थान में सम्पर्क कार्यक्रम के उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. विद्यार्थियों का विषय ज्ञान कराना और उसके महत्व को समझना।
2. उस विषय की सूक्ष्म रूप मे जानकारी देना।
3. विषय के पाठ्य-वस्तु का विकास करना।
4. विषय के मूल तत्व और उसके मुख्य पाठ्यवस्तु की कठिनाइयों को दूर करना। अध्ययन सम्बन्धी समस्याओं का समाधान करना।
5. विद्यार्थियों को पाठ्य-वस्तु और उनके उत्तरों के विषय में ज्ञान देना।
6. उन्हें स्वाध्याय के लिए प्रोत्साहित करना।
7. उनकी कठिनाइयों को समझने और सुझाव देने के समुचित अवसर प्रदान करना।
8. विद्यार्थियों का विषय की ओर ध्यान आकर्षित करना और उनकी रूचि को बढ़ाना।

अध्ययन केन्द्रों पर परामर्श सेवाएं

सम्पर्क कार्यक्रम के समय अध्ययन केन्द्रों में परामर्श सेवायें भी दी जाती हैं। शैक्षिक केन्द्रों पर दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री प्राप्त की जा सकती है। इन शैक्षिक केन्द्रों पर परामर्शदाता होते हैं, जो छात्रों की शैक्षिक, प्रशासनिक और व्यक्तिगत कठिनाइयों को हल करने में सहायता प्रदान करते हैं। अकसर एक समय एक निश्चित समस्याओं को हल करने के लिए केन्द्रित होता है। विद्यार्थी शैक्षिक केन्द्र में महीने में चार बार जा सकते हैं, अपनी सुविधा को देखते हुए। यदि कोई विद्यार्थी गैर-शिक्षण केन्द्रों को चुनता है तब भी अन्य शिक्षण केन्द्रों से परामर्श सहायता ले सकता है। परन्तु इन केन्द्रों पर हर समय परामर्श की सुविधाये उपलब्ध नहीं होती हैं। ऐसे विद्यार्थियों को परामर्श के लिए सघन सम्पर्क कार्यक्रम उपलब्ध कराया जाता

है। विद्यार्थियो को समय-समय पर इनकी सूचना दी जाती है। इस प्रकार ऐसे विद्याथी जो गैर शैक्षिक केन्द्रों को चुनते हैं ये अपने उत्तर तथा गृहकार्य को इन सघन सम्पर्क केन्द्रों पर भेजते हैं तथा इन गैर शैक्षिक केन्द्रों पर इन कार्यक्रमों को द्वारा ही परामर्श की सुविधा दी जाती है।

नोट

शिक्षा की राष्ट्रीय नीति तथा इग्नू का कर्य

सन् (1986) की सरकार की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने अनौपचारिक शिक्षा को महत्व दिया और देश भर में शैक्षिक कार्यक्रमों के विस्तार को बढ़ावा दिया। उसमें यह भी कहा गया कि दूरवर्ती शिक्षा का विकार किया जाए और उनके शिक्षा स्तर को ऊँचा उठाया जाए।

उच्च शिक्षा में ऐसा करने के लिए आई.जी.एन.ओ.यू. को इसका कार्यभार दिया गया तथा मुक्त विश्वविद्यालय तथा दूरवर्ती-शिक्षा को प्रोत्साहित करने का कार्य भी इसी विश्वविद्यालय को सौंपा गया। शिक्षा का स्तर शोध और मूल्यांकर को निश्चित का कार्य भी इसी का है। इस कार्य को पूरा करने के लिए विश्वविद्यालय को अधिकार प्रदान किया गया कि वह इस प्रकार की संस्थाओं को दान भी प्रदान करे। देश में इस प्रकार की शिक्षा संस्थाओं के लिए यह एक 'पेससैन्टर' की तरह भी काग्र करती है। यह विश्वविद्यालय 'स्सिोर्ससैन्टर' की तरह भी कार्य करेगा तथा दूसरी दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं के शिक्षा स्तर को बनाए रखने में भी सहायक होगा।

बहुत से राज्यों ने इसी प्रकार के विश्वविद्यालय शुरू करने का विचार रखा जिनमें से मुख्यत: पश्चिमी बंगाल, मंहाराष्ट्र, केरल, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, कर्नाटक, उड़ीसा, राजस्थान, गुजरात आदि हैं। अधिकतर राज्यों ने समितियां भी बनाई, अपने राज्यों में मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित करने के लिए। दो राज्य राजस्थान तथा बिहार ऐसे मुक्त विश्वविद्यालय पहले से ही शुरू कर चुके हैं तथा कुछ इन्हें स्थापित करने के लिए प्रयत्नरत हैं। इसी प्रकार कुछ राज्यों की सरकार जैसे–पश्चिमी बंगाल और उत्तर प्रदेश अपने मुक्त विश्वविद्यालय के विचार को स्थगित करती हुई दिखाई देती हैं। इन राज्यों के विचार भी ऐसे प्रतीत होते हैं कि जैसे वो पहले ये देखना चाहते हैं कि आई.जी.एन.ओ.यू. द्वारा स्वीकृत विषयों से क्या लाभ होता है? तभी वो अपने राज्यों में मुक्त विश्वविद्यालय खोलने के विषय पर विचार करेंगें।

इस सन्दर्भ में एक मुख्य सवाल जो उठकर आया है वह राष्ट्रीय विश्वविद्यालय और राजकीय मुक्त विश्वविद्यालय के बीच सम्बन्ध का है।

इस विषय को अनेक बाद समितियों में उठाया गया। यह मत उभरकर आया कि विषयों का अनावश्यक रूप से दोहरापन नहीं होना चाहिये तथा देश के सभी मुक्त विश्वविद्यालय का एक नेटवर्क (जाल) होना चाहिये इस नैटवर्क में वे एक दूसरे के द्वारा बनाये गये विषयों का चयन करेंगे यदि एक अच्छा कोर्स पहले से ही नेटवक के किसी सदस्य के द्वारा चलाया जा चुका है। तब दूसरी संस्था इसको दोबारा से लागू न करे। यह केवल विषय के निर्माण में अनावश्यक व्यय को ही नहीं बचायेगा बल्कि बहुत सा समय व शक्ति भी बचेगी। जहां आवश्यक होगा वो इसे अपनी क्षेत्रीय भाषा में अनुवाद कर सकते हैं। दूसरा विचार यह रखा गया कि इस नेटवर्क में एक विद्यार्थी जिस भी मुक्त विश्वविद्यालय में प्रवेश लेगा वह दूसरे विश्वविद्यालयों से कोर्स करने के लिए भी स्वतन्त्र होगा। इस प्रकार मुक्त विश्वविद्यालयों के इस नेटवर्क में अधिकतर विषयों का समावेश किया जायेगा। यह पहले से ही तय किया जायेगा। संरचना में एकरूपता का ध्यान रखा जायेगा। लगभग 60 से 70 प्रतिशत विषयों का

पाठ्यक्रम देश भर में एक सा होना चाहिये केवल 30 से 40 प्रतिशत विषयों के लिए प्रत्येक मुक्त विश्वविद्यालय स्वतन्त्र होगा।

नोट

मान्यता देने मे इग्नू की भूमिका

मान्यता प्रदान करना भी इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय का एक कार्य है। बहुत से पारम्परिक विश्वविद्यालय की तरह इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय भी मान्यता दे सकती है, ऐसी कोई संस्था जो भारत या बाहर स्थित है।

यह किसी भी शैक्षिक संस्था को उच्च शिक्षा में उपाधि प्रदान करने के लिए और अनुदान प्राप्त करने के लिए मान्यता दे सकती है। इस प्रकार देखते हें कि इग्नू केवल मुक्त विश्वविद्यालय की ही तरह कार्य नहीं करती बल्कि वह दूरवर्ती-शिक्षा के क्षेत्र में नेतृत्व भी प्रदान करती है कि इसके स्थापित होने के बाद दूरवर्ती शिक्षा को बलपूर्वक और बढ़ावा मिलेगा।

इग्नू (इन्दिरा गांधी विश्वविद्यालय) की स्थापना पर बहुत सी प्रतिक्रियायें हुई सर्वप्रथम लोगो के दिमाग में आया कि राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय किस प्रकार पत्राचार कोर्स से भिन्न हैं? क्या दूरवर्ती शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए एक अलग विश्वविद्यालय की आवश्यकता है? यहां यह ध्यान रखना आवश्यक हो जाता है कि मुक्त विश्वविद्यालय पत्राचार शिक्षा संस्थानों से पूर्णत: भिन्न हैं। जबकि दोनों ही दूरवर्ती शिक्षा देते हैं। पत्राचार संस्थायें एक पारम्परिक विश्वविद्यालयों के अन्दर रहकर कार्य करती हैं तथा वे उस विश्वविद्यालय के सभी नियमों का पालन भी करते हैं। इनमें नवीनता के लिए कोई स्थान नहीं है तथा न ही कोई लचीलापन है अर्थात परिवर्तन की सम्भावना नहीं है। इस प्रकार भिन्न-भिन्न प्रकार के सीखने वालों की आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो सकती जबकि मुक्त विश्वविद्यालयों की सबसे मुख्य विशेषता उनका अपना स्तर तथा कानूनी आधार का होना है। पत्राचार संस्थायें पारम्परिक विश्वविद्यालयों का एक हिस्सा मात्र है। ये न तो अपना अलग से कोई आधार रखती हैं और न ही स्वायतत्ता है। इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय दूसरे विश्वविद्यालयों की तरह अपना अलग से एक आधार रखता है तथा स्वायतत्ता रखता है यही इसकी मुख्य विशेषता है।

इस प्रकार इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय का अपना एक कानूनी आधार है जो देश के दूसरे दूरवर्ती संस्थानों से अलग करता है।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की वित्त प्रणाली

इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय मानव संसाधन मन्त्रालय द्वारा वित्तीय सहायता दी जाती है। इसके भिन्नता वाली विशेषता को बनाए रखने के लिए विश्वविद्यालय को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से अलग रखा गया है। सम्पर्क व्यय भारतीय सरकार से अनुदान के रूप में आता है। वार्षिक अनुदार भारतीय सरकार से आठ करोड़ रुपये मिलता है और इसका इतना ही खर्च भी होता है।

निष्कर्ष: इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय का उद्देश्य पारम्परिक शिक्षा नीति को बदलना नहीं है और यह पारम्परिक शिक्षा नीति का कोई विकल्प भी नहीं है और नह ही यह पारम्परिक शिक्षा प्रणाली को कमजोर बनाता है, इसका उद्देश्य शिक्षा साधनों को और बढाना है, जो शिक्षा प्राप्त करने मे किसी और कारण से प्रभावित होते हैं जैसे–आर्थिक, अभाव या सामाजिक अथवा पारिवारिक कारणों से उनकी आधुनिक शिक्षा तकनीकी का प्रयोग करके

छात्र क्रियाकलाप

1. इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की वित्त प्रणाली का अर्थ बतायें?

2. शिक्षा की राष्ट्रीय नीति तथा इग्नू के कार्यों की चर्चा करें?

शिक्षा प्रदान करना है। इसका कार्य शिक्षा का स्तर ऊँचा उठाना है। यह दूरवर्ती शिक्षा में दूर-संचार तकनीकी का उपयोग करके उच्च कोटि के शिक्षण की व्यवस्था उन लोगों के लिए करती है जिनको इसकी आवश्यकता है। अपने बहु-आयामी कार्यक्रमों के द्वारा ही शिक्षा को उच्च स्तर का बनाया जा सकता है। पाठों के प्रस्तुतीकरण में उच्च कोटि के शिक्षकों का प्रयोग किया जाता है। इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना देश में शिक्षा के क्षेत्र में नया अध्याय आरम्भ हुआ है। उच्च शिक्षा में इसके विकासात्मक कार्य द्वारा योगदान प्राप्त हुआ है। इसकी स्थापना के साथ ही यह आशा की गई कि यह विश्वविद्यालय एक नेतृत्व का कार्य भी करेगा। दूरवर्ती शिक्षा को सुदृढ़ करने में यह भी आशा की गयी कि यह विश्वविद्यालय एक उच्च कोटि की नवीन शिक्षा नीति को प्रदान करेगा। यह केवल अपने विद्यार्थियों को ही नहीं बल्कि दूसरे पारम्परिक विश्वविद्यालयों के छात्रों की भी सहायता करेगा। इस मुक्त विश्वविद्यालय के पास अधिक अवसर हैं तथा यह उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों को समीप लायेगा। इस सन्दर्भ में श्री के.सी. पन्त के शब्द ध्यान देने योग्य हैं जब उन्होंने लोकसभा में इसका बिल प्रस्तुत किया था तब कहा–"जैसा अन्य देशों में हुआ है आशा की जाती है कि इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय अन्य शिक्षा प्रणाली पर एक धनात्मक प्रभाव डालेगा तथा वे विद्यार्थी जो इसमें प्रवेश प्राप्त नहीं करते है वे भी इसके अध्ययन सामग्रियों तथा माध्यमों का लाभ उठा सकेंगें। आज शिक्षा के क्षेत्र में एक नये अध्याय का शुभारम्भ कर रहे हैं जो उत्तरदयित्वों और सुअवसरों से भर हुआ है।"

नोट

आन्ध्रप्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना

उस्मानिया विश्वविद्यालय के कुछ उत्साही शिक्षकों द्वारा प्रारम्भ में इसी विश्वविद्यालय के एक अंग के रूप में ऐसे कॉलिज की स्थापना का प्रस्ताव किया गया था जो पूर्णतया स्वायत्ता होगा तथा दूरवर्ती शिक्षा के विकास के लिए पूर्णरूपेण समर्पित होगा। इस प्रस्ताव को कार्यक्रम प्रदान करने के प्रयास चल ही रहे थे कि उसी बीच इस परियोजना के प्रबल समर्थक आन्ध्र प्रदेश के तत्कालीन शिक्षमंत्री श्री आर० वेंकटरमण एक राजनैतिक घटनाक्रम में प्रदेश के मुख्यमंत्री बन गये। उन्होंने मुक्त विश्वविद्यालय की अवधारणा के प्रति नये सिरे से रूचि दिखलाई तथा इस सम्बन्ध में एक समिति की नियुक्ति की जिसे अतिशीघ्र (केवल दो महीने में) में अपनी संस्तुति सरकार को देनी थी। प्रो० जी० रामरेड्डी की अध्यक्षता में गठित इस समिति ने अगस्त 1982 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट की संस्तुतियों को तुरन्त स्वीकार करते हुए आन्ध्र प्रदेश सरकार ने एक विधेयक तैयार किया तथा इसे विधानमंडल द्वारा शीघ्र ही मंजूरी भी प्रदान कर दी गई। 26 अगस्त 1982 ई० को भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डी द्वारा आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय का शुभारम्भ किया गया। इस प्रकार समिति के प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के एक सप्ताह के अन्दर ही विश्वविद्यालय की स्थापना हो गई। देश के संसदीय इतिहास में विधायिका की तत्परता का एक दुर्लभ उदाहरण है। यह हमारे कुछ राजनीतिज्ञों के शिक्षा के प्रति अगाध लगाव एवं समर्पण का भी परिचायक है।

आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय के उद्देश्य

इस मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना कुछ प्रमुख उद्देश्यों को लेकर की गई जो इस प्रकार हैं–

1. उन शिक्षार्थियों को उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करना जो गरीबी, पिछड़ी हुई

नोट

सामाजिक-आर्थिक स्थिति एवं अन्य कमियों के कारण उच्च शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश पाने से वंचित रह जाते हैं।

2. जनसंख्या के एक बड़े भाग, जिनमें किसी कार्य या व्यवसाय में लगे हुए लोग, महिलाएँ/गृहणियाँ तथा प्रौढ़ व्यक्ति सम्मिलित हैं तीा जो अपने शैक्षिक अथवा व्यावसायिक स्तर को उठाने हेतु उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं; उन को मुद्रित शिक्षण सामग्री, सम्पर्क कार्यक्रम, अध्ययन केन्द्रों एवं जनसंचार माध्यमों के द्वारा समान शैक्षिक अवसर, प्रदान करना।
3. उच्च शिक्षा में नामांकन की योग्यता, प्रवेश आयु, पाठ्यक्रमों के चयन शिक्षण-अधिगम विधियों, परीक्षा प्रणाली तथा कार्यक्रमों के संचालन आदि के नियमों में लचीलापन लाना।
4. देश के सर्वोत्तम विश्वविद्यालयों के समतुल्य राज्य के विश्वविद्यालयों के शैक्षिक स्तर को सर्वोच्च बनाये रखते हेतु सहायक प्रणाली की भूमिका निभाना।
5. विश्वविद्यालों की नीतियों एवं कार्यक्रमों के माध्यम से राज्य में एकता की भावना में वृद्धि करना।
6. विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत व्यक्तियों तथा सांस्कृतिक एवं सौन्दर्य बोधात्मक मूल्यों वाले विषयों के अध्ययन से अपने जीवन को समृद्ध बनाने के इच्छुक व्यक्तियों को डिग्री/सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम की सुविधा प्रदान करना।
7. अनुसंधान और ज्ञान के प्रसार एवं अभिवृद्धि हेतु प्रावधान करना।

मुक्त विश्वविद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रम

प्रारम्भ में इस विश्वविद्यालय द्वारा बी०ए०, बी०एस-सी० एवं बी०कॉम० पाठ्यक्रमों की शुरूआत की गई। इन पाठ्यक्रमों में कोई भी व्यक्ति, किसी पूर्व शैक्षिक योग्यता के बिना प्रवेश ले सकता है किन्तु उसे इसके लिए विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा को उत्तीर्ण करना अनिवार्य होता है। इस प्रवेश परीक्षा का उद्देश्य शिक्षार्थियों की वांछित कोर्स हेतु न्यूनतम योग्यता का आंकलन कराना होता है, बिन प्रवेश परीक्षा के ही नामांकन करा सकते हैं। बी०एस-सी० पाठ्यक्रम हेतु शिक्षार्थियों का विज्ञान विषयों के साथ इण्टरमीडिएट उत्तीर्ण होना अनिवार्य है।

उपर्युक्त तीनों कार्यक्रमों हेतु तीन स्तरीय पाठ्यक्रम निर्धारित किये गये हैं–

1. **आधारभूत पाठ्यक्रम:** इसमें चार पाठ्यक्रम होते हैं जिनमें दो भाषाओं (अंग्रेजी, तेलगू, उर्दू, हिन्दी में से कोई दो) विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान का एक-एक पाठ्यक्रम होता है। इन्हें पहले वर्ष में पूरा करना होता है।
2. **सामान्य पाठ्यक्रम:** द्वितीय वर्ष में तीन विभिन्न विषयों के दो-दो पाठ्यक्रम का अध्ययन करना होता है।
3. **विशिष्ट अथवा व्यावहारिक पाठ्यक्रम:** तीसरे वर्ष में तीन विभिन्न विषयो (जिन्हें दूसरे वर्ष में लिया गया है) के दो-दो अतिरिक्त पाठ्यक्रम के साथ-साथ विशिष्ट अध्ययन का पाठ्यक्रम भी पूरा करना होता है।

इस शैक्षिक कार्यक्रम की विशेषता यह है कि इसमें सामन्य पाठ्यक्रम हेतु ऐच्छिक विषयों को चुनने में शिक्षार्थी को पूरी स्वतंत्रता होती है तथा वह अपनी आवश्यकता एवं रूचि के अनुसार विषयों का चयन कर सकता है।

शिक्षण सामग्री का निर्माण–इस विश्वविद्यालय में पाठ्यक्रमों का विकास विषय विशेषज्ञ समितियों द्वारा किया जाता है। पाठ्य-सामग्री के निर्माण एक विषय विशेषज्ञों द्वारा किया जाता है जिसमें विषय से सम्बन्धित सम्पादक, कई पाठ लेखक, एक भाषा सम्पादक तथा एक आयोजक होता है।

नोट

मुद्रण का कार्य बाहरी व्यावसायिक मुद्रकों से करवाया जाता है किन्तु बाद में विश्वविद्यालय की अपनी निजी मुद्रण व्यवस्था की योजना है।

मुद्रित शिक्षण सामग्री के अतिरिक्त पाठों को रेडियो से भी एक निर्धारित समय पर प्रसारित किया जाता है तथा इन पाठों के वीडियो कैसेट भी तैयार किये जाते हैं जिनका लाभ शिक्षार्थी अध्ययन केन्द्रों पर उठा सकते हैं।

अध्ययन केन्द्र

विद्यार्थियों को पर्याप्त सुविधा प्रदान करने की दृष्टि से पूरे आन्ध्र प्रदेश राज्य में इस विश्वविद्यालय के 28 अध्ययन केन्द्र (प्रारम्भ में) बनाये गये है। प्रदेश के प्रत्येक जिले में कम से कम एक अध्ययन केन्द्र तथा हैदराबाद एवं सिकन्दराबाद जैसे बड़े महानगरों में छः केन्द्र स्थापित किये गये हैं।

अध्ययन केन्द्र औपचारिक शिक्षण संस्थाओं में ही स्थापित किये गये हैं तथा ये रविवार एवं अन्य अवकाश के दिनों में चलते हैं। अध्ययन केन्द्र में एक समन्वयक होता है, जो आमतौर पर उसी संस्था का कोई प्रध्यापक होता है। संस्था के अन्य प्रध्यापकों को परामर्शताओं के रूप में नियुक्त किया जाता है जो इन केन्द्रों पर आने वाले शिक्षार्थियों की कठिनाइयों का निवारण करते हैं तथा उन्हें अध्ययन सम्बन्धी समुचित परामर्श प्रदान करते हैं।

मूल्यांकन पद्धति

दूरवर्ती शिक्षा के शिक्षार्थियों को मूल्यांकन दो भागों में किया जाता है–

1. उत्तर पत्रकों का सतत् मूल्यांकन तथा
2. नियमित परीक्षा या वार्षिक परीक्षा।

उत्तर पत्रकों का सतत् मूल्यांकन

विश्वविद्यालय द्वारा पंजीकृत दूरवर्ती शिक्षार्थियों को मुद्रित स्वतः अनुदेशात्मक सामग्री भेजी जाती है। शिक्षार्थियों को इस समग्री को अच्छी तरह पढ़कर उनसे सम्बन्धित पूछे गये प्रश्नों के उत्तरों को अलग से उत्तर पत्रक पर लिख करके अध्ययन केन्द्र को भेजना होता है। अध्ययन केन्द्र पर परामर्शदाता/शिक्षक द्वारा इन उत्तरों पत्रकों जाँच करके उनमें सुधार हेतु उपयुक्त टिप्पणियाँ अंकित की जाती हैं तथा उत्तर पत्रकों को पुनः शिक्षार्थियों को वापस कर दिया जाता है। इन उत्तर पत्रकों पर अंक नहीं प्रदान किये जाते हैं किन्तु उनकी गुणवत्ता से सम्बन्धित ग्रेड एवं टिप्पणियां प्रदान की जाती हैं। इससे शिक्षार्थी का सतत् मूल्यांकन होता रहता है। तथा मूलयांकन के परिणामों से अवगत होने से उसे पृष्ठपोषण प्राप्त होता है।

वार्षिक परीक्षा

वर्ष/सत्र के अन्त में प्रत्येक कोर्स हेतु एक अन्तिम परीक्षा आयोजित की जाती हे। यह परीक्षा विभिन्न केन्द्रों पर आयोजित की जाती है।

नोट

संगठनात्मक स्वरूप

इस विश्वविद्यालय का संगठनात्मक स्वरूप भी आन्ध्र प्रदेश राज्य के दूसरे विश्वविद्यालयों की तरह ही है किन्तु इसकी विशिष्ट प्रकृति के अनुरूप इसके स्वरूप में कुछ थोडे परिवर्तन अवश्य किये गये हैं। आन्ध्र प्रदेश के राज्यपाल इसके पदेन कुलाधिपति होते हैं। इसकी कार्यकारी परिषद् में तीन तरह के सदस्य होते हैं--पदेन, नामित एवं निर्वाचित। इस कार्यकारी परिषद् में समस्त कार्य अधिकार निहित होती हैं। कुलपति इस परिषद् का पदेन अध्यक्ष होता है। शैक्षणिक मामलों के लिए शैक्षिक नियोजन परिषद् होती है। अनुदेशनात्मक सामग्री तथा माध्यमों के उपयोग को महत्व दिया जाता है।

आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय हैदराबाद (1982) के पश्चात् भारत में इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (1985) की सथापना के अतिरिक्त कई राज्यों द्वारा अपने राज्य में दूरवर्ती शिक्षा के विकास हेतु मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। इन विश्वविद्यालयों/संस्थानों का संक्षिप्त उल्लेख अग्रांकित है।

राज्यों में मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय नई दिल्ली की स्थापना से राज्यों को भी इस प्रकार विश्वविद्यालय स्थापित करने हेतु बल मिला तथा उनके द्वारा इस दिशा में सार्थक प्रयास भी किये गये। इसके परिणामस्वरूप यशवन्त राव चव्हाण मुक्त विश्वविद्यालय महाराष्ट्र कोटा मुक्त विश्वविद्यालय राजस्थान, नालन्दा मुक्त विश्वविद्यालय बिहार, राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय इलाहाबाद उत्तर प्रदेश स्थापित हुए तथा अनेक परम्परागत विश्वविद्यालयों द्वारा भी अपने यहाँ दूरवर्ती शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की गई। इस प्रकार 20वीं शताब्दी के अन्तिम दो दशकों में भारत में दूर शिक्षा का तीव्र गति से विकास हुआ। कुछ राज्य स्तरीय मुक्त विश्वविद्यालयों का संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया गया है।

यशवन्त राव चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विश्वविद्यालय

महाराष्ट्र सरकार द्वारा इस विश्वविद्यालय की स्थापना 1989 ई॰ में की गई। यह विश्वविद्यालय अपनी तरह का एक विशिष्ट संस्थान है क्योंकि इसमें मुक्त शिक्षा प्रणाली से कृषि एवं बागवानी की पाठ्यक्रम प्रदान किये जाते हैं। ये पाठ्यक्रम मुख्य रूप से दस प्रकार के फलों, सब्जियों एवं खाद्यान्नों की फसलों से सम्बन्धित होते हैं। इसके लिए जिन दस आदर्श फसलों का चयन किया गया है वे महाराष्ट्र राज्य के प्रमुख फसलें हैं जो निम्नलिखित हैं।

"अंगूर, आम, कपास, मूँगफली, प्याज, उड़द और अरहर, बेर, अनार तथा गन्ना की फसलें हैं।"

इन पाठ्यक्रमों को इच्छुक कृषि कार्यकर्त्ताओं (कृषकों) कृषि से जुडे विद्यार्थियों/शिक्षकों तथा अन्य सम्बन्धित व्यक्तियों को दूरवर्ती शिक्षा माध्यम से प्रदान किया जाता है। इसके लिए स्वतः अनुदेशनात्मक सामग्री (मुद्रित रूप में), श्रव्य-दृश्य समग्री, सम्पर्क सत्रों का आयोजन, कृषि विशेषज्ञों के मध्य द्विमार्गी सम्प्रेषण आदि विधियों को प्रयुक्त किया जाता है।

इस विश्वविद्यालय द्वारा 'सम्पर्क सत्र' पर विशेष बल दिया जाता है तथा विश्वविद्यालय द्वारा इस आयोजन को 'प्रयोग परिवार का नाम प्रदान किया जाता है। इस प्रयोग परिवार के प्रत्यय के पीछे यह अवधारणा है कि यह कार्यक्रम प्रयोगकर्त्ताओं का एक विस्तृत परिवार है।

इस 'प्रयोग परिवार' में छात्र, कृषक, कृषि शिक्षा कार्यकर्त्ता, शिक्षक एवं अन्य सामग्री निर्माणकर्ता एक साथ मिल-बैठ कर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं तथा एक दूसरे के अनुभवों का लाभ उठाते हैं।

नोट

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय इलाहबाद

प्रदेश के विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजों में उच्च शिक्षा हेतु प्रवेशार्थियों की बढ़ती हुई भीड़ को देखते हुए बहुत पहले से ही किसी विकल्प की तलाश की जा रही थी। कुछ विश्वविद्यालयों द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों में पहले से निर्धारित सीटों की संख्या में वृद्धि करके तथा कुछ के द्वारा सांयकालीन कक्षाएं प्रारम्भ करके इस समस्या का तात्कालिक समाधान करने का प्रयास किया गया। किन्तु फिर भी सभी इच्छुक विद्यार्थियों को वांछित पाठ्यक्रम नहीं मिल पा रहा था। अत: प्रदेश में एक ऐसे मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना पर विचार किया गया जो सभी योग्य एवं इच्छुक शिक्षार्थियों को वांछित पाठ्यक्रम में अपनी सुविधानुसार प्रवेश की सुविधा प्रदान कर सके।

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा उपर्युक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए 1999 ई॰ में इलाहबाद में राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय खोलने की अनुमति प्रदान की गई। इस विश्वविद्यालय ने 15 अगस्त 1999 से औपचारिक रूप से कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है। इस मुक्त विश्वविद्यालय का प्रमुख लक्ष्य प्रदेश के ग्रामीण बालक-बालिकाओं को आर्थिक रूप से सम्पन्न एवं घरेलू महिलाओं को उच्च शिक्षा की सुविधा प्रदान करना।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (NIOS)

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (NIOS, NOS या राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय), भारत के मुक्त विद्यालयों की शिक्षा-परिषद है। यह एक स्वायत्त संगठन है। इसकी स्थापना भारत सरकार के मानव संस्थान विकास मंत्रालय द्वारा 1989 के नवम्बर में हुई थी। इसका उद्देश्य देश के सूदूरवर्ती क्षेत्रों के विद्यार्थियों को सस्ती शिक्षा सुलभ कराना है। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद (सीबीएसई) और उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद आदि की भांति राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान भी माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर पर परीक्षा संचालित करता है। माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तर पर लगभग 15 लाख छात्रों के वर्तमान नामांकन के साथ यह दुनिया में सबसे बड़ी स्कूली शिक्षा प्रणाली है।

विशेषता

संगठन की ओर से स्कूल स्तर की शिक्षा के अलावा वोकेशनल कोर्स भी कराए जाते हैं। इसके अन्तर्गत आप अपनी जरूरत के अनुसार कोई भी विषय चुन सकते हैं। इसके साथ एक भाषा संबंधी विषय भी चुनना अनिवार्य होता है। प्रवेश लेने वालों के लिए अधिकतम आयु सीमा नहीं होती है।

पाठ्यक्रम

1. ओपन बेसिक एजुकेशन
2. सेकेंडरी सर्टिफिकेट कोर्स
3. सीनियर सेकेंडरी सर्टिफिकेट कोर्स
4. वोकेशनल एजुकेशन

नोट

योग्यता

सेकेंडरी कोर्स में प्रवेश के लिए आठवीं पास होना जरूरी है। सीनियर सेकेंडरी सर्टिफिकेट कोर्स करने के लिए किसी मान्यता प्राप्त बोर्ड से दसवीं पास अनिवार्य है। सेकेंडरी तथा सीनियर सेकेंडरी सर्टिफिकेट के माध्यम से किसी भी वोकेशनल कोर्स में एडमिशन लिया जा सकता है।

सभी पाठ्यक्रम मान्यता प्राप्त हैं

लोगों को सामन्यत: यह शंका रहती है कि ओपन स्कूल से की जाने वाली पढ़ाई की वैल्यू रेग्यूलर पढ़ाई की तरह नहीं होती है। यह धारणा बिल्कुल गलत है। लगभग 75 प्रतिशत विश्वविद्यालयों ने नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ ओपन स्कूलिंग के सीनियर सेकेंडरी कोर्स को अपने यहां प्रवेश के लिए मान्यता दे रखी है।

राज्यों में ओपन स्कूल

एनआईओएस के रीजनल सेंटर हैदराबाद, पुणे, कोलकाता (भुवनेश्वर), गुहावटी, चंड़ीगढ, दिल्ली, इलाहाबाद (देहरादूर), पटना, जंयपुर, कोच्चि तथा भोपाल में स्थित है। इसके अलावा हरियाणा, मध्य प्रदेश, पंजाब, तमिलनाडू, वेस्ट बंगाल, कर्नाट्रक, केरल व जम्मू कश्मीर में नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ ओपन स्कूल के साथ मिलकर राज्य ओपन स्कूल स्थापित किए गए हैं। राजस्थान ओर आन्ध्रप्रदेश के अपने ओपन स्कूल हैं।

शिक्षा एवं शिक्षा सामग्री

संस्थान में मॉडर्न कम्युनिकेशन टेक्नोलॉजी के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जाती है। छात्रों को सेल्फ मैटीरियल दिया जाता है, जिसमें सहायता के लिए हर सेंटर पर कॉन्टैक्ट क्लासेज होती हैं। यहां ऑडियो और विडियों प्रोग्राम्स के माध्यम से भी समय-समय पर छात्रों को सहायता दी जाती है।

आवेदन

एनआईओएस में प्रवेश के लिए ऑनलाइन आवेदन कर सकते हैं। एकेडमिक कोर्स (सेकेंडरी व सीनियर सेकेंडरी) में दाखिले की प्रक्रिया 1 जुलाई से 31 अगस्त तक चलती है। वोकेशनल एजुकेशन में एडमिशन की प्रक्रिया पूरे वर्ष चालू रहती है।

बिहार बोर्ड ऑफ स्कूलिंग एंड एक्जामिनेशन (BBOSE)

फरवरी, 2011 में शिक्षा विभाग सरकार के स्वतंत्र संगठन के तोर पर बिहार बोर्ड ऑफ स्कूलिंग एंड एक्जामिनेशन (BBOSE) की स्थापना गृत कुछ वर्षो में राज्य की तेजी से हो रहे सामाजिक आर्थिक विकास की राह में एक मील का पत्थर साबित हुआ है। BBOSE सोसाइटीज़ ऐक्ट के तहत एक पंजीकृत सरकारी सोसाइटी है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय , भारत सरकार के तहत राष्ट्रीय मुक्त शिक्षा संस्थान के तर्ज पर स्थापित किया गया एक मुक्त और दुरगामी शिक्षा स्थान है। उपेक्षित सामाजिक-आर्थिक और धार्मिक अनुभाग पर विशेष ध्यान के साथ राज्य में मुक्त और दूरगामी अध्ययन प्रणाली के माध्यम से बिहार में शिक्षा और कौशल के संदर्भ में ''अगम्य तक पहुँच'' जनादेश है। एक शिरोबिंदु संगठन के तौर पर स्कूली शिक्षा के श्रेत्र में यह स्वयं कि विषय सूची और पुस्तकें विकसित करता है, औपचारिक

स्कूल शिक्षा के सभी स्तरों से सम्बन्धित अर्थात कक्षा I से कक्षा XII तक शिक्षा प्रदान करना है। यह सी॰बी॰एस॰सी/आई॰सी॰एस॰आई तथा देश के अन्य माध्यमिक बोर्ड के समान अन्य औपचारिक स्कूल परीक्षा बोर्ड के प्रमाण-पत्रों के अनुदान के बाद, सार्वजनिक परीक्षा भी आयोजित करता है। इस लिए प्रभाव में यह विद्यालय स्तर पर मुक्त और दूरगामी अधिगम के श्रेत्र में राज्य शैक्षिक अुसंधान और प्रशिक्षण परिषद तथा बिहार विद्यालय परीक्षा बोर्ड का एक सम्मिक्षकरण है। यह राज्य के लिए एक नोडल अभिकरण भी घोषित किया जा चुका है। बी॰बी॰ओ॰एस॰ई॰ में कई अनूठी और विलक्षण विशेषताऐं हैं जो इसे सभी अन्य औपचारिक परीक्षा बोर्ड में अलग करता है।

1. यह कक्षा पंचम से विश्वविद्यालयों के डिग्री स्तर के नीचे तक, शैक्षिक पाठ्क्रमों में अतिरिक्त व्यवसायिक और कौशल प्रशिक्षण प्रदान कररता है। यह कक्षा दसवीं/बारहवीं के स्तर पर शैक्षिक विषयों के साथ व्रूवसायिक पाठ्क्रमों के तालमेल की अनुमति देता है, तथा पाठ्क्रमों और योग्यताओं के स्तर पर निंर्भर करते हुए केवल व्यवसायिक विषयों में ही नही प्रशिक्षण भी प्रदान करती है। बी॰बी॰ओ॰एस॰ई॰ विभिन्न कार्यकालों तथा योग्यता स्तरों के लिए विभिन्न शैक्षिक और व्यवसायिक पाठयक्रमों के लिए डिप्लोमा तथा सट्रीफिकेट प्रदान करता है।
2. यह प्राथमिक स्तर के शिक्षकों के लिए D.El.Ed. के नाम से एक पाठ्यक्रम 'प्रशिक्षण' भी प्रदान करता है।
3. ये विभिन्न वर्गो में विभिन्न जीवन सम्पन्नीकरण पाठ्यक्रम भी प्रदान करता है।

बिहार बार्ड मुक्त स्कूलिंग और परिक्षा न केवल सार्वभौमिक विद्यालय शिक्षा में सहयोग करता है बल्कि अभिगम, निष्पक्षता और गुणबत्ता भी सुनिशचित करने के लिए, राज्य सरकार के लिए नीति हस्तक्षेप के एक सशक्त माध्यम के तौर पर उभर रहा है, साथ ही साथ अधि कारहीन समुदायों को मरव्य धारा से जोडना तथा "अगम्य तक पहुंचना" है। इसमें दूरगामीं अधिगम प्रणाली के माध्यम से कुशल और मूल्यवान मानव संसाधन में बिहार की अकुशल और अर्ध कुशल कार्य शक्ति को रूपांतरित करने द्वारा प्रभावशाली रूप से जनसंख्या लाभांश" प्राप्त करने में राज्य की मदद करने की भरपूर क्षमता है। बी॰बी॰ओ॰एस॰ई बिहार के युवाओं के लिए संबद्ध वत्तंत तथा नवीन मंडी से प्रेरित कोशल आकृति प्रदान करने के लिए असीम संभावनाऐं रखता है तथा उनके वर्तमान कौशल आधार भी संपन्न करता है। बी॰बी॰ओ॰एस॰ई पहले ही इस संदर्भ में राज्य के लिए एक नोडल अभिकरण के तौर पर उभरा है तथा उद्योग और व्यवसाय के विभिन्न क्षेत्रों में अग्रगामी संचालकों के साथ नवीन सहयोग औश्र भागीदारी विकसित करने की प्रणाली में है। बी॰बी॰ओ॰एस॰ई॰ विविध उपभोगता समूहों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अध्ययन, विषयों, प्रशिक्षण संपुष्टि तथा प्रशिक्षण संबंधी स्थूल के पाठ्यक्रमों के विभिन्न और विस्तीर्ण गुच्छें से सेवाओं के लिए विलक्षण ढंग से संतुलित है।

बिहार में पढाई के लिए वर्तमान चुनौतियाँ

1. सभी स्तरों पर विद्यालय शिक्षा के अधिगम के विस्तार के लिए
2. विद्यालय सभी स्तरों पर आवरोधन की दर बढ़ाने के लिए
3. अधिकारहीन समूहों- अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, आर्थिक रूप से पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यको, धुमंत समूह- बी॰बी॰ओ॰एस॰ई॰ के श्रेत्रों के लिए शैक्षिक अवसर पैदा करना।

नोट

4. मुख्यधारा शिक्षा प्रणाली के साथ तालमेल पैदा करना तथा इनके बीच तुलना बनाए रखना।
5. आयु यथोचित कक्षाओं में अनेक पुन: प्रवेश को सक्षम बनाने के लिए विद्यालयों से बाहर के 6-11 समूहों के लिए सेतु पाठ्यक्रमों 14+ प्रारंभिक विद्यालयों से बाहर की समस्याओं को कुशलतापूर्वक समझानें के लिए RTE को लागु कराना।
6. निर्धनता उन्मुलन, जीवन थापन और रोज़गार सुनिश्चित करने के लिए बिहार के विशिष्ट संदर्भ में बाज़ार/माँग पर आधार व्यवसायिक पाठ्क्रमों को बढ़ावा देना।
7. RMSA के लक्ष्य को प्राप्ती के लिए एक प्रणाली बनाना तथा । के लाभें को आागे से ले जाना।
8. कम लागत के साथ कम से कम समय में सीमा में लागू कराना।

बिहार बोर्ड मुक्त शिक्षा तथा परिक्षा

सभी के लिए बराबरी तथा सामाजिक न्याय के साथ पहुँच को सनुश्चित करने तथा समाज को सभी पिछडे वर्गों तथा अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछढें वर्गों, मुस्लिम-महिलाओं/ किशोंरियों, ग्रामीण युवाओं, अधिकारहीन सामाजिक-धार्मिक समूदायों के समावेश तथा "मुख्यधारा विषयक" के लिए : बिहार सरकार द्वारा एक हस्तक्षेंप।

शीघ्रतम परिदान प्रणाली के साथ म लागत विकल्प:

1. BBOSE: तत्काल लाभ- बिहार के स्रातों का संरक्षण
2. परिपूर्ण परियोजना कार्यन्वयन के लिए NIOS को 20% (रु 65 लाख) दिए गये जिसमें रु 2.65 करोड़ हुनर फेज़ I (2008–2009) में निर्धारित किये गये थे।

हुनर फेज़ II में 50,000 की अनुमानित लागत के साथ रु. 10 करोड़ की कुल अनुमानित लागत। तथापि, फेज़ II में NIOS ने अपना रोल संकुचित कर दिया तथा शैक्षिक आगत प्रदान करने तक सीमित है। कार्यन्वयन से संबंधित सभी अन्य कार्यें BEPC द्वारा किये जायेगें। इसके लिए हुनर सेल स्थापित किया गया।

20% की कार्यन्वियन लागत जो कि रु 2 करोड़ है, NIOS को देने के स्थान पर हुनर सेल को हस्तांतरित किये जाने है, जिसने स्वयं को कार्यन्वयन से पूर्ण रूप से अलग कर लिया है, के साथ BBOSE केंद्रक में पदोन्नत है अगर हुनर विशेष सेल संसाधनों को प्रमुख

BBOSE के लाभ : अल्पावधिक

1. BBOSE राज्य में 200 से अधिक व्यक्तियों के लिए सर्वोदात्मक नियुक्तयों के लिए अवसर प्रदान करना।
2. किशोंरियों पर केंद्र बिंदु के साथ-सभी के लिए समानता के साथ सामाजिक न्याय, सार्वभौमिक अधिगम के लक्ष्य के साथ 50,000+ विद्यार्थियों के प्रारंभिक प्रथम वर्ष नामांकन के साथ देश में प्रथम मुक्त विद्यालय
3. अनुसुचित जाति, अनुसुचित जनजाति, आर्थिक रूप से पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक अलाभप्रद समूहो तक पहुचाने के लिए अनेक कार्यक्रम
4. समूहों को मुख्यधारा में लाने के लिए बढ़ावा देने के लिए नमन्शील विद्यालय प्रणाली के माध्यम से सर्व शिक्षा अभियान कि उपलब्धि करना।

5. मुक्त विद्यालय- सुरक्षा कवछ प्रकार्य के 14+ के लिए निरंतर शिक्षा प्रदान करने द्वारा RTE को परिष्टि करना।
6. माध्यमिक/उच्च माध्यमिक स्तरों पर नामांकन को बढ़वा देने तथा अवरोधन दरों को बढ़ाने तथा माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक शिक्षा के कार्यश्रेत्र के विस्तार के लिए RMSA के लक्ष्य प्राप्त करना।
7. जीवन सम्पन्नीकरण पाठ्यक्रमों तथा माध्यमिक स्तर पर निरंतर शिक्षा के लिए 14+ RTE के तहत सेतू पाठ्यक्रमों तथा रूबरू अधिगम के साथ मुक्त विद्यालय के अनेसार के लिए 6-14, आंगनवाड़ी कार्यकर्ताआ के लिए 0-6 सभी आयु समूहों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए पाठ्क्रमों को कोटि का विकास करना।
8. किशोरियों/महिलायों के लिए व्यवसायिक पाठ्क्रमों पर आधारित घरेलु तथा स्थानीय बाज़ार से प्ररेरित निर्धनता उन्मूलन में सहायता के लिए नये उंघोग प्रारम्भ करने द्वारा व्यवसायिक शिक्षा को बढ़वा देने जैसा हुनर परियोजना में किया गया।
9. कौशल पर आधारित परिक्षण के साथ शैक्षिक योग्यताओं के माध्यम से शिक्षा व्यवसायीकरण द्वारा 'शिक्षा में कार्य' की अवधारणा कर प्रारम्भ करना।
10. पूर्व-प्राथमिक (ECCE), बैसिक शिक्षा, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक व्यवसायिक शिक्षा, जीवन सम्पन्नीकरण जो बिहार की जनसंख्या की आवश्यकताओं कि पूर्ति करे- शैक्षिक और व्यवसायिक दोनों, स्तरों की दूरगामी आवश्यकताओं कि पूर्ति करना।

मुक्त विद्यालय के प्रारम्परिक लाभ

1. विस्तृत पंजीकरण-शिक्षा छोड़ कर जाने में कटौती
2. अधिगम की स्वतंत्रता- अधिगम की लचीली रफ्तार के साथ अधिगम केंद्र
3. विषयों के चयन की स्वतंत्रता
4. श्रेय संचयन तथा श्रेय स्थानान्तरण
5. परीक्षण की लचीली प्रणाली- मांग पर परीक्षण के विकल्प के साथ तनाव मुक्त
6. सुविधाजनक समय पर संचालित अध्ययने केंदों के माध्यम से अध्यापन
7. ICT अध्यानप समर्थन का उपयोग
8. सामाजिक, सांस्क्रतिक, चिकित्सीय, जीवन निर्वाह कारणों से विद्यालयों न जा सकने वालों के लिए आदर्श।

BBOSE : बिहार शैक्षिक प्रणाली की अप्राप्त कड़ी

1. केंद्रीय सरकार की बहुत सी योजनाऐं मुक्त विद्यालय के माध्यम से निर्धारित निधि की आवश्यकताओं को ध्यान में रखती हैं- CABE सीमित पने निश्चित किया है कि 15% विद्यार्थी मुक्त विद्यालय के माध्यम से आच्छादित किये जाने चाहियें।
2. RMSA में राज्यों में मुक्त विद्यालय के प्रचार के लिए प्रावधान है- बिहार यह निधि प्रावधान एक मुक्त विद्यालय की स्थानपा के द्वारा प्राप्त कर सकता है।
3. विद्यालय शिक्षा की समतल्य प्रणाली के रूप में BBOSE की स्थापना शिक्षा के ठोस विभागीकरण को नष्ट कर देगी तथा प्रणाली में सवेत्र क्षेतिज तथा लम्बवत गतिविधियों में सक्षम करना। तुल्यता:
   a. विषयों के चयन, अधिगम की गति, परीक्षा की आवृति तथा अगम्य समूहों

छात्र क्रियाकलाप

1. मुक्त विश्वविद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रम की चर्चा कीजिए?

2. बिहार बोर्ड ऑफ स्कूलिंग एंड एक्जामिनेशन प्रणाली क्या है?

तक पहुचने का बढावा देने में औपचारिक शिक्षा सहयोग देगी।

b. पारम्परिक शिक्षा प्रणाली जैसे मदरसा बोर्ड, संस्कृत विद्यापीठ समान मापदंडो की स्वीकृति का प्रचार करेगी।

c. व्यवसायिक शिक्षा कार्यक्रम शैक्षिक योग्यताओं के साथ कौशल उद्योग की समतुल्यता की स्वीकृति के माध्यम से बेहतर जीवन निर्वाह अवसर पैदा करेगा।

नोट

बिहार और BBOSE - कई प्राथमिकताएँ

1. मुक्त विद्यालय के माध्यम से RTE लागू कराने तथा राष्ट्र के लिए एक उदाहरण पेश करने में देश बिहार प्रथम राज्य होगा।
2. स्कूली घंटों से पूर्व तथा उपरान्त 'नियंत्रित अधिगम' प्रणाली से सरकारी विद्यालयों के व्यापक संजाल अध्यापकों द्वारा सुदूर शिक्षा के साथ तथा उसके बिना मुक्त अधिगम धारणा का उपयोग करने के लिए प्रथम मुक्त विद्यालय।
3. अल्पसंरख्यकों की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला एक मुक्त विद्यालय की स्थापना द्वारा सचर सीमित की सिफारिशों को गंभीरता से लागू कराने वाला प्रथम राज्य।
4. SRCs के मध्य किशोरी शिक्षा में सहायता करने के लिए देहलीज़ पर शिक्षा की अवधाारणा कर प्रसार करने के रूप में बिहार राज्य।
5. पारम्परिक शिक्षा प्रणाली सहित अन्य प्रणालीयों के साथ समतुल्यता समूदायों तथा सामाजिक समूहों के मध्य शिक्षा की पहुँच का विस्तार करेगी।
6. अन्य राज्य/देशों में प्रकृति के लिए बिहार BBOSE प्रतिरूप अगम्य

BBOSE के लिए बिहार सरकार से अपेक्षित समर्थन

1. सोसाइटी ऐट के तहत BBOSE के पंजीकरण तथा बिहार सरकार द्वारा अधिसूचना का प्रचालन (सभी तैयार दस्तावेज़)
2. '15' सरकारी अधिएकारी '3' वर्षों के लिए प्रतिनियुक्ति पर इनके व्यय मूल विभागों द्वारा उठाये जायेंगे।
   a. विश्वविद्यालयों, SCERT, बोर्ड आदि से आकादमिक साइट के लिए '5'
   b. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड विश्वविद्यालयों आदि से आंकलन/ मूल्यांकन पक्ष के लिए '5'
   c. BAS/BES आदि से प्रशासनिक पक्ष के लिए '5'
3. BEPC के बजट में प्रबंधन लागत के परोभाग से अथवा मुख्य मंत्री द्वारा 2 करोड़ का मुश्त पूजी अनुदान
4. BBOSE 15 जुलाई, 2010 से सक्रिय है तथा नानवीय मुख्य मंत्री उद्घाटन किया।

BBOSE को अक्टूबर 2010 में विधान सभा मतदान के समय हुनर चरण II के सत्र के लिए प्रथम जन परीक्षा के साथ मौलाना आज़ाद बोर्ड ऑफ ओपन स्कूलिंग तथा एक्ज़ामिनेशन का भी नाम दिया जा सकता है।

नोट

बहु-विकल्पीय प्रश्न

1. विश्व में सर्वप्रथम मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई–
   (अ) जापान में (ब) चीन में
   (स) संयुक्त राज्य अमेरिका में (द) ब्रिटेन में
2. आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई–
   (अ) 1960 (ब) 1982
   (स) 1985 (स) 1980
3. विश्वविद्यालयों का मुख्य कार्य है–
   (अ) ज्ञान प्रसार करना,
   (ब) ज्ञान का संचय करना,
   (स) उपरोक्त सभी
   (द) नवीन ज्ञान का संवर्धन
4. आधुनिक दूरवर्ती शिक्षा का शुभारम्भ हुआ–
   (अ) 1856 में (ब) 1830 में
   (स) 1840 में (द) 1890 में
5. महर्षि टण्डल मुक्त विश्वविद्यालय स्थित है–
   (अ) इलाहाबाद में (ब) हैदराबाद में
   (स) भोपाल में (द) बनारस में
6. ब्रिटेन में ओपिन विश्वविद्यालय की स्थापना हुई–
   (अ) 1982 में (ब) 1960 में
   (स) 1960 में (द) 1980 में
7. भारत में सर्वप्रथम मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई–
   (अ) इलाहाबाद में (ब) नई दिल्ली में
   (स) अहमदाबाद में (द) हैदराबाद में
8. दूरवर्ती राष्ट्रीय शिक्षा परिषद् की स्थापना हुई–
   (अ) 1990 में (ब) 1985 में
   (स) 1992 में (द) 1989 में
9. विश्व में दूरवर्ती शिक्षा विकास सर्व प्रथम हुआ–
   (अ) भारतीय संविधान की आवश्यकता की पूर्ति करना
   (ब) सभी को उच्च शिक्षा का अवसर देना
   (स) उपरोक्त सभी
   (द) उच्च शिक्षा का प्रसार एवं संवर्धन करना
10. विश्व में दूरवर्ती शिक्षा विकास सर्व प्रथम हुआ–
    (अ) चीन में (ब) भारतवर्ष में
    (स) जापान में (द) ब्रिटेन में

कुंजी–1. (द) 2. (ब) 3. (स) 4. (ब) 5. (अ) 6. (अ) 7. (अ) 8. (स) 9. (स) 10. (द)

लघु-उत्तरीय प्रश्न

नोट

1. इंग्लैण्ड में दूरवर्ती शिक्षा के विकास की समीक्षा कीजिए।
2. रूस में दूरवर्ती शिक्षा के विकास की समीक्षा कीजिए।
3. संयुक्त राज्य अमेरिका में दूरवर्ती शिक्षा का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
4. भारत में दूरवर्ती शिक्षा की समीक्षा दीजिए।
5. भारत में दूरवर्ती शिक्षा के विकास की समीक्षा दीजिए।
6. इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के विकास एवं पाठ्यक्रमों की समीक्षा दीजिए।

अधिगम अभ्यास

1. "इंग्लैण्ड में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना द्वारा सर्वप्रथम दूरवर्ती शिक्षा का प्रादुर्भाव हुआ" इस कथन की विवेचना कीजिए।
2. संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस एवं चीन में दूरवर्ती शिक्षा के विकास का वर्णन कीजिए।
3. भारत में दूरवर्ती शिक्षा के विकास की विवेचना कीजिए।
4. दूरवर्ती शिक्षा की उभरती प्रवृत्तियों का विस्तृत विवरण दीजिए।
5. भारत में मुक्त विश्वविद्यालयों का शुभारम्भ की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।
6. इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना एवं उसके स्वरूप एवं कार्यों का वर्णन कीजिए।

इकाई-3

नोट

दूरवर्ती-शिक्षा में हस्तक्षेप रणनीतियाँ

पाठ-संरचना

- दूरवर्ती शिक्षा में सूचना और संचार
- डिजाइनिंग और स्व-निर्देश सामग्री को तैयार करना

उद्देश्य एवं परिचय

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप निम्नलिखित निष्कर्षों की व्याख्या कर पाने में समर्थ हो सकेंगे–

- दूरवर्ती शिक्षा में सूचना और संचार की भूमिका
- दूरवर्ती शिक्षा में डिजाइनिंग और स्व-निर्देश सामग्री को तैयार कैसे करते हैं

दूरवर्ती शिक्षा में सूचना और संचार (Information and Communication Technology in Distance Education)

दूरवर्ती शिक्षा के विभिन्न माध्यम

अनुदेशात्मक माध्यम की शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया और शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति की दृष्टि से महत्वपूर्ण भूमिका तथा योगदान है। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने में माध्यमों का सार्थक उपयोग है। माध्यमों का उपयोग कक्षा-शिक्षण तथा दूरवर्ती शिक्षा दोनों में ही किया जाता है।

शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में शिक्षण विधि तथा शिक्षण माध्यम दोनों ही समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। शिक्षण विधियों का पाठ्य-वस्तु के प्रस्तुतीकरण और शिक्षण माध्यमों का पाठ्यवस्तु के सम्प्रेषण में प्रयोग किया जाता है। शिक्षा विधि का सम्बन्ध पाठ्यवस्तु तथा समय से होता है, और माध्यम का सम्बन्ध छात्र तथा शिक्षक की पारस्परिक दूरी से होता है। माध्यम के उपयोग से दूरी हेतु सुविधा प्रदान की जाती है। माध्यम से छात्रों के घर तक पहुँचा जाता है। आमने-सामने के शिक्षा में पाठ्यवस्तु के प्रभावशाली प्रस्तुतीकरण हेतु समुचित शिक्षण विधि यों का प्रयोग करते हैं। माध्यम के द्वारा शिक्षण विधि सम्मिलित होती है। दूरवर्ती शिक्षा में माध्यम तथा विधि दोनों ही समान रूप से उपयोगी होती हैं, जबकि कक्षा-शिक्षण में शिक्षण

विधि का उपयोग अधिक होता है। साधारणत: मुख्य माध्यम का प्रयोग किया जाता है।

दूरवर्ती-शिक्षण में मूलभूत में बहु-माध्यम प्रक्रिया का उपयोग किया जाता है। साधारणत: मुद्रित माध्यम को अधिक विश्वसनीय तथा उपयोगी माना जाता है। मुद्रित माध्यम को अन्य माध्यमों एवं प्रविधियों द्वारा पूरा किया जाता है। सहायक माध्यम के रूप में प्रयुक्त करते हैं। आज तकनीकी का युग है, इसलिये दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली में मुद्रित माध्यमों का उपयोग किया जाता है, जो मुद्रित माध्यमों की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली है। दूरवर्ती शिक्षण में प्रयुक्त किए जाने वाले माध्यमों को दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं-

नोट

1. मुद्रित अनुदेशात्मक माध्यम तथा
2. अमुद्रित अनुदेशात्मक माध्यम।

मुद्रित अनुदेशात्मक माध्यम का उपयोग पत्राचार शिक्षा में होता है। मुद्रित अनुदेशन पाठ्य-सामग्री को डाक द्वारा छात्रों तक पहुँचाई जाती है। इसे डाक-शिक्षा की भी संज्ञा दी जाती है।

अमुद्रित डाक-शिक्षा माध्यमों का प्रयोग दूरवर्ती-शिक्षण में किया जाता है, जिसमें रेडियों तथा दूरदर्शन का प्रयोग करते हैं। रेडियों तथा दूरदर्शन के प्रसारण द्वारा पाठ्यवस्तु का सम्प्रेषण किया जाता है।

मुद्रित पाठ्यवस्तु अथवा पाठ्य-पुस्तकों का प्रयोग साधारणत: सभी करते हैं यह सामान्य सम्प्रेषण का माध्यम है, परन्तु इसे पूर्ण माध्यम नहीं कह सकते हैं, क्योंकि इससे अधिक प्रभावशाली माध्यम विकसित किए जा चुके हैं, जिन्हें आधुनिक अमुद्रित-माध्यम अथवा तकनीकी माध्यम कहते हैं, जिनसे दूरवर्ती-छात्रों को सीखने की सुविधा दी जाती है। मुद्रित माध्यम की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली होते हैं तथा शिक्षा की दृष्टि से अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं, इनका उपयोग सहायक माध्यम के रूप में भी किया जाता है।

माध्यमों का उपयोग

दूरवर्ती-शिक्षा का प्रत्येक विशेषज्ञ माध्यमों को समन्वित करने का प्रयास करता हैं शिक्षा-नियोजन में यह निर्णय लिया जाता है, कि किस प्रकार के माध्यमों की व्यवस्था की जानी चाहिए। विविध माध्यम शिक्षा के अलग कार्यों के लिए उपयोग होते हैं। दूरवर्ती छात्र का शिक्षक से पारस्परिक सम्बन्ध नहीं हो पाता है, इसलिए दोनों प्रकार के माध्यम मुद्रित तथा अमुद्रित प्रयोग किए जाते हैं, जो व्यक्तिगत सम्पर्क की कमी को पूरा करते हैं, अतिरिक्त माध्यम का भी प्रयोग किया जाता है, जो पाठ्यवस्तु की बोधगम्यता में सहायक होता है।

दूरवर्ती-शिक्षा व्यावहारिक रूप में स्वामित्व माध्यम पर आधारित होती है। स्वामित्व माध्यम में कई-कई माध्यमों को सम्मिलित किया जाता हैं निर्देशन तथा परामर्श सेवाओं को भी प्रस्तुत किया जाता है। शिक्षण में आवश्यकताओं, उद्देश्यों, साधनों, पाठ्यवस्तु सामग्री की दृष्टि से अनेक माध्यमों को सम्मिलित किया जाता है। मिश्रित माध्यमों की प्रमुख विशेषतायें अधोलिखित हैं-

1. समन्वित माध्यम उपागम से शिक्षण की विविधता की पूर्ति होती है।
2. मुद्रित तथा अमुद्रित माध्यम उद्देश्यों की दृष्टि से एक-दूसरे के पूरक होते हैं।
3. विभिन्न माध्यम एक-दूसरे के सहायक होते हैं। सहायक प्रणाली दूरवर्ती-शिक्षा में महत्वपूर्ण होती है। सहायक माध्यमों को भी प्रयुक्त किया जाता है।

4. माध्यम स्वतन्त्र होते हैं, किसी एक माध्यम को पृथक् रूप में भी प्रयुक्त करते हैं। पत्राचार शिक्षा में मुद्रित माध्यम ही प्रयुक्त होता है।

नोट

समन्वित माध्यमों का उपयोग

समन्वित माध्यम उपागम के सम्बन्ध में निर्णय पाठ्क्रम स्तर भी किया जाता है, इसका अर्थ यह है कि अमुद्रित माध्यम का पूर्ण रूप से स्वामित्व माध्यम से समन्वय किया जाता है। मुद्रित माध्यम को अक्सर स्वामित्व माध्यम की संज्ञा दी जाती है। यदि माध्यमों के समन्वय को गणित के शब्दों में कहना चाहें तो कह सकते हैं कि 80 प्रतिशत अमुद्रित माध्यम प्रयुक्त होता है। पाठ के विकास तथा शिक्षण में दोनों ही समन्वित रूप से क्रियाशील होने चाहियें। समन्वित माध्यम को छात्र पसन्द करते हैं तथा ऐसा अनुभव करते हैं कि अमुद्रित माध्यम शिक्षण की विशष्ट विधि है, जिसे वे गम्भीरता से लेते हैं। दूरदर्शन पाठ्यवस्तु के सम्प्रेषण का माध्यम है, वे अप्रत्यक्ष रूप से भी देखते हैं। अमुद्रित माध्यमों पर आधारित गृह-कार्य तथा परीक्षा भी दी जाती है, इसके साथ दूरवर्ती छात्र सरलता से समायोजन कर लेते हैं, उन्हें अलग सं समय नहीं देना पड़ता है।

पूरक माध्यम के रूप में उपयोग

इस प्रकार के माध्यमों के उपयोग हेतु पाठ्यक्रम निर्माण के समय ही निर्णय लिया जाता है, कि सम्पूर्ण सूचनाओं का प्रसारण मुद्रित तथा अमुद्रित माध्यमों द्वारा किया जायेगा। उदाहरण हेतु प्रसारण में 70 प्रतिशत मुद्रित तथा 30 प्रतिशत अमुद्रित माध्यमों को प्रयुक्त किया जायेगा। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि दस पाठों में से सात पाठों का प्रसारण मुद्रित माध्यम से तीन पाठों का प्रसारण अमुद्रित माध्यमों द्वारा किया जायेगा। इस प्रकार पूरक माध्यमों का उपयोग विज्ञान तथा तंकनीकी विषयों के शिक्षण हेतु किया जाता है, क्योंकि इनकी पाठ्वस्तु सैद्धान्तिक तथा प्रयोगात्मक भी होती है। सैद्धान्तिक पाठ्वस्तु मुद्रित तथा प्रयोगात्मक अमुद्रित माध्यमों द्वारा प्रसारित की जाती है।

सहायक माध्यम के रूप में उपयोग

इस उपागम का मुख्य लक्ष्य छात्रों के अनुभवों को अधिक बोधगम्य बनाना है स्वामित्व माध्यम से शत-प्रतिशत मुद्रित माध्यम होता है, जिससे छात्रों को तथ्यों की सूचना प्रदान की जाती है, यदि इसी सूचना को अन्य माध्यमों से भी प्रसारित किया जाये; जैसे-सैद्धान्तिक अधि नियमों को किसी उदाहरण से दूरदर्शन पर प्रसारित किया जाए, तब दूरवर्ती-छात्रों को सिद्धान्त अधिक बोधगम्य होंगे। स्वास्थ्य तथा पोषण सम्बन्ध सिद्धान्तों के उदाहरण के चल-चित्रों द्वारा प्रसारित किया जाए, तब वे अधिक बोधगम्य कर लेंगे। प्रौढ़-शिक्षा के नियमों तथा जनसंख्या के नियमों को दूरदर्शन पर विशिष्ट उदाहरण से समझा जाता है।

स्वतन्त्र माध्यम के रूप में उपयोग

इस उपागम का अर्थ यह है कि मुद्रित माध्यम का उपयोग दूरवर्ती-शिक्षण से नहीं किया जाता है, अपितु शत-प्रतिशत अमुद्रित माध्यम का प्रयोग करते हैं। इसमें छात्र सुनकर, देखकर अपने नोट बनाता है। यह उपागम ऐसे समूह के लिये अधिक उपयोगी होता है, जो शिक्षित कम होते हैं अथवा अध्ययन की आदत नहीं होती है। पाठ्यवस्तु की प्रकृति में पूर्ण रूप में प्रयोगात्मक प्रशिक्षण ही दिया जाता है। दूरदर्शन पर कृषि कार्यक्रम, महिलाओं हेतु नये-नये

पकवान तथा क्राफ्ट के कार्यक्रम दिए जाते हैं, इनमें मुद्रित माध्यम का उपयोग नहीं किया जाता है।

मुद्रित अनुदेशनात्मक माध्यम की कमियाँ

नोट

अतीत काल से मुद्रित अनुदेशनात्मक माध्यम अधिगम की सुविधा की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। दूरवर्ती-शिक्षा में भी इसका महत्व कम नहीं हुआ है। इस माध्यम का उपयोग विभिन्न अधिगम वातावरण में किया जाता है, अपेक्षाकृत यह माध्यम मितव्यय तथा सरल है, परन्तु शिक्षण की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है, इसकी अपनी सीमायें भी हैं। इस माध्यम की सहायता से कौशल का विकास भी नहीं किया जा सकता है, इसके द्वारा तथ्यों की जानकारी ही प्रदान की जाती है। भावात्मक गुणों का विकास भी होता है। इसके अतिरिक्त कुछ और भी सीमायें हैं;, जैसे-

1. मुद्रित-माध्यम के द्वारा छात्र तथा शिक्षक के मध्य तत्काल अन्त:प्रक्रिया नहीं होती है।
2. मुद्रित-माध्यम के छात्र को तत्पर नहीं रखा जाता है। छात्र अधिक रुचि नहीं लेते हैं।
3. मुद्रित-माध्यम में तुरन्त पृष्ठ-पोषण तथा पुनर्बलन नहीं मिलता है, क्योंकि छात्र-शिक्षक में पारस्परिक सम्बन्ध नहीं होते हैं।
4. मुद्रित-माध्यम में छात्रों की व्यक्तिगत भिन्नताओं के अनुसार सीखने की सुविधा नहीं दी जाती है।
5. मुद्रित-माध्यम से प्रशिक्षण तथा कौशलों का विकास नहीं किया जा सकता है।
6. मुद्रित-माध्यम में शिक्षण विधियों एवं प्रवधियों को प्रयुक्त नहीं किया जाता, अपितु तथ्यों की जानकारी पर ही बल दिया जाता है।

अमुद्रित-माध्यम की विशेषतायें

मुद्रित-माध्यम की उक्त सीमाओं को ध्यान में रखते हुए दूरवर्ती-शिक्षा में अमुद्रित-माध्यमों का भविष्य में अधिक उपयोग किया जायेगा, जो तकनीकी का विकास है, उन माध्यमों का उपयोग दूरवर्ती-शिक्षा में तेजी से बढ़ेगा। शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत शिक्षण विधियों के सम्प्रेषण माध्यमों अनुदेशन-अधिगम प्रणाली में विकास प्रवृत्ति पाई जाती हैं तकनीकी माध्यमों का जनसाधारण के लिए महत्व अधिक हो गया है। अमुद्रित माध्यम की प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं-

1. **विविध अधिगम उद्देश्यों के प्राप्ति में सहायक हैं:** दूरवर्ती-शिक्षण में आमने-सामने शाब्दिक-सम्प्रेषण की अपेक्षा अन्य माध्यमों का उपयोग आवश्यक हो गया है, क्योंकि अधिगम उद्देश्यों में विविधता अधिक पाई जाती है। मुद्रित-माध्यम के द्वारा सभी उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती है।
2. **विशष्ट-अधिगम क्रियाओं में सार्थक योगदान है:** कुछ विशष्ट अमुद्रित माध्यम के प्रारूप दूरवर्ती-छात्रों के अधिगम हेतु अधिक प्रभावशाली होते हैं श्रव्य टेप, कम्प्यूटर का प्रयोग अभ्यास तथा कौशल के विकास के लिए अधिक उपयोग होते हैं। चल-चित्र तथा अन्य तकनीकी माध्यम भौतिक विज्ञान विषय के शिक्षण में उपयोगी हैं सिद्धान्तों, नियमों में सम्बन्ध को समझने में भी सहायक होते हैं; श्रव्य सामग्री द्वारा सामाजिक विषयों का शिक्षा प्रभावी ढंग से किया जाता हैं छात्रों को

नोट

चलचित्रों की सहायता से अभिप्रेरित भी किया जाता है।

3. छात्रों को मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरणा दी जाती है, तकनीकी माध्यमों से छात्रों को मनोवैज्ञानिक रूप से अभिप्रेरित किया जाता है, जिससे अधिगम क्रिया प्रभावशाली होती है। अधिगम सम्बन्धी कई क्रियायें-ध्यान केन्द्रित करना, अभिप्रेरित करना, तार्किक क्षमताओं को विकसित करने को बढ़ा मिलता है। अमुद्रित-माध्यम, मुद्रित-माध्यम से अधिक प्रभावशाली होता है।

   अमुद्रित माध्यमों के उपयोग से छात्रों में कल्पना शक्ति, अभिरुचि तथा नवीन साहित्य के प्रति रुझान होती है। मुद्रित-माध्यम इस दिशा में अवरोध उत्पन्न करता है। अनौपचारिक शिक्षा में दूरदर्शन के उपयोग से छात्रों को प्रोत्साहन मिलता है।

4. **दूरवर्ती-छात्रों को अध्ययन के प्रति लगन पैदा होती है:** अनेक शोध अध्ययन में अमुद्रित-माध्यमों द्वारा अध्ययन के प्रति लगन उत्पन्न होती है और उन्हें सीखने में सुगमता मिलती है। परम्परागत पुस्तकों से छात्रों में लगातार तत्परता नहीं होती है, और उन्हें कोई पुनर्बलन भी नहीं मिलता। तकनीकी माध्यमों में छात्रों में तत्परता और अध्ययन के प्रति लगातार लगन उत्पन्न होती है। लुमसडैन (1958) ने अध्ययन द्वारा पाया कि अमुद्रित माध्यमों से प्रशिक्षण तथा कौशलों के विकास के लिए अभ्यास का अवसर अधिक मिलता है। मौखिक अनुक्रिया से सीखने में अधिक सहायता मिलती है। चल-चित्रों में मौखिक अनुक्रिया को ही अधिक अवसर मिलता है। आन्तरिक अनुक्रिया से पुनरावृत्ति तथा विशष्ट बिन्दुओं को समझने हेतु प्रभावशाली होते हैं। चल-चित्रों द्वारा तथा दृश्य कैसिट के वाद-विवाद कार्यक्रम से भी अधिगम में वृद्धि होती है।

5. **दूरवर्ती-छात्रों की एकाग्रता में वृद्धि होती है:** तकनीकी अमुद्रित माध्यमों द्वारा अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण तथा सम्प्रेषण के प्रति छात्रों की एकाग्रता में वृद्धि होती है। कक्षा-शिक्षण की अपेक्षा दूरदर्शन द्वारा अनुदेशन के प्रति एकाग्रता अधिक होती है। माध्यमाक द्वारा अनुदेशन के स्वरूप के प्रस्तुतीकरण में उद्देश्यों को भली-भाँति परिभाषित किया जाता है, अनुदेशन द्वारा समुचित वातावरण उत्पन्न किया जाता है, जिससे उद्देश्यों को परिभाषित किया जाता है, परन्तु समुचित वातावरण उत्पन्न नहीं किया जाता, जिससे उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके। तकनीकी माध्यमों की सहायता से समुचित वातावरण उत्पन्न किया जाता है, जिससे छात्रों की एकाग्रता में वृद्धि होती है, और उसमें वे अधिक क्रियाशील रहते हैं।

6. **व्यक्तिगत छात्रों की आवश्यकता को भी ध्यान में रखा जाता है:** अमुद्रित माध्यम अपेक्षाकृत लचीला अधिक होता है। जिससे छात्रों की आवश्यकताओं, अभिरुचियों को भी महत्व दिया जाता है। व्यक्तिगत अनुदेशन सामग्री की भी रचना की जाने लगी है। विविध प्रकार के माध्यमों द्वारा इस प्रणाली को लचीला बनाया जाता है, और छात्रों को उनके अनुरूप सीखने का अवसर दिया जाता है। अभिक्रमित अनुदेशन सामग्री द्वारा प्रत्येक छात्र को अपने अनुसार सीखने का अवसर दिया जाता है, यह सुविधा परम्परागत पुस्तकों में तथा कक्षा-शिक्षण में नहीं होती है।

7. **दूरवर्ती छात्र अपनी उपलब्धियों का निरीक्षण या जाँच भी करता है:** कुछ माध्यमों में ऐसी व्यवस्था की जाती है, कि छात्र अधिगम के साथ अपने सीखने

की अनुक्रियाओं की जाँच भी साथ-साथ करता है, जिससे उन्हें पुनर्बलन भी मिलता है। साथ ही उनकी गलतियों के लिए सुधारात्मक अनुदेशन सामग्री भी दी जाती है। छात्रों को अपने सीखने की पूरी स्वतंत्रता दी जाती है।

नोट

8. **शिक्षक की भूमिका निर्वाह का अवसर दिया जाता है:** अमुद्रित माध्यमों के शिक्षकों को भी अपनी भूमिका निर्वाह का अवसर दिया जाता है। दूरवर्ती शिक्षा में सहायक प्रणाली के अन्तर्गत व्यक्ति सम्पर्क कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। छात्र शिक्षकों के सम्पर्क करके अपनी कठिनाईयों का निवारण तथा स्पष्टीकरण भी करते हैं। माध्यमों की उपयोगिता में शिक्षक अधिगम परिस्थितियों की व्यवस्था करता है। शिक्षक छात्रों की कठिनाइयों का निदान करके अपनी समस्याओं हेतु परामर्श तथा निर्देशन की भी व्यवस्था करता है।

दूरवर्ती शिक्षा में सम्प्रेषण

सम्प्रेषण का अर्थ है परस्पर व्यक्तियों में विचारों, सूचनाओं, अभिव्यक्तियों का आदान-प्रदान करना जैसा कि एडगर डेल महोदय ने परिभाषित किया है–

1. "सम्प्रेषण का अर्थ है, परस्पर सूचनाओं तथा विचारों का आदान-प्रदान करना।"
- *"Communication is the sharing of ideas and feelings in a mood of mutuality."*

इस प्रकार सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति विचारों, सूचनाओं एवं अभिव्यक्तियों का आदान-प्रदान करता है। "विचार-विनिमय के मूड में विचारों तथा भावनाओं को परस्पर जानने तथा समझने की प्रक्रिया सम्प्रेषण कहलाती है।"

1. **अमेरिकन कॉलेज डिक्शनरी के अनुसार:** "सम्प्रेषण विचारों सलाहों अंथवा सूचनाओं का परस्पर आदान-प्रदान है जो प्रवचन, लेखन अथवा प्रतीकों द्वारा सम्पन्न होता है।"
2. **लीगन्स के अनुसार:** "सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य विचारों, तथ्यों, अनभवों तथा व्यक्तिगं अनुमानों का परस्पर इस प्रकार आदान-प्रदान किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति को एक जैसा अथवा उभयनिष्ट सूझ-बूझ का सन्देश प्राप्त होता है।"
3. **हालेण्ड के अनुसार:** "सम्प्रेषण वह शक्ति है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति विशेष सम्प्रेषक, उद्दीपकों को इस प्रकार प्रषित करता है कि वह दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार को भी परिमार्जित कर देता है।"
4. **ब्रोकर (1949) के अनुसार:** "सम्प्रेषण वह समस्त क्रिया हो सकती है जिसके द्वारा कोई आशय या सन्देश एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाया जाता है।"
5. **वारेन एवं वेवर के अनुसार:** "वे क्रियाविधियाँ जिनके द्वारा एक मस्तिष्क दूसरे मस्तिष्क को प्रभावित करता है, सम्प्रेषण कहलाती है।"
6. **लूगिस एवं बीगले के अनुसार:** "सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसमें सूचना, निर्णय एवं निर्देश किसी सामाजिक तन्त्र द्वारा प्रदान किए जाते हैं तथा उसी के द्वारा ज्ञान-विचारों एवं मानवीय अभिवृत्तियों का निर्माण एवं परिमार्जन भी किया जाता है।"
7. **जिस्ट के अनुसार:** "जब किसी सामाजिक अन्त:क्रिया के अन्तर्गत प्रतीकों के

नोट

माध्यम से किसी आशय या अधिगम को प्रषित करने का प्रयास किया जाता है तो उसे सम्प्रेषण कहते हैं।"

8. **हार्टमैन (1966) के अनुसार:** "सम्प्रेषण एक प्रकार का नियन्त्रित व्यवहार है, जो वर्णनात्मक एवं पुनर्बलन, उद्दीपकों के द्वारा सम्पादित होता है।"
9. **हावलैण्ड (1964) के अनुसार:** "सम्प्रेषण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति विशेष, सम्प्रेषक किसी दूसरे व्यक्ति विशेष सम्प्रेषक के व्यवहार को सामान्यत: शाब्दिक प्रतीकों द्वारा परिमार्जित करता है।"
10. **स्टीवेन्स (1942) के अनुसार:** "सम्प्रेषण किसी प्राणी की वह विभेदक अनुक्रिया है जो वह किसी उद्दीपक के प्रति करता है।"

इस प्रकार सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति विचारों, सूचनाओं एवं अभिव्यक्तियों का आदान-प्रदान करता है।

"विचार-विनिमय के मूड में विचारों तथा भावनाओं को परस्पर जानने तथा समझने की प्रक्रिया सम्प्रेषण कहलाती है।"

सम्प्रेषण के प्रकार

मानवीय जीवन के दैनिक कार्यक्रमों के सूक्ष्म अवलोकन से सम्प्रेषण व्यवहार की प्रकृति, प्रकारता एवं उनकी मानव जीवन के साथ व्याप्त घनिष्ठता की अनुभूति की जा सकती है। उदाहरणार्थ, हम अपने प्रात:कालीन जागरण से लेकर रात्रिकालीन विश्राम की अवधि के मध्य घटित समस्त व्यवहारों परिस्थितियों एवं घटनाओं का सूक्ष्मता से विश्लेषण करने पर सम्प्रेषण व्यवहार की प्रकृति के आधार पर सम्प्रेषण व्यवहार की निम्नांकित प्रकारताओं का निर्धारण कर सकतें हैं–ऐसे सम्प्रेषण व्यवहार जो स्वयं के साथ सम्पादित होते हैं, उन्हें हम अन्त:वैयक्तिक सम्प्रेषण कहते हैं। इस प्रकार के सम्प्रेषण बिना किसी हस्तक्षेप के निरन्तर, सर्वत्र, समस्त परिस्थितियों में होते रहते हैं क्योंकि यह व्यक्ति विशेष के मानसिक अवस्थाओं में सम्पन्न होता है। वे सम्प्रेषण व्यवहार जिनमें हम अपने विचारों, भावों को दूसरे मनुष्य तक सम्प्रेषित करते हैं उसे अन्तर वैयक्तिक सम्प्रेषण कहते हैं। इसमें सम्प्रेषण कम से कम दो व्यक्तियों के मध्य होता है। इसी प्रकार वे सम्प्रेषण व्यवहार जिनमें ऐसे विभिन्न व्यक्तियों की सहभागिता होती है, जो मात्र व्यावसायिक दृष्टि से एक-दूसरे से सम्बन्धित होते हैं तथा उनकी परस्पर शिक्षा स्तर एवं आयु में भिन्नता हो सकती है, को हम समूह स्म्प्रेक्षण कहते हैं। सायंकालीन परिचर्चाओं में सम्मिलित विभिन्न व्यवस्थाओं, आर्थिक स्तरों पर बौद्धिक वर्गों के व्यक्तियों के मध्य सम्पन व्यवहार को सामाजिक सम्प्रेषण कहते हैं।

इस प्रकार उपरोक्त समस्त सम्प्रेषण व्यवहार मानवीय जीवन के लगभग समस्त दैनिक कार्यक्रमों में परिलक्षित होते रहते हैं क्योंकि सामाजिक जीवन का अस्तित्व मानवीय सभ्यता के विकास के आदिकाल से लेकर वर्तमान आधुनिक काल तक के इन्हीं मानवीय सम्प्रेषण व्यवहारों पर आधारित है।

सम्प्रेषण के विभिन्न प्रकारों को निम्नलिखित रूप में सारणीबद्ध किया जा सकता है–

नोट

शैक्षिक सम्प्रेषण		जनसंचार माध्यम	
शाब्दिक सम्प्रेषण	अशाब्दिक सम्प्रेषण	मुद्रित सामग्री या Software Accessories	अमुद्रित सामग्री या Hardware Accessories
(अ) मौखिक सम्प्रेषण	(अ) वाणी संकेत	(अ) स्व-अनुदेशित सामग्री	(अ) श्रव्य साधन रेडियो, टेप रिकॉर्डर
(ब) लिखित सम्प्रेषण	(ब)चक्षु सम्पर्क एवं मुख मुद्राएँ (स) स्पर्श सम्पर्क	(अ) अन्य सामग्री जैसे–	(ब) दृश्य साधन
		समाचार-पत्र जर्नल या शोध पत्रिकाएँ वर्क बुक शब्दकोष इनसाइक्लोपीडिया एटलस पुस्तकें हैन्डआउट	स्लाइड प्रोजेक्टर फिल्म स्ट्रिप प्रोजेक्टर ओवरपहेड प्रोजेक्टर एपीस्कोप प्रोजेक्टर एपीडाइस्कोप प्रोजेक्टर (स) श्रव्य-दृश्य साधन टेलीविजन कम्प्यूटर वीडियो डिस्क विडियो टेक्सट टेलीकॉन्फ्रेंसिंग

संवेगात्मक स्थिति की अभिव्यक्तियों में छात्रों की मुख्य-मुद्राएँ बहुत अहम भूमिका निभाती हैं; जैसे–भय, क्रोध, शोक, आश्चर्य। गूँगे-बहरे व्यक्तियों के लिए यह सम्प्रेषण अत्यन्त उपयोगी है।

कुछ प्रमुख सम्प्रेषण तकनीकों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है–

शाब्दिक सम्प्रेषण

इसमें सदैव भाषा का प्रयोग किया जाता है। यह दो प्रकार का होता है।

1. **मौखिक सम्प्रेषण:** इसमें बोलकर तथ्यों एवं सूचनाओं का आदान-प्रदान किया जाता है। उदाहरणार्थ–वार्ता, व्याख्या, परिचर्चा, सामूहिक चर्चा, प्रश्नोत्तर, कहानी आदि।
2. **लिखित सम्प्रेषण:** इसमें लिखित रूप में शब्दों या संकेतों के द्वारा सन्देश प्रसारित किये जाते हैं। अत: लिखित भाषा सरल, सुगम व बोधगम्य होनी चाहिए।

अशाब्दिक सम्प्रेषण

इसमें भाषा का प्रयोग नहीं किया जाता। यह तीन प्रकार का होता है।

1. **वाणी संकेत:** विचारों तथा भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए हाँ-हाँ, हूँ-हूँ, सीटी बजाना, मुस्कुराना, चीखना, जोर से रोना, ठहाके लगाना आदि वाणी संकेतों का प्रयोग किया जाता है।
2. **चक्षु सम्पर्क एवं मुख मुद्राएँ:** चक्षु सम्पर्क के द्वारा शिक्षक अपने छात्रों की मन:स्थिति का सही अंदाजा लगाने में सफल होते हैं।

नोट

3. **स्पर्श सम्पर्क:** स्पर्श के माध्यम से व्यक्ति अपनी भावनाओं एवं विचारों को अभिव्यक्त करने में समर्थ होंते हैं। माँ के हाथ का एकमात्र स्पर्श, प्रशंसा की एक शाबाशी, हाथ मिलाना आदि महत्वपूर्ण साधन हैं। दृष्टिहीन छात्रों के लिए यह बड़ा वरदान सिद्ध हुआ है।

जनसंचार माध्यम

जनसंचार माध्यम ऐसे संचार यन्त्र हैं, जिनके द्वारा एक ही समाचार अथवा सन्देश को एक बड़े जनमानस तक, जो बहुत दूर-दूर रहते हैं, एक ही समय में एक साथ एवं आसानी से पहुँचाया जा सकता है।

मुद्रित सामग्री

पत्राचार शिक्षा संस्थाएँ अनुदेशन के लिए अधिकतर मुद्रित सामग्री पर ही निर्भर रहती हैं, जो डाक द्वारा छात्रों तक पहुँचाई जाती है। इसे डाक शिक्षा भी कहते हैं।

1. **स्व-अनुदेशित सामग्री:** आजकल दूरस्थ शैक्षिक संस्थानों में स्व-अनुदेशित सामग्री का प्रयोग मुद्रित सामग्री के रूप में प्रमुखता के साथ किया जाने लगा है। प्रत्येक कोर्स के लिए विभिन्न विशेषज्ञों द्वारा ये सामग्री छात्रों की आवश्यकताओं, उनकी आयु तथा उनके स्तरों के अनुरूप तैयार की जाती हैं। छात्र घर पर रह कर ही इस सामग्री को सरलता में समझ लेते हैं।
2. **अन्य सामग्री:** अन्य सामग्री के अन्तर्गत निम्नलिखित वर्णित हैं–
   a. *समाचार-पत्र:* इनमें विभिन्न विषयों पर लेख तथा कथाएँ प्रकाशित होती हैं, जिससे छात्रों को नवीन ज्ञान प्राप्त होता है।
   b. *जर्नल या शोध पत्रिकाएँ:* इनके द्वारा व्यक्ति अपने विषय के सम्बन्ध में नवीनतम खोजों के बारे में विस्तृत विवरण प्राप्त करता है।
   c. *वर्क-बुक:* इसमें छात्रों के अभ्यास करने के लिए विभिन्न कार्य दिये गये होते हैं, जिन्हें करने के पश्चात् छात्र उन कार्यों में दक्षता प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।
   d. *शब्दकोष:* ये वास्तव में 'गागर में सागर' का काम करते हैं क्योंकि इसमें शब्दों के अर्थ, पर्यायवाची, विलोम आदि अनेक जानकारियाँ होती हैं।
   e. *इनसाइक्लोपीडिया:* ये सन्दर्भ ग्रन्थ नवीनतम सूचनाएँ प्रदान करते हैं तथा विभिन्न सिद्धान्तों के उद्‌भव, विकास, शोध-कार्य आदि पर पूर्व ज्ञान प्रदान होता है।
   f. *एटलस:* भूगोल का यह एक प्रकार से शब्दकोष होता है, जिससे विभिन्न स्थानों के नाम, पहाड़, नदियाँ, समुद्र आदि के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है।
   g. *पुस्तकें:* पुस्तक भी मुद्रित सामग्री है, जिसका प्रयोग शिक्षक विभिन्न प्रकार से कक्षा शिक्षण में करता है।
   7. *हैण्डआउट:* विभिन्न प्रशिक्षण संस्थाओं द्वारा विभिन्न पक्षों का हैण्डआउट का निर्माण किया जाता है। इनमें किसी विषय पर गहराई के साथ गहन स्तर पर विषय सामग्री दी जाती है।

छात्र क्रियाकलाप

1. दूरवर्ती शिक्षा में सम्प्रेषण का अर्थ बतायें?

2. दूरवर्ती शिक्षा में सूचना और संचार क्या है? बतायें।

अमुद्रित माध्यम

नोट

भारतवर्ष में जनसंख्या वृद्धि की गति बहुत तेजी से बढ़ रही है। 'सबके लिए शिक्षा' की माँग आज परम्परागत शिक्षा-प्रणाली पूरा करने में असमर्थ सिद्ध हो रही हे। फलस्वरूप मुक्त विश्वविद्यालयों का जन्म हुआ। ये मुद्रित माध्यम के साथ-साथ अमुद्रित माध्यमों का प्रयोग प्रभावशाली ढंग से करने में लगे हुए हैं। अमुद्रित माध्यम से अभिप्राय उन इलेक्ट्रॉनिक साधनों से है जो शिक्षण क्रियाओं की प्रभावशीलता में वृद्धि करते हैं।

1. **श्रव्य साधन:** इनमें आवाज के द्वारा समस्त सूचनाएँ प्रदान की जाती हैं, जो सुनने वालों की कल्पना-शक्ति को उद्दीप्त करती हैं; जैसे–
   a. रेडियो,
   b. टेपरिकॉर्डर
2. **दृश्य साधन:** दृश्य साधनों के रूप में वर्णित हैं–
   a. स्लाइड प्रोजेक्टर
   b. फिल्म स्ट्रिप प्रोजेक्टर
   c. ओवरहेड प्रोजेक्टर
   d. एपीडाइस्कोप प्रोजक्टर
3. **श्रव्य-दृश्य साधन:** श्रव्य-दृश्य साधनों के अन्तर्गत वर्णित हैं–
   a. टेलीविजन
   b. कम्प्यूटर
   c. वीडियो टैक्स्ट
   d. वीडियो डिस्क
   e. टेलीकॉन्फ्रेंसिंग

सम्प्रेषण-प्रक्रिया के घटक

विज्ञान के क्षेत्र में हुई प्रगति एवं यान्त्रिकी तकनीकी के विकास ने सम्प्रेषण के स्वरूपों एवं पद्धतियों का विशिष्टीकरण कर दिया है। रेडियो, टी०वी०, चलचित्र एवं दूरभाष आदि ने सम्प्रेषण को विविध प्रकार की नवीनता प्रदान की है। इसके पूर्व सम्प्रेषण मुख्यतया मौखिक या शाब्दिक होता था क्योंकि सम्प्रेषित करने वाले तथा सम्प्रेषित होने वाले दो व्यक्ति आमने-सामने सम्पर्क में रहते थे। परन्तु समाज की वर्तमान जटिलता, मनुष्य की असीमित आवश्यकताओं एवं आधुनिकतम यान्त्रिकी के उपयोग से प्रक्रिया अत्यन्त जटिल तथा लगभग पूर्णतः अप्रत्यक्ष हो गयी है। इस प्रकार वर्तमान सम्प्रेषण प्रक्रिया बिना निकटता स्थापित किये अथवा परस्पर सान्निध्य के होने लगी है। आज की आधुनिकतम जटिल सम्प्रेषण प्रक्रिया में पाँच घटक सम्मिलित हैं।

स्रोत

सम्प्रेषण प्रक्रिया में सम्प्रेषण के स्रोत के रूप में कोई भी व्यक्ति (जो बोल रहा हो, चित्रकारी कर रहा हो, संकेत दे रहा हो) या कोई अन्य संस्था; जैसे–प्रशासनिक, कार्यकाल या आल इंडिया रेडियो, टी०वी० स्टूडियो, वाणिज्य केन्द्र जैसे बैंक, इण्डियन एक्सप्रेस जैसी समाचार पत्र आदि संस्थाएँ भी हो सकती हैं। कक्षा शिक्षण भी अवधि में अथवा कार्य में शिक्षक की भूमिका भी स्रोत के समान होती है।

इनकोडिंग सूत्रीकरण

सम्प्रेषण को गन्तव्य स्थान या ग्रहीता तक पहुँचाने के लिए स्रोत द्वारा प्राप्त सन्देश के इनकोडिंग अर्थात् सांकेतिक स्वरूप का उपयोग किया जाता है। ग्रहीता तक समय से सन्देश पहुँचाने तथा मनोवांछित प्रभाव डालने के लिए सम्प्रेषक अथवा व्यक्ति द्वारा उपयुक्त संकेतों अथवा इसके इनकोडिंग स्वरूप का उपयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया में यह ध्यान रखा जाता है कि सम्प्रेषक अपने सम्प्रेषण व्यवहार में इन्हीं उदाहरणों से भावों का सम्प्रेषण करे जिसे श्रोता अथवा ग्रहीता अथवा सम्प्रेषी सरलता से उसी रूप में अथवा अभिप्राय में ग्रहण कर सके।

नोट

सिगनल संकेत

इनकोड किया हुआ या सांकेतिक रूप में सम्प्रेषित किया हुआ सम्प्रेषण व्यवहार विविध संकेतों के रूप में श्रोता या ग्रहिता तक पहुँचता है जैसे .....डॉट या --डैश के रूप में या दृश्य चित्र के रूप में या प्रकाश अर्थात् जिन संकेतकों या सम्प्रेषण व्यवहार में चयन एवं निधरिण किया गया हो, के द्वारा इनकोड किया हुआ सम्प्रेषण श्रोता-अथवा ग्रहीता तक पहुँचता है।

डिकोडिंग संकेत

जब पूर्व चयनित एवं निर्धारित संकेतों के द्वारा इनकोड किया हुआ सम्प्रेषण स्रोत अथवा ग्रहीती तक पहुँचता है तो वह उसका डिकोडिंग करता है अथवा उसे शाब्दिक या लिपीय स्वरूप प्रदान करता है परन्तु श्रोता अथवा सम्प्रेषी किसी संकेत को डिकोड नहीं कर पाता है तो ऐसी स्थिति में सम्प्रेषण प्रक्रिया निष्प्रभावी हो जाती है जैसे-सम्प्रेषक किसी वस्तु की विशालता का भावात्मक रूप स्पष्ट करने के लिए उसकी तुलना हेतु हाथी जैसे जानवर का इनकोडिंग के रूप में प्रयोग करता है परन्तु डिकोडिं करने वाला श्रोता अथवा ग्रहीता व्यक्ति ने हाथी न देखा हो या न जानता हो तो केवल हाथी जैसा विशाल जानवर सम्प्रेषित कर देने मात्र से उस वस्तु की विशालता का अनुमान डिकोडर अथवा श्रोता नहीं लगा सकता है। अत: सफल एवं प्रभावी सम्प्रेषण प्रक्रिया के लिए अनिवार्य है कि इनकोड के संकेतों को श्रोता सही ढंग से डिकोडिंग कर सके।

डेस्टीनेशन गंतव्य

सम्प्रेषण प्रक्रिया का अन्तिम घटक सन्देश को गन्तव्य स्थान या ग्रहीता तक शत-प्रतिशत शुद्धता के साथ पहुँचाना है। यह भी कोई व्यक्ति, संस्था, प्रशासनिक कार्यालय, वाणिज्य केन्द्र अथवा जनसामान्य हो सकता है। संकेतों का सरलीकरण या लिपीकरण करने वाला व्यक्ति ही किसी सन्देश को गन्तव्य तक पहुँचाता है। यदि सम्प्रेषी या श्रोता या ग्रहीता संकेतों का लिपिकरण एवं सरलीकरण शत-प्रतिशत शुद्धता के साथ नहीं कर पाता है तो निश्चित ही वास्तविक गंतव्य या सन्देश ग्रहीता तक नहीं पहुँच सकेगा। इन परिस्थितियों में सम्प्रेषण प्रक्रिया सम्भव नहीं होती।

अत: सफल सम्प्रेषण प्रक्रिया के सम्पादन हेतु उपरोक्त पाँचों तत्वों की भूमिका का समग्र रूप में सही ढंग से सम्पन्न होना आवश्यक है, क्योंकि यदि वह व्यक्ति जो स्रोत है उसे ही विषय-वस्तु का पूर्ण ज्ञान नहीं है वह सन्देश मन्तव्य की इनकोडिंग सही रूप में नहीं कर सकेगा। फलत: संकेतक सही रूप में श्रोता या डिकोडर या ग्रहीता तक नहीं पहुँच सकेगा और यदि श्रोता की डिकोडिंग सही नहीं होगी तो वास्तविक मन्तव्य/संदेश गन्तव्य या ग्रहीता तक

सही रूप में नहीं पहुँच पाएगा और सम्प्रेषण प्रक्रिया जिस आशय या अभिप्राय को सम्प्रेषी तक पहुँचाना चाहती है वह उस तक नहीं पहुँच पायेगा। इस प्रकार सही सम्प्रेषण सम्भव नहीं हो सकेगा।

नोट

प्रक्रिया या तत्व

इस प्रक्रिया के चार तत्व होते हैं–

1. **सन्देश भेजने वाला:** व्यक्ति, शिक्षक या घटना, जो शाब्दिक या अशाब्दिक, संकेत प्रदान करते हैं, सन्देश स्रोत कहलाते हैं। जब यह स्रोत व्यक्ति होता है तो इसे सन्देश भेजने वाला कहते हैं। सन्देश स्रोत की विषयवस्तु निर्धारित करता है, लिखता है तथा प्रसारित करता है।
2. **सन्देश:** सन्देश एक उद्दीपक होता है, जो मौखिक या लिखित संकेतों के रूप में तथा व्यक्ति की मुखमुद्रा या हावभाव के रूप में हो सकता है।
3. **सम्प्रेषण का माध्यम:** वह साधन जिसके द्वारा कोई सन्देश, सन्देश-स्रोत से ग्रहणकर्त्ता तक पहुँचता है, सम्प्रेषण का माध्यम कहलाता है। माध्यम प्रत्यक्षीकरण की संवेदनाएँ होती हैं जो दिखने वाली, सुनने वाली, स्पर्श करने वाली, स्वाद बताने वाली, गंध वाली हो सकती हैं। सम्प्रेषण का माध्यम वह पथ है जिसमें सन्देश भौतिक रूप से प्रेषित किया जाता है; जैसे–तार, रेडियो, समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ, पुस्तकें आदि।
4. **सन्देश ग्रहणकर्त्ता:** सन्देश ग्रहणकर्त्ता वह व्यक्ति है जो सम्प्रेषण की प्रक्रिया से सन्देश प्राप्त करता है; जैसे–श्रोता, दर्शक, छात्र, पत्रिकाओं के पाठक आदि।

दूरवर्ती-शिक्षण का सम्प्रेषण सिद्धान्त

इस सिद्धान्त का सम्बन्ध शिक्षण प्रभावशीलता से है। इसको वास्तविक भावनाओं के प्रभाव एवं सहयोग तथा वास्तविक सम्प्रेषण के आधार पर विकसित किया गया है। सम्प्रेषण से सीखने की परिस्थिति उत्पन्न की जाती है। इस सिद्धान्त की मुख्य अवधारणा इस प्रकार है–

1. पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण इसलिये किया जाता है जिससे शिक्षा के उद्देश्य प्राप्त होंगे उनका मूल्यांकन किया जा सकेगा।
2. पाठ्यवस्तु का स्वरूप बड़ी सावधानी से पूर्व अनुभवों के आधार पर किया जा सकता है।
3. पाठ्य सामग्री की रचना परम्परागत ढंग से ही की जाती है। इसमें छात्रों के भावात्मक पक्ष को विशेष महत्व दिया जाता है।
4. प्रस्तुतीकरण का ढंग अधिक सरल तथा छात्र के पहुँच के अर्न्तगत हो। मुद्रित पाठ्य सामग्री पढ़ने में सुगम तथा सरल होनी चाहिए।
5. मुद्रित पाठ्य सामग्री में समुचित मानचित्र, आकृतियाँ, ग्राफ तथा चार्ट का प्रयोग करना चाहिए जिससे सीखने में सुगमता हो।
6. सम्प्रेषण माध्यम के चयन में छात्रों की आवश्यकताओं एवं सुविधाओं को महत्व देना चाहिए। विभिन्न माध्यमों के क्रम को छात्रों के अनुरूप ही प्रयुक्त करना चाहिए।
7. सम्प्रेषण की सुविधायें छात्र को सदैव उपलब्ध रहनी चाहिये। छात्र अपनी आवश्यकतानुसार निर्देशन तथा परामर्श ले सकें।

8. छात्रों के गृह कार्यों तथा अभ्यास हेतु प्रश्न देते रहना चाहिए जिससे छात्र उन्हें हल करके सीखते रहें और उनका मूल्यांकन भी किया जाये।
9. छात्रों के गृह कार्यों के मूल्यांकन पर ऐसी टिप्पणी दी जाए जो उन्हें पुनर्बल प्रदान करें तथा सुधार हेतु सुझाव भी दिये जायें।
10. छात्रों के अभ्यास-उत्तरों तथा गृह कार्यों के मूल्यांकन में तत्परता होनी चाहिए।
11. स्वत: मूल्यांकन का अवसर भी दिया जाये जिससे छात्र अभ्यास करें।

नोट

दूरवर्ती शिक्षा में सम्प्रेषण माध्यम

दूरवर्ती शिक्षा में अधिगम के उद्देश्यों तथा अधिगम स्वरूपों को आधार माना जाता है। अधिगम परिस्थिति को उत्पन्न करने के लिए शिक्षण विधियाँ, युक्तियों तथा सम्प्रेषण माध्यमों को प्रयुक्त करना है। सम्प्रेषण आव्यूह के निम्नलिखित माध्यमों का सविस्तार वर्णन किया गया है-

1. समुचित शिक्षण-युक्तियों का चयन।
2. समुचित सम्प्रेषण आव्यूह का चयन।
3. समुचित दृश्य-श्रव्य सामग्री का चयन।

शिक्षण की प्रक्रिया अधिक सरल नहीं हैं। इसमें शिक्षक अनेक विधियों तथा प्रविधियों को प्रयुक्त करता है। शिक्षण युक्तियों का चयन शिक्षक की इच्छा पर निर्भर नहीं होता है। अपितु उनका चयन कार्य-विश्लेषण तथा अधिगम के उद्देश्यों पर आधारित होता हे। शैक्षिक तकनीकी अभी तक सीखने के अनुभवों को ही दे सकी है परन्तु यह शिक्षक के लिए समुचित युक्तियों तथा विधियों के निर्धारण में प्रयत्नशील है। इस दिशा में शोध कार्य निरन्तर किये जा रहे हैं।

कम्प्यूटर सह-अनुदेशन

कम्प्यूटर सह अनुदेशन शिक्षा के क्षेत्र में एक नवाचार है। कम्प्यूटर सह अनुदेशन जैसा कि नाम से ही स्वष्ट हो जाता हे कि यह एक ऐसा अनुदेशन है जिसे कम्प्यूटर की सहायता से आयोजित किया जात है। इस प्रकार के अनुदेशन में शिक्षक की भूमिका कम्प्यूटर द्वारा निभायी जाती है तथा छात्र स्वयं अपनी गति के अनुसार सीखते हैं। कम्प्यूटर द्वारा छात्र के उत्तरों को रिकार्ड किया जाता है, उनका विश्लेषण किया जाता हे तथा उन पर प्रतिक्रिया भी व्यक्त की जाती है। इसके द्वारा विभिन्न प्रकार की अध्ययन सामग्री को नियंत्रित और व्यवस्थित किया जाता है। अनुदेशात्मक प्रक्रिया को स्वचालित एवं वैयक्तिक बनाने की दृष्टि से इसे अभिक्रमित पाठ्य-पुस्तकों से दो कदम तथा शिक्षण मशीन के उपयोग से एक कदम आगे का शैक्षिक अन्वेशण एवं नवाचार माना जा सकता है। शिक्षण मशीन की तुलना में कम्प्यूटर प्रदत्त अनुदेशन इस तथ्य से आगे निकल जाता है कि इसके प्रयोग से एक साथ हजारों विद्यार्थियों को उनकी रूचित और योग्यता के अनुकूल वैयक्तिक रूप से अधिगम समग्री और मार्गदर्शन मिलता है जो कि अकेले एक शिक्षण मशीन के द्वारा संभव नहीं है। इस दृष्टिकोण से कम्प्यूटर की सहायता से आयोजित कम्प्यूटर सह अनुदेशन अभिक्रमित अनुदेशन और शिक्षण मशीन द्वारा प्राप्त अनुदेशन, दोनों से अधिक उन्नत नवीन और उपयोगी अनुदेशन माना जाता है।

कम्प्यूटर सह-अनुदेशन का भली-भाँति स्पष्टीकरण कुछ परिभाषाओं के आधाार पर किया जा सकता है।

परिभाषाएँ

नोट

हिलगार्ड एवं बाउर (Bhatt, 1977)-"कम्प्यूटर सह अनुदेशन का क्षेत्र अब इतना व्यापक हो गया है कि अब इसे मात्र शिक्षण मशीन अथव अभिक्रमित अनुदेशन के अनुप्रयोगों के रूप में नहीं समझा जा सकता।"

"Computer Assisted Instruction has now taken as so many dimensions that it can no large, be considered as a simple dervative of the Teaching Machine of Programmed Instruction." -Hilgard and Bower

भट्ट के अनुसार (Bhatt 1992)-"कम्प्यूटर सह अनुदेशन को शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में विद्यार्थी, कम्प्यूटर नियंत्रित प्रस्तुतीकरण (CCP)तथा अनुक्रिया रिकॉर्डिंग उपकरण (RRA) के मध्य चलने वाली अन्त:क्रिया के रूप में समझा जा सकता है।"

"Computer Assisted Instruction may be defined as an interaction between a student, CCP and RRA for the Response of achieving educational outcomes."

कम्प्यूटर सह-अनुदेशन की उपरोक्त परिभाषाओं का विशद् रूप से विश्लेषण करने पर निम्न तथ्य प्रकाश में आते हैं-

1. कम्प्यूटर सह अनुदेशन में एक अध्यापक और विद्यार्थी के बीच उसी प्रकार की अन्त:प्रक्रिया व्यक्तिगत स्तर पर संभव है जैसी कि ट्यूटोरियल पद्धति में शिक्षक और विद्यार्थी के बीच चलती है।
2. कम्प्यूटर की सहायता से विद्यार्थी को व्यक्तिगत रूप से अनुदेशन सामग्री प्राप्त हो सकती है।
3. छात्र और कम्प्यूटर के मध्य होने वाली इस अन्त:क्रिया के द्वारा अनुदेशात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता मिलती है।
4. कम्प्यूटर द्वारा प्रदिर्शित अनुदेशन सामग्री का लाभ उठाते हुए छात्र अनुक्रिया करता रहता है और इन अनुक्रियाओं को कम्प्यूटर रिकॉर्ड करता रहता है ताकि उसके आधार पर विद्यार्थी को आगे की अनुदेशन सामग्री प्रदर्शित की जा सके।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि कम्प्यूटर सह-अनुदेशन एक जैसी अनुदेशन प्रणाली है जिसमें एक विद्यार्थी और आवश्यक अनुदेशात्मक सामग्री से युक्त कम्प्यूटर के मध्य उपयोगी अन्त:क्रिया इस उद्देश्य के साथ चलती रहती है कि विद्यार्थी को अपनी योग्यता और गति के अनुसार वैयक्तिक रूप से स्व-अनुदेशन प्राप्त करते हुए वांछित अनुदेशनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति संभव हो सके।

कम्प्यूटर के आगमन से आधुनिक जीवन में एक क्रान्ति आ गयी है। जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसमें इसका प्रयोग एवं प्रभाव न दिखलायी पड़ता हो। प्रशासन, आर्थिक प्रबन्धन व्यवसाय, उद्योग, आगमन, प्रशिक्षण, सैन्य क्षेत्र शिक्षा आदि सभी क्षेत्रों में कम्प्यूटर ने क्रान्ति पैदा कर दी है। सूचना के आदान-प्रदान एवं रख-रखाव मे इसका दूसरा विकल्प नहीं है। अत: स्वाभाविक है कि शिक्षा जगत में भी कम्प्यूटर की वजह से क्रान्ति आ गयी है। अधिगम के लिए कम्प्यूटर के प्रयोग की शुरूआत लारेन्स स्टोलुरों तथा डेविस ने 1965 में की थी जिसमें शिक्षक के स्थान पर कम्प्यूटर का प्रयोग किया गया था। बाद गिलियन ने 1973 में जीव विज्ञान विषय के शिक्षण में कम्प्यूटर का प्रयोग किया। वर्तमान समय में भारत सहित विश्व के अन्य देशों में अधिगम के क्षेत्र में इसका प्रयोग किया जा रहा है।

कम्प्यूटर सह-अनुदेशन की मान्यताएँ

नोट

कम्प्यूटर सह अनुदेशन की निम्न मान्यताएँ हैं-

1. यह एक पूर्णतः व्यक्तिगत अनुदेशन तकनीक है जिसमें छात्र स्वगति से आगे बढ़ता है।
2. इसकी सहायता से एक समय में अनेक विद्यार्थियों को एक साथ अनुदेशन प्रदान किया जा सकता है।
3. कम्प्यूटर सह अनुदेशन द्वारा विद्यार्थियों की निषपत्ति की स्वतः ही प्रतितपुष्टि तथा रिकॉर्डिंग होती रहती है।
4. CAI, विधियों तथा तकनीकों के प्रयोग में विविधता पर बल देती है।
5. इसके क्रियान्वयन में तीन प्रकार की तकनीकें प्रयुक्त होती है जो क्रमशः हार्डवेयर, सोफ्टवेयर तथा कोर्सवेयर है।
6. CAI, शिक्षा में अंकात्मक एवं गुणात्मक विस्तार सम्बन्धी समस्याओं का आसानी से समाधान करने में सक्षम है।
7. CAI, सभी प्रकार के शिक्षण-अधिगम कार्यों में प्रयुक्त की जा सकती है।

कम्प्यूटर की परिभाषा एवं कार्य

कम्प्यूटर एक इलेक्ट्रॉनिक यंत्र है। इसका शाब्दिक अर्थ है, वह यंत्र जो 'कम्प्यूटर कर सके अर्थात् कुछ भी गणना कर सके। वर्तमान समय में कम्प्यूटर द्वारा गणना नहीं अपितु विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को एकत्रित कर उनको मुद्रण करना, व्याख्या तथा विश्लेषण करके उनका आवश्यक परिणाम दिया जाता है। इस प्रकार कम्प्यूटर को हम एक ऐसा इलेक्ट्रॉनिक उपकरण कह सकते हैं जिसमें उच्चस्तरीय संगणक, टंकण-यंत्र, टेलीविजन तथा मेमोरी (Memory) का अनोखा संगम है।

कम्प्यूटर द्वारा सम्पादित कार्य चार चरणों में पूर्ण होते हैं-

1. आँकड़ों का निवेश
2. आँकड़ों का संचयन या भण्डारण
3. आँकड़ों का संसाधन या प्रक्रियन
4. परिणाम, निर्गम या जानकारी देना।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि -"कम्प्यूटर वह युक्ति हे जो स्वचालित रूप से विविध प्रकार के आँकड़ों को संचित व पुनः प्राप्त कर सकें।"

कम्प्यूटर के उपयोग के क्षेत्र

दूरवर्ती अधिगम के लिए कम्प्यूटर की पारस्परिक क्रिया की कुछ मुख्य विशेषतायें हैं, कुछ विशेषतायें आगे दी गई हैं जो कम्प्यूटर के उपयोग के क्षेत्र को प्रकट करती हैं-

1. विशेषज्ञों द्वारा अधिगम की प्रशंसा करना।
2. एकाकी एवं बहुमुखी सम्प्रेषण करना।
3. शिक्षार्थी का क्रियात्मक योगदान रहता है।
4. कार्यक्रम की समस्याओं से सम्बन्धित करना।
5. सदस्यों एवं विशेषज्ञों द्वारा अनुसरण, पृष्ठपोषण एवं क्रियान्वयन करना।
6. स्वःनिर्देशित आदि एवं अन्त पर नियन्त्रण समय, स्थान एवं गति के अनुसार

सम्प्रेषण करना।

कम्प्यूटर की सीमायें

नोट

कम्प्यूटर प्रणाली के लाभों एवं निश्चित प्रकार के कार्यक्रमों के साथ-साथ कुछ सीमायें भी हैं। मुख्य सीमायें इस प्रकार हैं-

1. व्यय या मुल्यों में कमी होने पर भी और कम्प्यूटर की कमी होने पर भी इसके द्वारा निर्देशित अनुदेशन अनुदेशन अपेक्षाकृत अधिक महँगा होता है। विचारात्मक प्रकार का संज्ञान कम्प्यूटर का व्यय एवं लाभ पर दिया जाना आवश्यक है।
2. अनुदेशनात्मक उद्देश्यों के लिए कम्प्यूटर की रूपरेखा तैयार करना अन्य उद्देश्यों की प्राप्ति में अपेक्षाकृत अभाव रहता है।
3. कम्प्यूटर के प्रयोग के लिए उच्चकोटि के सीधे अनुदेशनात्मक सामग्री का अभाव है। ऐसा अनुभव किया है कि किसी एक कम्प्यूटर के लिए तैयार किया गया सॉफ्टवेयर कार्यक्रम दूसरे प्रकार के कार्यक्रम के लिए उपयोग में नहीं लाया जा सकता है।
4. भारतीय परिस्थियों में यह नगरों में सुविधा उपलब्ध है, परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में दूरदर्शन की सुविधा सभी जगह नहीं है।

कम्प्यूटर सह अनुदेशन तथा अध्यापक

शिक्षक, शिक्षण प्रक्रिया का महत्वपूर्ण अंग होता है। शिक्षण की प्रक्रिया में शिक्षक द्वारा पाठ्यवस्तु को माध्यम बनाकर शिक्षार्थी के समक्ष सूचनाओं को प्रषित किया जाता है।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में कम्प्यूटर की पहुँच वेबसाइट तथा भौतिक पुस्तकालय से आवश्यक सामग्री को ढूँढने में अध्यापक के उत्तरदायित्व को बढ़ाती है। इसके साथ-साथ शिक्षण की गुणवत्ता भी गढ़ाती है। उपलब्ध बहु-संचार माध्यमों की खोज से शिक्षक को अपने पाठ को प्रभावशाली तरीके से पढ़ाने के लिए नये परिवर्तनकारी विचार प्राप्त होते हैं। अभिलेखों का डेटाबेस रखने से अध्यापक सूचना को विभिन्न रूपों में प्रदान करेगा और इससे धीमें सीखने वाले का ध्यान केन्द्रि करायेगा।

विज्ञान का कोई पाठ; जैसे-हृदय की कार्यप्रणाली, मानव प्रजनन प्रणाली, मानव शरीर की संरचना, जिसके लिए चित्र आवश्यक हैं, को पढ़ाने के लिए चार्ट की सहायता से शिक्षक मानव शरीर के वास्तविक क्रिया को नहीं दर्शा सकता। अतः हम छात्र का निश्चित अधिगम विकसित नहीं कर सकते, किन्तु यह कम्प्यूटर के प्रयोग से शिक्षण अधिगम में सम्भव है।

सी॰डी॰ रोम्स तथा वेबसाइटों से सम्बद्ध सूचना, के प्रयोग से सामाजिक विज्ञान का अधि गम अधिक रुचिपूर्ण बनाया जा सकता है। ग्राफिकल प्रस्तुतीकरण तथा फ्लोचार्टों के प्रयोग द्वारा हम गणित तथा अन्य विज्ञान विषयों के प्रति छात्रों की रुचि उत्पन्न कर सकते हैं। शिक्षण विशेष द्वारा तैयार बनी बनाई सामग्री कम्प्यूटर पर उपलब्ध है। बतुसूचना माध्यमों के द्वारा सार्वभौमिक अधिगम से परिचय कराने से ग्रामीण बच्चों का मुकाबला करने की मनोवृत्ति बदल सकंती है।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में कम्प्यूटर सहायता प्राप्त अधिगम के प्रयोग से धीमे सीखने वाले और उच्च स्थान प्राप्तकर्ता के बीच स्वयं अधिगम कौशलों के विकास द्वारा खाई को कम किया जा सकता है। रजिस्टर तथा कार्यालय के काम में कम्प्यूटर के प्रयोग से समयबद्ध

परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। आँकड़ों के नवीनीकरण में समय बचता है। अभिलेखों का रख-रखाव आसान हो जाता है।

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन में शिक्षक की भूमिका

नोट

कभी-कभी यह आशंका व्यक्त की जाती है कि शिक्षण-अधिगम में CAI का प्रयोग शिक्षक को इस प्रक्रिया से दूर कर देगा। किसी सीमा तक यह बात सच हो सकती है, लेकिन वास्तविकता यह है कि इस प्रकार की आशंका बिल्कुल व्यर्थ एवं निर्मूल है। CAI में शिक्षक की भूमिका को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है।

1. अनुदेशात्मक प्रक्रिया में CAI ने शिक्षक के लिए शक्तिशाली उपकरण का काम किया है। इसके परिणामस्वरूप, अध्यापक की भूमिका में निश्चित तौर पर कुछ परिवर्तन आया है।
2. CAI ने प्रत्यक्ष रूप में छात्र तथा अध्यापक से व्यक्तिगत रूप से सम्पर्क स्थापित करती है। अच्छे शिक्षक को किसी भी रूप में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया से अलग नहीं किया जा सकता।
3. CAI अध्यापक को नये उपकरणों या यन्त्रों के प्रयोग के अवसर उपलब्ध कराती है।
4. CAI अनुदेशन की एक लचीली प्रक्रिया है। इसे परम्परागत शिक्षण के साथ-साथ भी प्रयोग में लाया जाता है।
5. CAI एक कम्प्यूटर इंजीनियर की आवश्यकता पर बल देती है।
6. CAI एक अच्छे पाठ लेखक(Lesson Writing)की आवश्यकता पर बल देती है। एक अच्छा अनुभवी शिक्षक एक अच्छा पाठ-लेखक भी हो सकता है।
7. CAI एक सिस्टम ऑपरेटर की आवश्यकता पर भी बल देती है जो हार्डवेयर तथा सॉफ्टवेयर तकनीक से भली-भाँति परिचित हो।

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन (CAI) के उपयोग

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन (CAI) के निम्नलिखित उपयोग हैं-

1. CAI शिक्षक तथा शिक्षार्थी के लिए तथ्यों एवं सूचनाओं की प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।
2. इसकी सहायता से नियंत्रित दशाओं में शिक्षण कार्य किया जाता है।
3. छात्रों को स्वयं की गति तथा स्वेच्छानुसार सीखने का इससे अवसर प्राप्त होता है।
4. CAI की सहायता से अनुसंधान कार्य किया जा सकता है।
5. छात्रों को वस्तुनिष्ठ तथा विशिष्ट प्रतिपुष्टि उनके अनुदेशन प्रक्रिया में प्राप्त होता है।
6. CAI की सहायता से अनुदेशन विभिन्न रूपों के आधार पर दिया जा सकता है।
7. CAI की सहायता से ग्राफों के आधार पर विभिन्न पक्षों के तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा अर्थशास्त्र विषय के अधिगम को सरल तथा अधिक ग्राह्य बनाया जा सकता है।
8. CAI की सहायता से विद्यार्थियों की समझ के अनुरूप नई सरल शिक्षण विधि का सूत्रपात किया जाता है।

नोट

9. CAI की सहायता से छात्रों को अभ्यास के अवसर प्रदान किए जाते हैं।
10. CAI की सहायता से विद्यालयी समय सारिणी का निर्माण किया जा सकता है।
11. यह मूल्यांकन प्रक्रिया में सहायक सिद्ध होता है।
12. इसकी सहायता से छात्र की उपलब्धि से सम्बन्धित विभिन्न रिकॉर्ड्स एकत्रित किए जा सकते हैं।
13. इसमें अनुदेशन के साधन एवं साध्य दोनों की व्यक्तिगत तौर पर प्रयोग करने की क्षमता है।
14. इसकी सहायता से शिक्षण विधियों एवं शिक्षण सामग्री की प्रभावशीलता की जाँच की जा सकती है।
15. CAI का प्रयोग वर्तमान शैक्षिक प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन लाने में किया जा सकता है।
16. CAI की सहायता से छात्रों को व्यक्तिगत रूप से अनुदेशन सामग्री प्रस्तुत करना पूरी तरह संभव है।
17. इसमें विद्यार्थी तथा कम्प्यूटर के बीच उसी प्रकार अन्तःक्रिया चलती है जैसी कि ट्यूटोरियल प्रणाली में शिक्षक और शिक्षार्थी के मध्य चलती है।
18. इसकी सहायता से विद्यालयी स्टाफ के वेतन बिल बनाने में मदद मिलती है।
19. इसकी सहायता से विभिन्न शिक्षा संस्थाओं में प्रशासनिक समस्याओं का निवारण किया जा सकता है।
20. इसकी सहायता से विश्व भर के छात्रों एवं शिक्षकों के साथ पारस्परिक विचार-विमर्श हो सकता है।
21. CAI की सहायता से विषय का गहराई से अध्ययन किया जा सकता है।
22. शिक्षण माड्यूलों को इसकी सहायता से आसानी से निर्मित किया जा सकता है।
23. CAI की सहायता से गणितीय अवधारणा के स्तर में वृद्धि की जा सकती है।
24. CAI का उपयोग शिक्षा की भविष्य सम्बन्धी योजनाओं को आधार प्रदान करने में किया जा सकता है।

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन की सीमाएँ

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन में अनेकानेक उपयोगिता होने के बावजूद भी कुछ सीमाएँ हैं-

1. यह CAI बहुत खर्चीला अनुदेशन उपकरण है।
2. बिजली की समस्या होने से इसका प्रयोग समयानुकूल संभव नहीं है।
3. कम्प्यूटर में प्रयुक्त मृदुल उपागम बहुत कठिनाई से उपलब्ध होते हैं।
4. कम्प्यूटर अनुदेशन से बालकों का भावनात्मक तथा संवेगात्मक विकास नहीं हो पाता है।
5. इसके उपयोग से छात्र भाषा सम्बन्धी प्रवीणता नहीं प्राप्त कर पाते हैं।
6. कम्प्यूटर पर अधिक समय तक कार्य करने से छात्रों के शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
7. छात्रों की निष्पत्तियों का मूल्यांकन भी सीमित दशाओं में ही संभव है।
8. कम्प्यूटर द्वारा सम्पन्न अधिगम व्यवस्था यंत्रवत् होती है।
9. कम्प्यूटर में खराबी आने पर उसे ठीक कराना अत्यधिक महंगा पड़ता है।

छात्र क्रियाकलाप

1. कम्प्यूटर की परिभाषा एवं कार्य बतायें?

2. दूरवती-शिक्षण के सम्प्रेषण सिद्धान्त की चर्चा करें?

दूरवर्ती शिक्षा में कम्प्यूटर (अमुद्रित माध्यम)

नोट

कम्प्यूटर एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण शिक्षण तथा अनुदेशन का माध्यम है। दूरवर्ती शिक्षा में इस माध्यम का विशेष स्थान है।

पारस्परिक अन्त:प्रक्रिया के स्वरूप के अतिरिक्त इसके अनेक लाभ हैं। कम्प्यूटर दूरवर्ती अधिगम के लिए एक महत्वपूर्ण माध्यम है। कम्प्यूटर छात्र के व्यवहार का विश्लेषण करते हैं, सुरक्षित रूप से प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकते हैं। यह सूचनाओं को विशाल स्तर पर एकत्रित कर सकते हैं। अधिगम सामग्री का विशाल स्तर व्यवस्थित कर सकते हैं। यह एक साथ अनेक छात्रों की अधिगम आवश्यकता को पूर्ण कर सकता है। इसके अन्तर्गत छात्रों के लिए व्यक्तिगत स्तर पर कार्यक्रम तैयार किये जाते हैं।

कम्प्यूटर का तकनीकी विवरण

कम्प्यूटर एक ऐसी युक्ति है जिसके द्वारा किसी कार्यक्रम से प्राप्त आँकड़ों से अपनी संक्रियाओं द्वारा परिणाम में बदल देता है। कम्प्यूटर अपने आकार प्रकार के द्वारा विभिन्न प्रकार के नामों से जाना जाता है। जैसे गेनफ्रेम कम्प्यूटर, मिनी कम्प्यूटर, सूक्ष्म कम्प्यूटर। अपनी आकृति एवं आकार की विभिन्नता के अलावा एक कम्प्यूटर से दूसरे कम्प्यूटर में विभिन्नता पायी जाती हैं। कम्प्यूटर के विभिन्न स्वरूप विभिन्न प्रकार के उपकरणों की सहायता से चलाये जाते हैं। अनेक प्रकार की तकनीकें इस प्रकार के अपने उपकरणों को सुसज्जित करती हैं। उनके स्वरूप में विभिन्नता पाई जाती है। (1970) के दशक के बाद माइक्रोकम्प्यूटर को कम दाम पर उपलब्ध कराकर शिक्षा की दूरवर्ती-प्रवृति को प्रोत्साहन दिया गया। कम्प्यूटर प्रणाली अदा प्रक्रिया से मुक्त होती है, इसमें प्रक्रिया एवं प्रदा प्रक्रिया को भी निर्धारित किया जाता है, कम्प्यूटर के प्रारूप के वास्तविक यन्त्र को हार्डवेयर के नाम से जानते हैं, जबकि सॉफ्टवेयर कार्यक्रम को अनुदेशनात्मक कार्यक्रम से जानते हैं।

कम्प्यूटर का अदा भाग जिसको साधारण रूप से की बोर्ड भी कहते हैं, जो कि आँकड़ों या अनुदेशन कम्प्यूटर के प्रक्रिया भाग में भेजता है। कम्प्यूटर का मध्य भाग या प्रक्रिया का भाग अनुदेशन के अनुसार आँकड़ों की गणना करता है तथा उनके मध्य क्रियाशील रहता है जिसके द्वारा आँकड़ों के मध्य प्रक्रिया की जाती है। केन्द्रीय प्रक्रिया की इकाई को ही रखाव की प्रक्रिया कहते हैं। इसके अन्तर्गत सभी प्रकार के कार्यक्रमों को व्यवस्थित किया जाता है। प्रदा के भाग द्वारा आँकड़ों के मध्य हुई प्रक्रिया को सम्पादित किया जाता है। सामान्य रूप से दूरदर्शन के द्वारा कम्प्यूटर के कार्यक्रम को ही दिखाया जाता है।

कम्प्यूटर के प्रयोग

कम्प्यूटर के साथ काम करते हुए छात्रों के समूह को देखने से यह विदित होता है कि छात्र कितनी उत्सुकता एवं उत्साह के साथ कार्यक्रम को करते हैं। कम्प्यूटर की चुनौतीपूर्ण कार्यक्रमों के द्वारा छात्रों के मध्य प्रेरणा पैदा की जाती है। कम्प्यूटर कार्यक्रम के द्वारा सीखने में कभी भी किसी प्रकार से नीरस नहीं होता है। कुछ उदाहरणों के द्वारा इसके गुणों को प्रदर्शित किया जा सकता है।

कोडब्रेकर एक इस प्रकार का कार्यक्रम है जिसके द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर दिया जा सकता है। सैद्धान्तिक रूप में प्रश्नोत्तर के क्रम के द्वारा छात्रों को मिल जाता है जिसके द्वारा छात्रों को सफलतापूर्वक सीखने का अवसर मिल जाता है।

समस्या समाधान की क्रिया के कार्यक्रम येलोनीवर किंगडम के नाम से जानते हैं। कम्प्यूटर एक विशाल किंगडम को सम्मिलित करता है जिसमें विभिन्न प्रकार के स्रोत दिये रहते हैं। बिना कम्प्यूटर की सहायता से क्या कोई इस प्रकार की कठिन परिस्थिति को पैदा कर सकता है, जिसके द्वारा कक्षा में अधिगम का कार्य प्रभावित किया जा सके। शिक्षण अधिगम के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कम्प्यूटर के द्वारा इस प्रकार की परिस्थिति को उत्पन्न किया जा सकता है। इसके द्वारा परिस्थियों के द्वारा कार्यक्रम को सुगम बनाया जा सकता है।

नोट

वेरीटेक्सट नामक एक कार्यक्रम है जिसके द्वारा कार्यक्रम के कुछ रिक्त स्थानों को छात्रों द्वारा पूर्ण कराया जाता है। इन रिक्त स्थानों की पूर्ति के लिए छात्र को चार प्रकार के विकल्प दिये रहते हैं, जिसके द्वारा छात्रों को रिक्त स्थान की पूर्ति करनी होती है। यदि आवश्यक हो तो छात्र कम्प्यूटर के द्वारा सही शब्द का पता कर सकता है। कम्प्यूटर ही किसी कार्यक्रम को तैयार करने के लिए निश्चित प्रकार की तकनीकी है। इसके विकल्प के रूप में अभी अन्य प्रकार की तकनीकी का विकास नहीं हो सका है।

कम्प्यूटर प्रबन्धीय अनुदेशन एवं कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन

अनुदेशन के युग में दो महत्वपूर्ण कम्प्यूटर के उपयोग हैं-

1. कम्प्यूटर प्रबन्धकीय अनुदेश, और (सी०एम०आई०)
2. कम्प्यूटर आधारित या सहायक अनुदेशन (सी०ए०आई०)

प्रबन्धकीय कम्प्यूटर में सूचनाओं का संग्रह किया जाता है और उनके द्वारा व्यक्तिगत सीखने के अनुभवों को अनुदेशित किया जाता है।

इसमें छात्र विभिन्न बिन्दुओं से गुजरता है तथा पूरी शैक्षिक प्रक्रिया में विभिन्न पदों से होकर जाना पड़ता है तथा अपनी व्यक्तिगत योग्यता के द्वारा ही क्षमता का प्रदर्शन होता है। इस प्रकार का व्यक्तिगत अनुदेशन कई प्रकार की श्रृंखलाओं की क्रियाओं से होकर अग्रसर होता है। इस प्रक्रिया में निदानात्मक परीक्षणों को प्रशासित करने के लिये, उनको अंकन करने के लिए एवं विकास के सभी स्वरूपों को पूरे पथ के दौरान करने के लिए किया जाता है।

कम्प्यूटर प्रबन्धीय अनुदेशन के द्वारा छात्रों से सीधा अन्तःप्रक्रिया से सम्बन्ध रखा जाता है तथा पाठ को प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रणाली में छात्रों को सीधा अनदेशन दिया जाता है और उनको पारस्परिक क्रिया के लिए अनुमति प्रदान की जाती है। अत्यधिक अनुदेशन की परिस्थियों में भी यह कम्प्यूटर अपने को समायोजित करता है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि यह अनुदेश के निर्देशों एवं वार्तालापों को सूचित करने की योग्यता रखता है। इसके द्वारा विभिन्न प्रकार की विधियों में सुविधा प्रदान की जाती हैं नीचे कुछ प्रविधियों को संक्षेप में दिया गया है-

अनुवर्ग विधि

शिक्षण-प्रविधियों में प्रश्नों पर आधारित अनुदेशन के कार्यक्रम के अनुसार सूचनाओं को विभिन्न प्रकार के खण्ड़ों में प्रस्तुत किया जाता है। छात्रों के व्यवहार का विश्लेषण किया जाता है तथा उनकी उचित पृष्ठपोषण प्रदान किया जाता है। विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को शिक्षण के लिए प्रदर्शित किया जाता है एवं उसके द्वारा छात्रों को अपने अनुसार कार्य करने के लिए अनुमति प्रदान की जाती है। विभिन्न प्रकार के वैकल्पिक कार्यक्रम कम्प्यूटर पर उपलब्ध होते हैं, छात्र उनको अपने व्यक्तिगत आधार पर चयनित करते हैं।

नोट

अभ्यास विधि

इस प्रकार कार्यक्रम के द्वारा यह सुनिश्चित किया जाता है, कि विभिन्न प्रकार के प्रत्यय, नियम एवं साधन छात्र द्वारा सीख लिए गए हैं कि नहीं। यह कार्यक्रम विभिन्न उदाहरणों के द्वारा यह सुनिश्चित करना है कि शिक्षार्थी में कौशल का विकास हुआ अथवा नहीं। सभी सही प्रकार की अनुक्रियाओं का पुनर्बलन प्रदान किया जाता है। कम्प्यूटर तभी आगे के लिए अपने कार्यक्रमों को प्रस्तुत करेगा, जब शिक्षार्थी को उस विषय में निपुणता आ जायेगी।

अन्वेषणत्मक विधि

इस प्रकार के कार्यक्रमों में आगमन विधि प्रयोग में लाई जाती हैं इसमें शिक्षार्थी के सम्मुख समस्या रखी जाती है तथा छात्र उसकी त्रुटि एवं सुधार के द्वारा हल करने का प्रयास करता है। इसके द्वारा हल करने का प्रयोगशाला-अधिगम कक्षा के बाहर वास्तविक अधिगम को बल प्रदान किया जाता है। इस प्रकार के उपागम का मुख्य उद्देश्य यह है कि समस्या को हल करने के लिए वास्तविक एवं अधिक जानकारी होती है।

अनुकरणीय-विधि

इसमें छात्रों को वास्तविक जीवन से कम रहकर या निम्न स्तर पर जानकारी प्रदान की जाती है। अन्य कार्यक्रमों की तरह इसमें किसी प्रकार के भय या कठिनाई की समस्या नहीं रहती है, क्योंकि इसके द्वारा वास्तविक अभ्यास कराया जाता है।

खेल-कूद मुद्रा

खेल-कूद की विधि अनुदेशनात्मक विधि हो सकती है, अथवा नहीं भी हो सकती है। इसका उद्देश्य मनोरंजनात्मक होता है, इसमें खेल-कूद के द्वारा शिक्षा प्रदान की जाती है। इस प्रकार का कार्यक्रम युवक बालकों के लिए अधिक प्रभावशाली होता है।

कम्प्यूटर के लाभ

यहाँ पर दिये गये विवरण में कम्प्यूटर के लाभ के कुछ उपयोग पारस्परिक मुद्रित अनुदेशनात्मक माध्यम के हैं। इन लाभों का यहाँ पर उल्लेख किया गया है-

1. नवीन कम्प्यूटर के साथ काम करने के कुछ उपयोग प्रेरणा प्रदान करते हैं।
2. सजीव रंगीन चित्रण छात्रों को अभ्यास करने के लिए वास्तविक प्रेरणा प्रदान करता है।
3. उच्चकोटि की व्यक्तित्व की क्रियायें छात्रों की प्रतिक्रियाओं को उच्चकोटि का पुनर्बलन प्रदान करती है।
4. छात्रों की स्मरणशक्ति उनके अतीत के ज्ञान को अभिलेखित करने के लिए परिवर्ती पदों को प्रदान करती है।
5. निम्न कोटि के शिक्षार्थी को व्यक्तिगत प्रकार के अनुदेशनात्मक कायक्रम द्वारा ध नात्मक एवं प्रभावी वातावरण तैयार किया जाता है। उसके लिए इसको विभिन्न प्रदों में व्यक्त किया जाता है।
6. अभिलेखों को सुरक्षित रखने की क्षमता कम्प्यूटर के द्वारा सरल बनाई जा सकती है। इसके द्वारा छात्रों को दिशा निर्देशित किया जा सकता है एवं उनके द्वारा व्यक्तिगत प्रकार के अनुदेशन भी दिए जा सकते हैं।

7. शिक्षक के नियन्त्रण के क्षेत्र को बढ़ाया जा सकता है और अधिक सूचनाप्रद बनाया जा सकता है। इसे शिक्षक की व्यवस्था के अनुसार छात्रों के मध्य सीधा सम्पर्क बनाया जा सकता है।

नोट

योजना विधि के दोष

1. यह विधि अपेक्षकृत अधिक महत्वपूण्र है।
2. इस विधि में समय की बर्बादी होती है।
3. गणित की प्रत्येक पाठ्वस्तु को इस विधि से पढ़ाना संभव नहीं है।
4. इस विधि में मंदबुद्धि छात्र रुचि नहीं लेते हैं।
5. इस विधि पर आधारित पाठ्य-पुस्तकों को अभाव होता है।
6. इस विधि में अर्जित ज्ञान की पुनरावृत्ति के लिए स्थान नहीं होता है।
7. इस विधि को संचालित करने के लिए योग्य, अनुभवी अध्यापकों की आवश्यकता होती है जबकि विद्यालयों में इसका अभाव होता है।
8. यह विधि निम्न कक्षाओं के लिए लाभकारी है, जबकि उच्च कक्षाओं में यह कार्य अधिक लाभकारी नहीं।

योजना व्यूह रचना का अर्थ एवं परिभाष अथवा विधि

'योजना' अर्थात् 'प्रोजेक्ट' शब्द का प्रयोग सबसे पहले 'रिचार्ड' ने सन् 1900 ई॰ मे किया था। उन्होंने 'प्रोजेक्ट' शब्द का प्रयोग उस स्थान पर किया जहाँ बालक एक वास्तविक समस्या को स्वयं अपनी योजना बनाकर तथा यह निर्धारित करके कि योजना के सफल होने में किन पदों का प्रयोग करना पड़ेगा, हल करने की चेष्टा करता है। इसके पश्चात् 1908 में 'स्टीवेन्सन ने मेसाचुसैट्स में औद्योगिक विद्यालयों में कृषि के पाठ्क्रम के सम्बन्ध में इसका प्रयोग किया है। सन् 1911 ई॰ के मेसाचुसैट्स से बोर्ड ऑफ एजूकेशन की रिपोर्ट में इस शब्द का निर्णय किया गया। इस रिपोर्ट ने कृषि की शिक्षा को माध्यमिक विद्यालयों में प्रोजेक्ट विधि से पढ़ाने की मान्यता प्रदान की। फिर इस विधि का वर्णन सन् 1918 ई॰ के "फैडरल ऑफ वोकेशनल एजूकेशन" में मिलता है। परन्तु इस विधि को एक शिक्षा-प्रणाली का व्यावहारिक रूप देने वाले "किलपैट्रिक" महोदय ही हैं। इन्होंने परकर, डीवी आदि शिक्षाशास्त्रियों के शैक्षिक सिद्धान्तों पर इस प्रणाली को आधारित किया है।

योजना विधि जॉन डीवी के प्रयोजनवाद सम्बन्धी दार्शनिक विचारों की देन मानी जाती है। अपने गुरु जॉन डीवी के प्रयोजनवादी सिद्धान्तों से प्रभावित होकर सर विलियम किलपैट्रिक ने इस विधि को व्यावहारिक रूप प्रदान किया और शिक्षा में सभी लोगों को एकता के सूत्र में पिरोकर शिक्षण को जीवनापयोगी और रुचिकर बनाने का प्रयत्न किया।

किलपैट्रिक के अनुसार-"प्रोजेक्ट वह सहृदय उद्देश्यपूर्ण कार्य है जो सामाजिक वातावरण में पूर्ण संलग्नता से किया जाता है।"

"A Project is a whole hearted purposeful activity proceeding in a Social environment." -Kilpatrick

बैलार्ड के अनुसार-"प्राजेक्ट यर्थात जीवन का ही एक भाग है जो विद्यालय मे प्रदान किया जाता है।"

"A Project is a bit of real life that has been imparted into School." -Ballard

छात्र क्रियाकलाप

1. कम्प्यूटर के तकनीकी विवरण का वर्णन करें?

2. योजना व्यूह रचना का अर्थ एवं परिभाषा अथवा विधि की चर्चा करें?

पार्कर के अनुसार-"प्रोजेक्ट कार्य की एक इकाई है, जिसमें छात्रों को कार्य की योजना और सफलता के लिए उत्तरदायी बनाया जाता है।"

"A Project is a unit of activity in which pupils are mad responsible for planning and purposing."-Parker

नोट

स्टीवेंशन के अनुसार-"प्रोजेक्ट एक समस्यामूलक कार्य है जिसे स्वाभाविक परिस्थियों में पूर्ण किया जाता है।"

"A Project is a Uroblematic act carried to completion in its natural setting."-Stevenson

उपरोक्त परिभाषओं का विश्लेषण करने पर हमें पता चलता है कि योजना विधि बालकों द्वारा वास्तविक कार्य या क्रिया पर अधिक बल देती है। उन पर बाहर से बलपूर्वक अध्यापक द्वारा कुछ नहीं लादा जाता है। अध्यापक केवल मार्गदर्शक तथा सहायक का स्थान ग्रहण करता है।

योजनाओं के प्रकार

योजनाएँ मुख्यत: दो प्रकार की होती हैं।-

1. **व्यक्तिगत योजनाएँ:** इसके अंतर्गत प्रत्येक छात्र को एक प्रोजेक्ट दे दिया जाता है, जिसे वह पूर्ण करता है।
2. **सामूहि योजनाएँ:** ये ऐसे प्रोजेक्ट होते हैं जिन्हें कक्षा के सभी विद्यार्थी सामूहिक रूप से पूरा करते हैं। ऐसे प्रोजेक्ट में सामाजिकता की भावनाओं का विकास होता है।

किलपैट्रिक ने अपनी पुस्तक ***'Foundation of Method'*** में चार प्रकार की योजनाओं का उल्लेख किया है, जो अग्र प्रकार हैं-

1. रचनात्मक योजनाएँ
2. कलात्मक योजनाएँ
3. समस्यात्मक योजनाएँ
4. अभ्यासात्मक योजनाएँ

योजना विधि के सिद्धांत

योजना विधि निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित है-

1. **उद्देश्यपूर्ण कार्य:** योजना का कुछ उद्देश्य होता है। अध्यापक बालक के सम्मुख उद्देश्यपूर्ण कार्य प्रस्तुत करता है।
2. **सामाजिकता की भावना का विकास:** इस पद्धति मे बालकों को उन क्रियाओं को करने के अवसर प्रदान किये जाते हैं, जिनसे कि उनमें सामाजिकता की भावना का विकास हो सके।
3. **क्रियाशीलता:** इस विधि में क्रिया को प्रमुखता दी जाती है, अत: यह क्रियाशीलता का सिद्धांत 'स्वयं करके' विधि पर आधारित है। बालक का सीखना इसी विधि पर आधारित होता है, इसमें वह पूर्णत: सक्रिय रहता है।
4. **उपयोगिता:** बालक उपयोगी कार्यों में विशेष रुचि लेते हैं तथा उन्हें शीघ्र कर भी लेते हैं। अत: योजना का व्यावहारिक दृष्टिकोण से उपयोगी होना आवश्यक होता

है।

5. **यथार्तता:** इसके प्रयोग से वास्तविक एवं उपयोगी ज्ञान प्राप्त होता है। बालक को प्रदान किया जाने वाला समस्यात्मक कार्य वास्तविक होने चाहिए क्योंकि वास्तविक जीवन की समस्याओं को वे शीघ्र रुचि से हल कर लेते हैं।

नोट

6. **रोचकता:** इस विधि में योजना का कार्य बालक स्वयं करते हैं। अपने इस कार्य में वे रुचि लेते हैं। बालकों के सामने समस्याएँ भी, रुचिपूर्ण प्रस्तुत करनी चाहिएँ।
7. **स्वतंत्रता:** इस प्रणाली में बालकों को स्वयं अपना कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। जहाँ वे अपनी शक्ति और क्षमतानुसार कार्य का चुनाव करके लक्ष्य को प्राप्त करते हैं। शिक्ष केवल एक मार्गदर्शक का कार्य करता है।

योजना विधि के सोपान

योजना विधि के प्रयोग में लाने के लिए निम्नलिखित सोपानों का प्रयोग किया जाता है-

1. **परिस्थिति उत्पन्न करना:** इस विधि में बालक को स्वयं योजना चुनने का अवसर प्रदान किया जाता है। अत: शिक्षक इस प्राकर की परिस्थियाँ उत्पन्न करता है, जिससे बालको से उचित योजना चुनने में रुचि जागृत हो सके।
2. **योजना चुनना:** बालक स्वयं योजना का चुनाव करते हैं और शिक्षक मार्गदर्शक की तरह कार्य करता है। छात्रों का विचार लेकर ही शिक्षक योजना को स्वीकार करते हैं।
3. **कार्यक्रम बनाना:** इस पद के अन्तर्गत छात्र योजना के लिए कार्यक्रम का निर्माण करते हैं। कार्यक्रम निर्माण हेतु वाद-विवाद के अवसर शिक्षक द्वारा दिये जाते हैं और आवश्यकतानुसार वह छात्रों का पथ-प्रदर्शन भी करते हैं।
4. **कार्यक्रम क्रियान्वित करना:** इस चरण में छात्र स्वयं क्रियाशील रहकर सीखता है तथा विभिन्न तथ्यों के सम्बन्ध में ज्ञान ग्रहण करता है। अध्यापक योजना हेतु मार्गदर्शन ही देता है, स्वयं कोई कार्य नहीं करता है।
5. **कार्य का लेखा रखना:** इस सोपान में अध्यापक तथा छात्र परस्पर मिलकर निर्णय लेते हैं कि योजना कहाँ तक सफल हुई। बालकों को आत्म आलोचना का अवसर प्राप्त होता है। वे स्वयं निरीक्षण-परीक्षण द्वारा देखते हैं और समझते हैं कि उनसे कहाँ भूल हुई है।
6. **कार्य का लेखा रखना:** प्रत्येक छात्र के पास एक विवरण पुस्तिका होती है जिसमें वे कार्य का लेखा दर्ज करते हैं। इसमें शिक्षक यह देखता है कि बालक ने निर्धारित कार्य पूरा कर लिया है या नहीं। अन्तत: कार्य का मूल्यांकन लिखित रूप में किया जाता है।

योजना विधि के गुण

1. योजना विधि छात्रों के मानसिक विकास में सहायक होती है।
2. यह विधि जीवन से सम्बन्धित होती है क्योंकि पुस्तकीय ज्ञान की अपेक्षा वास्तविक यथार्थ समस्याओं को हल करना सिखाती है।
3. यह विधि छात्रों में उत्तरदायित्व की भावना का विकास करती है।
4. इस पद्धति से प्राप्त ज्ञान पूर्ण तथा सुसंगठित होता है।
5. इस पद्धति से प्राप्त ज्ञान पूर्ण तथा सुसंगठित होता है।

6. इस विधि से चरित्र निर्माण होता है।
7. यह विधि सह-सम्बन्ध पर आधारित होती है।
8. इस विधि में में छात्रों में अन्वेषणात्मक शक्ति का विकास होता है।
9. यह विधि प्रजातांत्रिक भावनाओं पर आधारित होती है।
10. इस विधि में बालक की रुचि को ध्यान में रखकर कार्य करने का अवसर प्रदान किया जाता है।
11. इस विधि में व्यक्तिगत विभिन्नताओं को ध्यान रखा जाता है।
12. यह विधि थॉर्नडाइक द्वारा प्रतिपादित सीखने के तीन नियमों,
    a. तत्परता,
    b. अभ्यास तथा
    c. प्रभाव पर आधारित होती है।
13. यह विधि सामाजिक गुणों के विकास में सहायक होती है।
14. यह विधि शारीरिक श्रम के महत्व पर जोर देती है।

स्लाइड

स्लाइड, श्रव्य-दृश्य सामग्री में दृश्य सामग्री के रूप में प्रयोग की जाती है। इसके प्रयोग से क्रिया व व्यवहार को बहुत ही वास्तविक और जीवन्त रूप में प्रस्तुत किया जाता है। स्लाइड का प्रयोग शिक्षण-अधिगम में काफी लाभदायक होता है। स्लाइड के माध्यम से पदार्थ एवं जीवों की छोटी से छोटी बातों को पर्दों पर बड़ा करके प्रदर्शित किया जा सकता हैं स्लाइड का प्रयोग कक्षा शिक्षण के दौरान, शिक्षक प्रदर्शित पाठ्य-वस्तु के कठिन तथा सूक्ष्म तथ्यों को सरलता से छात्रों तक पहुँचाने में समर्थ होता है। स्लाइडों को माइक्रोस्कोप द्वारा देखा जा सकता है। स्लाइडों को प्रदर्शित करने के लिए प्रोजेक्टर की भी आवश्यकता पड़ती है। स्लाइडें कई प्रकार की होती हैं।

स्लाइड तैयार करने की विधि

स्लाइड तैयार करने की अनेक विधियाँ हैं, जिसमें एक विधि का वर्णन किया जा रहा है-इसके अन्तर्गत ग्लास प्लेट के एक तरफ अपारदर्शी सतह पर डायग्राम तैयार करके उसे ग्लास प्लेट के दूसरी ओर उतारा जाता है। इस कार्य हेतु दूसरी प्लेट पर पहले से ही कारबोरेन्डम पाउडर पानी के साथ लगाया जाता है। अब इस पर उस प्लेट को जो अर्द्ध-पारदर्शी सतह वाली होती है, उसे गोलाई में घुमाया जाता है। इस पारदर्शी सतह पर जो तस्वीर बनाई जाती है उस पर स्याही से डायग्राम को "वाटरप्रूफ ड्राइंग इंक" से बनाया जाता है। इस स्लाइड का प्रयोग तभी किया जा सकता है, जबकि 'प्रोजेक्टर लैम्प' बहुत शक्तिशाली होता है। इस प्रकार की स्लाइड तैयार करने में बहुत ही अच्छी प्रकार की रेतियां का प्रयोग किया जाता है। यदि स्लाइड को यथाशीघ्र बनाना हो तो इसमें कोई भी 'काली लेड' की पेंसिल का प्रयोग किया जा सकता है। इसका निर्माण हो जाने के उपरान्त धूल एवं पानी तथा सूर्य के प्रकाश से बचाकर रखने के लिए 'कवर ग्लास' में 'सुरक्षित' रखा जाता है।

स्लाइड के उपयोग से लाभ

स्लांइड के उपयोग से निम्न लाभ हैं-

1. सूक्ष्म जीव-जन्तुओं, पदार्थों एवं तथ्यों के प्रस्तुतीकरण में लाभदायक होता है।

नोट

2. इसकी सहायता से तथ्य का सजीव एवं वास्तविक अध्ययन संभव होता है।
3. यह छात्रों में रुचि, प्रेरणा तथा जिज्ञासा पैदा करता है।
4. स्लाइड का निर्माण भी आसानी से किया जा सकता है।
5. इसके प्रयोग से शिक्षण-अधिगम परिस्थितियाँ प्रभावशाली एवं रोचक बन जाती हैं।
6. इसकी सहायता से सूक्ष्म जीव-जन्तुओं, पदार्थों एवं तथ्यों को छात्रों के सम्मुख बड़े आकार में दर्शाया जा सकता है।

स्लाइड के प्रयोग में सावधानियाँ

1. प्रत्येक स्लाइड में उसका शीर्षक लिखा होना चाहिए, जिससे उसके सन्दर्भ में जानकारी प्राप्त हो सके।
2. स्लाइड को धूल एवं पानी से बचाना चाहिए।
3. स्लाइडों को लिफाफे में बन्द करके क्रम से लगाकर रखना चाहिए, जिससे प्रयोग में आसानी हो सके।
4. स्लाइड का प्रयोग प्रस्तुत पाठ्यसामग्री में आवश्यकतानुसार की जानी चाहिए।

कक्षा शिक्षण के दौरान कई बार दृश्य सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है, जिसे न तो पदार्थ के रूप में और न ही नमूने के रूप में प्रयोग करके स्पष्ट किया जा सकता है। यदि कक्षा-शिक्षण के अन्तर्गत, ताजमहल, भाप इंजन के संदर्भ में जानकारी प्रदान करना चाहते हैं, तो ताजमहल या भाप इंजन को कक्षा में प्रस्तुत किया जाना संभव नहीं है। अत: ऐसी स्थिति में ताजमहल और भाप का छोटा सा मॉडल या प्रतिरूप बनाकर कक्षा में दिखलाया जा सकता है। इसी को ताजमहल या भाप इंजन का मॉडल या प्रतिमान कहा जाता है। ये प्रतिमान वास्तविक वस्तुओं से मिलते हुए होना चाहिए, जिससे कि छात्रों के मन-मस्तिष्क में वस्तु का वास्तविक चित्र उभर सके। विभिन्न प्रकार के पौधों, पत्तियों और पुष्पों के प्रतिमान तथा जन्तुओं के आन्तरिक अंगों का प्रतिमान, पनडुब्बी जहाज तथा हवाई जहाज का प्रतिमान को प्रत्यक्ष वस्तुओं की भाँति शिक्षक को प्रयोग करना चाहिए। अब प्रश्न यह उठता है कि शिक्षक को प्राय: कक्षा-शिक्षण के दौरान विभिन्न प्रतिमानों की आवश्यकता होती है, तो वह इन्हें प्रदर्शित करने हेतु कहाँ से ला सकता है। इसके लिए यह नितान्त आवश्यक है कि सभी विद्यालयों में विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान संग्रहालय, बाईबेरियम, टेरेरियम तथा एक्वेरियम का होना आवश्यक है। प्रतिमान सामान्यत: दो प्रकार के होते हैं-

1. **स्थिर मॉडल:** कक्षा शिक्षण के दौरान स्थिर मॉडल का प्रयोग किसी वस्तु का रूप-रंग तथा आयाम आदि का ज्ञान प्रदान करने के लिए किया जाता है। इसके प्रयोग से शिक्षण-अधिगम की परिस्थितियाँ प्रभावशाली बन जाती हैं।
2. **क्रियात्मक मॉडल:** कक्षा शिक्षण के दौरान क्रियात्मक मॉडल के प्रयोग से मॉडल के आकार-प्रकार, आयाम आदि के साथ-साथ उसकी कार्यविधि का भी क्रियात्मक ज्ञान दिया जा सकता है। इसके प्रयोग से प्रभावशाली ढंग से विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण किया जाता है, जो शिक्षण-अधिगम हेतु बहुत उपयोगी होती है।

प्रतिमान बनाने में इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि यथासंभव उसी पदार्थ का बनाया जाना चाहिए जिसका भी वास्तविक पदार्थ बना हुआ हो। मॉडल का प्रयोग कक्षा-शिक्षण के दौरान तभी किया जाना चाहिए, जबकि वास्तविक पदार्थ को किसी कारणवश कक्षा में दिखाना संभव न हो। मॉडल के सन्दर्भ में यह कहा गया है कि-

मॉडल वास्तविक वस्तु का स्थूल पुन: निर्माण है।
"Model is a concrete reproduction of some real life object."

चित्र, चार्ट, ग्राफ, रेखचित्र, ग्लोब व नक्शे

नोट

चित्र, चार्ट, ग्राफ, रेखाचित्र, ग्लोग व नक्शे दृश्य सहायक सामग्री के रूप में कक्षा शिक्षण के दौरान प्रदर्शित किये जाते हैं इनके प्रयोग से शिक्षण-अधिगम की परिस्थितियाँ सरल, सहज, प्रभावशाली, रोचक एवं बोधगम्य बन जाती हैं। इनका संक्षिप्त विवरण अग्रवत है-

चित्र

कक्षा-शिक्षण के दौरान चित्रों के माध्यम से अनेक वस्तुओं को प्रदर्शित किया जा सकता है। चित्र या तो बनाये जा सकते हैं या बने बनाये बाजार में उपलब्ध होते हैं। सुन्दर और प्राकृतिक रंगों के चित्र न केवल आकर्षण पैदा करते हैं, बल्कि विषय को अधिक सरल व रुचिकर तथा प्रेरणादायक बनाते हैं। चित्र दुरुह वस्तुओं को भी सरलता से प्रस्तुत करते हैं। चित्रों के माध्यम से छात्र प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा ज्ञान सरलता से प्राप्त कर लेते हैं। मौखिक वर्णन के साथ-साथ यदि शिक्षक चित्रों का भी उपयोग कर ज्ञान प्रदान करता है तो वह ज्ञान छात्रों के लिए ज्यादा स्थायी रोचक, प्रेरणादायक एवं सार्थक होता है, परन्तु चित्र बनाते समय निम्नलिखित सावधानियाँ बरतनी चाहिएँ-

1. प्रदर्शन हेतु प्रयुक्त चित्र, प्रस्तुत पाठ-वस्तु प्रसंग के अनुरूप होना चाहिए।
2. प्रदर्शन हेतु प्रयुक्त चित्र आकर्षक तथा रंगीन होना चाहिए।
3. चित्र प्रयुक्त करने से पूर्व छात्रों को प्रस्तुत नवीन ज्ञान के सम्बन्ध में जानकारी देनी चाहिए।
4. चित्र पर नामांकन स्पष्ट एवं सुन्दर लिखावट में होनी चाहिए।
5. प्रसंग में चित्र के प्रदर्शन की आवश्यकता समाप्त होने पर लपेटकर हटा देना चाहिए। अन्यथा छात्रों का ध्यान लगातार उस पर ही केन्द्रित रहेगा।

चार्ट

कक्षा-शिक्षण में चार्ट वास्तव में एक ऐसा दृश्य साधन है जिसकी सहायता से नवीन ज्ञान का प्रस्तुतीकरण, सरल, सहज, रोचक, प्रेरणादायक बनाया जाता है। चार्ट की सहायता से विभिन्न प्रत्ययों, प्रक्रियाओं सूचनाओं का ज्ञान छात्रों को सरलतापूर्वक कराया जाता है। चार्ट कक्षा की दृष्टि से उपयुक्त आकार का होना चाहिए। चार्ट रंगीन एवं आकर्षक होने चाहिएं चार्ट प्रकरण से सम्बन्धित तथा प्रकरण सम्बन्धी आवश्यक तथ्यों का स्पष्ट रूप से उल्लेख होना चाहिए। चार्ट बने बनाये खरीदे जा सकते हैं या स्वयं बनाये जा सकते हैं। चार्ट दुरुह तथ्यों को भी सरलतम ढंग से प्रस्तुत करते हैं।

शिक्षा के क्षेत्र मे कुछ प्रयुक्त किए जाने वाले चार्ट के नाम इस प्रकार हैं-

1. वे चार्ट जो विभिन्न नियमों, सूत्रें एवं प्रत्ययों को बतलाने वाले होते हैं।
2. वे चार्ट जो महापुरुषों, पौधों तथा जीव-जन्तुओं से सम्बन्धित होते हैं।
3. वे चार्ट जो ऐतिहासिक तिथियों का काल क्रमानुसार प्रस्तुतीकरण करते हैं।
4. वे चार्ट जो विभिन्न संगठनों के प्रबन्ध से सम्बन्धित होते हैं।
5. वे चार्ट जो प्रत्ययों के वर्गीकरण मे सहायक होते हैं।

चार्ट का प्रयोग कक्षा शिक्षण के दौरान तुलनात्मक अध्ययन में सहायक होता है।

छात्र क्रियाकलाप

1. स्लाइड का अर्थ बतायें?

2. चित्र, चार्ट, ग्राफ, रेखचित्र, ग्लोब व नक्शे को परिभाषित करें?

ग्राफ

कक्षा-शिक्षण को प्रभावशाली एंवं रुचिकर बनाने हेतु ग्राफ एक दृश्य सहायक सामग्री के रूप में प्रयोग किया जाता है। ग्राफ के माध्यम से सांख्यिकीय या परिमाणात्मक सम्बन्धों को प्रदर्शित किया जाता है। इसके अन्तर्गत सांख्यिकीय आँकड़ों को दृश्य रूप में प्रस्तुत करके विषय को सहज, सरल एवं बोधगम्य बनाया जाता है।

नोट

ग्राफ कई प्रकार के होते हैं, जिनमें कुछ प्रकार निम्नलिखित हैं-

1. स्तम्भाकृति
2. आवृति बहुभुज
3. संचयी आवृति वक्र
4. तोरण अथवा संचयी प्रतिशत वक्र
5. वृत्त चित्र
6. दण्ड या स्तम्भ आरेख
7. तुलनात्मक दण्ड आरेख

गणित व विज्ञान से सम्बन्धित अनेक तथ्यों को ग्राफों की मदद से दिखलाया जाता है। विद्यार्थी तापक्रम का ग्राफ, वर्ष का ग्राफ, हवा के दबाव का ग्राफ आदि खींचकर मौसम का अनुमान लगा सकते हैं। ग्राफ की बनावट यदि स्पष्ट एवं सुन्दर होती है तो छात्रों को इससे प्रेरणा प्राप्त होती है।

रेखाचित्र

कक्षा शिक्षण के लिए रेखाचित्र एक बहुत ही उपयोगी दृश्य सहायक समग्री है। इसके माध्यम से छात्र प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा सरलता एवं रोचकता से ज्ञान प्राप्त करता है। मौखिक शिक्षण के साथ-साथ रेखाचित्रों का उपयोग कर शिक्षक ज्ञान प्रदान करता है तो वह ज्ञान ज्यादा रोचक, स्थायी एवं सार्थक हो जाता है। भौतिक तुला, विद्युत यंत्रों, पम्पों के रेखाचित्र, ऑक्सीजन चक्र का रेखचित्र, CO_2 का रेखाचित्र, खाद्य श्रृंखला चक्र का रेखाचित्र आदि खींचकर या बने बनाये रेखाचित्र का उपयोग करके छात्र इनके सम्बन्ध में स्पष्ट ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

रेखाचित्र बनाते समय निम्न सावधानियाँ बरतनी चाहिएँ-

1. रेखचित्र आकर्षक एवं रंगीन होने चाहिएं।
2. रेखचित्र प्रस्तुत प्रकरण के प्रसंग के अनुरूप होना चाहिए।
3. रेखाचित्र दर्शाने से पूर्व सम्बन्धित नवीन ज्ञान के सन्दर्भ में जानकारी दे देनी चाहिएं
4. रेखाचित्र का स्पष्टीकरण करने हेतु स्पष्ट एवं सुन्दर नामांकन होना चाहिए।
5. रेखाचित्र का आवश्यकतानुसार ही प्रयोग करके यथास्थान रख देना चाहिएं
6. रेखाचित्र को उचित स्थान पर टाँगकर उपयोग किया जाना चाहिए।

ग्लोब एवं नक्शे

कक्षा-शिक्षण के दौरान ग्लोब व नक्शे महत्वपूर्ण दृश्य सहायक सामग्री हैं नक्शे के द्वारा किसी भी स्थान की भौगोलिक स्थिति, एक स्थान से दूसरे स्थान की दूरी उसका क्षेत्रफल तथा विभिन्न भागों की वास्तविक स्थिति का ज्ञान प्रदान हेतु इसका प्रयोग किया जाता है। कक्षा शिक्षण के दौरान कुछ ऐसे भी प्रत्यय होते हैं, जिसका स्पष्टीकरण नक्शे के द्वारा संभव नहीं होता है यथा-पृथ्वी का आकार गोल है, नक्षत्रमण्डल, सूर्यग्रहण एवं चन्द्रग्रहण, चन्द्रकलायें,

दिन-रात का होना, ऋतु-परिवर्तन अक्षांश एवं देशान्तर रेखाएँ आदि प्रत्यय का स्पष्टीकरण ग्लोब द्वारा सरल, सहज, रुचिकर प्रेरणादायक एवं प्रभावशाली ढंग के साथ किया जा सकता है।

नोट

दूरवर्ती शिक्षा में शैक्षिक रेडियो की भूमिका अथवा उपयोगिता

अमुद्रित अनुदेशनात्मक माध्यमों में रेडियो सबसे सस्ता तथा सरलता से उपलब्ध होने वाला माध्यम है। अन्य माध्यमों की अपेक्षा रेडियो से बड़ी जनसंख्या के लिए प्रसारण किया जाता है। इसके द्वारा विभिन्न आयु वर्ग तथा प्राथमिक स्तर से प्रौढ़ अवस्था के छात्रों के लिए उपयोगी है। वित्तिय पक्ष तथा विशाल क्षेत्र के कारण रेडियो का उपयोग अधिक हुआ है। इसको उपयोग करना सरल तथा सुगम है। शिक्षा में प्रसारण हेतु इसका उपयोग अधिक किया जाता है। इसका उपयोग विभिन्न उद्देश्यों हेतु किया जाता हैं इसका उपयोग शब्दावली एकाग्रचित होना तथा सुनने की क्षमता को विकसित करने में किया जाता है। इसका उपयोग औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा में किया जाता है। इसे पूरक माध्यम के रूप में उपयोग करते हैं। तथ्यों व प्रत्ययों का स्पष्टीकरण किया जाता है। प्रसारण में बालकों के कार्यक्रमों को भी सम्मिलित किया जाता है। इसके द्वारा सभी को समान रूप में सीखने का अवसर दिया जाता है।

शैक्षिक रेडियो की प्रविधियाँ

श्रव्य टेप

शैक्षिक रेडियों कार्यक्रम की सीमाओं को इसके द्वारा कम किया जा सकता है। इसके द्वारा छात्रों को अधिक सीमा तक छूट की सुविधा प्रदान की जाती है। इसको छात्र अपनी आवेश्यकतानुसार अपने अधिगम के लिए प्रयोग कर सकते हैं। इसको अपने स्थान पर सुरक्षित रख सकता है इसमें अधिगमकर्ता सीखे हुए ज्ञान पर पुनर्विचार करके इसको प्राय: अपने कार्यक्रम के लिए प्रयुकत कर सकता है। रेडियो प्रसारण के द्वारा जो वैयक्तिक स्वतन्त्रता एवं विश्वसनीयता नहीं प्रदान की जाती है। उसको श्रव्य-टेपों की सहायता से प्राप्त किया जा सकता है।

प्रौढ़ छात्रों के लिए समय की बचत अधिक आवश्यक होती है। उनके अध्ययन के लिए उनके कार्यक्रम के अनुसार ही प्रसारण की सुविधा होनी चाहिये। उनके लिए उनके खाली समय में ही अध्ययन किया जाना चाहिये। बहुत से ऐसे छात्र हैं जो अपनी सुविधानुसार ही अध्ययन का कार्य करते हैं। उनके लिए श्रव्य-टेप ही सबसे अधिक उपयोगी हो सकते हैं।

श्रव्य-टेप तुलनात्मक रूप से मितव्ययी, साधारण एवं धारण योग्य होता है। इस प्रकार की तकनीकी व्यावसायिक स्तर पर भी प्राप्त हो सकती है। इसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक सुविधानुसार ले जाया जा सकता है।

दृश्य-रेडियो

ब्रिटिश रेडियो प्रसारण संस्था के द्वारा दो स्वतन्त्र प्रकार के चैनलों को विकसित किया गया है। पहला है श्रव्य सम्बन्धी दूसरा दृश्य सम्बन्धी, श्रव्य सम्बन्धी कार्यक्रम का एक प्रकार से प्रतिलिपि के रूप में प्राप्त किया जा सकता है। इसको स्लाइड, चार्ट, मॉडल आदि के रूपों में किया जा सकता है। दृश्य-रेडियो के अनेक प्रकार के लाभ हैं-

1. इसमें आर्थिक बचत की जा सकती है।
2. इसके द्वारा अधिगमकर्ता के विभिन्न स्तरों को ध्यान में रखा जा सकता है।
3. ऐसे दृश्य मूल्यांकन के अवसर प्रदान करता है।

नोट

शैक्षिक रेडियो की विशेषतायें

रेडियो प्रसारण के लिए दो प्रकार के स्थिर स्रोतों की आवश्यकता होती है-

1. कम लागत, कम आवश्यकता के द्वारा अत्यधिक रूप से क्षेत्र को निर्धारित कर सकता है।
2. इसके सैद्धान्तिक मूल्य होने चाहियें-
   a. **सरल रूप में पहुँच:** अन्य संचार माध्यमों की तुलना में रेडियो माध्यम के द्वारा देश के अधिकांश भागों में अधिक जनसंख्या तक पहुँचा जा सकता है। कम लागत के द्वारा इस प्रकार के कार्यक्र को अधिक सफल बनाया जा सकता है। इसको हम अपने घटों में अपनी सुविधानुसार प्रयोग में ला सकते हैं, छात्र अपने अध्ययन हेतु भी प्रयोग कर सकते हैं।
   b. **विस्तृत क्षेत्र:** आज के सक्रय में अपने देश के बड़े भाग को रेडियो सेवा के द्वारा सीधे जोड़ सकते हैं प्रसारण सेवा के द्वारा अपने महाद्वीप को जोड़ते हैं। रेडियो सेवा के द्वारा दूरवर्ती ग्रामों के व्यक्तियों को इस कार्यक्रम के द्वारा लाभान्वित कर सकते हैं। रेडियो सेवा को कई वर्षों की सेवा का अनौपचारिक शिक्षा पत्राचार द्वारा प्रदान करने का अनुभव है।
   c. **कम लागत एवं कार्यक्रम मूल्य:** रेडियो तकनीकी की तुलना में अधिक मितव्ययी होती है। इसके द्वारा कम लागत में कार्यक्रम तैयार कर सकते हैं तथा उसका प्रसारण भी कर सकते हैं।
   c. **अधिगम की सरलता:** रेडियो कार्यक्रमों में तत्कालीन कार्यक्रमों को यथास्थान सुन सकता है।
   d. **प्रगतिशील में प्रभावी:** रेडियो कार्यक्रमों में तत्कालीन कार्यक्रमों, समाचारों आदि की घटनाओं से परिचित होते हैं। इसके द्वारा विभिन्न प्रकार की सूचना प्राप्त कर सकते हैं। इसके द्वारा छात्र की चिन्तनशक्ति को भी विकसित कर सकते हैं।
   e. **प्रेरणात्मक सुविधा:** रेडियो प्रसारण शिक्षा को रोचक एवं मनोरंजनकारी बनाया जा सकता है, जब इसको चिन्तानात्मक रूप में लिया जाता है। छात्र के विचारों या भाव प्रसारण सेवा के द्वारा और भी प्रभावी बना सकते हैं।
   f. **सरल उत्पादन:** सृजनात्मक रेडियो कार्यक्रम को तैयार करना अन्य प्रकार के कार्यक्रमों से सरल होता है। इस प्रकार के उत्पादन में ही अधिक प्रकार की यान्त्रिक क्रियाओं की आवश्यकता पड़ती है और न ही अनेक प्रकार की मशीनों का प्रयोग में लाना पड़ता है। दूरदर्शन एवं विडियो कार्यक्रम की तुलना में रेडियो कार्यक्रमों को आसानी एवं कम शक्ति द्वारा तैयार कर सकते हैं।
   g. **प्रभावशाली:** मनोरंजन एवं वास्तविक प्रसारण-रेडियो कार्यक्रमों में ध्वनि के द्वारा कार्यक्रम को अधिक रोचक बना सकते हैं। रेडियो कार्यक्रमों के द्वारा

नोट

सैकड़ों मील दूर स्थित व्यक्ति को वास्तविकता से परिचित करा सकते हैं।

h. **अधिगम के विकास की सुगम:** विधियाँ-शिक्षा द्वारा विकास ही सामान्य घटक है। इस कार्य को सरलतापूर्वक रेडियो कार्यक्रमों के द्वारा कम व्यय में किया जा सकता है।

i. **सीधा अनुदेशन:** सीधे अनुदेशन के लिए रेडियो कार्यक्रमों को प्रयोग में लाने का प्रयास किया गया, लेकिन इसके लिए व्यवस्थित कार्यक्रमों एवं तीव्र कार्यक्रमों की आवश्यकता के लिए बल प्रदान किया है। एक निश्चित समह के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विषय-वस्तु आधारित कार्यक्रम की आवश्यकता का अनुभव किया गया है।

शैक्षिक रेडियो कार्यक्रमों की सीमायें-रेडियो कार्यक्रमों की कुछ सीमायें भी हैं। रेडियो माध्यम की सीमायें निम्नलिखित हैं-

1. रेडियो कार्यक्रम एक लचीला कार्यक्रम नहीं है। इसके द्वारा आमने-सामने अन्त:प्रक्रिया नहीं की जा सकती है। इससे श्रोता और वक्ता के मध्य आमने-सामने की क्रिया नहीं होती है। निर्देशन, पर्यवेक्षण, एवं प्रेरणा की अनुपस्थिति में अधिगम का कार्य प्रभावी कम होता है। अधिगम परिस्थियाँ प्रभावशाली नहीं होती हैं। इसमें शिक्षण अधिगम व्यवस्था एक पक्षीय होकर सूचना प्रदान करने वाली होती है।
2. दूरवर्ती छात्र की समस्याओं, प्रश्नों आदि का समाधान तुरन्त नहीं हो सकता है। इससे छात्र को पृष्ठपोषण नहीं प्रदान किया जा सकता है और विषयवस्तु को अधिक बोधगम्य नहीं किया जा सकता है।
3. यह सभी प्रकार के प्रभावी माध्यमों की विषय-वस्तु के लिए एक सशक्त माध्यम नहीं हो सकता है। उदाहरणस्वरूप इसके द्वारा प्रदर्शन के द्वारा किए जाने वाले अन्य प्रकार के प्रयोगों को दृश्य ढंग से कार्यान्वित नहीं किया जा सकता है।
4. प्रशंसनीय या योग्य शैक्षिक कार्यक्रमों के लिए अन्य प्रकार के कार्यक्रमों को व्यक्तिगत निर्णय के आधार पर प्रदर्शित किया जा सकता है। रेडियो कार्यक्रम सृजनात्मक प्रकार के कर्मचारी एवं अन्य प्रकार की शैक्षिक व्यक्तियों को आवश्यक समझता है, लेकिन इस कार्य के लिए काफी कठिनाई होती है।
5. शैक्षिक रेडियो कार्यक्रमों के प्रसारण को उचित समय एवं मानकं के अनुसार नहीं दिया जाता है। इससे छात्र को रेडियो-कार्यक्रम के अनुसार स्वयं को व्यवस्थित करना पड़ता है। जिससे कि उनके अन्य कार्यक्रम में बाधा उत्पन्न होती है। अधिकांश छात्र इसका लाभ नहीं उठा पाते हैं।
6. इसमें प्रशिक्षकों को विभिन्न प्रकार की जनता के लिए कार्यक्रम तैयार करने पड़ते हैं जिससे कि उनके कार्यक्रम में प्रवीणता नहीं रह जाती है, क्योंकि श्रोताओं में एकरूपता नहीं पायी जाती है। इससे सभी प्रकार के लोगों के लिए निश्चित प्रकार के कार्यक्रम को तैयार करने में कठिनाई होती है।
7. आरम्भ के समय में रेडियो द्वारा दी जाने वाली जानकारी से श्रोताओं की धारणा शक्ति में अधिक कमी पायी जाती है, क्योंकि आरम्भ के समय में उनकी धारणा का सम्प्रत्ययीकरण नहीं हो पाता है। इससे बीच-बीच में अनावश्यक प्रकार के निर्देशन देने पड़ते हैं। शैक्षिक कार्यक्रमों को रेडियो के प्रसारण में प्राथमिकता नहीं दी जाती है।

8. रेडियो कार्यक्रम के उत्पादन में तकनीकी विशेषज्ञों के पास उचित जानकारी नहीं होती है, जिसके द्वारा सैद्धान्तिक रूप से छात्र की आवश्यकता के अनुसार अन्य प्रकार के कार्यक्रमों को तैयार करने में कठिनाई होती है, विषय विशेषज्ञ कार्यक्रम के उत्पादन की अच्छी जानकारी नहीं रखते हैं, जिससे छात्र प्रभावित होता है। इससे दो प्रकार के समू के मध्य पर्याप्त रूप से सहयोग एवं जानकार न होने से उचित प्रकार के कार्यक्रम तैया नहीं हो पाते हैं।

नोट

दूरवर्ती शिक्षा में शैक्षिक दूरदर्शन की भूमिका अथवा उपयोगिता

दूरदर्शन, सम्प्रेषण तथा प्रसारण का एक प्रमुख साधन है। यह एक बहुत शक्तिशाली माध्यम के रूप में विकसित हो रहा है। इसने एक बड़े उद्योग का स्तर तेजी से प्राप्त कर लिया है। संसार तथा जीवन में एक महत्वपूर्ण क्रान्ति आई है। तकनीकी की दृष्टि से यह श्रव्य एवं दृश्य दोनों से युक्त है। यह अपने साधनों से व्यक्तियों के लिए वास्तविक सम्प्रेषण का प्रभावशाली साधन है। अपने कार्यक्रम के द्वारा यह प्रसारण एवं मनोरंजन का अधिसंख्य लोगों के लिए एक प्रभावकारी साधन है।

शिक्षा दूरदर्शन, राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा तैयार किए गए विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रम को सीखने के लिए प्रस्तुत किया जाता है। शिक्षा के बड़े स्तर की सभी बाधाओं को दूर करने का यह एक प्रभावकारी साधन है।

इसके द्वारा औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों प्रकार की शिक्षा का विकास सम्भव है। शिक्षा दूरदर्शन के द्वारा सम्पूर्ण संसार को एक कक्षा का स्वरूप प्रदान किया जा सकता है एवं कक्षा को घर के स्वरूप में बदला जा सकता है।

दूरदर्शन के नवीन विकास

विकसित राष्ट्रों के द्वारा कुछ उच्च कोटि की इलेक्ट्रॉनिक प्रविधियों का प्रयोग शिक्षण-अधि गम के लियें किया जाता है। यद्यपि भारत में इनमें से किसी का प्रयोग नहीं होता है, दूरवर्ती छात्रों के लिए इस प्रकार की जानकारी के लिए कुछ मूलभूत बातें नहीं होनी चाहियें। इन मूलभूत जानकारियों के लिए कुछ आवश्यक सूचनायें अद्योलिखित हैं-

सैटेलाइट पर आधारित सम्प्रेषण

भारत में शिक्षा के प्रसारण के लिए सैटेलाइट पर आधारित सम्प्रेषण की नई तकनीकी का विकास हुआ है। इसके द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में दृश्य-श्रव्य के नये युग का श्रीगणेश हुआ है। सन् (1975) में पहला शैक्षिक प्रयोग सैटेलाइट के द्वारा सूचना को प्राप्त करने के लिए किया गया। इस प्रकार का प्रयोग सैटेलाइट के प्रयोग के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार की स्थापना ग्रामीण क्षेत्रों के लिए सूदूरवर्ती ग्रामों के व्यक्तियों के लिए जनसंचार के उद्देश्य से की गई। इसके बाद इनसेट-1, इनसेट-2 बी का प्रयोग दूरवर्ती शिक्षा के विकास के लिए किया गया। सैटेलाइट तकनीकी की सहायता से भारत में दूरवर्ती-शिक्षा के प्रयोग से नये विकास को प्रभावशाली ढंग से लागू नहीं किया गया, लेकिन देश में प्रत्येक व्यक्तियों के पास दूरदशग्न उपलब्ध नहीं है, इसकी उपलब्ध होने में अभी समय है। विभिन्न क्षेत्रों में दूर तक फैले विभिन्न समुदायों के लोगों को आपस में जोड़ने के लिये प्रयोग किया जाता है। भारत सैटेलाइट के क्षेत्र में पूर्ण विकसित है। यह प्रशिक्षकों एवं शिक्षकों के लिए नवीन प्रकार की योजनाओं को तैयार करने में एवं शिक्षा के विकास में सहायक हो सकती है।

छात्र क्रियाकलाप

1. शैक्षिक रेडियो की प्रविधियों का अर्थ बतायें?

2. दूरवर्ती शिक्षा में शैक्षिक दूरदर्शन की भूमिका अथवा उपयोगिता की चर्चा करें?

सैटेलाइट पर आधारित सम्प्रेषण के प्रारूप के कुछ मुख्य लाभ अधोलिखित हैं-

नोट

a. **भौगोलिक वातावरण:** भारत में जहाँ पर भौगोलिक वातावरण एवं अन्य कारण कठिनाइयाँ पैदा करते हैं, सैटेलाइट आधारित सम्प्रेषण इस क्षेत्र में प्रभावशाली सिद्ध हुआ है। इसके द्वारा देश के सुदूरवर्ती एवं पहाड़ों पर एवं अन्य स्थानों पर कार्यक्रमों को प्रायोजित किया जाता है।
b. **आधुनिकीकरण के लिए:** सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक विकास के लिए भारत में सैटेलाइट सम्प्रेषण तकनीकी विशेष रूप से सहायक है। विश्व के परिवर्तनों एवं नवीन जानकारियों को गाँवों तक पहुँचाने के लिए दूरदर्शन अधिक उपयोगी है। इसके द्वारा आधुनिकीकरण की प्रभावशाली विधियों को लोगों तक पहुँचाया जाता है।
c. **क्रियान्वयन में शीघ्रता:** शैक्षिक प्रवर्तनों एवं अनुसन्धानों को कम-से-कम समय में इसके द्वारा तैयार किया जाता है एवं लागू किया जा सकता है। इसके द्वारा शैक्षिक कार्यक्रमों को कम से कम समय में लागू किया जा सकता है।
d. **प्रभावशाली मूल्य:** सैटेलाइट तकनीकी शैक्षिक कार्यक्रमों में प्रभावशाली मूल्यों में उपलब्ध कराती है। अन्य साधनों की तुलना में सैटेलाइट तकनीकी अधिकांश लोगों को साधन उपलब्ध कराने में सफल है, क्योंकि सैटेलाइट का सम्बन्ध अन्य साधनों के अतिरिक्त इसकी दूरी से कोई सम्बन्ध नहीं है। सूदूर तक फैले हुए समुदायों तक इस प्रकार के कार्यक्रमों को कम से कम दर पर उपलब्ध कराया जा सकता है। दूरदर्शन के प्रसारण के अतिरिक्त सैटेलाइट उपग्रह का प्रयोग अन्य विभिन्न प्रकार के उद्देश्यों के लिये किया जाता है, जैसे कि रेडियो, टेलीफोन एवं धातुवर्धन के लिए। इसके द्वारा दर्शन से दो विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को नियोजित किया जा सकता है।

दूरदर्शन के साथ टेलीफोन

दूरदर्शन के कार्यक्रमों के विषय में इसमें दो प्रकार के संचार माध्यमों की सुविधा प्रदान की गई है। इसमें विद्यार्थी अपनी समस्याओं तथा प्रश्नों का समाधान कर सकता है। भारतवर्ष में टेलीफोन की कमी के कारण इस प्रकार की सुविधा का लाभ उठाने में शैक्षिक दृष्टि से समय लग सकता है।

वीडियो टेप

वीडियो टेप दूरवर्ती-शिक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण एवं सशक्त साधन है। शिक्षा के क्षेत्र में वीडियो टेप तुलनात्मक रूप से एक नई तकनीकी है। इससे दूरदर्शन द्वारा सभी सुविधाओं का लाभ मिल सकता है, जबकि दूरदर्शन के द्वारा एक निश्चित एवं पूर्वनिर्धारित कार्यक्रम के द्वारा ही इसका प्रयोग किया जाता हैं वीडियो टेप के द्वारा ऐसे अशिक्षित व्यक्तियों को लाभान्वित किया जाता है, जिससे सम्प्रेषण चित्रों द्वारा आवश्यक होता है।

शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया के लिए वीडियो टेप का प्रयोग किया जा सकता है। इसका प्रयोग भविष्य में जिस किसी भी समय आवश्यक हो, किया जा सकता है। वीडियो टेप के द्वारा छात्र अपने प्रश्नों का समाधान कर सकता है। वीडियो तकनीकी के द्वारा छात्र अपने अनुसार करके अधिगम की पाठ्य-वस्तु को प्राप्त कर सकता है।

नोट

दूरदर्शन कार्यक्रमों के बहुउद्देशीय-माध्यम सम्भावित रूप में अधोलिखित हैं- एक तीसरे प्रकार की दृश्य-श्रव्य सामग्री के विवरण के लिए बहु-उद्देशीय साधन है, जिसको वीडियो टेप के सैट के नाम से जाना जाता है। यह भारतवर्ष में अधिक प्रचलित नहीं है, इसका कारण यह है कि वीडियो टेप की लागत अधिक है। शैक्षिक कार्यक्रमों का नियोजन कैसेटों के रूप में उपलब्ध नहीं है। भारत के मुख्य नगरों में केवल चार प्रतिशत लोगों के पास ही वीडियो रिकार्डर उपलब्ध हैं। भारतवर्ष में इगनों ही पहली शैक्षिक संस्था है जिसके द्वारा वीडियो कैसेट तैयार किया गया और इसका प्रयोग शिक्षण-अधिगम के लिए किया गया। अध्ययन केन्द्रों पर ही वीडियो रिकॉर्डर की सुविधा है, जिससे सम्पूर्ण देश में प्रसारण किया जाता है। सभी दूरवर्ती छात्रों द्वारा शिक्षण केन्द्रों पर पहुँचना सम्भव नहीं है। अत: इगनो के द्वारा भी सीमित छात्रों तक यह सुविधा प्रदान की जा सकती है।

शैक्षिक दूरदर्शन के लाभ

1. **शिक्षा में सामाजिक समानता:** शिक्षा संगठन ने शिक्षा दूरदर्शन समाजिक समानता प्राप्त करने के लिए उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होता है। नगरीय क्षेत्रों में जो लोग निम्न जीवन-स्तर बिताने के लिए बाध्य हैं, उनके लिए एक प्रभावशाली साधन के रूप में प्रयुक्त होता है। दूरदर्शन अनुदेशात्मक सामग्री के प्रस्तुतीकरण के लिए इसका प्रयोग किया जाता है।
2. **अनुदेशन की गुणात्मकता:** दूरदर्शन के कार्यक्रमों को सुव्यवस्थित एवं कक्षागत अनुदेशन की तुलना में समुचित ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है। इसके द्वारा शिक्षा की पारम्परिक व्यवस्था से प्रभावशाली प्रदर्शन किया जा सकता है।
3. छात्रों की शिक्षक पर निर्भरता को कम करना-छात्र अपने व्यक्तिगत प्रयासों से दूरदर्शन द्वारा अच्छा सीख सकता है। यदि दूरदर्शन की उपयोगिता को बढ़ा दिया जाये तो शिक्षक की आवश्यकता को कम किया जा सकता है।
4. **लचीलापन:** शिक्षा दूरदर्शन द्वारा पाठ्यक्रम एवं नवीन अनुदेशात्मक प्रविधियों को विकसित किया जा सकता है। सामाजिक आवश्यकता एवं शिक्षा के विस्तार के पाठ्यक्रम में निरन्तर संशोधन किया जा सकता है। यह अन्य विधियों के साथ भी विकसित किया जा सकता है।
5. **प्रभावशाली शिक्षकों का उपयोग:** शिक्षा दूरदर्शन के द्वारा शिक्षा की समानता एवं समान अवसर को अधिक सहयोग मिला है। नगरों में जिस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था है, उससे देश के दूरवर्ती भागों में फैले हुए छात्रों को शिक्षा दूरदर्शन द्वारा अध्ययन में प्रदान की जा सकती है। एक प्रभावशाली शिक्षक का सभी छात्रों को अध्ययन में लाभ मिल सकता है। शिक्षा दूरदर्शन के द्वारा अमीर एवं गरीब छात्रों के मध्य समानता लाई जा सकती है। सभी को शिक्षा के समान अवसर प्रदान किये जा सकते हैं।
6. **व्यय की प्रभावशीलता:** शिक्षा दूरदर्शन को लम्बे पैमाने पर लिया जाता है तो इससे व्यय में कमी की जा सकती है। इसके द्वारा देश के प्रत्येक भाग में कम व्यय पर शिक्षा प्रदान की जाती हैं। इसके द्वारा अध्ययन के स्तर तथा अनुदेशन की गुणवत्ता को यथावत् रखा जा सकता है।

7. **सेवारत् प्रशिक्षण:** शिक्षा दूरदर्शन का प्रयोग सेवारत् अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। एन॰ सी॰ आर॰ टी॰ ने शिक्षकों को अपनी शिक्षण विधियों एवं कौशलों के विकास के लिए प्रत्येक सप्ताह में कुछ कार्यक्रमों का आयोजन करता है।
8. **तार्किक रूप में सरल है:** दूरवर्ती-शिक्षा के प्रारूप को प्रभावशाली ढंग से क्रियान्वित करने के लिए शिक्षा दूरदर्शन तार्किक रूप से अधिक सरल है। शिक्षा-दूरदर्शन के शिक्षण द्वारा नियोजन की समस्या, दूरवर्ती अधिगम एवं अन्य प्रकार की कठिनाइयों को कम किया जा सकता है।
9. **श्रव्य एवं दृश्य घटकों का समायोजन:** दूरदर्शन के द्वारा दृश्य एवं श्रव्य क्रियाओं का लाभ लिया जा सकता है। इसमें रेडियो एवं अन्य साधनों से लाभकारी साधन उपलब्ध होते हैं।
10. **प्रेरणा:** शिक्षा दूरदर्शन के द्वारा शिक्षा के अन्य रूपों में गुणात्मक सुधार ला सकते हैं, दूरदर्शन के कार्यक्रमों में छात्र अधिक रुचि लेते हैं, अध्ययन हेतु प्रेरणा मिलती है।

नोट

शिक्षा दूरदर्शन की सीमायें

जैसा पहले ही बता चुके हैं कि शैक्षिक दूरदर्शन की उपयोगिता इस पर निर्भर करती है कि इसको किन शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये प्रयुक्त किया जाता है। शैक्षिक समाधान के रूप में इसकी उपयोगिता के विषय में ऊपर कह चुके हैं, लेकिन इसकी कुछ सीमायें हैं-

1. **एकमार्गीय-सम्प्रेषण की समस्या:** दूरदर्शन वास्तविक रूप से एक मार्गीय-सम्प्रेषण का संचार व्यक्त करता है, इसमें अन्त:प्रक्रिया नहीं होती है। इसके द्वारा दूरवर्ती-छात्र के तात्कालिक प्रश्नों का उत्तर तथा कठिनाइयों के समाधान की व्यवस्था नहीं होती है। इसको शिक्षक-प्रशिक्षक यह कहते हैं कि इसमें शिक्षार्थी केवल सूचना संग्रहकर्त्ता का काम करता है। इसके द्वारा छात्र के शैक्षिक स्वरूप में सक्रियता का अभाव होता है और छात्रों की इच्छा-शक्ति का दम होता है।
2. **शिक्षार्थी को अपनी गति से सीखने का अवसर नहीं होता है:** छात्र अपनी गति से अध्ययन करके सीखता है। शिक्षा दूरदर्शन के प्रसारण के समय छात्र को पूर्ण रूप से एकाग्रचित होकर ग्रहण करना पड़ता है। दूरदर्शन का शिक्षक एक सामान्य छात्र जिस गति से सीख सकता है, उसके अनुसार शिक्षक कार्य सम्पादित करता है। इसमें वैयक्तिक विभिन्नता का कोई स्थान नहीं होता है। यदि छात्र कुछ लिखना भी चाहे वह भी सम्भव नहीं होता है।
3. **अपर्याप्त चिन्तन अवस्थायें:** विद्यालयों में समुचित ढंग से कार्यक्रम की व्यवस्था नहीं होती है।
4. **महँगा-कार्य:** दूरदर्शन के द्वारा शिक्षण एक अत्यन्त ही महँगा कार्य है। इस प्रकार की मशीनरियों से युक्त दूरदर्शन-कार्यक्र अत्यन्त ही महँगा पड़ता है।
5. **एकीकरण की कठिनाई:** शिक्षा-दूरदर्शन के कार्यक्रमों को तैयार करने में अनेक कठिनाइयों को सामना करना पड़ता है। मुख्य कारण यह हे कि विभिन्न प्रकार की विषय-वस्तुओं का प्रचलन है, विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण की विधियाँ हैं। इन

सभी का किस प्रकार एकीकरण किया जाये, यह एक समस्या होती है।

शिक्षा दूरदर्शन के क्षेत्र एवं सुझाव

नोट

शिक्षा दूरदर्शन के कार्यक्रमों का प्रसारण केवल विकसित देशों में ही सम्भव हो पा रहा है। पिछले तीन वर्षों से भारत इस बात का उदाहरण है कि इसमें शैक्षिक कार्यक्रमों का विकास बहुत सीमित हुआ है। सन् 1984 के प्रारम्भ से 1985 के अन्त तक बिना बाधा के कोई भी कार्यक्रम प्रसारित नहीं किया जा सका है। इस समय भारत की 70 प्रतिशत जनसंख्या को दो सौ ट्रांसमीटरों के द्वारा दूरदर्शन का कार्यक्रम प्रसारित किया जा रहा है। किसी भी प्रकार से यह उत्तमकोटि की उपलब्धि है।

दूरदर्शन के कार्यक्रमों के विस्तार द्वारा भारतवर्ष के दूरवर्ती शिक्षा क्षेत्र में काफी प्रोत्साहन मिला है। आने वाले समय में भारतीय प्रशिक्षकों के लिये यह आवश्यक हो जायेगा कि वे दूरदर्शन के कार्यक्रमों को अधिक सहयोग करेंगे। इसके द्वारा रचनात्मक सहयोग विभिन्न विषयों के कार्यक्रम तैयार करने में किया जा सकता हैं। इस दृश्य-श्रव्य माध्यम के द्वारा विभिन्न प्रकार के कैसेट तैयार किये जा सकते हैं एवं उनका प्रसारण किया जा सकता है।

शिक्षा-तकनीकी के विकास के लिए इगनो जैसी संस्थायें विशेष योगदान कर सकती हैं। इन संस्थाओं का शिक्षा-तकनीकी के उपयोग में महत्वपूर्ण स्थान है। दृश्य सामग्री, स्व-अनुदेशनात्मक सामग्री को विशेष आवश्यकता होती है। इसके द्वारा पाठ्क्रम का विकास किया जाता है।

शिक्षा दूरदर्शन के लिए अधोलिखित सुझाव दिये गये हैं-

1. इस तरह के कार्यक्रमों में संरचनात्मक मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। उन सभी के लिये प्रशिक्षण प्रतिमान विकसित किया जा सकता है। शोध के निष्कर्षों को प्राप्त करने के लिये निर्देशक को पूर्ण रूप से इनका प्रयोग करने का अधिकार है। शोध से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर कार्यक्रम को तैयार करना चाहिए।
2. यह दूर्भाग्यपूर्ण है कि इस प्रकार की कोई संस्था नहीं है जिसके द्वारा इस प्रकार का कार्यक्रम तैयार किया जा सके, जिसके द्वारा संरचनात्मक मूल्यांकन किया जा सके। मुक्त विश्वविद्यालय इस प्रकार के कार्यक्रम तैयार करने में लगे हैं जिससे दृश्य-श्रव्य प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को बढ़ावा मिल सके। इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय अपने ढंग की पहली संस्था है, जिसमें शैक्षिक माध्यम के लिए दूरदर्शन एवं रेडियों का प्रयोग किया गया है। इगनो में इस ढंग के प्रशिक्षण कार्यक्रम को व्यवस्था की जाती है जिसमें प्रशिक्षण विभिन्न समय पर दिया जा सकें।
3. शिक्षा के विकास के लिये कार्यक्रमों को तैयार करने के लिए अनुसंधानकर्त्ताओं को पूर्ण रूप से प्रक्रिया को विकसित करना चाहिये। उनको केवल अनुसंधान के लिए ही नहीं बल्कि अन्य प्रकार के कार्यक्रमों को तैयार करने के लिए आगे आना चाहिए। अनुसंधानकर्त्ताओं को अध्ययन के लिये नियोजन, प्रतिलिपि तैयार करना एवं कार्यक्रम को सम्पादित करने का कार्य भी करना चाहिये।
4. कार्यक्रम में गुणात्मक सुधार एवं विकास के लिए उत्पादक को अनुसन्धान के निष्कर्षों को प्रयोग करना चाहिए।
5. शोधकर्ता एवं उत्पादक के मध्य आपसी विवाद का कार्यक्रम भी तैयार होना चाहिए, जिससे उन विचारों में आपसी आदान-प्रदान हो सके। एक उत्पादक को

शोधकर्त्ता के रूप में एवं शोधकर्त्ता को उत्पादक के रूप में कार्य करना चाहिए। एक शोधकर्त्ता को उत्पादक के रूप में प्रशिक्षण दिया जा सकता है जिससे वह अच्छे से अच्छा कार्य का सम्पादन कर सके। विषय विशेषज्ञों द्वारा और अच्छे से अच्छा कार्यक्रम तैयार किया जा सकता है। अपने विषय के कार्यक्रमों को करने के लिये अच्छा प्रदर्शन अपने क्षेत्र विशेष में कर सकता है।

नोट

6. यदि दूरदर्शन कार्यक्रम को एक निश्चित, व्यवस्थित एवं सुसंगठित रूप में प्रस्तुत किया जाये तो यह शिक्षण-प्रशिक्षण का एक उपयुक्त साधन बन सकता है। प्रशिक्षण और नये कार्यक्रम विभिन्न संस्थाओं के विकास में सहायक हो सकते हैं। इसके मुक्त विश्वविद्यालय के लिये विभिन्न प्रकार के लेखकों, सहायकों एवं विशेषज्ञों के लिये इसका कार्यक्रम सम्पादित किया जा सकता है। राष्ट्रीय शैक्षिक एवं अनुसन्धान प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्राथमिक शिक्षा के लिये प्रस्तुत किये गये कार्यक्रम का मूल्यांकन एवं उपयोगिता सिद्ध हो जाने के बाद इससे उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी लागू किया जा सकता है। दूरदर्शन कार्यक्रम के द्वारा सतत् एवं नवीन पाठ्यक्रमों को तैयार किया जाता है। इनको शिक्षण-प्रशिक्षण के लिये उपयोगी बनाया जा सकता है।

टेलीकॉन्फ्रेन्सिंग अमुद्रित माध्यम

दूरवर्ती-शिक्षा के लिये शैक्षिक टेलीकॉन्फ्रेसिंग एक सशक्त माध्यम के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। इसमें कई प्रकार के माध्यमों का प्रयोग किया जाता है और पारस्परिक समूह के द्वारा दो पक्षीय प्रसारण सम्प्रेषण की सुविधा होती हे। टेलीकॉन्फ्रेसिंग के तीन मुख्य रूप होते हैं-

1. श्रव्य टेलीकॉन्फ्रेसिंग
2. दृश्य टेलीकॉन्फ्रेसिंग,
3. कम्प्यूटर टेलीकॉन्फ्रेसिंग।

श्रव्य टेलीकॉन्फ्रेसिंग की तकनीकी दूरवर्ती-शिक्षा के लिये बहुत ही उपयुक्त प्रकार की तकनीकी मानी जाती है।

सन् 1880 तक टेलीकॉन्फ्रेसिंग अपनी प्रयोगात्मक अवस्था में थी, और इसका प्रयोग कभी-कभी किया जाता था, लेकिन पिछले कुछ वर्षो से यह दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं और प्रतिदिन इनका प्रयोग किया जाने लगा है। लेकिन इसके द्वारा यह पाया गया है कि इसमें लागत की कमी आई है तथा शिक्षार्थी की सेवा में गुणात्मक सुधार हुआ है। सुगमता से कम लागत की पूँजी के द्वारा यह दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं, एवं शिक्षार्थियों द्वारा यह आकर्षण का प्रमुख केन्द्र बन गया। इस माध्यम का शैक्षिक संस्थाओं में अधिक विकास हुआ है।

टेलीकॉन्फ्रेसिंग का तकनीकी विवरण

टेलीकॉन्फ्रेसिंग एक ऐसा इलेक्ट्रॉनिक माध्यम है जो तीन या चार व्यक्तियों के मध्य दो या अधिक स्थानों से विषय वस्तु के वर्तालाप में भाग ले सकते हैं, लेकिन टेलीकॉन्फ्रेसिंग एक उच्च गुणात्मक प्रकार की श्रव्य विधि है जो तुरन्त भाग लेने वालों के मध्य सूचनाओं का आदान-प्रदान करती है।

श्रव्य टेलीकॉन्फ्रेसिंग में कई टेलीफोनों की लाइनों की आवश्यकता होती हे या पारस्परिक

नोट

सम्बन्धित युक्तियों की आवश्यकता पड़ती है जिसकी कि एक सम्पर्क प्रविधि कहते हैं। प्रत्येक युक्तियों को प्रत्येक सम्पर्क द्वारा जोड़ना सामान्य अभ्यास माना जाता है। सम्पर्क के साथ प्रयोग में लाये गये श्रव्य उपकरण साधारण प्रकार के होते हैं; जैसे- हाथ से सेट, शीर्ष सेट, स्पीकर फोन, रेडियो टेलीफ़ोन आदि होते हैं।

श्रव्य टेलीकॉन्फ्रेसिंग सदैव स्थानीय कम्पनी के टेलीफोनों को प्रयोगों में लाती है। इसमें घरेलू लाइन के द्वारा भी कार्यक्रम को सम्पादित कर सकते हैं। टेलीकॉन्फ्रेसिंग के द्वारा वातावरण से प्रभावी सम्बन्ध बनाया जा सकता है। सामान्यत: प्रयोग करने लिये स्थानीय टेलीफोन कम्पनी से इस प्रकार उपकरणों को खरीदा जा सकता है। विशष्ट प्रकार के उपकरणों को कम्पनियों द्वारा महीने या सप्ताह भर के लिए किराये पर प्राप्त किया जाता है।

यदि स्थानीय टेलीफोन कम्पनी के द्वारा अधोलिखित प्रकार की सुविधा है तो किसी विद्यालय या कॉलेज को व्यक्तिगत टेलीकॉन्फ्रेसिंग प्रणाली शुरू करने में कम खर्च आता है-

1. अपेक्षाकृत ढंग से लाइन की व्यवस्था की जाए,
2. तात्कालिक अभिगम की दृष्टि परिस्थिति उत्पन्न की जाये तथा

टेलीकॉन्फ्रेसिंग से लाभ

श्रव्य टेलीकॉन्फ्रेसिंग की प्रभावशीलता को देखने के लिए कुछ अनुसन्धान कार्य भी किए गए हैं। इसके द्वारा अधिगमकर्ता के अधिगम प्रभाव को देखने का प्रयास किया गया है। इसमें पाया गया है कि जिस प्रकार आमने-सामने की प्रक्रिया के रूप में प्रभावी है, उसी प्रकार से टेलीफोन की सुविधा भी प्रभावशाली है। कनाडा में एक अध्ययन के द्वारा पता चला है कि सांख्यिकी के स्नातक स्तर पर छात्रों में पारम्परिक ढंग से शिक्षा प्रशिक्षण से अधिक सफलता प्राप्त की जा सकती है, जबकि पारम्परिक रूप से छात्रों के मध्य इस प्रकार से विकास की कम सम्भावनायें की जा सकती हैं।

सन् 1984 में अन्तर्राष्ट्रीय विचारगोष्ठी में इस बात के प्रमाण प्राप्त हुए हैं जिसके द्वारा शैक्षिक श्रव्य टेलीकॉन्फ्रेसिंग पर बल दिया गया है। इस प्रकार की व्यवस्था के लिए इसके निम्न लाभों के लिए सेवा प्रदान की गई है-

दूरवर्ती अधिगम के लिये प्रभावी सहायक

टेलीकॉन्फ्रेसिंग का उपयोग उस समय और अधिक बढ़ जाता है, जब इसमें छात्र विभिन्न समुदायों के रूप में दूर-दूर फैले हुए हों। इसमें विभिन्न समुदायों के मध्य विभिन्न केन्द्रों पर फैले हुए व्यक्तियों के मध्य इस प्रकार के विषय या कार्यक्रम दिये गये हों।

1. **मूल्य की प्रभावशीलता:** दूरवर्ती अभिगमकर्ताओं के लिए अन्य विधियों से यह विधि कम खर्चीली होती है।
2. **लचीली प्रणाली:** इस प्रकार की प्रणाली को जल्दी से छोटे या बड़े समूहों के रूप में व्यवस्थित किया जा सकता है। यह अधिक लचीली प्रणाली है।
3. **सुपरिचित अनुदेशनात्मक प्रणाली:** अनुदेशन की यह विधि अन्य विधियों के समान ही है। जैसा कि विभिन्न समूहों के मध्यम विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों द्वारा आपस में विचार-विमर्श किया जाता है।
4. **समय-सारणी को व्यवस्थित करने में सुगमता:** इससे पारम्परिक ढंग से न उपलब्ध होने वाले छात्रों के लिए भी समय-सारिणी व्यवस्थित की जा सकती है।

5. **बहु-स्थानीय अधिगम:** अनुदेशन का कार्यक्रम के उपागम को विविध केन्द्रों द्वारा नियन्त्रित किया जा सकता है।
6. **उच्चकोटि का अनुदेशन:** अनुदेशन सामग्री के स्तर को सुधारा जा सकता है या स्थिर रखा जा सकता है।
7. **तात्कालिक पृष्ठ:** पोषण टेलीकॉन्फ्रेंसिंग प्रणाली के द्वारा छात्रों को तुरन्त पृष्ठ-पोषण प्रदान किया जा सकता है।

नोट

टेलीकॉन्फ्रेंसिंग के प्रयोग

सम्पूर्ण विश्व में शैक्षिक माध्यमों के लिए टेलीकॉन्फ्रेंसिंग की सुविधा के लिए प्रयोग चल रहे हैं। एक दृश्य-श्रव्य प्रणाली की तरह यह अन्य प्रकार की सुविधा के लिए भी उपयोग में लायी जा सकती है। यह छात्र एवं शिक्षक को दूरदर्शन के प्रयोग की तरह कम लागत पर अधिक प्रकार के समूहों को जो कि आपस में सैकड़ों मील दूरी पर फैले हुए हैं, एक साथ शिक्षा प्रदान की जाती है तथा उनके मध्य चित्रों को प्रदिर्शित किया जाता है एवं उनके पास तक ध्वनियाँ भी पहुँचायी जाती हैं।

टेलीकॉन्फ्रेंसिंग का प्रयोग भारतवर्ष में भी किया गया है। इस दिशा में अहमदाबाद केन्द्र द्वारा कुछ अनुसन्धान किये गये हैं। इस प्रकार का अभिनवीकरण विभिन्न प्रकार के शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किया गया।

इस अध्ययन में यह पाया गया कि यह चारों तरफ फैले हुए विभिन्न समुदाय के लोगों के लिए यह बहुत ही अच्छा सुगम एवं प्रभावशाली उपागम है।

वीडियो डिस्क एक अमुद्रित माध्यम

वीडियो डिस्क एक नवीन प्रकार का माध्यम है जो कि दूरदर्शन के क्षेत्र एवं उपयोगिता को बढ़ाता है। वीडियो डिस्क के खिलाड़ी दो प्रकार के प्रतिमानों में उपलब्ध होते हैं-

1. उपभोक्ता प्रतिमान और
2. शैक्षिक या औद्योगिक प्रतिमान

उपभोक्ता प्रतिमान मुख्य रूप से घरों में प्रयोग में लाया जाता है। शैक्षिक प्रतिमान अत्यधिक अस्थिर होता है और इसके वैयक्तिता के आधार पर अनुदेशन दिया जा सकता है। कुछ समय के लिये यह माइक्रो प्रक्रिया में रूप में एक माध्यम के लिये उपलब्ध था। वीडियो डिस्क विभिन्न प्रकार के माध्यमों से अभिलेखों की समग्री को संचित करता है। इस प्रकार के व्यक्तिगत प्रकार के अनुदेशनों द्वारा नये-नये अवसरों की प्राप्ति की जा सकती है, जिसका प्रयोग दूरवर्ती अधिगम के लिए किया जा सकता है।

वीडियो डिस्क की तकनीकी

वीडियो डिस्क प्रणाली सूचनओं के संग्रह पर आधारित हैं। दूरदर्शन के सेट द्वारा उसको प्रयोग में लाया जाता है। वीडियो डिस्क को एक सूचना संग्रह के माध्यम के रूप में प्रयोग में लाते हैं। वीडियो डिस्क एक टेबिल के चारों तरफ चक्कर लगाती है और इसको एक अधिक गति वाले व्यक्ति से पढ़ाया जाता है। परिवर्ती घनत्व एवं लम्बाई के माइक्रोस्कोपिक में सारी सूचनायें एकत्रित की जाती हैं। इस प्रकार की एकत्रित सूचनायें क्रम में दूरदर्शन पर देखी जा सकती हैं।

वीडियो डिस्क के प्रयोग

वीडियो डिस्क प्रणाली के दो महत्वपूर्ण प्रकार होते हैं-

नोट

1. धारिता वीडियो डिस्क: धारिता एक प्रकार का प्रविधिक शब्द है जो कि विद्युत के आवेश को इकट्ठा करने के काम में लाया जाता है। यह दो प्रकार की प्लेटों के मध्य की दूरी पर निर्भर करता है। एक वीडियो डिस्क का खिलाड़ी जो कि इस प्रकार की तकनीकी का प्रयोग करता है, एक प्लेट के रूप में कार्य करता है। दूसरी प्लेट स्टाइल्स डिस्क के ऊपर चढ़ता हे तो डिस्क एवं स्टाइलस के मध्य दूरी बढ़ती हे जिसके कारण धारिता में भी अन्तर पड़ता हे। इस प्रकार के परिवर्तनों को श्रव्य एवं दृश्य संकेतों के रूप में दूरदर्शन द्वारा दिखाया जाता है।
2. दृष्टीय वीडियो डिस्क: दृष्टीय वीडियो डिस्क धारिता वीडियो डिस्क से अधिक उपयोगी होती है। दृष्टीय वीडियो डिस्क की धारिता इसके विभिन्न प्रकार के विभवों में होती है। एक दृष्टीय वीडियो डिस्क 108,000 टैंकों को अपने आप में समाहित कर सकती है। ब्रिटेन की पूरी इनसाइक्लो वीडियो को एक डिस्क में समाजित कर सकते हैं।

सूचनाओं को संकलित करने में दो प्रकार के चैनल होते हैं। द्वि-श्रव्यीय चैनों की उपागमता दूसरी भाषा को धारण करने की अनुमति प्रदान करती है। पहली भाषा के प्रयोग को विषय-वस्तुमुखी होने के लिए भिन्न प्रकार की भाषा की पृष्ठभूमि रखनी चाहिए। यह स्टीरियो की ध्वनि के लिए अनुमति प्रदान करती है।

वीडियो डिस्क प्रणाली आगे की तरफ तीव्र गति से चलती है, तीव्र गति से पीछे को भी चलती है, धीरे-धीरे गति होती है तथा गति को रोका भी जा सकता है। व्यक्तिगत दृश्यों को पुनः प्रदर्शित किया जा सकता है, क्योंकि इसमें आपस में यान्त्रिक सम्बन्ध नहीं होता है, लेकिन ध्वनि को अन्य किसी प्रकार के माध्यम से नहीं प्राप्त कर सकते हैं।

वीडियो डिस्क के लाभ

वीडियो डिस्क का प्रयोग कम मितव्ययी होता है। जब वीडियो डिस्क को विस्तार से तैयार किया जाता है। वीडियो डिस्क एक छोटा रूप प्राप्त करके रह सकता है। इस प्रकार के दोनों कारक एक छोटी डिस्क पर विस्तृत पुस्तकालय का रूप ले सकती है। इस डिस्क की सल विधि है, जिसके द्वारा अपनी इच्छानुरूप विषय सामग्री को रखा जा सकता है।

शिक्षार्थी की उत्पादकता बढ़ाने के लिए वीडियो डिस्क का प्रयोग निम्न प्रकार से किया जाता है-

1. अधिक प्रकार की सूचनाओं का आकर्षक माध्यम में प्रस्तुतीकरण करना,
2. डिस्के के विभिन्न भागों में तात्कालिक उपागम का प्रयोग करना,
3. दक्षता प्राप्त करने के लिए कार्यक्रम को दोहराना,
4. सजीव रंगों के द्वारा उच्चकोटि की अभिप्रेरणा घटनाओं के अनुकरण द्वारा प्रदान करना,
5. तात्कालिक पृष्ठ-पोषण की व्यवस्था करना,
6. स्वयं फेम की रुकावट करना और
7. छात्रों की अन्तःप्रक्रिया के लिए व्यवस्था छात्रों के मध्य विषय-वस्तु के साथ करना।

वीडियो डिस्क की सीमायें

मस्तिष्क में यह बात हमेशा रहती हे कि डिस्क की सतह पर स्थायी सूचनाओं को लिख दिया जाता है। वीडियो टेप की तरह वीडियो डिस्क की प्लेट पर एक बार मिट जाने पर उस पर नई विषय-वस्तु नहीं लिखी जा सकती है। वीडियो डिस्क उन कार्यक्रमों के लिए बहुत ही उपयोगी है जिनमें, लगातार सुधार की बात नहीं रहती है। डिस्क पर कम लागत आने के लिए विस्तार में डिस्क तैयार की जाती है, क्योकि लघु स्तर पर डिस्क तैयार करने पर यह वीडियो टेप से महँगा होता है।

नोट

वीडियोटेक्स एक अमुद्रित माध्यम

वीडियोटेक्स एक ऐसी प्रणाली है, जिसके द्वारा पारस्परिक सूचना प्रदान करने के लिए इसको प्रयोग में लाया जाता है।

सूचना की क्रान्ति में यह एक विशेष प्रकार की तकनीकी का विकास हुआ है, जिसका अनुभव आज के अनेक औद्योगिक देश अनुभव कर रहे हैं। तीन प्रकार के वीडियोटैक्स उपलब्ध हैं-

1. ब्रिटिश (प्रेस्टल)
2. फ्रेन्च तथा
3. कनाडियन (टेलीडन)।

वीडियोटेक्स घरेलू दूरदर्शन को एक कम्प्यूटर की तरह कार्य करने की अनुमति प्रदान करती है, जिसके द्वारा दूरवर्ती आँकड़ों पर आधारित सूचना एकत्रित की जा सकती है। इस प्रकार ये तकनीकें घर में एक उचित प्रकार के मूल्य पर उपलब्ध हो सकती हैं।

वीडियोटेक्स की तकनीकी

बुनियादी विडियोटेक्स एक प्रकार के आँकड़ों पर आधारित केन्द्रीय कम्प्यूटर से सम्बन्धित प्रदर्शन की एक इकाई के रूप में है। कम्प्यूटरीकृत सूचना के लिए विडियोटेक्स टेलीफोन एवं दूरदर्शन का उपयोग करता है। एक कीपैड होता है, जिसमें अनेकों प्रकार के बटन लगे होते हैं। यह पृष्ठों के दूरवर्ती पृष्ठों के लिए आवश्यक प्रकार की सूचनाओं को धारण किए रहता है।

दूरदर्शन व कम्प्यूटर को टेलीफोन द्वारा जोड़ा जाता है और इसको एक साधन के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। विडियोटेक्स पर रिकॉर्डिंग के लिए खोला जाता है। इस प्रकार के घरेलू दूरदर्शन का प्रयोग अन्त तक ले जाया जाता है। एक टेलीविजन का सेट अधिकांश घरों मे पाया जाता है। इस प्रकार के माध्यम का व्यापक रूप से शैक्षिक एवं सामाजिक उपयोग होता है।

डिकोडर को सीधे दूरदर्शन के अन्दर जोड़ सकते हैं। उत्पादन के समय इसको अन्दर ही तैयार कर सकते हैं या तैयार होने के बाद बाहर जोड़ सकते हैं। डिकोडर के द्वारा दूरदर्शन की कीपैड की सहायता से दिखाने का प्रयास किया जाता है। आधुनिक समय में एक कम्प्यूटर को गिनती एवं अन्य प्रकार के स्रोतों से भाषण के लिए युक्त किया जाता है।

विडियोटेक्स के लाभ एवं उपयोग

इसके निम्नलिखित लाभ तथा विशेषतायें हैं-

छात्र क्रियाकलाप

1. शिक्षा दूरदर्शन के क्षेत्र एवं सुझावों की चर्चा कीजिए?

2. टेलीकॉन्फ्रेन्सिंग अमुद्रित माध्यम क्या हैं?

1. प्रारम्भिक अवस्था में विडियोटेक्स के अनेक उपयोग हैं। शब्दों का खेल, द्वितीय भाषा की शिक्षा, बधिरों के लिए अनुदेशन आदि प्रकार के विडियोटेक्स के परीक्षणों को प्राप्त किया गया है। दूरवर्ती-शिक्षा में विडियोटेक्स का प्रयोग सम्प्रेषण तथा सामान्य एवं विशष्ट प्रकार की सूचनाओं के लिए किया जाता है।
2. विडियोटेक्स प्रणाली सामान्य सूचना के लिए अत्यधिक उपयोगी है। शैक्षिक अवसरों की उपलब्धता के लिए, जानकारियों में वृद्धि के लिए, पाठ्यवस्तुओं की सूचनाओं के लिए इसका प्रयोग आवश्यक है।
3. वास्तविक आँकड़ों पर आधारित यह प्रणाली दूरवर्ती शिक्षार्थी के लिए मूल रूप से आवश्यक है। पुस्तकालयों में उपलब्ध विषय सामग्री के आधार पर यह दूरवर्ती छात्रों के लिए अनुदेशन का कार्य करती है।
4. विडियोटेक्स का उपयोग रेडियो, टेलिफोन सम्प्रेषण माध्यम से किया जाता है, क्योंकि यह समय की सीमा से मुक्त होता हैं विडियोटेक्स कम्प्यूटर पर आधारित अनुदेशनों को भी प्रयोग में लाता है। दो ध्रुवीय प्रक्रिया भी इसके द्वारा सम्पादित की जाती हैं, जिससे शिक्षक और शिक्षार्थी के मध्य सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। इसे शिक्षक और छात्र के मध्य अन्तःक्रिया भी होती है, जिसके द्वारा छात्रों एवं शिक्षक के मध्य तात्कालिक पृष्ठपोषण भी दिया जा सकता है।

नोट

विडियोटेक्स की सीमायें

विडियोटेक्स के द्वारा दृश्य सामग्री की सुविधा प्रदान करने के साथ-साथ श्रव्य साधन के लिए कोई सुविधा नहीं रहती है, जब विडियोटेक्स का बहु-माध्यमीय प्रणाली के रूप में अनुदेशन सामग्री के लिए प्रयोग करेंगे, तब इससे अच्छा प्रदर्शन कर सकते हैं, जबकि यह अपने प्रयोगात्मक परीक्षण की अवस्था में है, इसकी लागत प्रभावशीलता के बारे में स्वयं निर्णय नहीं ले सकते हैं।

फिल्म

फिल्म के द्वारा शिक्षण-अधिगम की परिस्थितियों का सरल, साइज, रोचक एवं प्रभावशाली बनाया जाता है। कक्षा शिक्षण में फिल्में बहुत सहायक सिद्ध होती है। फिल्म की सहायता से छात्रों को वास्तविकता से परिचय कराया जाता है। फिल्म वे चलचित्र है, जिनमें गति होती है जो क्रिया को विस्तार से और निश्चितत क्रम से प्रस्तुत करते हैं। फिल्मों द्वारा शिक्षा से सम्बन्धित विभिन्न प्रक्रियाओं, खोजों तथा अन्य सूचनाओं के विषय में ज्ञान प्रदान किया जाता है। इसके माध्यम से दिया गया ज्ञान अधिक प्रभावशाली एवं स्थायी होता है। छात्रों के ध्यान को विष्य-वस्तु पर केन्द्रित करने में विशेष मदद मिलती है। इसे शिक्षण के सफल अभिकरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। प्रगतिशील देशों में इसका प्रयोग कक्षा शिक्षण में बहुतायत किया जाता है। फिल्म के दूसरे वर्गीकरण के अन्तर्गत दो प्रकार की फिल्में आती हैं-

आधार शिक्षण फिल्म

इन फिल्मों का निर्माण कक्षा शिक्षण को सरल, रोचक, बोधगम्य एवं प्रभावशाली बनाने हेतु किया जाता है। इससे पाठ्य वस्तु का प्रस्तुतीकरण सरल एवं बोधगम्य बनाया जाता है। प्रसंगानुसार इसका प्रयोग कक्षा शिक्षण में किया जाता है। ये निम्न प्रकार की होती है-

नोट

1. प्रक्रिया फिल्म
2. सामान्य जानकारी फिल्म
3. कौशल प्रदर्शन फिल्म
4. पुनरीक्षण फिल्म: किसी घटना या व्यक्ति के जीवन पर आधारित फिल्म।

पूरक शिक्षण फिल्म

इन फिल्मों का निर्माण किसी अन्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है, लेकिन समय-समय पर इनका प्रयोग शैक्षिक प्रत्ययों को स्पष्ट करने के लिए किया जाता है। इन फिल्मों में प्रसंगानुसार प्रयोग करके शिक्षण कार्य सरल, सहज एवं बोधगम्य बनाया जाता है। ये फिल्म मुख्यत: तीन प्रकार की होती हैं-

1. **डॉक्यूमेंटरी फिल्म:** ये फिल्में समाज की वास्तविक जीवन की घटनाओं पर आधारित करके वास्तविक प्रसंग पर बनाई जाती है। शिक्षण कार्य में पाठ्यवस्तु के स्पष्टीकरण में प्रसंगानुसार इसका प्रयोग प्रस्तुत विषय-वस्तु को सरल, रोचक एवं बोधगम्य बनाया जाता है।
2. **स्पॉन्सर्ड फिल्म:** यह फिल्म किसी घटनाक्रम को पूर्ण चित्रित रूप में प्रस्तुत करती है, जबकि वास्तविक रूप से घटना संभव नहीं होता है। इसका प्रयोग शिक्षण-अधिगम की परिस्थितियों को प्रभावशाली बनाकर अधिगम का मार्ग प्रशस्त करना है।
3. **फीचर फिल्म:** ये फिल्में साधारणत: मनोरंजन के दृष्टिकोण से बनाई जाती हैं जो ड्रामें या कार्टून के रूप में होती हैं, लेकिन आवश्यकतानुसार इन फिल्मों के माध्यम से शिक्षण-अधिगम की परिस्थितियों को प्रभावशाली बनाकर अधिगम का मार्ग प्रशस्त किया जाता है। शिक्षक को इन फिल्मों का प्रयोग आवश्यकतानुसार करना चाहिए। शिक्षक को पहले इन फिल्मों से परिचित होना चाहिए तथा उन्हीं फिल्मों का प्रयोग विद्यालय में करना चाहिए जो प्रसंगानुसार उपयुक्त हो। शिक्षण कार्य को प्रभावशाली, रुचिकर बनाने में जो फिल्म दिखानी हो वह अधिक लम्बी नहीं होनी चाहिए, अन्यथा एक कालांश के लिए निर्धारित पाठ्यवस्तु पूर्णत: प्रस्तुत नहीं हो पायेगी और पाठ अधूरा रह जायेगा।

फिल्म के लाभ

फिल्म या चलचित्र के निम्न लाभ हैं, जो इस प्रकार से हैं-

1. फिल्म एकमात्र ऐसा श्रव्य-दृश्य सामग्री है, जिसकी सहायता से क्रिया व व्यवहार को वस्तुत: वास्तविक और जीवन्त रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।
2. इसका प्रयोग तब किया जाना चाहिए जब दूसरे किसी माध्यम से अनुभव न दिया जा सके।
3. जब किसी पाठ्यवस्तु को श्रव्य-दृश्य सामग्री के रूप में प्रस्तुत करना हो।
4. फिल्म का प्रयोग किसी विषय का ज्ञान जन-जन तक पहुँचाने के लिए सरलता से किया जा सकता है।
5. किसी पाठ्यवस्तु की प्रक्रिया के स्पष्टीकरण में इसका प्रयोग किया जा सकता है।
6. फिल्म के माध्यम से प्रदर्शित प्रसंग को किसी भी गति से बार-बार प्रदर्शित की जा सकती है।

7. फिल्म के माध्यम से शैक्षिक घटनाओं का सारांश आसानी से प्रस्तुत किया जा सकता है।
8. फिल्म का प्रयोग भाषा की सीमाओं से हटकर भी सफलतापूर्वक किया जा सकता है।
9. प्रकृति में कुछ क्रियायें तीव्र गति से तथा कुछ मन्द गति से होती हैं, इन्हें भी दृश्य एवं प्रदर्शित किया जा सकता है।
11. फिल्में प्रचार का वर्तमान समय में बहुत ही प्रभावशाली माध्सम होती हैं।
12. फिल्में छात्रों में रुचि, प्रेरणा तथा उत्सुकता का विकास करती हैं जो अधिगम हेतु बहुत उपयोगी होता है।

नोट

फिल्म-खण्ड एवं फिल्म

शैक्षिक दृष्टिकोण से फिल्म खण्ड एवं फिल्म द्वारा शिक्षा से सम्बन्धित विभिन्न प्रक्रियाओं, खोजों तथा अन्य ज्ञानवर्द्धित सूचनाओं के विषय में ज्ञान प्रदान किया जाता हे। फिल्म-स्ट्रिप तथा फिल्मों में किसी भी विषय का ज्ञान निश्चित क्रम में विस्तारपूर्वक स्पष्ट करने वाले होते हैं। चूँकि यह दृश्य-श्रव्य सामग्री का अंग होने के कारण, इनके माध्यम से प्रदान किया जाने वाला ज्ञान अधिक स्थायी, आर्कषक तथा बोधगम्य होते हैं। इनका वर्णन सुविधा के दृष्टिकोण से अलग-अलग करना अधिक ज्ञानवर्द्धक होगा।

फिल्म खण्ड, श्रव्य-दृश्य सामग्री का एक अंग होता है, जिसकी सहायता से विषय-वस्तु की सरल, सहज, रोचक तथा बोधगम्य बनाया जाता हे। यह रासायनिक पदार्थों से तैयार की गई 35 मी॰ की फोटो के निगेटिव की भाँति होती है जो सीसे की स्लाइड की अपेक्षा अण्कि सुगमता से दिखाई जा सकती है। सह स्लाइड की भाँति टूटती-फूटती नहीं है और टिकाऊ हुआ करती है। इन्हें लाने ले जाने में सुगमता होती है। इन्हें प्रोजेक्टर की सहायता से दिखाया जा सकता है। फिल्म-स्ट्रिप, फिल्म रील का एक अंश होता हैं। जिसमें वांछित विषय-वस्तु प्रस्तुत प्रकरण के विषय में क्रमवार अनेक चित्र/संदेश द्वारा प्रदिर्शि किए जाते हैं। ये पिक्चर ड्रांइग से सम्बन्धित पंक्तियाँ भी हो सकती हैं या फोटोग्राफ चित्र या अन्य इसी प्रकार की क्रमबद्धता लिए हुए पिक्चर का समूह भी हो सकता है जो एक अकेले प्रकरण की व्याख्या करता है।

सेन्ट्रल फिल्म लाइब्रेरी भारत सरकार व अन्य व्यावसायिक केन्द्रों से विज्ञान एवं अन्य विषयों से सम्बन्धित फिल्म स्ट्रिप प्राप्त की जा सकती है। फिल्म-स्ट्रिप 'इकाई फ्रेम' या दुगुने फ्रेम में प्राप्त की जा सकती है। इकाई फ्रेम में इसका आकार 18 24mm और दुगुने फ्रेम में इसका आकार 24 36mm का होता है। यह फिल्म ब्लैक एण्ड व्हाइट तथा रंगीन फिल्म के रूप में तैयार की जा सकती हैं वर्तमान समय में रंगीन फिल्मों का अधिक प्रचलन है। फिल्म-स्ट्रिपों को शिक्षण के सफल अभिकरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। कुछ प्रगतिशील देशों में फिल्म-स्ट्रिपों का बहुतायत में प्रयोग कक्षा-शिक्षण के दौरान किया जाता है। कुछ फिल्म-स्ट्रिप व्याख्या शीर्षक वाली होती है। किन्तु अधिकांश शिक्षण नोट्स वाली होती है। जिनके साथ फिल्म-स्ट्रिप जुड़ी होती है। ये नोट्स प्रत्येक फ्रेम को समझाने में निदेशक का कार्य करती है। कुछ 'फिल्म-स्ट्रिप' टेप के साथ जुड़ी होती है। ये टेप, कथन, आवाज या ध्वनि को प्रभावशाली बनाने हेतु प्रयोग में लाये जाते हैं।

कक्षा-शिक्षण में फिल्म-स्ट्रिप का प्रयोग

नोट

कक्षा-शिक्षण के दौरान फिल्म-स्ट्रिप का प्रयोग निम्न ढंग से किया जा सकता है-

1. कक्षा शिक्षण हेतु शिक्षक को ऐसी फिल्म-स्ट्रिप का चुनाव करना चाहिए जो प्रस्तुत पाठ्य-वस्तु के प्रस्तुतीकरण में अधिक-से-अधिक योगदान दे सकें।
2. बालकों को फिल्म-स्ट्रिप देखने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।
3. प्रत्येक फ्रेम को प्रस्तुत करने के साथ ही साथ शिक्षक को प्रत्येक फ्रेम से सम्बन्धित विचार भी प्रस्तुत करें।
4. शीर्षक तथा व्याख्या फिल्म-स्ट्रिप को कक्षा-शिक्षण के दौरान फ्रेम से सम्बन्धित विचार भी प्रस्तुत करे।
5. कक्षा-शिक्षण के अर्न्तगत मूल्यांकन कार्य भी किया जाना चाहिए।
6. मूल्यांकन कार्य प्रश्नोत्तर द्वारा किया जा सकता है।

कक्षा-शिक्षण में फिल्म-स्ट्रिप का प्रभाव शिक्षक की कुशलता पर निर्भर करता है। अत: इसका प्रयोग एक दक्ष शिक्षक को ही करना चाहिए, ताकि वांछित उद्देश्य की पूर्ति संभव हो सके। वर्तमान समय में फिल्म-स्ट्रिप टेप के साथ भी उपलब्ध है। शिक्षक इसमें अपने कथन को टेप करें और आवश्यकतानुसार उसे प्रस्तुत करें तो कक्षा, शिक्षण अधिगम की प्रभावशाली परिस्थिति का सृजन किया जा सकता है।

कक्षा शिक्षण में फिल्म-स्ट्रिप के प्रयोग में सावधानियाँ

यद्यपि फिल्म-स्ट्रिप की कक्षा शिक्षण के दौरान प्रयोग में जहाँ बहुत सी अच्छाइयाँ है, वहीं इसमें कमियाँ भी हैं। अत: कक्षा शिक्षण में फिल्म-स्ट्रिप के प्रयोग में निम्न सावधानियाँ बरतनी चाहिएं-

1. स्विच को ऑन एवं ऑफ करते समय सावधानी बरतनी चाहिए।
2. प्रोजेक्टर से लेन्सों की सावधानी से निकालकर, समय-समय पर साफ किया जाना चाहिए।
3. प्रोजेक्टर को ठंडा करने के लिए पंखे का प्रयोग किया जाना चाहिए।
4. 'लेंस' तथा 'एपरचर' से धूल हटाने के लिए ब्रुश का प्रयोग किया जाना चाहिए।
5. लैम्प बदलने की विधि मे पारंगत होना चाहिए।
6. प्रयोग के दौरान अतिरिक्त लैम्प अपने पास रखना चाहिए।
7. पर्दे पर प्रदर्शित की जाने वाली शिक्षण-सामग्री सार्थक होनी चाहिए।
8. इस यंत्र का प्रयोग आवश्यकतानुसार ही किया जाना चाहिए।
9. फिल्म-स्ट्रिप को धूल एवं सूर्य के प्रकाश से बचाकर रखना चाहिए।
10. फिल्म-स्ट्रिप का प्रयोग करते समय कमरे में अंधेरे का वातावरण स्थापित किया जाना चाहिए।

डिजाइनिंग और स्व-निर्देश सामग्री को तैयार करना (Designing and Preparing Self Instructional Material)

श्यामपट्ट

श्यामपट्ट कक्षा शिक्षण सहायक समग्री का एक महत्वपूर्ण अंग होता है, सर्वप्रथम

श्यामपट्ट का उपयोग गणित एवं कला के विषय के लिए किया जाता था, परन्तु वर्तमान समय में इसका उपयोग सभी विषयों के शिक्षण में किया जाता हैं ज्ञानेन्द्रियाँ ज्ञान प्राप्त करने की साधन हैं। ज्ञानार्जन हेतु जितनी अधिक ज्ञानेन्द्रियाँ का प्रयोग किया जायेगा, ज्ञान उतना ही अधिक स्थायी होता है। मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान की अपेक्षा दो या दो से अधिक इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान अधिक स्थायी होता है। श्यामपट्ट का शिक्षण में प्रयोग, दो इन्द्रियों के प्रयोग को सुलभ कराता है जो क्रमशः श्रवणेन्द्रिय तथा चक्षुइन्द्रिय हैं। इस प्रकार श्यामपट्ट के प्रयोग से छात्रों को सुनने एवं देखने दोनों का अवसर एक साथ प्राप्त होता है, जो शिक्षण के लिए श्यामपट्ट बहुत ही उपयोगी सहायक सामग्री है।

नोट

श्यामपट्ट के प्रकार

श्यामपट्ट मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं-

1. **भित्ति श्यामपट्टः** भित्ति-श्यामपट्ट का अभिप्राय इसके नाम से ही स्पष्ट हो जाता है। इसका निर्माण कक्षा की दीवार पर कर दिया जाता है। इस प्रकार के श्यामपट्ट को एक स्थान से दूसरे स्थान तक नहीं लाया और ले जाया जा सकता है। इसके गिरने एवं टूटने का डर नहीं होता है। अतः ये अधिक टिकाऊ होते हैं।
2. **उठाने व गिराने वाला श्यामपट्टः** इस प्रकार के श्यामपट्ट में दो श्यामपट्ट एक साथ जुड़े होते हैं। जिसके फलस्वरूप इस प्रकार के श्यामपट्ट में लिखने के लिए स्थान बहुत होते हैं। आवश्यकतानुसार श्यामपट्ट के एक पटल पर कार्य करने के उपरान्त दूसरी पटल पर भी काम किया जाता है। इस श्यामपट्ट की आवश्यकता पड़ने पर दूसरे स्थान पर सुविधापूर्वक लपेटकर ले जाया जा सकता है।
3. **इजिल श्यामपट्टः** यह लकड़ी के एक तख्ते का आयतकार या वर्गाकार होता है। इस प्रका का श्यामपट्ट प्रायः छोटे विद्यालयों में देखने को मिलता है। इस प्रकार के श्यामपट्ट में दोनों और काला करके लिखा जा सकता है। लेकिन विद्यालयों में प्रायः एक ही ओर काला करके लिखा जाता है।

श्यामपट्ट का उपयोग कैसे करें?

श्यामपट्ट का उपयोग करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए-

1. श्यामपट्ट कार्य करते समय अध्यापक को थोड़ा तिरछा (श्यामपट्ट से शिक्षक के शरीर के बीच 45° का कोण) खड़ा होकर कार्य करना चाहिए, जिससे कि श्यामपट्ट पर लिखी जाने वाली बातें छात्रगण को दिखाई पड़ सकें।
2. शिक्षक द्वारा श्यामपट्ट पर केवल आवश्यक बातों का ही उल्लेख किया जाना चाहिए।
3. शिक्षक द्वारा श्यामपट्ट पर लिखने हेतु, लिखने से पूर्व श्यामपट्ट लेखन का अभ्यास कर लेना चाहिए।
4. श्यामपट्ट पर लिखी जाने वाली बातों को शुद्ध एवं स्पष्ट लिखना चाहिए।
5. श्यामपट्ट पर लिखे जाने वाले शब्द समान आकार के होने चाहिए।
6. दो शब्दों के बीच की दूरी समान होनी चाहिए।
7. दो वाक्यांशों के बीच की दूरी समान होनी चाहिए।

नोट

8. श्यामपट्ट पर अध्यापक को काफी तेज लिखना चाहिए, लेकिन इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि श्यामपट्ट लेखन में अशुद्धता एवं कुरूपता न आयें।
9. श्यामपट्ट पर लेखन कार्य करते समय अध्यापक को चाहिए कि वह अपनी पंक्तियों और शीर्ष रेखाओं को सीधी रखें।
10. श्यामपट्ट पर लेखन कार्य करते समय बीच-बीच में अध्यापक को मुड़कर छात्रों पर भी ध्यान देना चाहिए। ऐसा न करने से कक्षा अनुशासन नहीं बन पाता है, क्योंकि इससे छात्रों को शरारत तथा निरर्थक बात-चीत करने का मौका मिल जाता है।
11. काले श्यामपट्ट पर लिखने के लिए सफेद चॉक का प्रयोग करना चाहिए।
12. चित्र, मानचित्र रेखाचित्र बनाने के लिए रंगीन चॉक का प्रयोग करना चाहिए।
13. श्यामपट्ट पर लिखी जाने वाली बातों को तुरन्त दुहराते भी जाना चाहिए, अन्यथा लिखने में हुई त्रुटि द्वारा उपहास होता है।
14. श्यामपट्ट पर आवश्यकतानुसार दोनों भाषओं (हिन्दी, अंग्रेजी) का प्रयोग किया जा सकता है।
15. श्यामपट्ट पर लेखन कार्य करते समय, लिखी जाने वाली बातों का उच्चारण भी करते जाएं।
16. श्यामपट्ट पर एकदम नीचे जगह न होने पर भी नहीं लिखना चाहिए।
17. श्यामपट्ट पर चॉक या खड़िया द्वारा लिखते समय किसी प्रकार की ध्वनि (किर्र-किर्र) न होने दें।
18. चॉक या खड़िया को शिक्षण कार्य करते समय लगातार हाथ में हारिल की लकड़ी की तरह न रखें। आवश्यकतानुसार ही हाथ में और उपयोगिता न होने पर यथास्थान रख दें।
19. शिक्षण कार्य के दौरान छात्रों को भी श्यामपट्ट पर लेखन कार्य करने का अवसर मुहैया करना चाहिए, जिससे कि छात्रों को भी श्यामपट्ट पर लेखन का अभ्यास करने का अवसर प्राप्त होगा।
20. श्यामपट्ट पर लिखी हुई बातों की उपयोगिता समाप्त होते ही उसे मिटा देना चाहिए। लेकिन यह ध्यान रहे कि श्यामपट्ट सारांश सम्पूर्ण आवंटित घंटेभर में बनेगी।
21. ज्यों ही घण्टा समाप्त हो जाये तो श्यामपट्ट पर लिखी सारी बातों को साफ कर दिया जाना चाहिए।
22. श्यामपट्ट पर लिखी बातों को मिटाने के लिए डस्टर का प्रयोग करना चाहिए।

श्यामपट्ट के गुण

श्यामपट्ट के निम्नलिखित गुण होने चाहिएँ-

1. श्यामपट्ट ऐसे स्थान पर बनावें या रखें कि सभी छात्र सुविधापूर्वक ठीक से देख सकें।
2. श्यामपट्ट की सतह अधिक चिकनी नहीं होनी चाहिए, अन्यथा श्यामपट्ट लेखन कार्य करते समय चॉक फिसल जाया करेगी।
3. श्यामपट्ट अनेक रंगों में उपलब्ध होता है। लेकिन प्राय: काले रंग के श्यामपट्ट का प्रयोग अच्छा होता है।

4. श्यामपट्ट ऐसा होना चाहिए ताकि आवश्यकतानुसार ऊपर-नीचे उठाया जा सके।
5. श्यामपट्ट का निर्माण या स्थान ठीक खिड़की के सामने नहीं होना चाहिए, अन्यथा खिड़की से पड़ने वाले प्रकाश से श्यामपट्ट पर लिखी बातें स्पष्ट दिखाई नहीं पड़ेगी।
6. श्यामपट्ट पर काफी स्थान होना चाहिए ताकि आवश्यकतानुसार सभी बातों को उस पर लिखा जा सके।

नोट

श्यामपट्ट के उपयोग का महत्व

शिक्षण कार्य में श्यामपट्ट के उपयोग का निम्न महत्व है-

1. श्यामपट्ट के उपयोग से दो इन्द्रियों द्वारा ज्ञानार्जन का अवसर प्राप्त होता है।
2. प्रस्तुत पाठ्वस्तु के महत्वपूर्ण प्रसंगों पर ध्यान केन्द्रित करने का अवसर प्राप्त होता हे।
3. कठिन स्थलों का व्याख्या हेतु चित्र, रेखचित्र, मानचित्र, तालिका बनाने तथा पाठ्यवस्तु सारांश लेखन में एक उपयोगी सहायक सामग्री के रूप में प्रयोग में लाई जाती है।
4. यह सहायक सामग्री गणित, विज्ञान तथा कला विषय के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
5. इस सहायक सामग्री का प्रयोग भी आसानी से किया जा सकता है।
6. यह किसी भी विद्यालय में उपयोग हेतु सस्ता उपकरण होता है।
7. इस उपकरण के प्रयोग से पाठ के मुख्य बिन्दुओं का ज्ञान आसानी से प्राप्त हो जाता है।
8. इस उपकरण के उपयोग से वाद-विवाद में सुविधा होती है।
9. इस उपकरण की सहायता से एक समय में उदाहरण एवं गृहकार्य प्रस्तुत करना संभव होता है।
10. इस उपकरण का शिक्षण कार्य में प्रयोग करने से, शिक्षण कार्य में रोचकता पाई जाती है तथा विषय-वस्तु सरलतम ढंग से समझी जाती है।
11. इस उपकरण के प्रयोग से उच्चारण का अभ्यास कराया जा सकता है।
12. इस उपकरण की सहायता से अच्छा लेखन कार्य करने में सहायता मिलती है।
13. श्यामपट्ट, शिक्षण कार्य में अध्यापक का एक बहुत ही महत्वपूर्ण सहायक सामग्री होता हे जो शिक्षण कार्य को प्रभावशाली बना देता है।

सामूहिक वाद-विवाद व्यूह रचना का अर्थ एवं परिभाषा

सामूहिक वाद-विवाद व्यूह रचना एक प्रजातांत्रिक रचना एक प्रजातांत्रिक व्यूह रचना है क्योंकि इसमें छात्रों को ही अधिक क्रियाशील रहना पड़ता है। शिक्षक केवल निरीक्षक एवं निर्देशक का कार्य करता है। यह सदैव छात्र केन्द्रित होती है। इस व्यूह रचना का स्पष्टीकरण कुछ विद्वानों की परिभाषाओं के आधार पर भली-भाँति किया जा सकता है-

जेम्स एम॰ली॰ के अनुसार-"वार्तालाप शैक्षिक समूह क्रिया है जिसमें शिक्षक तथा छात्र किसी समस्या या प्रकरण पर बातचीत करते हैं।"

"Descussion is an Educational Group activity in which teacher and the students talk over some problem or topc."-James M. Lee

नोट

थॉमस एम॰ रिस्क के अनुसार-"वाद-विवाद का अर्थ है अंध्ययन की जाने वाली समस्या का प्रकरण में निहित सम्बन्धों का विचारशील विवेचन।"

"Discussion means throughtful consideration of the relationships involved in the Problem or topic under study." -Thomas M. Risk

योकम व सिम्पसन के अनुसार-"वाद-विवाद बातचीत का एक विशिष्ट स्वरूप है। इसमें सामान्य बातचीत की अपेक्षा अधिक विस्तृत एवं विवेकयुक्त विचारों का आदान-प्रदान होता है। सामान्यत: वाद-विवाद में महत्वपूर्ण विचारों एवं समस्याओं को सम्मिलित किया जाता है।"

"Discussion is a special form of conversation. It is an exchange of ideas of a more reasoned detailed kind, than that found in ordinary conversation and generally involves the conversation of important ideas and issues." -Yokam and Simpson

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वाद-विवाद वह विधि है जिससे अध्यापक तथा छात्र दोनों मिलकर किसी प्रश्न, प्रकरण, समस्या आदि के सम्बन्ध में सामूहिक परिवेश में स्वतंत्रतापूर्वक विचार-विमर्श करते हैं।

इस व्यूह रचना में कोई एक विषय ले लिया जाता है और शिक्षक उस विषय पर छात्रों को वर्तालाप या वाद-विवाद करने के लिए प्रेरित करता है। यह नीति शिक्षण एवं छात्र में अन्त:प्रक्रिया के अवसर बढ़ाती है। इस व्यूह रचना की सफलता के लिए आवश्यक है कि छात्रों को अपने विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। वार्तालाप व्यूह रचना में सभी छात्रों को बोलने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए किन्तु शिक्षक एक निरीक्षक के रूप में काम करें।

वाद-विवाद व्यूह रचनाओं के प्रकार

वाद-विवाद या वार्तालाप व्यूह रचनाएँ दो प्रकार की होती हैं-

1. औपचारिक वाद-विवाद व्यूह रचना
2. अनौपचारिक वाद-विवाद व्यूह रचना
3. औपचारिक वार्तालाप/वाद-विवाद व्यूह रचना

औपचारिक वाद-विवाद व्यूह रचना

पूर्व निर्धारित कार्यक्रम तथा उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु औपचारिक वाद-विवाद का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार क वाद-विवाद के अपने निर्धारित नियम एवं सिद्धांत होते हैं। यह शिक्षक और छात्रों के मध्य होता है।

It is a formal discussion controlled by the teacher through questions and answer.

अनौपचारिक वार्तालाप/वाद-विवा व्यूह रचना

इसमें निर्धारित नियम तथा सिद्धांतों का प्रयोग नहीं होता है। इसे इस प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है कि अनौपचारिक वार्तालाप में भाग लेने वाले किसी भी नियम से बंध नहीं होते हैं। यह शिक्षक तथा छात्रों एवं छात्र-छात्राओं के मध्य हो सकता है।

It is informal voluntary participation under guidance.

वाद-विवाद व्यूह रचना की प्रक्रिया का स्वरूप- इस व्यूह रचना की प्रक्रिया का निम्न स्वरूप होता है-

1. संचालन कर्त्ता की आवश्यकता।

2. इसमें शिक्षक या छात्र द्वारा समस्या प्रस्तुत की जाती है।
3. समस्या का उद्देश्य स्पष्ट किया जाता है।
4. समस्या से सम्बन्धित सामग्री के स्रोतों की जानकारी शिक्षक द्वारा दी जाती है।
5. छात्र समूह का गठन किया जाता है।
6. समूह गठन के उपरान्त निश्चित तिथि पर वाद-विवाद के लिए तैयार होते हैं।
7. निश्चित तिथि पर शिक्षक या निर्वाचित सभापति के नेतृत्व में वाद-विवाद का संचालन किया जाता है।
8. अन्तिम चरण में छात्रों के विचार-विमर्श के उपरान्त सभापति द्वारा विषय से सम्बन्धित अपनी संक्षिप्त टिप्पणी प्रस्तुत की जाती है।

नोट

वाद-विवाद हेतु निम्न सुझावों पर ध्यान दिया जाना चाहिए-

1. चुनी हुई समस्या का शैक्षिक महत्व होना चाहिए।
2. सभी छात्रों को बोलने का समान अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।
3. न बोलने वाले छात्रों को अगली पंक्ति में बैठाया जाए।
4. केवल रचनात्मक एवं सार्थक आलोचनाओं को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
5. छात्रों से विचारोत्तेजक प्रश्न करके वार्तालाप हेतु तैयार करना चाहिए।
6. जहाँ तक संभव हो विवादास्पद विषयों की उपेक्षा करनी चाहिए।
7. अध्यापक को छात्रों का उचित निर्देशन प्रदान करना चाहिए।
8. शिक्षक को सक्रिय नियंत्रक का कार्य करना चाहिए।
9. छात्रों को निर्णय लेने में अध्यापक को सहायता करनी चाहिए।
10. वार्तालाप का प्रकरण पारस्परिक विचार-विमर्श से तय करना चाहिए।

वाद-विवाद व्यूह रचना की विशेषताएँ

वाद-विवाद व्यूह रचना की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. छात्रों में आत्मविश्वास जागृत होता है।
2. छात्रों को ध्यानपूर्वक सुनने तथा यथेचित् उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित करती है।
3. इसके द्वारा सहयोग की भावना का विकास होता है।
4. इसके द्वारा छात्रों में चिन्तन करने की प्रवृति का विकास होता है।
5. इसके द्वारा सामूहिक निर्णय लेने के लिए गुणों का विकास होता है।
6. इसके द्वारा छात्रों की सहभागिता को बढ़ावा मिलता है।
7. यह व्यूह रचना जनतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित होती है।
8. इसके द्वारा छात्रों में सृजनात्मक शक्तियों के विकास पर जोर दिया जाता है।
9. इसके द्वारा शिक्षक और छात्रों के बीच निकटता आती है तथा वे एक-दूसरे को भली-भाँति समझने लगते हैं।
10 इसके द्वारा सामाजिक अधिगम को बढ़ावा मिलता है।
11. इसके द्वारा ज्ञानात्मक एवं भावात्मक पक्षों के उच्च उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है
12. इसके द्वारा छात्र विचारों को व्यवस्थित करना सीख जाते हैं।
13. इस व्यूह रचना द्वारा छात्रों को स्वतंत्र रूप से अध्ययन करने की आदत का विकास होता है।

वाद-विवाद व्यूह रचना की सीमाएँ

नोट

वाद-विवाद व्यूह रचना की निम्नलिखित सीमाएँ हैं-

1. वाद-विवाद व्यूह रचना में सभी छात्र समान रूप से बोल नहीं पाते हैं।
2. छात्र विषयान्तर बातें अधिक करने लगते हैं।
3. छात्रों में कभी-कभी ईर्ष्या तथा द्वेष सम्बन्धों की भावना जन्म लेती है।
4. इसमें समय की बर्बादी होती है।
5. इसके द्वारा मन्दबुद्धि बालकों को अधिक लाभ नहीं प्राप्त होता है।
6. इसमें लज्जाशील बालक को पूरी तरह लाभ नहीं मिल पाता है।
7. यह व्यूह रचना छोटी कक्षाओं के लिए अधिक उपयुक्त नहीं हैं।

शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण

डॉ॰ बी॰एस॰ ब्लूम के अनुसार व्यवहारगत परिवर्तन को तीन पक्षों में विभाजित किया है तथा इसी आधार पर सीखने के प्राप्य उद्देश्यों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है-

1. ज्ञानात्मक प्राप्य उद्देश्यों का सम्बन्ध सूचनाओं, ज्ञान, सिद्धांतों, तथ्यों तथा नियमों की जानकारी से होता है। शैक्षिक क्रियाओं अर्थात् विद्यालय में कक्षा-शिक्षण द्वारा ज्ञनात्मक प्राप्य उद्देश्य की ही प्राप्ति की जाती है।
2. भावात्मक प्राप्य उद्देश्यों का सम्बन्ध बालक की विभिन्न रुचियों, अभिवृत्तियों, प्रशंसा तथा अन्य भावात्मक मूल्यों के विकास से होता है।
3. क्रियात्मक प्राप्य उद्देश्यों का सम्बन्ध शारीरिक क्रियाओं के प्रशिक्षण तथा कुशलताओं का विकास होता है। यथा- लिखना, खेलना, उपकरणों को प्रयोग में लाना, चित्र तथा आरेख बनाना आदि।

उपरोक्त व्यवहार के तीनों पक्ष, ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा मनोशारीरिक आपस में अन्तर्सम्बन्धित होते हैं इसे निम्न चित्र द्वारा आसानी से समझा जा सकता है-

शिकागो विश्वविद्यालय में डॉ॰ बी॰एस॰ ब्लूम तथा उनके सहयोगियों ने व्यवहार के तीनों पक्षों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया। ज्ञानात्मक पक्ष के प्राप्य उद्देश्यों का ब्लूम ने (1956) में, भावात्मक पक्ष के प्राप्य उद्देश्यों का करथवॉल ने (1964) में तथा मनोशारीरिक या क्रियात्मक पक्ष के प्राप्य उद्देश्यों का सिम्पसन ने (1969) में वर्गीकरण प्रस्तुत किया। प्राप्य उद्देश्यों को वर्गीकरण अध्यापक को अध्यापन तथा सीखने के उद्देश्यों का निर्धारण करने में सहायता प्रदान करते हैं। इस वर्गीकरण की सहायता से ब्लूम ने परीक्षण को उद्देश्य-केन्द्रित बनाने का प्रयास किया है।

उद्देश्यों के वर्गीकरण में प्रत्येक पक्ष (Domain) का विस्तार-क्रम प्रस्तुत किया है। उद्देश्यों का यह वर्गीकरण क्रमबद्ध रूप में होता है, जिसे चढ़ावक्रम कहते हैं। इस चढ़ावक्रम से उद्देश्यों के क्रम की जानकारी होती है। एक अध्यापक शिक्षण करने के लिए इसी क्रम का अनुसरण करता हैं उद्देश्यों के इस चढ़ावक्रम वर्गीकरण को ही शिक्षण उद्देश्यों का वर्गीकरण कहते हैं।

शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण

छात्र अध्यापक अपने शिक्षण के नियोजन में मुख्य रूप से ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों का ही प्रयोग करता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि कक्षा-कक्ष शिक्षण द्वारा एक

अध्यापक मुख्यतः ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों की ही प्राप्ति कर पाता है। इसलिए उपयोगिता की दृष्टि से इस पक्ष के उद्देश्यों का ही विस्तार से वर्णन किया गया है।

नोट

संज्ञात्मक उद्देश्य

1. **ज्ञानः** वैज्ञानिक तथ्यों, शब्दों, नियमों तथा सिद्धान्तों का ज्ञान प्रदान करना। बालक को-
   a. विशिष्ट तथ्यों का ज्ञान देना।
   b. साधनों तथा स्रोतों का ज्ञान देना।
   c. मौलिक तथा अमूर्त तथ्यों का ज्ञान देना।
2. **बोधः** प्राप्त किये गये ज्ञान के सम्बन्ध में समझ या बोधगम्यता होना। इसमें तीन क्षमताएँ सम्मिलित होती हैं-
   a. अनुवाद करना
   b. व्याख्या करना
   c. उल्लेख करना
3. **ज्ञानोपयोगः** सीखे गए ज्ञान का नवीन या विभिन्न परिस्थियों में प्रयोग करना। इसके अन्तर्गत-
   a. सामान्यीकरण करना
   b. निदान करना
   c. प्रयोग करना
4. **विश्लेषणः** सीखी गई विषय-वस्तु के विभिन्न तत्वों का विश्लेषण करना। इसके अन्तर्गत-
   a. तत्वों का विश्लेषण
   b. सम्बन्धों का विश्लेषण
   c. नियमों का विश्लेषण
5. **संश्लेषणः** विभिन्न तत्वों को नवीन ढाँचे या संरचना में समन्वित करके सम्पूर्ण का निर्माण करना तथा अमूर्त सम्बन्धों की खोज करना।
6. **मूल्यांकनः** आन्तरिक एवं बाह्य मानदण्डों के आधार पर निर्णय करके सीखे गए ज्ञान का मूल्यांकन करना।

डॉ॰ बी॰एस॰ ब्लूम ने संज्ञनात्मक पक्ष के उद्देश्यों को 6 वर्गों में वर्गीकृत किया है। प्रत्येक वर्ग एक निश्चित क्रम में वर्गीकृत है। ब्लूम ने प्रत्येक वर्ग को कठिनाई स्तर या क्रम के आधार पर आरोही क्रम अर्थात् कठिनाई स्तर के बढ़ते हुए क्रम में व्यवस्थित किया है।

भावात्मक उद्देश्य

1. **आग्रहणः** परिस्थिति तथा घटनाओं के प्रति संवेदनशील होना। इसमें निम्न तीन प्रकार की क्षमताओं के विकास पर बल दिया जाता है-
   a. परिस्थितियों या घटनाओं के प्रति सजगता
   b. ग्रहण करने की इच्छा-शक्ति होना
   c. नियन्त्रित अथवा सुनिश्चित ध्यान आकर्षित करना
2. **अनुक्रिया करनाः** अनुक्रियाएँ करने के लिए प्रतिबद्ध होना। इसमें निम्न तीन क्षमताओं का विकास निहित रहता है-

a. अनुक्रिया में सहमति होना
b. अनुक्रिया के लिए इच्छा होना
c. अनुक्रिया करने में सन्तुष्टि होना

नोट

3. **अनुमूल्यन:** विभिन्न प्रत्ययों का अनुमूल्यन करना या मूल्य समझना। इसके अन्तर्गत भी निम्न तीन क्षमताएँ विकसित की जाती हैं-
   a. किसी मूल्य को स्वीकार करना
   b. किसी मूल्य का अपेक्षकृत अधिक आदर करना
   c. किसी मूल्य के प्रति प्रतिबद्धता
4. **प्रत्ययीकरण:** विभिन्न मूल्यों का प्रतिपादन करना। मूल्यों में विविधता के फलस्वरूप प्राप्त किये गये मूल्यों के सम्बन्ध में प्रत्यय-निर्माण करना।
5. **व्यवस्थापन या संगठन:** मूल्यों की प्रणाली का प्रत्ययीकरण करके व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करना। व्यवस्थापन के अन्तर्गत निम्न क्षमताओं को विकसित करने का प्रयास किया जाता है-
   a. एक समान मूल्यों को एक प्रणाली में संगठित करना
   b. मूल्यों में अन्त:सम्बन्ध को निर्धारण करना
6. **चरित्र-निर्माण का चरित्रीकरण:** मूल्यों की प्रणाली को स्वीकार तथा व्यवस्थित करके चरितार्थ करना तथा उनका अनुसरण (विससवू) करना। इसके अन्तर्गत निम्न क्षमताएँ विकसित की जाती हैं-
   a. मूल्यों का सामान्यीकरण करना
   b. चरित्रीकरण करना

दूरवर्ती-शिक्षा में स्वाध्याय पाठ्यपुस्तक

सामान्य रूप से देखा जांता है कि विद्यार्थी स्वयं पाठ्य-पुस्तिकाओं का अध्ययन करना ज्यादा पसंद करते हैं। विश्वविद्यालयी स्तर की पाठ्य-पुस्तकें अध्यापकीय निर्देशन में एकान्त में अध्ययन करने के लिये तैयार की जाती है। विद्यालय की पाठ्य-पुस्तकें अधिकतर करना में प्रयोग करने के लिये तैयार की जाती हैं और वे अध्यापक-केन्द्रित होती हैं। अध्यापक स्वत: विषय व पाठ को चुनता है और यह आवश्यक नहीं होता कि वे दिये हुए क्रम के अनुसार ही हों और साथ ही अध्यापक उस पाठ सामग्री को व्याख्यानों व अन्य सहायक सामग्री से और अधिक रुचिकर व प्रभावशाली बनाने का प्रयास करता है।

पाठ्य-पुस्तकें दोनों ही स्तर पर मुख्यत: स्वाध्याय को ध्यान में रखकर तैयार नहीं की जाती हैं। उच्च स्तर पर बहुत से विद्यार्थी पाठ्य-पुस्तकों के प्रयोग में स्वतन्त्र रूप से अध्ययन करने योग्य के होते हैं। वास्तव में, प्रौढ़ों में अधिगम प्रक्रिया अधिकतर इसी तरह पुस्तकों से अव्यवस्थित तथा अप्रत्यक्ष रूप से होती है, परन्तु इससे यह तात्पर्य नहीं है कि पाठ्य-पुस्तकें स्वाध्याय के लिये होती है। छात्र को स्वाध्याय हेतु अपने लिये उन तत्वों को जानना होता है, जिनका परम्परागत पाठ्य-पुस्तकों में अभाव होता है।

जैसे-जैसे अध्याय आगे बढ़ेगा, इन तत्वों का स्वरूप स्पष्ट होता जायेगा। इस संकेत के साथ आरम्भ करना चाहिये कि स्वाध्याय पाठ्य-पुस्तक में कम से कम निम्नलिखित विशेषतायें होनी चाहिएं-

1. प्रत्येक विषय का पूर्ण विवरण तथा व्याख्या की गई हो,

2. सावधानीपूर्वक तथा क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुतीकरण किया गया हो,
3. अभिप्रेरणा तथा पृष्ठपोषण की व्यवस्था भी की गई हो तथा
4. विषय को आगे कैसे विकसित किया जाये, इसके सम्बन्ध में परामर्श तथा निर्देशन किया गया हो।

नोट

स्वाध्याय पाठ्य-पुस्तकों के प्रकार

स्वयं शिक्षण पुस्तकें

कभी न कभी प्रत्येक विद्यार्थी अपने जीवन में परीक्षाओं के लिए संशोधित टिप्पणियों को रटकर तैयारी करता है। क्या तुमने स्वयं ऐसा नहीं किया है? यदि ऐसा है, तो ऐसी पुस्तकों की विशेषताओं की एक तालिका बना सकते हो, पढ़ने से पहले ऐसा करने का प्रयास करो।

इस प्रकार की पुस्तकें विभिन्न नामों से जैसे बाजार नोट, संशोधित नोट स्वत: शिक्षण पुस्तकें, अध्ययन सहायक पुस्तकें, इस उद्देश्य के साथ प्रकाशित की जाती हैं कि प्रकाशक एवं लेखक को अधिक से अधिक धन मिल सके। वे सदैव अच्छे विक्रेता सिद्ध होते हैं और इन इच्छुक परीक्षार्थियों के लिए पुस्तकों का बाजार तैयार रखते हैं, जो उन्हें खरीदने हेतु लालायित रहते हैं। इस प्रकार की अधिकांश पुस्तकें निम्न स्तर की होती हैं, क्योंकि यह विशेषज्ञों द्वारा नहीं लिखी जाती हैं पाठ्यवस्तु अपर्याप्त तथा अशुद्ध होती है। अभ्यास के लिए प्रश्न नहीं दिये जाते हैं, अपितु प्रश्नों के उत्तरों के रूप में ही पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत किया जाता है।

यह पुस्तकें उद्देश्यों को एक सीमा तक ही पूरा करती है। विषय की पूर्ति सामान्यत: अपर्याप्त है और वह बोधस्तर पर न होकर तथ्यों पर आधारित है।

गिनी चुनी अभ्यास प्रश्न देने का प्रमुख कारण प्रकाशक की इच्छा व अनिच्छा है, जो लेखक उद्देश्यपूर्ण अभ्यास प्रश्न में कागज़ व धन के अधिक व्यय न करने हेतु सलाह देता है। इस तरह प्रत्यक्ष रूप से या तो शिक्षण के लाभों को पूर्णत: नकार दिया जाता है, या भौतिक उपलब्धियों हेतु उन्हें छोड़ दिया जाता है।

इसलिए वे अधिकतर रटकर सीखने या केवल निम्न स्तर पर ज्ञान प्राप्त करने से ही सम्बन्ध रखते हैं। प्रकाशक विषय के पूर्ण तत्कालीन ज्ञान को प्रस्तुत करने का झूठा दावा करते हैं। इस प्रकार के दावे शिक्षा विरोधी होते हैं, जो जनता को इस तरह प्रभावित करते हैं कि अधिगम 'आत्मसात् अध्ययन' के समान है।

शिक्षाशास्त्रियों में इस प्रकार की पुस्तकों के प्रति हीन भावना के बावजूद भी कुछ पुस्तकें अधिक प्रचलित हो जाती हैं। स्वत: शिक्षण पुस्तकों की अधिकांश श्रेणियों में एक या दो अच्छे शीर्षक होते हैं, जिनके अन्तर्गत प्राकशक किसी अधिक योग्य या शिक्षा के क्षेत्र में समर्पित व्यक्तित्व के कार्यों को शामिल कर देते हैं। अब बाजार में स्वत: शिक्षण और संशोधित पुस्तकें नवीन रूप में उपलब्ध हैं। इन पुस्तकों के उद्देश्य स्पष्ट हैं, इनमें अनेक अभ्यास प्रश्न हैं और कभी-कभी ये (श्रव्य टेप) के रूप में भी उपलब्ध हैं। इन पुस्तकों के प्रकाशकों ने वास्तव में दूरवर्ती-शिक्षा से कुछ पाठ्यवस्तु को सीखा है और इसके परिणाम भी बहुत अच्छे रहते हैं।

अनुसूचिका और लघु पुस्तकें

स्वाध्याय हेतु पुस्तकों की अनुसूचिका भी होती है, जो स्पष्ट करती है कि कैसे कुछ

नोट

किया जाये, एक लघु पुस्तक की भी एक अनुसूचिका हो सकती है, परन्तु इसका प्रयोग सन्दर्भ हेतु भी उतना ही किया जा सकता है कि जितना कि अनुदेशन हेतु किया जा सकता है। अधिकांश दूरवर्ती-शिक्षा संस्थान अनुसूचिका और लघु पुस्तकें, कार्य कर्त्ताओं के प्रशिक्षण के लिए या परियोजना अथवा अनुसंधान कार्य हेतु अनुसूचिका या लघु पुस्तकें विषयों के नियन्त्रित वर्ग में से किसी एक विषय से या शीर्षक से सम्बन्धित होते हैं, जिन्हें छोटे-छोटे पदों में व्यवस्थित किया जाता है और प्रक्रिया के लिए निर्देशन भी प्रदान किया जाता है। व्यावहारिक अनुसूचिका को अक्सर उदाहरणों से स्पष्ट किया जाता है। साधारणत: व्यावहारिक अनुसूचिका में अभ्यास प्रश्न नहीं होते हैं, क्योंकि वे विशेष क्रियाओं हेतु प्रत्यक्ष अनुदेशन देते हैं और अभ्यास प्रश्न अनावश्यक होते हैं, जबकि दूसरी तरफ प्रशिक्षण अनुसूचिका में सामान्यत: बहुत सी अभ्यासमालायें होती हैं। लघु पुस्तकें तथा अनुसूचिका अनेक उद्देश्यों वाली पाठ्य-पुस्तकें हो सकती है।

अभिक्रमित अनुदेशन

अभिक्रमित अनुदेशन पुस्तक विद्यार्थी को किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति हेतु बहुत छोटे-छोटे पदों में निर्देशन प्रदान करती है। स्वाध्याय में यह आधारभूत तथ्य है कि प्रत्येक संभावना बिखर हुई है। यह इसी तरह काम करता है। विद्यार्थी एक बिन्दु सीखता है। तब वह अनुक्रिया करता है और अनुक्रिया की जाँच करता है। यदि उसकी अनुक्रिया सही होती है, तो वह अगले पद की ओर बढ़ता है और अगले पद पर अनुक्रिया करने का प्रयास करता है। यदि उसकी अनुक्रिया गलत होती है, तो वह अन्य गलत पृष्ठ पर जाता है और वहाँ उसे पाठ्यवस्तु का स्पष्टीकरण मिलता है, जो उसे पहले पद की अनुक्रिया देने में सहायता प्रदान कर सकता है। इसी प्राकर विभिन्न पृष्ठों पर जाने की इस प्रक्रिया को शाखीय कहा जाता है। यदि कोई विद्यार्थी गलतियाँ करता जाता है। एक अभिक्रमित अधिगम पुस्तक आकार में और भी अधिक बड़ी व भारी होती है। यह एक बहुत ही प्रभावशाली शिक्षण आव्यूह है, यद्यपि इससे कुछ विशेष प्रकार के विषयों का ही शिक्षण किया जा सकता है। अधिकतर इसका प्रयोग केवल उन विषयों के शिक्षण हेतु किया जाता है, जिन्हें संक्षेप में व व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है। इसका एक दोष है कि इस प्रकार की पुस्तकों के निर्माण में समय अधिक लगता है।

अभिक्रमित-अनुदेशन की प्रक्रि को कई वर्षो पूर्व कम्प्यूटर से ग्रहण किया गया था और कम्प्यूटर प्रत्येक तक सुगमता से ही पहुँचने लगा है, विद्यार्थियों के लिए कम्प्यूटर से सीखना अधिक सरल हो गया है। अपेक्षाकृत इसके कि वे उस पुस्तक का अध्ययन करें, कम्प्यूटर एक शिक्षक की भूमिका का निर्वाह करता है।

मुक्त अधिगम सामग्री

मुक्त अधिगम सामग्री अलग तरह की ऐसी पुस्तकें नहीं है, जैसी पुस्तकें विशेष प्रकार के प्रयोग हेतु तैयार की जाती हैं। उन्हें इस अर्थ में मुक्त कहा जाता है कि व्यक्ति के अधि गम हेतु या तो कक्षा व बाहर या फिर किसी कक्षा अथवा समूह हेतु अध्यापक द्वारा किसी भी रूप में प्रयोग की जा सकती हे। उनके विशिष्ट गुणों को विभिन्न प्रयोगों के लिए उनकी सम्भावनाओं से प्राप्त किया गया है। पुस्तकों को छोटी-छोटी इकाइयों में व्यवस्थित किया गया है, अलग-अलग मुद्रित किया गया है, और उन्हें सीखने के क्रम में व्यवस्थित किया गया है।

विद्यार्थी या अध्यापक उस क्रम से उपयुक्त सामग्री का चुन लेते हैं। साधारणत: विद्यार्थी को समग्री का सही चुनाव करने हेतु किसी अध्यापक या निरीक्षक की आवश्यकाता होती है, यद्यपि उसके बाद वे ही स्वत: अध्ययन कर सकते हैं इसमें भी स्वाध्याय को विशेष महत्व दिया जाता है।

नोट

पत्राचार की इकाइयाँ

यह दूरवर्ती-शिक्षा की एक शैली है, जहाँ विषय के प्रमुख तत्व पाठों या इकाइयों के रूप में और पत्राचार द्वारा गृहशिक्षण के रूप में होते हैं। उनमें शिक्षण के विभिन्न रूपों की संख्या के कारण पत्राचार इकाइयाँ सामान्यत: अपनी लम्बाई में पाठ्य-पुस्तकों और यहाँ तक कि स्वत: शिक्षण पुस्तकों से बिल्कुल भिन्न होती हैं। पाठ्य-वस्तु को इकाइयों के रूप में छात्रों की अध्ययन हेतु भेजा जाता है।

अध्ययन निर्देशिका

एक अध्ययन निर्देशिका पत्राचार इकाई का वह रूप है, जो कि एक आवश्यक पाठ्य-पुस्तक से जुड़ी होती है। वास्तव में अध्यापक निर्देशिका अनुदेशन का मुख्य साधन है। अध्ययन निर्देशिका पाठ्य-पुस्तकों को पढ़ाने हेतु (अध्यायों को व्यवस्थित करने हेतु क्रम अथवा प्रत्येक पाठ के लिए पढ़ने हेतु पृष्ठ संख्या) आवश्यकतानुसार कोई समीक्षा या पुस्तक की व्याख्या और मूल्यांकन हेतु प्रश्न, उत्तर और गृह-कार्य आदि (परिचय व उद्देश्य) की ओर संकेत प्रदान करती है। दूसरे शब्दों में, एक अध्ययन निर्देशिका मूल पाठ को हटा देते हैं। मुख्य रूप में एक पत्राचार पाठ्क्र है इसे आवश्यक मूलग्रन्थ में सम्मिलित कर लिया जाता है।

अध्ययन निर्देशिका में सामान्यत: बहुत कम पृष्ठ होते हैं। यह पत्राचार-पाठयक्रम को मितव्ययी बनाने की उत्तम प्रक्रिया है, जो यह प्रगट करता है कि एक उपयुक्त पाठ्य-पुस्तक उपलब्ध है। यह अक्सर उच्चस्तरीय सूची में कम लिखे गये पाठ्यक्रमों के लिए प्रयोग की जाती है, जहाँ एक पूर्णत: अपने-आप अध्ययन करने वाले पाठ्यक्रम का विकास करना बहुत खर्चीला होता है और वहाँ विद्यार्थी अपना अध्ययन निर्देशिका की सहायता से उन्नतिशील स्तर पर पाठ्य-पुस्तकों से पढ़ने के अधिक योग्य होते हैं, चाहे उसके कितने भी दोष क्यों न हों।

दूरवर्ती-शिक्षा की इकाइयाँ

यहाँ पिछले दो सोपान प्रकरण दूरवर्ती-शिक्षा इकाई के ही दो प्रारूप हैं। दूरवर्ती-शिक्षा के विभिन्न रूपों में से एक इसकी पृष्ठ-पोषण प्रक्रिया हैं, जहाँ विभिन्न प्रकार के साधनों से विद्यार्थी की सहायता प्रदान की जाती है। उदाहरण के लिए-दूरी से ही आमने-सामने ओर स्वत: मूल्यांकन करना।

शिक्षण युक्तियों का अर्थ

अनुदेशन में शिक्षण युक्तियों का व्यापक रूप निहित रहता है। एक युक्ति को कई विधि यों में प्रयोग करते हैं। शिक्षण युक्तियाँ, शिक्षण के स्वरूप को प्रस्तुत करती हैं। इस स्वरूप का शिक्षक तथा छात्रों के लिए विशेष महत्व होता है। शिक्षण युक्तियाँ ही वास्तव में सीखने के स्वरूप को प्रस्तुत करती हैं। कार्य-विश्लेषण का प्रत्येक तत्व अपना निजी स्वरूप रखता है। इस निजी स्वरूप को शिक्षण-युक्तियों के प्रयोग से ही प्रस्तुत किया जा सकता है। अत:

युक्तियों के चयन को शिक्षण-युक्तियों के प्रयोग से ही प्रस्तुत किया जा सकता है। अतः युक्तियों के चयन में अधिगम के स्वरूपों को ध्यान में रखा जाता है। अतएव छात्र-अध्यापकों की शिक्षण-युक्तियों के चयन हेतु सीखने के स्वरूप का ज्ञान आवश्यक है।

नोट

अधिगम के स्वरूप का अर्थ

शिक्षाशास्त्र तथा मनोविज्ञान में अधिगम के सिद्धान्तों की अधिक चर्चा की जाती है। परन्तु शिक्षण की समस्याओं के समाधान में अधिगम के सिद्धान्तों का विशेष उपयोग नहीं है। इसलिए अब सीखने के स्वरूप को अधिक महत्व दिया जाने लगा है। यह प्रत्यय रॉबर्ट गेने ने लिया है। उन्होंने सभी अधिगम के सिद्धान्तों का विश्लेषण करके अधिगम परिस्थियों को ज्ञात किया और उन्हें ब्लूम की टैक्सोनॉमी की भाँति एक क्रम में व्यवस्थित किया है। गेने में अधिगम की आठ परिस्थितियाँ दी हैं। परन्तु उनके स्वरूपों की दृष्टि से डेवीज ने पाँच परिस्थियों का विशेष महत्व दिया है क्योंकि शिक्षक तथा छात्र के लिए यह अधिक उपयोगी तथा सार्थक है। अधिगम की ये पाँच परिस्थितियाँ अधोलिखित हैं-

1. संकेत-अधिगम।
2. श्रृंखला-अधिगम।
3. बहु-भेदीय अधिगम।
4. प्रत्यय अधिगम।
5. सिद्धान्त अधिगम।

गेने के आठ अधिगम-स्वरूपों का विवेचन 'शिक्षण-अधिगम सम्बन्ध' के अध्याय में विस्तार से किया जा चुका है। परन्तु डेवीज ने जिन पाँच अधिगम स्वरूपों को युक्तियों की दृष्टि से महत्व दिया है यहाँ पर उन्हीं परिस्थितियों की चर्चा करेंगे-

1. **संकेत अधिगमः** संकेत अधिगम में विशिष्ट उद्दीपकों के लिये विशिष्ट अनुक्रिया की जाती है। जिसे उद्दीपन अनुक्रिया अधिगम भी कहते हैं। इसके लिए पूर्व परिस्थितियाँ अज्ञान हैं।
2. **श्रंखला अधिगमः** श्रंखला अधिगम के अन्तर्गत शाब्दिक तथा शारीरिक अनुक्रियाओं का निश्चित क्रम सम्मिलित होता है। इसके लिये संकेत अधिगम, पूर्व परिस्थिति अथवा स्वरूप आवश्यक होता है।
3. **बहुभेदीय अधिगमः** इसके अन्तर्गत एक वर्ग अथवा तथ्य को दूसरे से भिन्न करने की अनुक्रियायें सम्मिलित होती हैं। जैसे-अक्षांश तथा देशान्तर के अन्तर करने में इसी प्रकार का अधिगम प्रयुक्त होता है। इसके लिए श्रृंखला-अधिगम पूर्व परिस्थिति आवश्यक होती है।
4. **प्रत्यय अधिगमः** इसमें सम्पूर्ण तथ्य से सम्बन्धित सामान्यीकरण की क्रियायें सम्मिलित होती हैं। इसके लिये बहु-भेदीय अधिगम, पूर्व परिस्थिति मानी जाती है।
5. **सिद्धान्त अधिगमः** इसके अन्तर्गत प्रत्ययों की श्रृंखला सम्मिलित होती है। इसके लिए प्रत्यय अधिगम पूर्व परिस्थिति आवश्यक मानी है। जैसे-मौलिक तथ्य एवं सत्य।

शिक्षण युक्तियाँ और अधिगम स्वरूप

अधिगम की प्रत्येक परिस्थिति अन्य से बिल्कुल भिन्न होती है परन्तु उसके लिए पूर्व

परिस्थिति आवश्यक होती है। इसलिए प्रत्येक अधिगम परिस्थिति, के लिये भिन्न-भिन्न शिक्षण-युक्तियाँ प्रयुक्त की जाती हैं। अत: यहाँ पर शिक्षण-युक्तियों का अधिगम परिस्थितियों के सन्दर्भ में उल्लेख किया गया है।

नोट

संकेत-अधिगम तथा शिक्षण युक्तियाँ

इसे अधिगम का प्राथमिक स्वरूप माना जाता है छात्रों का स्तर ऐसा हो कि वे विशिष्ट उद्दीपन के लिए विशिष्ट अनुक्रिया क़र सकें। अधिगम के इस स्वरूप के लिए साधारण युक्तियाँ प्रयुक्त की जाती हैं। शिक्षण अधिगम युक्तियों की विशेषता यह है कि छात्र उद्दीपन तथा अनुक्रिया को लगातार व्यवस्थित युक्तियों की विशेषता यह है कि छात्र उद्दीपन तथा अनुक्रिया का सम्बन्ध दृढ़ हो सके। सही अनुक्रियाओं को पुनर्बन भी प्रदान करना चाहिए और गलत अनुक्रियाओं को छोड़ देना चाहिये। संकेत अधिगम के लिए चार शिक्षण-युक्तियाँ प्रयुक्त की जाती हैं-

1. छात्र को उद्दीपन दिया जाये जिससे वह अनुक्रिया करे।
2. छात्र की सही अनुक्रिया को पुनर्बलन दिया जाये और गलत को छोड़ दिया जाये।
3. छात्रों के लिये उद्दीपन की व्यवस्था इस प्रकार की जाये कि उसकी अनुक्रियायें स्वामित्व की और लगातार अग्रसर हों।
4. छात्रों को अनुक्रियाओं का अभ्यास भी कराया जाये।

श्रृंखला अधिगम तथा शिक्षण युक्तियाँ

सीखने में व्यवहार की श्रृंखला को ही साधारणत: प्रयुक्त किया जाता है। कभी-कभी शाब्दिक क्रियाओं की श्रृंखला को भी सम्मिलित किया जाता है; जैसे-कविता पाठ। शारीरिक क्रियाओं की श्रृंखला; जैसे-साइकिल चलाना। यह श्रृंखला तीन प्रकार की होती हैं-आगे बढ़ने की श्रृंखला, रटना तथा पीछे की और हटने की श्रृंखला। श्रृंखला अधिगम में अधोलिखित तीन युक्तियाँ प्रयुक्त की जाती हैं-

1. छात्र के सामने श्रृंखला का सम्पूर्ण विस्तार रखा जाये।
2. उद्दीपन अनुक्रिया प्रथमि फिर दूसरी, तीसरी आदि प्रस्तुत की जाय। पीछे की ओर हटने की श्रृंखला में अन्तिम अनुक्रिया सबसे पहले और प्रथम को अन्त में दिया जाये। रटने में श्रृंखला अधिगम को प्रयुक्त किया जाये।
3. श्रृंखला का अभ्यास कराया जाये जिससे कठिन स्थल भी सुगम हो सके।

बहु-भेदीय अधिगम तथा शिक्षण युक्तियाँ

शिक्षण के बहु-भेदीय में अधिगम संकेत तथा श्रृंखला की परिस्थितियाँ सम्मिलित होती हैं। उदाहरण के लिए, अक्षांश के शिक्षण के लिए और देशान्तर के लिये कुछ सोपानों का अनुसरण किया जाता है, तब छात्र स्वाभाविक रूप में भेद को समझ लेता है। इस अधिगम में एक तथ्य को दूसरे से अन्तर करने पर बल दिया जाता है। इसके अन्तर्गत उद्दीपन तथा अनुक्रिया का सम्बन्ध भ्रान्तिपूर्ण होता है। इसमें अधोलिखित युक्तियों को प्रयुक्त किया जाता है।

1. उद्दीपन तथा अनुक्रियाओं को जितना सम्भव हो भिन्न रूप में रखा जाये।
2. सभी परिस्थितियों को एक साथ प्रस्तुत किया जाये जिससे छात्र उनमें तुरन्त अन्तर कर सकें।

3. छात्रों को अवसर दिये जायें कि वे अन्तर को खोज सकें। सरल से कठिन की ओर जाने का प्रयास किया जाये।

नोट

प्रत्यय-अधिगम तथा शिक्षण युक्तियाँ

प्रत्यय-अधिगम में छात्रों को सामान्यीकरण करने के लिए अवसर दिये जाते हैं। तथ्यों के समूह एक-देसरे से भिन्न होते हैं परन्तु उनमें सम्मिलित घटकों के लिए छात्र सामान्यीकरण कर सकते हैं; जैसे-सन्तरा, नींबू तथा बाह्य आवरण में बिल्कुल एक-दूसरे से भिन्न हैं परन्तु सभी रसदार फल है। इस प्रत्यय की छात्र पहचान कर सकते हैं। इसमें त्रुटि एवं प्रयास के सिद्धान्त का अनुसरण किया जाता है। प्रत्यय-अधिगम में निम्न चार शिक्षण युक्तियाँ प्रयोग की जाती हैं-

1. सभी उद्दीपनों और अनुक्रियाओं में अन्तर करना होता है।
2. सभी परिस्थितियों को इस प्रकार प्रस्तुत करना होता है जिससे छात्र तुरन्त सामान्यीकरण कर सकें।
3. छात्र को सामान्यीकरण अथवा वर्गीकरण के लिये बाध्य करना होता है।
4. छात्रों को दो भ्रान्तिपूर्ण प्रत्ययों में अन्तर करने के लिये परिस्थितियाँ उत्पन्न करनी होती हैं।

शोध कार्यों से यह स्पष्ट हो चुका है कि अभ्यास का प्रत्यय-अधिगम पर कोई विशेष प्रभाव नहीं होता है।

सिद्धान्त-अधिगम तथा शिक्षण युक्तियाँ

सिद्धान्त-अधिगम में दो तथा दो से अधिक प्रत्ययों की श्रृंखला सम्मिलित होती है। उदाहरण के लिए, ठोस पदार्थ गर्मी पाकर बढ़ता है। यहाँ तीन प्रत्ययों 'पदार्थ', 'गर्मी तथा बढ़ने' को एक श्रृंखला में एक साथ रखा गया है और इसमें एक ही सिद्धान्त का बोध होता है। जिस प्रकार एक प्रत्यय में कई श्रृंखलायें सम्मिलित होती हैं उसी प्रकार एक सिद्धान्त में कई प्रत्यय सम्मिलित होते हैं। सिद्धान्त-अधिगम में छात्र को प्रत्ययों का प्रत्यास्मरण करना होता है। जिससे सिद्धान्त का बोध होता है। इसके लिए शिक्षक अधोलिखित युक्तियों का प्रयोग करता है।

1. सिद्धान्त का सम्पूर्ण स्वरूप संक्षिप्त में दिया जाये।
2. सिद्धान्त में निहित प्रत्ययों को एक श्रृंखला में प्रस्तुत किया जाये। दोनों प्रकार की श्रृंखलायें (आगे की ओर तथा पीछे की ओर) प्रस्तुत की जा सकती है।
3. प्रत्ययों की श्रृंखला का अभ्यास कराया जाये जिससे कठिन-स्थलों को सुगम बनाया जा सके।

अधिगम-स्वरूप तथा सीखने का उद्देश्य

शिक्षण की युक्तियों के चयन में अधिगम के स्वरूप अथवा परिस्थितियों को ध्यान में रखना होता है क्योंकि इनका सम्बन्ध सीखने के उद्देश्यों से प्रत्यक्ष रूप में होता है। यदि शिक्षक संकेत-अधिगम की युक्तियों को प्रयुक्त करता है तो ज्ञान-उद्देश्य की प्राप्ति की जाती हैं श्रृंखला-अधिगम के लिये युक्तियों को प्रयुक्त करने से बोध-उद्देश्य, बहुभेदीय अधिगम की युक्तियों को प्रयुक्त करने में प्रयोग-उद्देश्य प्रत्यय-अधिगम तथा सिद्धान्त अधिगम की शिक्षण-युक्तियों के प्रयुक्त करने में सर्जनात्मक-उद्देश्य की प्राप्ति की जाती है।

छात्र क्रियाकलाप

1. डिजाइनिंग और स्व-निर्देस सामग्री को तैयार करने का वर्णन करें?

2. दूरवर्ती-शिक्षा में स्वाध्याय पाठ्यपुस्तकों का परिचय दें?

नोट

समुचित-युक्तियों के चयन के लिए कार्य-विश्लेषण अधिगम के स्वरूप तथा सीखने के उद्देश्यों को ध्यान में रखना होता है। किसी पाठ्य-वस्तु के शिक्षण के लिये युक्तियों को चयन करने के लिए उसमें निहित नियमों, प्रत्ययों तथा सिद्धान्तों का निर्धारण किया जाता है। जिसमें अधिगम के स्वरूप स्पष्ट हो जाते हैं। विभिन्न अधिगम स्वरूपों तथा परिस्थितियों के लिये शिक्षण-युक्तियाँ सुनिश्चित होती हैं। इसलिये शिक्षण-युक्तियों का चयन करने के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि शिक्षक पहले अधिगम के स्वरूपों को निर्धारित करे तभी वह शिक्षण-युक्तियों का चयन सुगमता से कर सकता है। उदाहरण के लिये, 'शिक्षण-युक्तियों' के 'चयन' में 15 नियम, 5 प्रत्यय तथा 1 सिद्धान्त निहित होता हैं इनके लिये अलग-अलग शिक्षण युक्तियाँ प्रयुक्त की जाती हैं।

दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन केन्द्र

अध्ययन केन्द्रों का अर्थ

अध्ययन केन्द्र दूरवर्ती-शिक्षा की सहायक प्रणाली का ही अंग होता है। इस प्रणाली की अध्ययन सम्बन्धी मूल सहायता इन्हीं केन्द्रों द्वारा दी जाती है। पाठ्यवस्तु सम्बन्धी सहायता, कौशल, कठिनाइयों का निराकरण तथा पृष्ठ-पोषण व अभ्यास इन्हीं केन्द्रों पर किया जाता है। अध्यापक छात्रों से अपनी टिप्पणियों के सम्बन्ध में ज्ञात करते हैं कि छात्रों की क्या प्रतिक्रिया है? इसके आधार पर शिक्षक छात्रों को परामर्श देते हैं। सम्पर्क कार्यक्रम के समय छात्रों की सहायता करते हैं। नियमित छात्रों की भाँति इस प्रकार की सुविधायें दूरवर्ती-छात्रों को निरन्तर अध्ययन केन्द्र पर दी जाती रहती हैं।

अध्ययन केन्द्र निरन्तर छात्रों के अध्ययन के लिए खुले रहते हैं। छात्र सेमीनार, अध्ययन तथा परामर्श हेतु अध्ययन केन्द्र पर आते रहते हैं। इन केन्द्रों के खुलने का समय निर्धारित किया जाता है। इसमें छात्रों की सुविधा हो, तथा जो भवन किराये पर लिए गए हैं उनकी उपलब्धता को भी ध्यान में रखा जाता है। शिक्षक तथा अन्य कर्मचारी भी अंश कालिक होते हैं और परम्परागत शिक्षा संस्थाओं में ही इनकी व्यवस्था की जाती है। अध्ययन केन्द्र अवकाश के दिनों में अथवा सामान्य समय के अतिरिक्त समय में खोले जाते हैं। इस प्रकार सायंकाल तथा रविवार को यह केन्द्र खोले जाते हैं। दूरवर्ती-शिक्षा में सेवारत छात्र होते हैं। इसलिए अवकाश के दिनों में इन केन्द्रों को खोला जाता है।

अधिकांश इस प्रकार के अध्ययन केन्द्र विद्यालयों तथा शिक्षा संस्थाओं में होते हैं। दूरवर्ती-छात्रों का शिक्षण सायंकाल तथा अवकाश के दिनों में ही किया जाता हे। अध्ययन-कक्ष पूर्णतः आवश्यक शिक्षण सामग्री से सुसज्जित रहता है। अलग से कोई व्यवस्था नहीं करनी पड़ती है। माध्यमिक विद्यालय तथा महाविद्यालयों में यह केन्द्र अधिक उपयोगी होते हैं, क्योंकि दूरवर्ती-छात्र अधिकांश प्रौढ़ होते हैं।

शिक्षा संस्थाओं के अतिरिक्त अन्य प्रकार की संस्थाओं पर इस प्रकार अध्ययन केन्द्रों का संचालन किया जाता है, परन्तु इन संस्थाओं पर शिक्षण सामग्री की व्यवस्था करनी होती है। अन्य संस्थाओं पर अध्ययन केन्द्र महँगे पड़ते हैं। शिक्षा संस्थायें सभी नगरों में होती हैं। इसलिए इन्हीं संस्थाओं पर अध्ययन केन्द्रों का संचालन प्रत्येक दृष्टि से उचित तथा मितव्ययी होता है।

दूरवर्ती-शिक्षण के निर्धारण के लिए कुछ मानदण्डों को ध्यान में रखना चाहिये। अमुक

अध्ययन केन्द्र पर अनुमानित छात्रों की संख्या कितनी होगी जो उस केन्द्र पर अध्ययन हेतु आयेंगे। उस केन्द्र पर पहुँचने के लिए छात्रों को कितनी दूरी तय करनी होगी तथा पहुँचने के साधन उपलब्ध होंगे अथवा नहीं होंगे। यात्रा व्यय छात्रों को कितना करना होगा, उनकी पहुँच के अन्तर्गत होना आवश्यक होता है, तभी अध्ययन केन्द्रों का लाभ दूरवर्ती छात्रों को मिल सकेगा। दूरवर्ती-छात्र कब-कब अध्ययन के लिए आना चाहेंगे। इन सभी प्रश्नों के उत्तरों के बाद ही निर्णय करना होगा कि अमुक विद्यालय को अध्ययन केन्द्र बनाया जाये अथवा नहीं, परन्तु प्रत्येक छात्र के लिए किसी भी स्थान को सुगम बनाना सम्भव नहीं है। अत: अधिकांश छात्रों की सुविधाओं को ही ध्यान में रखा जा सकता है। इस प्रकार के छात्रों के लिए अन्य माध्यमों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

नोट

शिक्षण सामग्री

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण सामग्री तथा अन्य सुविधाओं की भी आवश्यकता होती है। प्रधानाचार्य तथा विद्यालय के शिक्षकों की सहमति तथा सहयोग भी अपेक्षित होता है, क्योंकि विद्यालय की प्रयोगशाला तथा अन्य शिक्षण सामग्री मानचित्र, चार्ट आदि का भी उपयोग किया जाता है। शिक्षा संस्थाओं में ही यह सुविधायें उपलब्ध होती हैं। अन्य संस्थाओं में यह सुविधायें उपलब्ध नहीं होती हैं। सामान्यत: अधोलिखित शिक्षण सामग्री अध्ययन केन्द्रों पर सुलभ होनी चाहिए–

1. पाठ्यपुस्तकें तथा सहायक पुस्तकें तथा सन्दर्भ पुस्तकें उपलब्ध हों,
2. विज्ञान तथा तकनीकी प्रयोगशाला विषयों के अनुसार उपलब्ध हों,
3. दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री रेडियो, दूरदर्शन भाषा प्रयोगशाला की सुविधा हो,
4. अन्य सूचनाओं सम्बन्धी सामग्री का होना,
5. कार्यालय सम्बन्धी सामग्री का होना,
6. कक्षा-शिक्षण की सामग्री आदि का उपलब्ध होना,
7. स्टेशनरी तथा कार्यालय सम्बन्धी सामग्री का होना,
8. फोटो कॉपियर की सुविधायें आदि उपलब्ध होना।

अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त में से कुछ ही समग्री उपलब्ध होती हैं, परन्तु न्यूनतम शिक्षण सामग्री उपलब्ध होनी चाहिये, जो अधिकांश छात्रों के लिए उपयोगी होती हैं। सभी सामग्री का उपयोग कुछ ही छात्र करते हैं। न्यूनतम सामग्री में शिक्षण-कक्ष, मेज, कुर्सी, श्यामपट, चॉक तथा डस्टर होना चाहिए। अध्ययन केन्द्र पर विशिष्ट सामग्री में पाठ्य-पुस्तकें, दृश्य-श्रव्य सामग्री, मानचित्र आदि की सुविधा भी होनी चाहिए।

इसके अतिरिक्त शिक्षण सामग्री का होना कठिन होता है। उसके लिए वित्तीय साधन तथा विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है, क्योंकि अध्ययन केन्द्र के साथ इन्हें स्रोत केन्द्र का भी कार्य करना होता है। पुस्तकालय तथा प्रयोगशाला की भी सुविधायें उपलब्ध होनी चाहियें। औपचारिक शिक्षा संस्थाओं की अध्ययन सामग्री का उपयोग किया जा सकता है, जो मितव्ययी होता है। ग्रामीण अध्ययन केन्द्रों की अपेक्षा नगरीय अध्ययन केन्द्रों पर अध्ययन सामग्री सरलता से उपलब्ध हो जाती है और दूरवर्ती-छात्रों को आकर्षित करती है। ग्रामीण अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त सुविधायें उपलब्ध नहीं होतीं तथा छात्र भी आकर्षित नहीं होते हैं। इस प्रकार सभी अध्ययन केन्द्रों पर समान अध्ययन सुविधायें उपलब्ध नहीं होती हैं।

अध्ययन सामग्री के भण्डारण की समस्यायें

नोट

अध्ययन केन्द्रों में शिक्षण सामग्री का अक्सर अभाव होता है, क्योंकि भंडारण की समस्या होती है। इसलिए अध्ययन सामग्री को किराये पर लाना होता है, जिसमें व्यय अधिक करना होता है। अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त सभी सामग्री उपलब्ध होनी चाहियें, तब अधिक किराया देना होगा, यह स्थायी व्यय हो जायेगा। इसका दूसरा विकल्प यह हैं कि प्रमुख केन्द्रों पर अध्ययन सामग्री का भण्डारण किया जाए और आवश्यकता के समय अन्य केन्द्रों को दे दिया जाए। इस प्रक्रिया में यातायात पर व्यय अवश्य करना होगा जो पहले की अपेक्षा कम होगा। अध्ययन सामग्री का भण्डारण केन्द्र पर किया जाये और आवश्यकता के समय अन्य केन्द्रों को दे दिया जाये। अध्ययन सामग्री के भण्डारण के लिए स्थान तथा कमरों की सुविधा होनी चाहिए।

अध्ययन सामग्री के उपयोग में अन्य समस्या यह है कि सभी स्थानों पर बिजली नहीं होती है। इसलिए कम्प्यूटर तथा दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। दूरवर्ती छात्रों को कई किलोमीटर यात्रा करके पहुँचना होता है। यातायात की सुविधा भी होनी चाहिए।

शिक्षक तथा अन्य कर्मचारी

दूरवर्ती-शिक्षा संस्थायें अंशकालिक कर्मचारियों से अध्ययन केन्द्रों पर काम चलाती हैं। सर्वप्रथम संयोजक प्रशासक तथा पर्यवेक्षक की आवश्यकता होती है। संयोजक को अध्ययन केन्द्र के समीप ही रहना चाहिए। शिक्षण कार्य तथा सेमीनार के लिये अध्यापकों की आवश्यकता होती है। अध्यापकों की स्थानीय परिसर से नियुक्त करना चाहिए, जिससे उन्हें आवश्यकता के समय बुलाया जा सके। शिक्षा-संस्था के योग्य अध्यापकों को पारिश्रमिक के रूप में काम दिया जाए, जिससे अधिक रुचि लेंगे। जिन विषयों के अध्यापक उपलब्ध न हों, उन्हें बाहर से आमन्त्रित किया जा सकता है या सेवा निवृत्त अध्यापकों की अंशकालिक नियुक्तियाँ की जा सकती हैं।

योग्य शिक्षकों तथा विशेषज्ञों की नियुक्तियों से व्यय अधिक होता है। इसे कम करने के लिए पर्यवेक्षक कार्य हेतु स्थानीय शिक्षकों से काम लिया जा सकता है। इन अध्यापकों से कई कार्य लिये जा सकते हैं, शिक्षण, पर्यवेक्षण, तथा गृह-कार्यों की जाँच भी कराई जा सकती है। सामूहिक वाद-विवाद में भी काम कर सकते हैं। स्थानीय अध्यापकों को सूक्ष्म प्रशिक्षण देना चाहिए, जिससे कार्यक्रम से अवगत हो सकें तथा अपनी भूमिका तथा उत्तरदायित्वों को भी समझ सकें। इनका प्रमुख कार्य सहायक रूप में होना चाहिए। शिक्षकों को पाठ्यवस्तु का स्वामित्व होना आवश्यक होता है, साथ ही अपने शिक्षण-विषय के उद्देश्यों की भी जानकारी होनी चाहिए। दूरवर्ती-शिक्षा संस्थाओं को अपनी एक परिनियमावली भी तैयार करनी चाहिये, जिसमें क्रियाओं, भूमिका तथा उत्तरदायित्वों की जानकारी दी गई हो। शैक्षिक रेडियो कार्यक्रमों की भी व्यवस्था करनी चाहिए। औपचारिक शिक्षक की अपेक्षा दूरवर्ती-शिक्षक को अधिक उत्तरदायित्वों को निभाना होता है।

उच्च-शिक्षा की संस्थाओं को यह कठिनाई होती है, उन्हें योग्य तथा विशेषज्ञों के द्वारा ही कार्य कराना होता है। उच्च-शिक्षा प्राप्त शिक्षक ही अध्ययन कार्य कर सकता है तथा पाठ सामग्री को लिख सकता है। वास्तव में उच्च-शिक्षा में समुचित निर्देशन, पर्यवेक्षण तथा परामर्श योग्य शिक्षकों की आवश्यकता होती है।

अध्ययन केन्द्रों पर सहायक कर्मचारियों की भी आवश्यकता होती है; जैसे–रिकॉर्ड के लिये लिपिक, प्रयोगशाला के लिये तकनीशियनों की आवश्यकता होती है, इन्हें भी शिक्षण संस्था से ही लिया जाता है।

नोट

अध्ययन केन्द्रों की विशेषतायें

अध्ययन केन्द्रों की स्थापना इसलिये की जाती है, जिससे दूरवर्ती-छात्रों को अध्ययन की सुविधायें दी जा सकें। यह भी सहायक प्रणाली का अंग माना जाता है। इस प्रकार के केन्द्रों को शिक्षा संस्थाओं में भी स्थापित किया जाता है, जिससे दूरवर्ती-शिक्षा संस्थाओं को कम व्यय करना होता है। अध्यापक केन्द्रों की अधोलिखित विशेषतायें होती हैं–

1. स्थानीय शिक्षा संस्थाओं में अध्ययन केन्द्र स्थापित किए जाते हैं, जिससे अध्ययन का वातावरण भी छात्रों को दिया जा सके।
2. शिक्षण-सामग्री की सुविधायें भी सुगमता से मिल जाती हैं।
3. विभिन्न विषयों के शिक्षक तथा विशेषज्ञ भी उपलब्ध हो जाते हैं।
4. अध्ययन केन्द्रों के खुलने का समय, अवकाश के दिनों में तथा सायंकाल हो होता है।
5. दूरवर्ती-छात्रों को सरलता से मिल जाता हैं खोजने में कठिनाई नहीं होती है।

इस विवरण से विदित होता है कि अध्ययन केन्द्रों को स्थान के निर्धारण में, शिक्षण-सामग्री की व्यवस्था में तथा शिक्षकों तथा अन्य कर्मचारियों की व्यवस्था में अधिक कठिनाई नहीं होती है, फिर भी दूरवर्ती-छात्रों को अध्ययन केन्द्रों की सुविधा देना आवश्यक होता है। अध्ययन केन्द्रों तथा साधनों की व्यवस्था में आर्थिक पक्ष को भी ध्यान में रखा जाता है। केन्द्रों के निर्धारण में आर्थिक पक्ष प्रमुख मानदण्ड होता है।

अध्ययन केन्द्रों के कार्य

अध्ययन केन्द्रों के कार्य, परम्परागत शिक्षा से बिल्कुल भिन्न प्रकार के होते हैं। एक अच्छी दूरवर्ती-शिक्षा संस्था की प्रमुख विशेषता यह होती है कि परम्परागत शिक्षण के समान अध्ययन के अवसर दे सकें, परन्तु इस शिक्षण में सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु का अध्ययन नहीं किया जाता है, अपितु कुछ चुने हुए ही प्रकरणों का शिक्षण किया जाता है। अधिकांश समय शिक्षण के अतिरिक्त क्रियाओं में किया जाता हैं दूरवर्ती-शिक्षा में अध्ययन केन्द्रों की एक क्रिया शिक्षण की होती है, जबकि परम्परागत में शिक्षण ही प्रमुख क्रिया होती है, अन्य क्रियायें गौण मानी जाती हैं। इस प्रकार शिक्षण एक प्रमुख मानी जाती है।

शिक्षण समूह

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण की क्या आवश्यकता है? जबकि पाठ्यवस्तु सामग्री इस प्रकार लिखी जाती है, जिससे छात्र की अध्ययन सम्बन्धी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। शिक्षण एक अतिरिक्त क्रिया है, जो अध्ययन की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण होती है। इसकी पाँच प्रमुख विशेषतायें होती हैं–

1. शिक्षण से अध्ययन कौशल का विकास होता है, जो दूरवर्ती-छात्रों के लिए अधिक आवश्यक होती है।
2. पाठ्यवस्तु सम्बन्धी कठिनाइयों तथा समस्याओं का समाधान किया जाता है, जिससे विषय को अधिक बोधगम्य किया जाता है।

नोट

3. छात्रों को प्रयोगात्मक कार्य का अवसर दिया जाता है।
4. छात्रों को समूह में रहकर अध्ययन का अवसर मिलता है।
5. व्यक्तिगत शिक्षण भी किया जाता है। भावात्मक पक्षों का विकास शिक्षण के सम्पर्क से ही होता है। अनुदेशन सामग्री से नहीं किया जाता है।

अध्ययन केन्द्रों पर सेमीनार तथा सामूहिक वाद-विवाद की व्यवस्था की जाती है। छात्रों को अध्ययन में आत्म-विश्वास का विकास होता है, कि वे कुछ कर रहे थे, वह बिल्कुल ठीक है। छात्रों में उत्साह बढ़ता है, पुनर्बलन दिया जाता है पृष्ठपोषण मिलता है। शिक्षण द्वारा छात्रों को अध्ययन सम्बन्धी निर्देशन तथा परामर्श भी दिया जाता है।

अध्ययन केन्द्रों पर छात्रों के समूहों के बनाने में उनकी कठिनाइयाँ तथा समस्याओं को ध्यान में रखा जाता है। समूहों में इस प्रकार की सजातीयता रखी जाती है। कमजोर छात्रों को अधिक सहायता की आवश्यकता होती है। छात्रों की आयु-वर्ग के विशेष महत्व दिया जाता है। प्रौढ़ छात्रों का समूह बनाया जाता है, क्योंकि सीखने तथा अध्ययन की क्रियायें भिन्न होती हैं। युवा-छात्रों में अभिप्रेरणा की कमी होती है, उन्हें अध्ययन के लिए अभिप्रेरित करना होता है। प्रौढ़ छात्रों में स्वत: अभिप्रेरणा अधिक होती हैं सम्पर्क कार्यक्रम द्वारा उनकी अभिप्रेरणा को बनाए रखना होता है।

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण में अतिरिक्त पाठ्यसामग्री का प्रस्तुतीकरण नहीं किया जाता है, अपितु उसी पाठ्यसामग्री को पढ़ाया जाता है जिसे पाठ-सामग्री के रूप में उन्हें भेजा है या अन्य माध्यमों द्वारा प्रस्तुत किया है।

सम्पर्क कार्यक्रम के शिक्षण में गृह-कार्यों के उत्तर किस प्रकार लिखें जायें, यह भी स्पष्ट किया जाता है। परीक्षा सम्बन्धी प्रश्नों को किस प्रकार लिखा जायें। इस प्रकार की जानकारी भी शिक्षण द्वारा छात्रों को दी जाती है, परन्तु किसी प्रश्न के उत्तर का मॉडल नहीं दिया जाता है। इस प्रकार के निर्देशन से अध्ययन कौशल का विकास होता है।

माध्यमों के द्वारा कुछ प्रकरणों का प्रस्तुतीकरण कठिन होता है, ऐसे प्रकरण के लिये शिक्षण आवश्यक हो जाता है। शिक्षण द्वारा भावात्मक अध्ययन को बढ़ावा मिलता है जो अन्य माध्यमों द्वारा सम्भव नहीं होता है। शिक्षण द्वारा अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास किया जाता है। अध्यापक-छात्रों की अन्त:प्रक्रिया द्वारा छात्रों के भावात्मक पक्ष का विकास किया जाता है, जिन तथ्यों का स्पष्टीकरण अनुदेशन सामग्री से नहीं होता है, उन्हें प्रयोग द्वारा तथा प्रदर्शन के द्वारा स्पष्ट किया जाता है, परन्तु दूरदर्शन माध्यम से भी प्रदर्शन किया जाता सकता है। नाटकीय विधि द्वारा भावात्मक पक्ष का विकास किया जाता है, परन्तु यह सुविधायें सभी दूरवर्ती-छात्रों को उपलब्ध नहीं होती है। इसलिए शिक्षण द्वारा इनकी पूर्ति की जाती है। अनुभवी छात्रों की चर्चा की जाती है। गृह-कार्यों सम्बन्धी समस्याओं पर भी चर्चा की जाती है। प्रयोग-प्रदर्शन का विवरण सोपान के क्रम में किया जाता है। प्रवचन-विधि का भी अनुसरण किया जाता है। इसमें छोटे समूहों को रखा जाता है। छात्र अध्ययन के परस्पर भी एक दूसरे की सहायता करते हैं। इस प्रकार की क्रियाओं को शिक्षक प्रोत्साहित करता है।

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण के समय यह सभी क्रियायें करनी होती हैं। शिक्षण से पूर्व छात्रों की उपस्थिति भी ली जानी चाहिए, जो छात्र नियमित रूप से कक्षा में उपस्थित नहीं रह सकते हैं, उन्हें अन्य विकल्प में सहायता देनी चाहिए।

शिक्षण में माध्यमों का उपयोग

नोट

कुछ दूरवर्ती-शिक्षा संस्थायें शिक्षण में अन्य माध्यमों का भी प्रयोग करते हैं। केसिट का प्रयोग अधिक किया जाने लगा है। इसे शिक्षा की शक्तिशाली विधि मानते हैं, क्योंकि यह छात्रों के नियन्त्रण में होते हैं, इन्हें जब चाहे सुविधानुसार प्रयोग करते हैं।

अध्ययन केन्द्रों के शिक्षकों को इस प्रकार स्रोत तथा माध्यमों की जानकारी होनी चाहिए। इसके लिये प्रशिक्षण की तथा निर्देशन की आवश्यकता होती है। इस प्रकार के माध्यमों का उपयोग सेमीनार तथा सामूहिक वाद-विवाद में किया जा सकता है, इन्हें जब चाहे तब बन्द कर सकते हैं तथा आवश्यकतानुसार पुनरावृत्ति भी की जा सकती है। इन माध्यमों का उपयोग प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है। इनका उपयोग स्थानीय शिक्षकों द्वारा किया जा सकता है। पर्यवेक्षक स्वयं भी सीख सकता है और सामूहिक वाद-विवाद की व्यवस्था कर सकते हैं।

व्यक्तिगत शिक्षण

दूरवर्ती-शिक्षा प्रणाली में पत्राचार के माध्यम से व्यक्तिगत सम्पर्क ही होता है, विशेष रूप से जब शिक्षक गृह-कार्यों की जाँच करता है। पत्राचार से पृष्ठपोषण देना महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है। पत्राचार में शिक्षण उत्तम प्रकार का होना चाहिए, क्योंकि दूरवर्ती-शिक्षा संस्थायें इस पर अधिक ध्यान देती हैं। पत्राचार-शिक्षा में इस तथ्य का विवेचन किया गया है।

पत्राचार का शिक्षक स्थानीय अध्ययन केन्द्र पर कार्य करता है, इसलिये छात्रों से सम्पर्क भी होता है। साधारणतः यह अन्य शिक्षकों से भिन्न प्रकार के होते हैं। इसका अर्थ यह होता है कि जब छात्र शिक्षक से व्यक्तिगत जानकारी चाहता है, तब वह अपने व्यक्तिगत सम्पर्क के अनुभव के आधार पर विवरण देता है। स्थानीय शिक्षक को छात्रों की कठिनाइयों तथा समस्याओं का ही ज्ञान होता है, क्योंकि छात्रों की संख्या अधिक होती है और समय कम होता है। इसलिए छात्र एवं शिक्षक सम्पर्क अनौपचारिक तथा कभी-कभी ही होता है।

स्रोतों का उपयोग

अध्ययन केन्द्रों को शिक्षण सामग्री से सुसज्जित करना अधिक महंगा होता है। इसलिए अध्ययन केन्द्रों पर कम से कम आवश्यक शिक्षण सामग्री की व्यवस्था ही की जाती है। दूरवर्ती-छात्रों को पाठ्य-पुस्तकें, दूरदर्शन तथा रेडियो की सूविधायें उपलब्ध होनी चाहियें। इनकी सुविधा अध्ययन केन्द्रों पर भी उपलब्ध कराई जा सकती हैं, परन्तु छात्रों की उपस्थिति अनिवार्य की जा सकती है, क्योंकि दूरदर्शन के कार्यक्रमों के समय उन्हें वहाँ उपस्थित रहना चाहिए, तभी माध्यमों का लाभ मिल सकता है। छात्र के लिये इसका विकल्प भी तैयार किया जा सकता है। पाठ्य-सामग्री का प्रारूप नए ढंग से तैयार किया जा सकता है।

अध्ययन केन्द्र छात्रों के लिए वैकल्पिक व्यवस्था भी करते हैं। इसलिये छात्रों हेतु इन्हें अतिरिक्त स्रोत कहते हैं। दूरवर्ती-छात्रों को अध्ययन सामग्री जो घर पर भेजी जाती है, उसके लिए अध्ययन केन्द्र पूरक सामग्री का कार्य करते हैं।

प्रथम अतिरिक्त स्रोत साधन पाठ्क्रम के सम्बन्धित होते हैं, जो पाठ्यसामग्री घर पर भेजी जाती है, उसकी पूरक होती है, जिससे छात्रों के अध्ययन की अतिरिक्त आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। पाठ्य-पुस्तकों में सन्दर्भ के रूप में उल्लेख होता है, जो उनसे सम्बन्धित होती है या जिनकी शिक्षकों द्वारा संस्तुति की जाती है। अध्ययन केन्द्रों पर पुस्तकालय की सुविधा होनी चाहिए और इस प्रकार की सहायक पुस्तकों को रखा जाए, जिन्हें विश्वविद्यालय स्तर पर

नोट

पढ़ाया जाता है। दूरवर्ती-छात्र जो आन्तरिक क्षेत्रों में रहते हैं, और उन्हें अच्छी पुस्तकें तथा पुस्तकालय देखने का कभी अवसर नहीं मिलता है। पुस्तकों का मूल्य भी अधिक होता है, इसलिये अध्ययन केन्द्रों की पुस्तकालय में इन्हें उपलब्ध कराया जाए। छात्रों को भेजी जाने वाली पाठ्यसामग्री इस दृष्टि से पूर्ण होनी चाहिए, जिससे छात्रों को अतिरिक्त अध्ययन की आवश्यकता कम से कम हो।

अध्ययन केन्द्रों पर रिकॉर्डिंग की भी सुविधा होनी चाहिए, जिन पाठ्यक्रमों को दूरदर्शन तथा रेडियो से प्रसारण किया जाता है, उनका रिकॉर्डिंग कर लिया जाए, और आवश्यकता पड़ने पर छात्रों को पुनः दिखाया या सुनाया जा सके, तथा जो छात्र वंचित रह गये, उन्हें भी उसका लाभ दिया जा सके। कुछ पाठ्यक्रमों के लिए विशिष्ट सामग्री की आवश्यकता होती है, उसे भी अध्ययन केन्द्रों पर उपलब्ध होनी चाहिए। विज्ञान विषयों के लिए प्रयोगशाला होनी चाहिए।

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी भी पाठ-सामग्री होनी चाहिए, जो छात्रों के भावी जीवन के लिए उपयोगी होती है, जिससे छात्र अपनी अभिरुचि तथा अभिवृत्तियों को विकसित कर सकें। छात्र अपने भावी जीवन के सम्बन्ध में निर्णय ले सकें। इसके लिये सामान्य व्यावसायिक सन्दर्भ पुस्तकें तथा अन्य विज्ञापनों सम्बन्धी सूचनायें भी रखी जायें, जिससे वे आवेदन कर सकें। इसके अतिरिक्त आगामी कक्षाओं के लिए पाठ्क्रमों का चुनाव कर सकें। पुस्तकालय से छात्रों को पुस्तकें घर के पढ़ने के लिए देने की सुविधा भी होनी चाहिए।

अध्ययन केन्द्रों पर इस प्रकार की सुविधाओं के सम्बन्ध में यह सुनिश्चित नहीं कर सकते कि सभी दूरवर्ती-छात्र इन स्रोत तथा साधनों का लाभ उठा सकेंगे, क्योंकि छात्रों को यातायात, रहने तथा बैठने आदि की व्यवस्था स्वयं करनी होगी। यदि वे सेवारत है तब दूरी के छात्रों को अवकाश लेना होगा। इस प्रकार के अध्ययन केन्द्र के समीपवर्ती छात्र ही पूरा-पूरा लाभ उठा सकते हैं।

अन्य छात्रों से सम्पर्क

औपचारिक शिक्षा के छात्रों का आपस में सम्पर्क निरन्तर बना रहता है और एक दूसरे को अध्ययन में कई प्रकार से सहायता करते रहते हैं। छात्रों के आपसी सम्पर्क से उनके अनुभवों में वृद्धि होती है तथा आत्म विश्वास का विकास होता है। परीक्षा की तैयारी तथा गृहकार्यों को पूरा करने में भी सहायता मिलती है। दूरवर्ती-छात्र आपसी सम्पर्क तथा अन्तःप्रक्रिया से वंचित रहता है। यह सुविधा तथा अवसर अध्ययन केन्द्रों पर उन्हें मिल पाता है।

बहु-विकल्पीय प्रश्न

1. दूरवर्ती शिक्षा में उपयोग किया जाता है–
   (अ) अमुद्रित माध्यमों (ब) मुद्रित माध्यमों
   (स) उपरोक्त में कोई नहीं (द) उपरोक्त दोनों ही
2. सम्प्रेषण आव्यूह है–
   (अ) खोज सम्प्रेषण (ब) गद्य सम्प्रेषण
   (स) उपरोक्त सभी (द) निर्णय तालिका

3. सम्प्रेषण आव्यूहों का प्रमुख उद्देश्य है–
   (अ) श्रंखला अधिगम का उपयोग करना
   (ब) तार्किक ढंग से सिखना
   (स) उपरोक्त सभी
   (द) शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति करना
4. शिक्षण आव्यूहों का आयोजन किया जाता है–
   (अ) ज्ञानात्मक उद्देश्यों हेतु
   (ब) उपरोक्त सभी
   (स) भावनात्मक उद्देश्यों हेतु
   (द) क्रियात्मक उद्देश्यों हेतु
5. दृश्य-श्रव्य सामग्री चयन का मानदण्ड होता है–
   (अ) उपरोक्त दो ही (ब) शिक्षण के उद्देश्य
   (स) उपरोक्त कोई नहीं (द) अधिगम के स्वरूप

कुजी–1. (द) 2. (स) 3. (स) 4. (ब) 5. (अ)

नोट

लघु-उत्तरीय प्रश्न

1. शिक्षण माध्यम एवं शिक्षण विधि में अन्तर बताइए।
2. सम्प्रेषण आव्यूह के प्रकार बताइए।
3. शिक्षण आव्यूहों के चयन का आधार बताइए।

अधिगम-अभ्यास

1. सम्प्रेषण माध्यम तथा सम्प्रेषण आव्यूह में अन्तर कीजिए। सम्प्रेषण आव्यूह के प्रकार बताइए तथा उनका संक्षिप्त विवरण दीजिए।
2. सम्प्रेषण-आव्यूह के चयन की विधि का वर्णन कीजिए।
3. सम्प्रेषण में दृश्य-श्रव्य सामग्री के उपयोग का महत्व बताइये तथा चयन विधि का वर्णन कीजिए।

इकाई-4

नोट

दूरवर्ती-शिक्षा के माध्यम से शिक्षा

पाठ-संरचना

- दूरवर्ती-शिक्षा प्रबन्ध और छात्रों की सहायता सेवा
- दूरवर्ती-शिक्षा के लिए कार्यक्रम
- दूरवर्ती शिक्षा में अध्याय का नियोजन

उद्देश्य एवं परिचय

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप निम्नलिखित निष्कर्षों की व्याख्या कर पाने में समर्थ हो सकेंगे–

- दूरवर्ती शिक्षा में प्रबन्ध
- दूरवर्ती शिक्षा मे छात्रों की सहायता सेवा
- दूरवर्ती शिक्षा में अध्याय का नियोजन करना

दूरवर्ती-शिक्षा प्रबन्ध और छात्रों की सहायता सेवा (Students-support System and Distance Education Management)

तकनीकी तथा प्रबन्ध शिक्षा

वर्तमान समय में औपचारिक पाठ्यक्रमों जैसे-तकनीकी तथा प्रबन्धकीय शिक्षा कार्यक्रमों में प्रवेश सम्बन्धी कठोर आवश्यकताओं के कारण बहुत कम व्यक्तियों को स्थान मिल पाता है। दूरवर्ती-अधिगम प्रक्रिया द्वारा अधिकांश व्यक्तियों तक यह कार्यक्रम पहुँचाये जा सकते हैं। पोलीटेक्निक में शिक्षा के साथ तकनीकी तथा प्रबन्धीय शिक्षा कार्यक्रम लचीले प्रतिमान पर आधारित होंगे साथ ही अनेक प्रकार से प्रवेश का प्रावधान होगा। निर्देशीय व परामर्शीय सेवायें भी प्रदान की जायेंगी।

महिलाओं के लिए, आर्थिक तथा सामाजिक रूप से कमजो व्यक्तियों के लिये तथा शारीरिक अपंग व्यक्तियों के लिए उपयुक्त औपचारिक तथा अनौपचारिक तकनीकी शिक्षा के कार्यक्रम अधिक लाभप्रद होंगे।

प्रबन्धकीय परिषद्

नोट

यह केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की प्रशासकीय सभा प्रबन्धकीय परिषद् के समान होती है जैसा कि इसके नाम से ही विदित हो रहा है, प्रबन्धकीय परिषद्, शासकीय कार्यकारिणी है और विश्वविद्यालय की शैक्षिक योजनाओं को बनाती है और उसे निर्देशित करती है। यह विश्वविद्यालय की सम्पूर्ण शैक्षिक योजनाओं का परिवेक्षण करती है। योजना परिषद् का मुख्य कार्य विश्वविद्यालय के विकास हेतु उचित योजनयें बनाना है। यह उन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जिनके हेतु विश्वविद्यालय की स्थापना हुई है, प्रबन्धक परिषद् और शैक्षिक सभ को सलाह देने का कार्य करेगा। वित्त समिति का कार्य वित्तीय मामलों को देखना है और मान्यता सम्बन्धी परिषद् विश्वविद्यालयों को मान्यता देन का कार्य करती हैं।

भारत के राष्ट्रपति विश्वविद्यालय के 'विजिटर' होते हैं। विश्वविद्यालय के दूसरे अधि कारियों में कुलपति, उपकुलपति, निदेशक, कुल सचिव, वित्त अधिकारी होते हैं। दूसरे केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की तरह इसमें कुलपति की कोई व्यवस्था नहीं की गई है। ऐसा देखा गया है कि सर्वोच्च अधिकारी का विश्वविद्यालय के कार्य-क्षेत्र में कोई विशिष्ट स्थान नहीं है और न ही कोई उत्तरदायित्व है। उप-कुलपति की नियुक्ति केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की तरह ही होती हैं उसकी नियुक्ति 'विजिटर' के द्वारा एक समिति से होती है, जिसमें कम से कम तीन व्यक्ति होते हैं। और इस समिति में तीन सदस्यों में से दो बोर्ड ऑफ मैनेजमेंट और ए विजिटर द्वारा नामांकित होता है और विजिटर द्वारा मनोनीत सदस्य की ही इस समिति की प्रमुख भूमिका होती है। उपकुलपति पूर्ण कालिक वेतन प्राप्ति अधिकारी होता हैं उसकी नियुक्ति पाँच वर्ष के लिए होती है या 63 साल पूरे होने तक अर्थात् इनमें से जो शर्त पहले पूरी हो जाये। वह बोर्ड ऑफ मैनेजमेंट (प्रबन्धकीय समिति), एकेडेमिक कॉन्सिल (शैक्षिक सभा), प्लानिंग बोर्ड (योजना परिषद्) और फाइनैनशियल कमेटी (वित्तीय समिति) का पदाधिकारेण अध्यक्ष होता है। उपकुलपति विश्वविद्यालयों के सभी मामलों पर नियन्त्रण रखता है तथा सभी अधि कारियों द्वारा लिए गए निष्कर्षों का मार्ग प्रशस्त करता है। वह विश्वविद्यालय से सम्बन्धित मामलों तथा अनुशासन की उचित व्यवस्था रखता है।

सबसे अधिक ध्यान देने योग्य यह हे कि एक से अधिक कुलपति की भी व्यवस्था की गई है। विश्वविद्यालय के विस्तृत कार्यों को देखते हुए यह आवश्यक भी समझा गया। इसका कार्य-क्षेत्र बहुत फैला हुआ है तथा निर्देश देने का तरीका भी पारम्परिक विश्वविद्यालयों से भिन्न है। इसमें आधुनिकतम् संचार तकनीकी, उच्च कोटि का सवेक्षण तथा कक्षा नायकी एवं उचित और स्थिर निर्देशन इसका प्रयोग किया गया है। प्रो॰ उपकुलपति की नियुक्ति की संस्तुति पर बोड्ड ऑफ मैनेजमेंट के द्वारा की जाती है। इसका कार्यकाल भी इसी के द्वारा निश्चित किया जाता है और वह तीन वर्ष से अधिक नहीं होता। उपकुलपति की नियुक्ति दोबारा भी की जा सकती है। प्रो॰ उपकुलपति का सहायक होता है। यह उसकी उन मामलों में सहायता करता है जो विशेषत: उपकुलपति के द्वारा समय-समय पर पत्रों द्वारा भेजे जाते हैं तथा इसके अतिरिक्त कुछ अधिकार और कार्य भी करता है, जो उपकुलपति उसे सौंपते हैं। इस समय विश्वविद्यालय में दो प्रो॰ उपकुलपति हैं–एक शैक्षिक मामलों के लिए तथा दूसरा योजनाओं और प्रबन्धकीय कार्यों की देखभाल करता है।

इस प्रकार से विश्वविद्यालय के नियमों में एक से अधिक कुल सचिवों का प्रावधान है, जोकि पारम्परिक विश्वविद्यालयों से अलग हैं। यह अनुभव किया गया कि इस विश्वविद्यालय

नोट

में प्रबन्ध को देखते हुए एक से अधिक कुल सचिवों की आवश्यकता होती है। बाद में यह सोचा गया कि इन उच्च अधिकारियों को विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों जैसे प्रबन्ध विभाग, शैक्षिक विभाग, मुल्यांकन विभाग का अध्यक्ष बनाया जाए। ये सभी अध्यक्ष कुल सचिव के समान पद वाले ही हों, जो इस विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों को समानता तथा एकरूपता देते हैं। इस प्रकार ये विभिन्नतायें इस विश्वविद्याल में जानबूझकर रखी गई हैं।

पारम्परिक विश्वविद्यालयों के विपरित, जिनमें शैक्षिक गतिविधियों को विभागों के रूप में रखा गया है, राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय में इन्हें स्कूलों के रूप में बनाया गया है। इन स्कूलों का मुख्य महत्व यह निश्चित करना है कि विश्वविद्यालय के बहु-आयामी कार्यक्रम तथा आन्तरिक कार्यक्रम क्या होंगे? जिन्हें वह विषयों को देने में करेगी। दूसरी पारम्परिक विश्वविद्यालयों के जो अनुशासन के तरीके हैं, वह इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के लिए सही नहीं हैं, प्रत्येक स्कूल का एक अध्यक्ष होगा, इस स्कूल या (विभाग) का जो अध्यक्ष होगा, वह शैक्षिक तथा प्रशासकीय दोनों ही कार्यों को करेगा, इसलिए इसका नाम 'डीन' से 'निर्देशक' कर दिया गया है। तकनीकी विभागों के अध्यक्ष जैसे कम्प्यूटर केन्द्रों के अध्यक्षें को भी निर्देशक ही कहा जायेगा। यह एक निश्चित रूप में समरूपता लाता है।

शैक्षिक कार्यक्रम अथवा अध्ययन विषय

मुक्त विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करते हैं, तथा एक नए और लचीले शैक्षिक कार्यक्रम को बढ़ावा देते हैं। इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए की गइ है। यह विभिन्न कार्यक्रमों को प्रदान करता है–

1. दीर्घकालीन तथा अल्पकालीन कार्यक्रम सामान्य शिक्षा के क्षेत्र में,
2. सतत् शिक्षा;
3. शिक्षा का विस्तार, तथा
4. शोध के लिए अवसर प्रदान करना।

इन कार्यक्रमों के द्वारा प्रमाण-पत्र, डिप्लोमा, स्नातक एवं स्नातकोत्तर उपाधियाँ तथा शोध की उपाधियाँ प्रदान की जाती हैं। इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय अपने लचीलेपन के कारण ही वास्तव में एक मुक्त विश्वविद्यालय है। इसका लचीलापन कार्यक्रमों को प्रदान करने में, विषयों को चुनने में, एक कार्यक्रम से दूसरे कार्यक्रम में विद्यार्थियों की गतिशीलता में और पारम्परिक से गैर-पारम्परिक विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों की गतिशीलता आदि में दिखाई पड़ता है। यह लचीलापन है कि अध्ययन की समयाविधि में तथा विद्यार्थियों को प्रमाण-पत्र, स्नातक और स्नातकोत्तर उपाधियाँ प्राप्त करने में। इसका सबसे महत्वपूर्ण कार्य प्रवेश नियमों को लचीला बनाना है, समाज के प्रत्येक क्षेत्र के व्यक्ति जेसे कामकाजी, कार्यरत व्यक्ति, गृहणियों को असुविधाजनक परिस्थितियों में भी सुविधा प्रदान करना है। सर्वप्रथम यह विश्वविद्यालय अपने दो क्षेत्रों में डिप्लोमा या डिग्री देता था। दूरवर्ती शिक्षा और मैनेजमेंट में। दूरवर्ती शिक्षा में प्रमाण-पत्र केवल उन्हीं लोगों की सहायता के लिये दी जाती हे जो अपना कैरियर दूरवर्ती शिक्षा से पूर्णकालिक और अर्द्धकालिक रूप में चाहते हैं, जैसा कि सम्पूर्ण देश में बहुत से लोग मुक्त विश्वविद्यालय या पत्राचार कार्यक्रम में संलग्न हैं।

यह आवश्यक समझा गया है कि दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र का विस्तृत ज्ञान उन्हें दे दिया जाए। आज तक 1200 विद्यार्थी विश्वविद्यालय मे भाग ले चुके हैं। बिजनैस मैनेजमेंट (व्यापार प्रबन्ध) का कोर्स केवल उन्हीं व्यक्तियों के लिए है जो 3 वर्ष या 5 वर्ष का अनुभव

सुपरवाइजरी (परिवेषक) के क्षेत्र में रखते हैं। 3 वर्ष का अनुभव स्नातक श्रेणी के व्यक्तियों के लिए है। 3300 व्यक्ति इस विषय में प्रवेश ले चुके हैं। यह विषय प्रतिमान (मोड्यूलर) है, जो अन्त: परास्नातक-उपाधि प्रदान करता है।

नोट

इसके अतिरिक्त दूसरे डिप्लोमा कार्यक्रम, जिन्हें अभी तैयार किया जा रहा है ये हैं, रूलर डवलैप्मैन्ट (ग्रामीण उत्थान), कम्प्यूटर शिक्षा, न्यूटरीशन एण्ड हैल्थ (पोषक एवं स्वास्थ्य) क्रिएटिव राइटिंग और प्री स्कूल शिक्षा (पूर्व प्राथमिक शिक्षा), इनमें से प्रत्येक विषय की अवधि नौ माह है। इसके अतिरिक्त 'ग्रामीण उत्थान' तथा 'पोषण एवं स्वास्थ्य' में सर्टिफिकेट कोर्स भी तैयार किये जा रहे हैं।

इसके अतिरिक्त उच्च शिक्षा और 'योजना एवं प्रबन्ध' विषयों में भी डिप्लोमा कोर्स तैयार किया जा रहा है। रक्षा विभाग में कार्यरत व्यक्तियों की जरूरत को देखते हुए भी कुछ विशेष कार्यक्रम तैयार किए जा रहे हैं। ऐरोनोटीकल इन्जीनियरिंग (विमानों से सम्बन्धित) कोर्स की शुरूआत की जा चुकी है।

यह विश्वविद्यालय स्नातक स्तर पर बी०ए० बी०एम०सी०, और बी०कॉम० विषयों को शुरू करने में काफी कार्य कर युकी है। बी०ए० एवम् बी०कॉम० विषय सभी के लिए मुक्त हुए हैं विद्यार्थियों की दो धारायें हैं, अनौपचारिक (जिनके पास कोई शैक्षिक योग्यता नहीं) तथा दूसरे वह जिनके पास आवश्यक शैक्षिक योग्यता (10+2) है। अनौपचारिक विद्यार्थी बी०ए० और बी०कॉम० के योग्य हो सकते हैं, जबकि ये विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा को उत्तीर्ण कर लेते हैं। इस विषय की समयाविधि 3 वर्ष है, परन्तु एक विद्यार्थी अपनी सुविधा के अनुसार 8 वर्ष के अन्दर उसे पूरा कर सकता है।

इस विश्वविद्यालय के स्नातक तक के विषयों की मुख्य विशेषता यह है कि कुछ बेसिक (फ़ाउन्डेशन) विषय इन विषयों से सम्बन्धित हैं, जैसे इण्डियन सिविलाइजेशन एण्ड कल्चर (भारतीय सभ्यता और संस्कृति) तथा विज्ञान और तकनीकी का महत्व और उद्गम की जानकारी रखते हैं। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी की शिक्षा से मुख्य तथा प्रादेशिक विषय भी जुड़े हैं। इसका दूसरा मुख्य पहलू यह है कि सभी विषयों को 'क्रैडिट्स' के रूप में तैयार किया जाता है, तथा विद्यार्थियों को स्नातक स्तर तक की शिक्षा पूरी करने के लिए 96 'क्रैडिट' दिए जाते हैं।

देश के विभिन्न विद्यालयों, महाविद्यालयों और दूसरी शिक्षण संस्थाओं में हजारों व्यक्ति लाइब्रेरियन का कार्य कर रहे हैं। उनमें से अधिकतर के पास व्यावसायिक शिक्षा की योग्यता नहीं है, बहुत से उनमें से व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं, परन्तु वह अपना कार्य छोड़ कर शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते और इसी कारणवश दो पारम्परिक पद्धति से कहीं प्रवेश नहीं ले पाते हैं। इस प्रकार के व्यक्तियों की सहायता के लिए एक स्नातक स्तर का उपाधि की योजना (पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान) के नाम से बनाया गया है।

इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय ने (1992) से शुरू करने वाले कार्यक्रमों की एक रूपरेखा बनाई और उनका वर्गीकरण किया है। इन विषयों को 'स्कूल्स' में वर्गीकृत किया गया है, जो इस प्रकार है–

1. स्कूल्स और ह्यूमन्टीस–इसके अन्तर्गत अंग्रेजी, हिन्दी और दूसरी भाषायें (बंगाली, गुजराती, कन्नड, मलयालम, मराठी, उडिया, पंजाबी, तमिल, तेलगू, उर्दू) सम्मिलित की गई।

नोट

2. स्कूल्स ऑफ सोशल साइन्सिज–इसके अन्तर्गत निम्नलिखित विषय सम्मिलित किये गये, राजनीतिशास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, पब्लिक एडमिन्सिट्रेशन, लाइब्रेरी एण्ड इन्फोरमेशन साइन्सिज।
3. स्कूल ऑफ साइन्स–इसके अन्तर्गत गणित, भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र और जीव विज्ञान सम्मिलित किये गये हैं।
4. स्कूल ऑफ कन्टीन्यूइंग एडयूकेशन साइन्स–इसके अन्तर्गत स्त्री-शिक्षा और ग्रामीण विकास आते हैं।
5. स्कूल ऑफ कम्प्यूटर एण्ड इन्फोरमेशन साइन्स–इसके अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यक्रम आते हैं–डॉटा प्रोसेसिंग, इन्फोरमेशन प्रोसेसिंग, प्रोडक्टीविटी टूल्स, मोर्डन ऑफिस आदि।
6. स्कूल ऑफ एज्यूकेशन–इसके अन्तर्गत उच्च शिक्षा, अध्यापक शिक्षा तथा दूरवर्ती शिक्षा आते हैं।
7. स्कूल ऑफ मैनेजमैन्ट स्टैडीज–इसके अन्तर्गत वाणिज्य एवं प्रबन्धन आते हैं।

इन सभी विषयों के डिग्री, डिप्लोमा और प्रमाण-पत्र दिए जाते हैं। विश्वविद्यालय मुख्यत: उन क्षेत्रों में जहाँ महिलायें हैं, उनकी आवश्यकतानुसार, अध्यापक प्रशिक्षण तथा टीचर्स ओरियन्टेशन नामक विषयों को लागू करती है। विश्वविद्यालय दूरवर्ती शिक्षा और प्रबन्ध में (1987) से डिप्लोमा स्तर के विषय चला रही है, तथा विश्वविद्यालय को अधिकार है कि वह देश भर में दूरवर्ती-शिक्षण अधिगम कार्यक्रम को लागू करे तथा उसका स्तर बनाए रखे।

प्रवेश की प्रक्रिया

इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए किसी भी प्रारम्भिक शिक्षा का होना आवश्यक योग्यता में नहीं आता, भले ही वह बेसिक प्रारम्भिक शिक्षा हो अथवा विश्वविद्यालय स्तर के डिग्री, डिप्लोमा या सर्टिफिकेट कोर्स क्यो न हों, किसी के लिए भी योग्यता प्रमाण-पत्र की आवश्यकता नहीं होती। प्रवेश का यह नया रूप लाखों की सहायता करता है जो किसी कारणवश दूसरे विश्वविद्यालयों की आवश्यक शर्तो के कारण डिग्री व डिप्लोमा प्राप्त नहीं कर सके जबकि ये लोग काफी परिपक्व भी थे और शिक्षा की इच्छा भी रखते थे।

मुक्त विश्वविद्यालय का उद्देश्य अधिक से अधिक व्यक्तियों को उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करना है। ये वो व्यक्ति हैं जिन्हें स्नातक व स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा के योग्य नहीं समझा गया था।

प्रवेश की योग्यता के इस विचार को मदुराई एवं मैसूर के विश्वविद्यालयों द्वारा स्वीकृत किया गया। आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय ने अपना कार्य (1983) में शुरू किया तथा कोई भी व्यक्ति जो 20 साल की उम्र पूरी कर चुका है वह स्नातक स्तर के कार्यक्रम में भाग लेने के लिए प्रार्थी हो सकता है, ऐसी घोषणा की। यदि किसी विद्यार्थी ने माध्यमिक शिक्षा उत्तीर्ण नहीं की हुई है तब उसे विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा को उत्तीर्ण करना आवश्यक हो जाता है। सभी मुक्त विश्वविद्यालयों की तरह इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय ने भी डिग्री एवं सर्टिफिकेट कोर्स में प्रवेश हेतु यही शर्तें रखी हैं।

नोट

लघु-उत्तरीय प्रश्न

1. दूरवर्ती शिक्षा की सहायक प्रणाली की आवश्यकता बताइए।
2. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्य (PCP) की आवश्यकता बताइए।
3. अध्ययन केन्द्रों का उपयोग बताइए।
4. शिक्षा प्रबन्धन की एक परिभाषा दीजिए तथा पांच प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
5. शिक्षा प्रशासन की परिभाषा दीजिए तथा पांच प्रमुख विशेषताओं को बताइए।
6. शिक्षा प्रबन्धन की आवश्यकता बताइए।

अधिगम-अभ्यास

1. 'सहायक प्रणाली' का अर्थ बताइए। दूरवर्ती शिक्षा में इसकी आवश्यकता तथा महत्व को समझाइये। सहायक प्रणाली की प्रमुख क्रियाओं का उल्लेख कीजिए।
2. 'अध्ययन केन्द्रों' का अर्थ बताइये। अध्ययन केन्द्रो की विशेषताओं तथा कार्यों का वर्णन कीजिए।
3. शिक्षा प्रबन्धन का अर्थ एवं परिभाषा दीजिए। इसकी विशेषताऐं एवं क्षेत्र का उल्लेख कीजिए।
4. शिक्षा पर्यवेक्षण का अर्थ एवं परिभाषा दीजिए। इसकी विशेषताओं एवं क्षेत्र को भी बताइए।

बहु-विकल्पीय प्रश्न

नोट

1. दूरवर्ती शिक्षा की सहायक प्रणाली है–
   (अ) व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम (ब) उपरोक्त सभी
   (स) अध्ययन केन्द्र (द) पुस्तकालय
2. दूरवर्ती शिक्षा की समस्या है–
   (अ) पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों की स्थापना
   (ब) अमुद्रित माध्यमों का विकास
   (स) उपरोक्त सभी
   (द) सम्पर्क कार्यक्रम का आयोजन
3. दूरवर्ती शिक्षा की सहायक प्रणाली है–
   (अ) निर्देशन एवं परामर्श सेवायें (ब) अध्ययन अथवा स्रोत केन्द्र
   (स) उपरोक्त सभी (द) व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम
4. दूरवर्ती शिक्षा में अमुद्रित माध्यम अधिक उपयोगी है–
   (अ) टेलीफून (ब) कम्प्यूटर
   (स) दूरदर्शन (द) रेडियो
5. अनुवर्ग शिक्षण होता है–
   (अ) उद्देश्य-केन्द्रित (ब) पाठ्यवस्तु-केन्द्रित
   (स) शिक्षा-केन्द्रित (द) छात्र-केन्द्रित
6. प्रबन्धन की मुख्य प्रक्रिया है–
   (अ) व्यवस्था करना (ब) नियोजन करना
   (स) उपरोक्त सभी (द) प्रशासन करना
7. नियंत्रण तथा नियुक्तियां करना क्षेत्र हैं–
   (अ) प्रबन्धन का (ब) नियोजन का
   (स) व्यवस्था करना (द) प्रशासन करना
8. शिक्षा प्रशासन की मुख्य प्रक्रिया है–
   (अ) बजट बनाना (ब) निर्देशन देना
   (स) उपरोक्त सभी (द) नियुक्तियां करना
9. दूरवर्ती शिक्षा प्रबन्धन का उत्तरदायित्व होता है–
   (अ) शिक्षक (ब) सभी का
   (स) प्राचार्य (द) प्रबन्धक
10. दूरवर्ती शिक्षा प्रबन्धन की विशेषता होती है–
    (अ) लचीलापन (ब) उपरोक्त सभी
    (स) व्यावहारिकता (द) उद्देश्य-केन्द्रित होना
11. दूरवर्ती शिक्षा प्रबन्धन का अधिनियम है–
    (अ) छात्र-केन्द्रित बनाना (ब) अनुकूल करना
    (स) स्थायित्व रखना (द) उपरोक्त सभी

कुंजी–1. (ब) 2. (स) 3. (स) 4. (स) 5. (द) 6. (स) 7. (अ) 8. (स) 9. (अ) 10. (ब) 11. (द)

छात्र क्रियाकलाप

1. दूरवर्ती शिक्षा में अध्याय के नियोजन का वर्णन करें?

2. मुक्त विश्वविद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रमों का परिचय दें?

विशेषज्ञों द्वारा लिखी जाती है। प्रतिलिपि का प्रारूप, आकार, विषय वस्तु आदि तथ्यों को विधिवत निर्धारित कर लेते हैं।

नोट

अध्याय के लिए पूर्व तैयारी

इस पद के अन्तर्गत निम्न सोपानों का अनुसरण किया जाता है–

1. आवश्यक मूल्यांकन की तैयारी–इस सोपान के अन्तर्गत उत्पादन की सुविधाओं, विभिन्न सेटों को व्यवस्थित करना, ध्वनियों, चित्रों एवं सम्बन्धित क्रियाओं में सम्बन्ध स्थापित करना पड़ता है।
2. पूर्वाभ्यास–यह सोपान बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसमें ग्राफिक एवं स्लाइड को व्यवस्थित किया जाता है। पूर्वाभ्यास में कलाकारों की सार्थकता, कार्यक्रम की रूपरेखा एवं लम्बाई, प्रस्तुतीकरण, विषयवस्तु आदि के विषय में निर्णय लिया जाता है।

वास्तविक कार्यक्रमों का उत्पादन

दूरवर्ती शिक्षा के शैक्षिक कार्यक्रमों को तैयार करना एक जटिल प्रक्रिया है, क्योंकि इसमें कई मशीनरियों का मिश्रित स्वरूप रहता है। इसमें उत्पादन कर्ता को काफ सजग रहने की आवश्यकता होती है।

अध्याय का मूल्यांकन

दूरवर्ती शिक्षा के शैक्षिक कार्यक्रमों का मूल्यांकन लगातार नियोजन स्तर से अन्त तक करना चाहिए। इस प्रकार के मूल्यांकन को विभिन्न स्तरों पर क़िया जाता है–

रूपात्मक मूल्यांकन

मांध्यम से उत्पादित कार्यक्रमों की गुणवत्ता को देखने के लिए यह सोद्देश्य मूल्यांकन प्रविधि है। अनुसन्धान के निष्कर्षों के आधार पर आवश्यक सुधार एवं विकास के लिए परिवर्तन आवश्यक हैं। यह कार्यक्रम के विकास से पहले ही आवश्यक होता है। इसका प्रारम्भ कार्यक्रम की रूपरेखा के साथ ही हो जाता है, आवश्यक सूचनाओं का मूल्यांकन समाहित रहता है। इसके द्वारा लेखक की प्रतिलिपि का परीक्षण किया जाता हैं रचनात्मक अनसन्धानों का स्वरूप विषय विशेषज्ञों द्वारा ही किया जाता है। इस प्रकार के मूल्यांकन में विभिन्न स्तरों पर मूल्यांकन किया जाता है। छात्रों की आवश्यकता के अनुसार इसमें लचीलापन भी होता है।

योगात्मक मूल्यांकन

योगात्मक मूल्यांकन को कार्यक्रम के तैयार होने के बाद प्रयोग में लाया जाता है। योगात्मक मूल्यांकन का उद्देश्य पूरे कार्यक्रम के प्रभाव को जानना होता है। दीर्घकालिक योजनाओं को तैयार करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। इसके अन्तर्गत पृष्ठपोषण, अध्ययनों, सर्वेक्षणों तथा क्षेत्र विशेष के अध्ययनों को लिया जाता है। योगात्मक मूल्यांकन में मूल अनुसन्धान के सोपानों को प्रस्तुत किया जाता है।

कार्य/समय प्रारूप प्रतिलिपि

नोट

इस प्रकार के प्रारूप में प्रतिलिपि को विभिन्न भागों में रखा जाता है, फिर उनको क्रमानुसार दूरवर्ती शिक्षा कार्यक्रमों के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। इस प्रकार का प्रारूप दैनिक कार्यक्रमों में बहुत ही उपयोगी होता है, इनका प्रयोग विभिन्न प्रकार के स्वरूपों द्वारा प्रदान किया जाता है। जैसे समाचार, विशेषज्ञों द्वारा वार्तालाप, वाद-विवाद आदि।

यथार्थ सूची

इस प्रकार के प्रारूपों में शीर्षक, सार, विभिन्न पदों को क्रमबद्ध किया जाता है, जिनको कैमरा के सामने दिखाया जाता है। इसके द्वारा कैमरे के सामने विभिन्न स्वरूपों में क्या किया जाता है? इसको विस्तृत रूप से दिया जाता है, इसमें श्रव्य के विभिन्न स्वरों पर बल दिया जाता है। दृश्य के विभिन्न स्वरूपों के द्वारा क्रियान्वयन होने के लिए विशेष सूचना प्रदान की जाती है। इस प्रकार की प्रतिलिपि का प्रयोग व्यावसायिक दृष्टि से अधिक उपयोगी होता है।

मुक्त प्रतिलिपि

एक मुक्त प्रतिलिपि पूर्ण रूप से शब्दों सहित विषय विशेषज्ञों को प्रस्तुत नहीं करता है, अपितु शीर्षक एवं उपशीर्षक की रूपरेखा दी रहती है। इसको रूपरेखा की प्रतिलिपि के नाम से भी सम्बोधित करते हैं। यह कार्य-समय के प्रारूप से अधिक मेल रखती है।

कार्यक्रम नियोजन के सोपान

दूरवर्ती शिक्षा कार्यक्रम उत्पादन एक संग्रह की कला है। यह हार्डवेयर एवं साफ्टवेयर कार्यक्रमों के स्त्रोतों पर आधारित है। इन सबमें वर्गीकृत समूहों में कार्यकर्ता रहते हैं। इनका उद्देश्य प्रभावशाली कार्यक्रम तैयार करना होता है। अनुदेशनात्मक दूरवर्ती शिक्षा कार्यक्रम का विस्तृत स्वरूप अधोलिखित चार सोपानों में दिया गया है--

नियोजन

उद्देश्यों का निर्धारण

यह पहला सोपान है, जहां पर कि उद्देश्यों को व्यावहारिक स्वरूप प्रदान किया जाता है। कार्यक्रम के अवलोकन के बाद इस आधार या उद्देश्यों का निर्धारण करते हैं कि छात्र के व्यवहार में क्या परिवर्तन चाहते हें? बिना उद्देश्यों की पहिचार कर हम अपने उद्देश्यों का निधरिण नहीं कर सकते हैं।

संक्षेप में कार्यक्रम की तैयारी करना

मूल्यांकन की आवश्यकता के आधार पर संक्षेप में कार्यक्रम तैयार किया जाता है। इसमें उन क्षेत्रों को विशेष प्राथमिकता प्रदान की जाती है, जिसमें दूरवर्ती शिक्षा की आवश्यकता का अनुभव किया जाता है। संक्षेप में कार्यक्रम ऐसे कथनों को सम्महित करता है, जिसमें उद्देश्यों के विषय में, शिक्षण कौशल के विषय में, पाठ्यवस्तु के क्षेत्र के सम्बन्ध में और सम्प्रेषण माध्यम के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान की जाती है।

प्रतिलिपि लेखन

पूर्व निर्धारित उद्देश्यों एवं पाठ्यवस्तु की रूपरेखा के आधार पर प्रतिलिपि व्यावसायिक

प्रश्नों को पूछा जा सकता है। इसमें वैचारिक चिन्तन, नियोजन एवं प्रारूप की आवश्यकता होती है।

नोट

नाटक

यह प्रारूप दूरवर्ती शिक्षा एवं रेडियो पर प्रचलित है, किसी नाटक को दूरवर्ती शिक्षा पर प्रस्तुत करना कठिन होता है। रेडियो पर अभ्यर्थीगण को किसी प्रकार के विषय-वस्तु को हमेशा चिन्तन में रखना पड़ता है। इस प्रकार के प्रारूप से साधारण समस्याओं को प्रस्तुत करने में और उनका समाधान करने में सहायक होते हैं। अधिगम जेसे जटिल प्रत्यय को नाटक के द्वारा सम्पादित करना एक कठिन कार्य है। एक नाटक को तैयार करने में अनेक प्रकार की सावधानियों एवं अन्य अनेक प्रकार की तैयारियों की आवश्यकता होती है।

वास्तविकता

दूरवर्ती छात्र को घटना की या शैक्षिक कार्यों की वास्तविक जानकारी प्रदान करना होता है। इस प्रकार से विद्यार्थी की धारणा शक्ति को बढ़ाया जा सकता है, इसके द्वारा भावात्मक पक्ष का विकास किया जाता है एवं छात्र के ध्यान को अधिक समय तक केन्द्रित किया जाता है, यदि अधिगमकर्ता को वास्तविक घटना की जानकारी प्रदान की जाये, तो इससे छात्र अधिक लाभान्वित हो सकेगा। यह प्रारूप भी अधिक खर्चीला है, क्योंकि घटनाओं को सूदूरवर्ती स्थानों से लाया जाता है, क्योंकि किसी घटना एवं समय को विशेष शैक्षिक महत्व प्रदान किया जाता है।

अनुकरणीय शिक्षण

इसमें एक एकीकृत कक्षा निर्माण किया जाता है। शैक्षिक क्रियाओं को आयोजित किया जाता है। यह बहुत ही आसान एवं आर्थिक रूप से मितव्ययी है, इसको तैयार करने के लिए पूर्व अभ्यास की आवश्यकता होती है।

दूरवर्ती शिक्षा के लिए प्रतिलिपि लेखन

प्रतिलिपि को तैयार करना दूरवर्ती शिक्षा कार्यक्रम के नियोजन की अंन्तिम अवस्था है। प्रतिलिपि में चरित्रों, साधनों, विषय वस्तुओं एवं दृश्य-श्रव्य के बारे में आवश्यक जानकारी होती है, इसको तैयार करने वाले या होने वाले दूरवर्ती शिक्षा कार्यक्रम के नियोजन की पूर्ण जानाकारी होती है। पांच मुख्य प्रकार की प्रतिलिपि पाई जाती है, जो अधोलिखित है–

पूर्ण प्रतिलिपि

एक विस्तृत प्रतिलिपि में सभी प्रकार की सम्बन्धित सूचनायें रहती हैं, अपने प्रस्तुतीकरण के सम्बन्ध में दृश्य एवं श्रव्य के साधनों का उचित समन्वय होता है।

अर्ध

पूर्ण प्रतिलिपि–एक अर्ध-पूर्ण प्रतिलिपि में शीर्षक, पाठ्वस्तु एवं उचित निर्देशन को क्रमबद्ध किया जाता हैं इस प्रकार इसके द्वारा चरित्रों, साधनों एवं विषय वस्तुओं को विभिन्न स्वरूप में प्रदान किया जाता है। इसमें सम्पूर्ण रूप से सूचना नहीं होती है। साधारणत: विशेषज्ञ ऐसे होते हैं, जिनके द्वारा अपूर्ण प्रतिलिपि को दूरवर्ती शिक्षा पर क्रियान्वयन किया जाता है यह एक प्रचलित प्रकार का शैक्षिक कार्यक्रम है।

है। इस प्रकार के कार्यक्रम के लिए श्रोता अधिकांश समय इसके लिए उत्सुक रहते हैं। इस प्रकार के प्रारूप का प्रयोग साधारणत: समाचार को प्रस्तुत करने एवं विशेष सूचना तथा शैक्षिक कार्यक्रमों के लिए किया जाता है।

नोट

इसके प्रारूप केवल रेडियों के लिए उपयुकत होते हैं क्योंकि अच्छा शिक्षक आवश्यक नहीं है कि अपने दृश्य हावभाव में उतनी कौशल रखता हो।

वार्तालाप

यह दो व्यक्तियों के आपसी वार्तालाप का साधन है। इस प्रकार के प्रारूप का प्रयोग उस समय किया जाता है जिस समय किसी जनसाधारण सम्बन्धी समस्या या कोई शैक्षिक सूचना का प्रसारण करना हो। इसके लिए उन लोगों को उपयुक्त कार्यक्रमों के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है।

साक्षात्कार

इस प्रकार का प्रारूप बहुत ही प्रभावशाली होता है। इसके द्वारा किसी उच्च एवं प्रतिभाशाली व्यक्तित्व का वैचारिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जाता है। साक्षात्कार पर आधारित कार्यक्रम में दो पक्ष होते हैं। एक पक्ष साक्षात्कार कर्ता का होता है जो कि पूर्ण रूप से तैयार होकर प्रश्नों को प्रस्तुत करना है, तथा अपने निश्चित विषय की पूर्ण जानकारी प्राप्त करता है। साक्षात्कार देने वाला प्रश्नों का जवाब पूर्ण धेर्य चित होकर विभिन्न उदाहरणों की सहायता से प्रदान करता है। इसमें विशेषज्ञों एवं विदेशी प्रतिभाओं के व्यक्तित्व एवं वैचारिक दृष्टिकोण को छात्र तक पहुंचाया जाता है। इस प्रकार के प्रारूप का उपयोग सामाजिक अध्ययनों के विषयों में ज्यादा उपयुक्त होता हैं।

विशेषज्ञ समिति

इस प्रकार के प्रारूप मे विशेषज्ञ समित अपने विषय में उपलब्ध विरोधी प्रकरणों पर चर्चा करते हैं। विशेषज्ञ समित में विभिन्न दृष्टिकोणों वाले व्यक्तियों का चयन किया जा सकता है। इसके लिये किसी पूर्व निर्धारित प्रकरण की आवश्यकता नहीं होती है, और न ही इसमें विभिन्न प्रकार के विषयों की आवश्यकता होती है। इस प्रकार का प्रारूप अधिगम-कर्ता के लिए विशेष रूप से आवश्यक होता है। इससे दूरवर्ती छात्र की चिन्तन शक्ति का विकास किया जाता है।

आक्समिक परीक्षा

इस प्रकार के प्रारूप में दो पक्षों की आवश्यकता होती है

1. प्रश्नकर्ता अपने कुछ सहायकों के साथ तथा
2. इसमें भाग लेने वाले अभ्यर्थीगण।

प्रश्नकर्ता अभयर्थियों के सामने प्रश्नों को रखता है, और अभ्यर्थीगण इनका सही उत्तर देते हैं, इसमें मुख्य रूप से श्रोता का स्थान होता है। श्रोतागणों को मुख्य रूप से इसमें उपस्थित होने का अवसर दिया जाता है।दूरवर्ती शिक्षा प्रश्नोत्तर में रेडियो प्रश्नोत्तर से अधिक भिन्नता होती है। दूरवर्ती शिक्षा पर प्रश्नों को दृश्य-श्रव्य के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रारूप में चार्ट, मानचित्र एवं रिक्त स्थानों की पूर्ति जैसे प्रश्नों को सम्मिलित किया जाता है। इसमें प्रयोगों को दिखाकर, प्रतिभाशाली व्यक्तियों के विषय में कुछ ऐतिहासिक घटनाओं के बारे में

चाहिए था। एक और दुखद स्थिति शिक्षा के साथ यह रही है कि इसे केन्द्र सूची में न रखकर राज्य सूची में रखा गया तथा इसे "राज्य का कार्य या उत्तरदायित्व बताकर" केन्द्र ने अपना उत्तरदायित्व लिया जबकि पूर्व में (श्री मोहम्मद करीम छागला तक) केन्द्र में एक शिक्षा मंत्री थे किन्तु अब मानव संसाधन विकास मंत्रालय की एक शाखा मात्र रह गई है हमारी वर्तमान शिक्षा। पहली पंचवर्षीय योजना में उक्त सामाजिक सेवाओं पर होने वाला व्यय, सम्पूर्ण योजना का 21 प्रतिशत था। तथा यह व्यय तीसरी योजना में 15.10 प्रतिशत तथा सातवीं योजना में यह 15.6 प्रतिशत रहा। स्कूली शिक्षा में प्रावधानित व्यय का आकलन निम्न प्रकार लिया जा सकता है।

नोट

सन् 1950-80 के बीच के वर्षों में प्राथमिक शिक्षा पर 1861.59 प्रतिशत की वृद्धि हुई, माध्यमिक शिक्षा में 6787.20 प्रतिशत की, तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 3647,60 करोड़ से बढ़कर (1950), 1979-80 में लगभग 45 गुणा वृद्धि हुई है। और संचारावस्था में नामांकित संख्या 4,30,723 से बढ़कर 37,53,897 हो गई हैं जो कि लगभग 9 गुणा है। किन्तु नामांकित संख्या में हुई वृद्धि की तुलना में खर्चे कम ही रहे हैं तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा में जैसे चिकित्सा आदि में 1950-51 में जहाँ 4 करोड़ का व्यय प्रावध न था वहीं बढ़कर 1879-80 में यह 141 करोड़ हो गया। जबकि इसी अवधि में छात्रों की नामांकित संख्या 31 हजार से बढ़कर 4 लाख हो गई। शिक्षा में जहाँ तक विभिन्न स्रोतों में होने वाली आय का प्रश्न है, वह पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि शिक्षा राज्य का विषय होने के कारण प्रमुख भागीदारी राज्य सरकारों की होती है। यों केन्द्र सरकार भी विभिन्न अनुदानों के रूप में शिक्षा की आर्थिक स्थिति को सुधारने में तथा सम्भव सहायता करती हैं दोनों सरकारों के अलावा स्वायत्तशाषी संस्थायें तथा गैर सरकारी क्षेत्र हैं। बच्चों की फीस समुदायों या सम्प्रदायों द्वारा दिया गया दान आदि भी शिक्षा की आय के स्रोत कहलाते हैं।

केन्द्र एवं राज्य सरकारें प्रतिक्षित-शिक्षक, भवन, सस्ती दर पर किताबें जहाँ शिक्षा के लिए उपलब्ध करवाती हैं वहीं बच्चों की फीस जो कि द्वितीय स्तर पर आती हैं, भी आय का माध्यम होती हैं यों विकासशील देशों में 14 वर्ष तक के छात्रों का शुल्क माफ होना चाहिए और राज्य द्वारा संचालित विद्यालयों में यह प्रावधान हैं।

यह भी विचारधीन है कि क्योंकि न शिक्षा से सम्बन्धित समस्त विद्यार्थियों को अगर वे आर्थिक रूप से कमजोर हैं तो उन्हें उनके अध्ययन हेतु अवसर उपलब्ध करवाया जाए। बड़े या अमीर लोग अथवा समाज सेवी संस्थायें भी शैक्षिक संस्थाओं को इस तरह के अनुदान आदि देकर उनकी आय में बढ़ोत्तरी करें।

दूरवर्ती शिक्षा में अध्याय का नियोजन (Lesson Planning in Distance Education)

दूरवर्ती शिक्षा में अध्याय के नियोजन के कार्यक्रमों को विभिन्न प्रकार से विभाजित कर सकते हैं, साधारणतया इस प्रकार के कार्यक्रमों को अधोलिखित प्रकार से विभाजित किया जाता है।

एकाकी वार्ता

इस प्रकार के कार्यक्रम में केवल एक व्यक्ति को शिक्षक के रूप में उपयोग किया जाता

उपर्युक्त पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त आगामी वर्षों में विश्वविद्यालय की कुछ और कार्यक्रमों (जिनमें विज्ञान स्नातक, आधुनिक भारतीय भाषाओं में डिप्लोमा, एम०सी०ए० आदि सम्मिलित है।) को प्रारम्भ करने की योजना है।

नोट

कार्यक्षेत्र–यह विश्वविद्यालय राज्य स्तरीय है। अत: इसके अध्ययन केन्द्र केवल उत्तर प्रदेश राज्य में ही स्थित होंगे किन्तु राज्य से बाहर के विद्यार्थी भी अपनी सुविधानुसार प्रवेश ले सकते हैं।

संगठनात्मक स्वरूप

यह विश्वविद्यालय अभी प्रारम्भिक अवस्था में है तथा इसके संगठनात्मक स्वरूप का धीरे-धीरे विकास हो रहा है। प्रशासनिक एवं शैक्षणिक स्तर पर सर्वोच्च अधिकारी कुलपति होता है। प्रशासनिक कार्यों का संचालन कुलसचिव द्वारा किया जाता है। शैक्षिक कार्यों का निष्पादन संविदा के आधार पर विभिन्न परम्परागत विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजो के शिक्षकों द्वारा किया जाता है।

अन्य सुविधाएँ–विश्वविद्यालय द्वारा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के विद्यार्थियों को शासन द्वारा अनुमन्य सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं।

प्रवेश फार्म एवं विवरणिका के वितरण की व्यवस्था इलाहाबाद बैंक के माध्यम से कराई जाती है। उत्तर प्रदेश के किसी भी जनपद के मुख्यालय में स्थित इलाहाबाद बैंक की मुख्य शाखा से रु० 155/- शुल्क भुगतान करके प्रवेश फार्म प्राप्त किये जा सकते हैं। किन्तु कार्यक्रम शुल्क किसी भी राष्ट्रीयकृत बैंक द्वारा ड्राफ्ट के माध्यम से जमा किया जा सकता है।

आर्थिक योजना और शिक्षा

सन् 1950-51 जो कि प्रथम पंचवर्षीय योजना का आरम्भिक काल था, में कुल व्यय का 92.50 प्रतिशत निजी क्षेत्रों ने सहयोग कर राष्ट्रीय प्रगति को उन्नत धारा प्रदान की थी। उपरान्त जैसे-जैसे हम विकसित होते गये हमारी अर्थ व्यवस्था मिश्रित रूप में सामने आई तथा शिक्षा पर किये जाने वाले व्ययों तथा उसकी आय में भी उतार-चढ़ाव की स्थिति बनी।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में शिक्षा के निरन्तर एवं सतत् विकास के लिए, विकास सम्बन्धी व्यय बढ़ते ही गये। प्रथम पंचवर्षीय योजना में जहा शिक्षा पर किये जाने वाले व्यय का रु० 153 करोड़ हो गया या प्रस्तावित था वहीं सातवीं पंचवर्षीय योजना में यह व्यय रु० 5868 करोड़ हो गया या प्रस्तावित था। शिक्षा में, निजी क्षेत्रों के अलावा सार्वजनिक क्षेत्रों का योगदान आने वाली पंचवर्षीय योजनाओं में प्रगतिगामी या यों कहें कि उत्साहवर्धक नहीं रहा। शिक्षा पर पहली पंचवर्षीय योजना व्यय का 5.80 प्रतिशत रह गया किन्तु यह व्यय तीसरी पंचवर्षीय योजना में घटकर कुल व्यय का 5.90 प्रतिशत रह गया किन्तु यह व्यय तीसर पंचवर्षीय योजना में जाकर 7 प्रतिशत प्रावधान रहा। फिर यह निरन्तर प्रतिशत में (कुल अनुमानित योजना व्यय की) कम होता गया। चौथी पंचवर्षीय योजना में 4.90 प्रतिशत, पांचवी में 3.30 प्रतिशत, छठवीं योजना में वह घटकर 2.80 प्रतिशत मात्र ही रहा किन्तु सप्तम पंचवर्षीय योजना में यह थोड़ा सा बढ़कर 3.50 प्रतिशत रहा। योजनाओं में विभिन्न क्षेत्रों पर किये जाने वाले व्ययों के प्रावधानों में शिक्षा के क्षेत्र को अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा बहुत नीचे रख दिया गया, जबकि अन्य सामाजिक सेवाओं में की अपेक्षा सर्वाधिक महत्व दिया जाना

इन तीनों प्रमाण-पत्र कार्यक्रमों में प्रवेश पात्रता इण्टरमीडिएट या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण होना है। ये पाठ्यक्रम 6 महीने के हैं किन्तु इन्हें 2 वर्ष में पूरा करने की छूट प्रदान की गई है। पहले एवं दूसरे पाठ्यक्रम का अनुदेशन माध्यम हिन्दी है जबकि तीसरे पाठ्यक्रम का माध्यम केवल अंग्रेजी ही है।

नोट

4. सामान्य डिप्लोमा कार्यक्रम
   a. स्वास्थ्य शिक्षा एवं पोषण में डिप्लोमा
   b. पर्यटन अध्ययन में डिप्लोमा
   c. अंग्रेजी में रचनात्मक लेखन डिप्लोमा
   d. हिन्दी में रचनात्मक लेखन डिप्लोमा
   e. ग्रामीण विकास में डिप्लोमा
   f. अन्तराष्ट्रीय बाजार एवं व्यापार में डिप्लोमा

इन कार्यक्रमों की न्यूनतम अवधि 1 वर्ष की है किन्तु इसे अधिकतम 3 वर्ष में पूरा करने की छूट प्रदान की जाती है। इनके लिए प्रवेश पात्रता इण्टरमीडिएट या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण होना है। अनुदेशन माध्यम हिन्दी/अंग्रेजी है।

5. कम्प्यूटर शिक्षा कार्यक्रम
   a. कम्प्यूटर प्रयोग में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
   b. कम्प्यूटर्स में बेसिक डिप्लोमा
   3. कार्यालय प्रबन्धन में कम्प्यूटर का डिप्लोमा
   4. लेखा विधि में कम्प्यूटर का डिप्लोमा
   5. डेस्क टॉप पब्लिशिंग में डिप्लोमा
   6. इण्टरनेट बेबसाइट डिजाइनिंग और प्रबन्ध में डिप्लोमा
   7. आधुनिक कार्यालय एवं कार्यालय 2000 में डिप्लोमा
   8. कम्प्यूटर में सर्टिफिकेट कोर्स
   9. डेस्क टॉप पब्लिशिंग में सर्टिफिकेट कोर्स

इन सभी कार्यक्रमों की अवधि 1 वर्ष की है तथा अधिकतम 3 वर्ष के अन्दन इनहें पूर्ण करना अनिवार्य है। पी॰जी॰डी॰सी॰ए॰ की प्रवेश पात्रता किसी भी स्नातक उपधि के साथ इण्टर में विज्ञान विषयों का होना अनिवार्य है। अन्य सभी कार्यक्रमों में प्रवेश हेतु इण्टर या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। न्यूनतक अवधि 1 वर्ष की है तथा अधिकतम 3 वर्ष में कार्यक्रमों को पूरा करना अनिवार्य है। सभी पाठ्यक्रमों को अनुदेशन माध्यम अंग्रजी है। केवल डी॰सी॰ओ॰एम॰ एवं सी॰सी॰सी॰ कार्यक्रमों का माध्यम अंग्रेजी/हिन्दी है।

6. व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम
   a. व्यावसायिक कला में डिप्लोमा
   b. फैशन डिजाइनिंग में डिप्लोमा
   c. आन्तरिक डिजाइन में डिप्लोमा
   d. टेक्सटाइल डिजाइन में डिप्लोमा

इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश पात्रता इण्टरमीडिएट या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण होना है। इनकी न्यूनतम अवधि 1 वर्ष की किन्तु 3 वर्षों के अन्दर पूरा किया जा सकता है। अनुदेशन माध्यम केवल अंग्रेजी है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय इलाहबाद

नोट

प्रदेश के विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजों में उच्च शिक्षा हेतु प्रवेशार्थियों की बढ़ती हुई भीड़ को देखते हुए बहुत पहले से ही किसी विकल्प की तलाश की जा रही थी। कुछ विश्वविद्यालयों द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों में पहले से निर्धारित सीटों की संख्या में वृद्धि करके तथा कुछ के द्वारा सांयकालीन कक्षाएं प्रारम्भ करके इस समस्या का तात्कालिक समाधान करने का प्रयास किया गया। किन्तु फिर भी सभी इच्छुक विद्यार्थियों को वांछित पाठ्यक्रम नहीं मिल पा रहा था। अत: प्रदेश में एक ऐसे मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना पर विचार किया गया जो सभी योग्य एवं इच्छुक शिक्षार्थियों को वांछित पाठ्यक्रम में अपनी सुविधानुसार प्रवेश की सुविधा प्रदान कर सके। उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा उपर्युक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए 1999 ई० में इलाहबाद में राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय खोलने की अनुमति प्रदान की गई। इस विश्वविद्यालय ने 15 अगस्त 1999 से औपचारिक रूप से कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है। इस मुक्त विश्वविद्यालय का प्रमुख लक्ष्य प्रदेश के ग्रामीण बालक-बालिकाओं को आर्थिक रूप से सम्पन्न एवं घरेलू महिलाओं को उच्च शिक्षा की सुविधा प्रदान करना।

विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान किये जाने वाले पाठ्यक्रम

राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा जनवरी 2000 से निम्नलिखित कार्यक्रमों को प्रारम्भ किया गया है–

1. स्नातक कार्यक्रम
   a. स्नातक कला
   b. स्नातक वाणिज्य
   c. स्नातक पर्यटन अध्ययन
   d. एकल विषय में प्रोफिएन्सी

इस सभी कार्यक्रमों हेतु प्रवेश की पात्रता इण्टरमीडिएट उत्तीर्ण है तथा अनुदेशन माध्यम हिन्दी एवं अंग्रेजी है। कार्यक्रम को पूर्ण करने की न्यूनतम अवधि 3 वर्ष तथा अधिकतम अवधि 6 वर्ष है।

2. स्नातकोत्तर कार्यक्रम
   a. पत्रकारिता एवं जनसंचार में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
   b. पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातक
   c. वित्तीय प्रबन्धन में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
   d. अनुवाद में स्नातकोत्तर डिप्लोमा

इन कार्यक्रमों में प्रवेश पात्रता स्नातक उपाधि है। कार्यक्रम की अवधि 1 वर्ष है किन्तु इसे पूरा करने हेतु तीन वर्ष की अधिकतम छूट प्रदान की गई है। अनुवाद में पी०जी० डिप्लोमा के अतिरिक्त अन्य तीन कार्यक्रमों का अनुदेशन माध्यम अंग्रेजी है। प्रथम तीन कोर्सेस में प्रोजेक्ट कार्य पूर्ण करना भी अनिवार्य है।

3. प्रमाण-पत्र कार्यक्रम
   a. पर्यटन पाठ्यक्रम प्रमाणपत्र
   b. शिशुपालन एवं पोषण में प्रमाणपत्र
   c. पोषण एवं आहार में प्रमाणपत्र

नोट

संगठनात्मक स्वरूप

इस विश्वविद्यालय का संगठनात्मक स्वरूप भी आन्ध्र प्रदेश राज्य के दूसरे विश्वविद्यालयों की तरह ही है किन्तु इसकी विशिष्ट प्रकृति के अनुरूप इसके स्वरूप में कुछ थोडे परिवर्तन अवश्य किये गये हैं। आन्ध्र प्रदेश के राज्यपाल इसके पदेन कुलाधिपति होते हैं। इसकी कार्यकारी परिषद् में तीन तरह के सदस्य होते हैं–पदेन, नामित एवं निर्वाचित। इस कार्यकारी परिषद् में समस्त कार्य अधिकार निहित होती हैं। कुलपति इस परिषद् का पदेन अध्यक्ष होता है। शैक्षणिक मामलों के लिए शैक्षिक नियोजन परिषद् होती है। अनुदेशनात्मक सामग्री तथा माध्यमों के उपयोग को महत्व दिया जाता है।

आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय हैदराबाद (1982) के पश्चात् भारत में इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (1985) की सथापना के अतिरिक्त कई राज्यों द्वारा अपने राज्य में दूरवर्ती शिक्षा के विकास हेतु मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। इन विश्वविद्यालयों/संस्थानों का संक्षिप्त उल्लेख अंग्रांकित है।

राज्यों में मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय नई दिल्ली की स्थापना से राज्यों को भी इस प्रकार विश्वविद्यालय स्थापित करने हेतु बल मिला तथा उनके द्वारा इस दिशा में सार्थक प्रयास भी किये गये। इसके परिणामस्वरूप यशवन्त राव चव्हाण मुक्त विश्वविद्यालय महाराष्ट्र कोटा मुक्त विश्वविद्यालय राजस्थान, नालन्दा मुक्त विश्वविद्यालय बिहार, राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय इलाहाबाद उत्तर प्रदेश स्थापित हुए तथा अनेक परम्परागत विश्वविद्यालयों द्वारा भी अपने यहाँ दूरवर्ती शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की गई। इस प्रकार 20वीं शताब्दी के अन्तिम दो दशकों में भारत में दूर शिक्षा का तीव्र गति से विकास हुआ। कुछ राज्य स्तरीय मुक्त विश्वविद्यालयों का संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया गया है।

यशवन्त राव चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विश्वविद्यालय

महाराष्ट्र सरकार द्वारा इस विश्वविद्यालय की स्थापना 1989 ई० में की गई। यह विश्वविद्यालय अपनी तरह का एक विशिष्ट संस्थान है क्योंकि इसमें मुक्त शिक्षा प्रणाली से कृषि एवं बागवानी की पाठ्यक्रम प्रदान किये जाते हैं। ये पाठ्यक्रम मुख्य रूप से दस प्रकार के फलों, सब्जियों एवं खाद्यान्नों की फसलों से सम्बन्धित होते हैं। इसके लिए जिन दस आदर्श फसलों का चयन किया गया है वे महाराष्ट्र राज्य के प्रमुख फसलें हैं जो निम्नलिखित हैं। "अंगूर, आम, कपास, मूँगफली, प्याज, उड़द और अरहर, बेर, अनार तथा गन्ना की फसलें हैं।" विद्यार्थियों/शिक्षकों तथा अन्य सम्बन्धित व्यक्तियों को दूरवर्ती शिक्षा माध्यम से प्रदान किया जाता है। इसके लिए स्वतः अनुदेशनात्मक सामग्री (मुद्रित रूप में), श्रव्य-दृश्य समग्री, सम्पर्क सत्रों का आयोजन, कृषि विशेषज्ञों के मध्य द्विमार्गी सम्प्रेषण आदि विधियों को प्रयुक्त किया जाता है। इस विश्वविद्यालय द्वारा 'सम्पर्क सत्र' पर विशेष बल दिया जाता है तथा विश्वविद्यालय द्वारा इस आयोजन को 'प्रयोग परिवार का नाम प्रदान किया जाता है। इस प्रयोग परिवार के प्रत्यय के पीछे यह अवधारणा है कि यह कार्यक्रम प्रयोगकर्त्ताओं का एक विस्तृत परिवार है। इस 'प्रयोग परिवार' में छात्र, कृषक, कृषि शिक्षा कार्यकर्त्ता, शिक्षक एवं अन्य सामग्री निर्माणकर्ता एक साथ मिल-बैठ कर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं तथा एक दूसरे के अनुभवों का लाभ उठाते हैं।

इस शैक्षिक कार्यक्रम की विशेषता यह है कि इसमें सामन्य पाठ्यक्रम हेतु ऐच्छिक विषयों को चुनने में शिक्षर्थी को पूरी स्वतंत्रता होती है तथा वह अपनी आवश्यकता एवं रूचि के अनुसार विषयों का चयन कर सकता है।

नोट

शिक्षण सामग्री का निर्माण–इस विश्वविद्यालय में पाठ्यक्रमों का विकास विषय विशेषज्ञ समितियों द्वारा किया जाता है। पाठ्य-सामग्री के निर्माण एक विषय विशेषज्ञों द्वारा किया जाता है जिसमें विषय से सम्बन्धित सम्पादक, कई पाठ लेखक, एक भाषा सम्पादक तथा एक आयोजक होता है।

मुद्रण का कार्य बाहरी व्यावसायिक मुद्रकों से करवाया जाता है किन्तु बाद में विश्वविद्यालय की अपनी निजी मुद्रण व्यवस्था की योजना है।

मुद्रित शिक्षण सामग्री के अतिरिक्त पाठों को रेडियो से भी एक निर्धारित समय पर प्रसारित किया जाता है तथा इन पाठों के वीडियो कैसेट भी तैयार किये जाते हैं जिनका लाभ शिक्षार्थी अध्ययन केन्द्रों पर उठा सकते हैं।

अध्ययन केन्द्र

विद्यार्थियों को पर्याप्त सुविधा प्रदान करने की दृष्टि से पूरे आन्ध्र प्रदेश राज्य में इस विश्वविद्यालय के 28 अध्ययन केन्द्र (प्रारम्भ में) बनाये गये है। प्रदेश के प्रत्येक जिले में कम से कम एक अध्ययन केन्द्र तथा हैदराबाद एवं सिकन्दराबाद जैसे बड़े महानगरों में छः केन्द्र स्थापित किये गये हैं।

अध्ययन केन्द्र औपचारिक शिक्षण संस्थाओं में ही स्थापित किये गये हैं तथा ये रविवार एवं अन्य अवकाश के दिनों में चलते हैं। अध्ययन केन्द्र में एक समन्वयक होता है जो आमतौर पर उसी संस्था का कोई प्रध्यापक होता है। संस्था के अन्य प्रध्यापकों को परामर्शताओं के रूप में नियुक्त किया जाता है जो इन केन्द्रों पर आने वाले शिक्षार्थियों की कठिनाइयों का निवारण करते हैं तथा उन्हें अध्ययन सम्बन्धी समुचित परामर्श प्रदान करते हैं।

मूल्यांकन पद्धति

दूरवर्ती शिक्षा के शिक्षार्थियों को मूल्यांकन दो भागों में किया जाता है–

उत्तर पत्रकों का सतत् मूल्यांकन

विश्वविद्यालय द्वारा पंजीकृत दूरवर्ती शिक्षार्थियों को मुद्रित स्वतः अनुदेशात्मक सामग्री भेजी जाती है। शिक्षार्थियों को इस समग्री को अच्छी तरह पढ़कर उनसे सम्बन्धित पूछे गये प्रश्नों के उत्तरों को अलग से उत्तर पत्रक पर लिख करके अध्ययन केन्द्र को भेजना होता है। अध्ययन केन्द्र पर परामर्शदाता/शिक्षक द्वारा इन उत्तरों पत्रकों जाँच करके उनमें सुधार हेतु उपयुक्त टिप्पणियाँ अंकित की जाती हैं तथा उत्तर पत्रकों को पुनः शिक्षार्थियों को वापस कर दिया जाता है। इन उत्तर पत्रकों पर अंक नहीं प्रदान किये जाते हैं किन्तु उनकी गुणवत्ता से सम्बन्धित ग्रेड एवं टिप्पणियां प्रदान की जाती हैं। इससे शिक्षार्थी का सतत् मूल्यांकन होता रहता है। तथा मूलयांकन के परिणामों से अवगत होने से उसे पृष्ठपोषण प्राप्त होता है।

वार्षिक परीक्षा

वर्ष/सत्र के अन्त में प्रत्येक कोर्स हेतु एक अन्तिम परीक्षा आयोजित की जाती हे। यह परीक्षा विभिन्न केन्द्रों पर आयोजित की जाती है।

इस मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना कुछ प्रमुख उद्देश्यों को लेकर की गई जो इस प्रकार हैं–

1. उन शिक्षार्थियों को उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करना जो गरीबी, पिछड़ी हुई सामाजिक-आर्थिक स्थिति एवं अन्य कमियों के कारण उच्च शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश पाने से वंचित रह जाते हैं।
2. जनसंख्या के एक बड़े भाग, जिनमें किसी कार्य या व्यवसाय में लगे हुए लोग, महिलाएँ/गृहणियाँ तथा प्रौढ़ व्यक्ति सम्मिलित हैं तथा जो अपने शैक्षिक अथवा व्यावसायिक स्तर को उठाने हेतु उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं; उन को मुद्रित शिक्षण सामग्री, सम्पर्क कार्यक्रम, अध्ययन केन्द्रों एवं जनसंचार माध्यमों के द्वारा समान शैक्षिक अवसर, प्रदान करना।
3. उच्च शिक्षा में नामांकन की योग्यता, प्रवेश आयु, पाठ्यक्रमों के चयन शिक्षण-अधिगम विधियों, परीक्षा प्रणाली तथा कार्यक्रमों के संचालन आदि के नियमों में लचीलापन लाना।
4. देश के सर्वोत्तम विश्वविद्यालयों के समतुल्य राज्य के विश्वविद्यालयों के शैक्षिक स्तर को सर्वोच्च बनाये रखते हेतु सहायक प्रणाली की भूमिका निभाना।
5. विश्वविद्यालों की नीतियों एवं कार्यक्रमों के माध्यम से राज्य में एकता की भावना में वृद्धि करना।
6. विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत व्यक्तियों तथा सांस्कृतिक एवं सौन्दर्य बोधात्मक मूल्यों वाले विषयों के अध्ययन से अपने जीवन को समृद्ध बनाने के इच्छुक व्यक्तियों को डिग्री/सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम की सुविधा प्रदान करना।
7. अनुसंधान और ज्ञान के प्रसार एवं अभिवृद्धि हेतु प्रावधान करना।

मुक्त विश्वविद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रम

प्रारम्भ में इस विश्वविद्यालय द्वारा बी०ए०, बी०एस-सी० एवं बी०कॉम० पाठ्यक्रमों की शुरूआत की गई। इन पाठ्यक्रमों में कोई भी व्यक्ति, किसी पूर्व शैक्षिक योग्यता के बिना प्रवेश ले सकता है किन्तु उसे इसके लिए विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा को उत्तीर्ण करना अनिवार्य होता है। इस प्रवेश परीक्षा का उद्देश्य शिक्षार्थियों की वांछित कोर्स हेतु न्यूनतम योग्यता का आंकलन कराना होता है, बिन प्रवेश परीक्षा के ही नामांकन करा सकते हैं। बी०एस-सी० पाठ्यक्रम हेतु शिक्षार्थियों का विज्ञान विषयों के साथ इण्टरमीडिएट उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। उपर्युक्त तीनों कार्यक्रमों हेतु तीन स्तरीय पाठ्यक्रम निर्धारित किये गये हैं–

1. आधारभूत पाठ्यक्रम –इसमें चार पाठ्यक्रम होते हैं जिनमें दो भाषाओं (अंग्रेजी, तेलगू, उर्दू, हिन्दी में से कोई दो) विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान का एक-एक पाठ्यक्रम होता है। इन्हें पहले वर्ष में पूरा करना होता है।
2. सामान्य पाठ्यक्रम –द्वितीय वर्ष में तीन विभिन्न विषयों के दो-दो पाठ्यक्रम का अध्ययन करना होता है।
3. विशिष्ट अथवा व्यावहारिक पाठ्यक्रम –तीसरे वर्ष में तीन विभिन्न विषयो (जिन्हें दूसरे वर्ष में लिया गया है) के दो-दो अतिरिक्त पाठ्यक्रम के साथ-साथ विशिष्ट अध्ययन का पाठ्यक्रम भी पूरा करना होता है।

नोट

4. राज्य मुक्त विश्वविद्यालयों तथा अन्य दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं का ऐसा नेटवर्क तैयार करना जिससे वे एक दूसरे के कार्यक्रमों एवं पाठ्यक्रमों से लाभान्वित हो सकें तथा

नोट

5. इग्नू विभिन्न राज्य मुक्त विश्वविद्यालयों तथा परम्परागत विश्वविद्यालयों के पत्राचार/दूरवर्ती शिक्षा संस्थानों/निदेशालयों के संयुक्त विकास को प्रोत्साहित करना।

भारत में मुक्त विश्वविद्यालों की स्थापना

जैसा कि हम पूर्व में उल्लेख कर चुके हैं कि सन् 1980 ई॰ तक भारत में दूर शिक्षा, पत्राचार शिक्षा के रूप में परम्परागत विश्वविद्यालयों से ही सम्बद्ध रही तथा उन्हीं से जुडे हुए निदेशालयों/संस्थानों द्वारा संचालित की जाती रही। किन्तु इसके बाद के काल को दूरवर्ती शिक्षा के विकास की मुहिम अवस्था कहा जा सकता है। यद्यपि 1976 ई॰ में भारत सरकार द्वारा जी॰ पार्थसारथी की अध्यक्षता में गठित समिति की संस्तुति के आधार पर एक राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हेतु एक विधेयक का प्रारूप तैयार किया था, किन्तु कुछ कारणवश उसे संसद में प्रस्तुत नहीं किया जा सका था। इसी दौरान विभिन्न राज्यों द्वारा भी उच्च शिक्षा की बढ़ती माँग को पूरा करने तथा उच्च शिक्षा के लोकतंत्रीकरण हेतु मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना के सम्बन्ध में कुछ प्रयास एवं विचार विमर्श किये जा रहे थे। 1969 ई॰ में ब्रिटेन में स्थापित मुक्त विश्वविद्यालय की सुलभत से उन्हें और बल मिल रहा था। आन्ध्र प्रदेश रांज्य द्वारा भी मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित करने हेतु 1978 ई॰ से ही प्रयास किया जा रहा था जिसके फलस्वरूप 1982 में हैदराबाद में देश का पहला मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित हुआ। इसकी थोंड़ी चर्चा हम निम्नांकित पंक्तियों में कर रहे हैं।

आन्ध्रप्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना

उस्मानिया विश्वविद्यालय के कुछ उत्साही शिक्षकों द्वारा प्रारम्भ में इसी विश्वविद्यालय के एक अंग के रूप में ऐसे कॉलिज की स्थापना का प्रस्ताव किया गया था जो पूर्णतया स्वायत्ता होगा तथा दूरवर्ती शिक्षा के विकास के लिए पूर्णरूपेण समर्पित होगा। इस प्रस्ताव को कार्यक्रम प्रदान करने के प्रयास चल ही रहे थे कि उसी बीच इस परियोजना के प्रबल समर्थक आन्ध्र प्रदेश के तत्कालीन शिक्षमंत्री श्री आर॰ वेंकटरमण एक राजनैतिक घटनाक्रम में प्रदेश के मुख्यमंत्री बन गये। उन्होंने मुक्त विश्वविद्यालय की अवधारणा के प्रति नये सिरे से रूचि दिखलाई तथा इस सम्बन्ध में एक समिति की नियुक्ति की जिसे अतिशीघ्र (केवल दो महीने में) में अपनी संस्तुति सरकार को देनी थी। प्रो॰ जी॰ रामरेड्डी की अध्यक्षता में गठित इस समिति ने अगस्त 1982 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट की संस्तुतियों को तुरन्त स्वीकार करते हुए आन्ध्र प्रदेश सरकार ने एक विधेयक तैयार किया तथा इसे विधानमंडल द्वारा शीघ्र ही मंजूरी भी प्रदान कर दी गई। 26 अगस्त 1982 ई॰ को भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डी द्वारा आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय का शुभारम्भ किया गया। इस प्रकार समिति के प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के एक सप्ताह के अन्दर ही विश्वविद्यालय की स्थापना हो गई। देश के संसदीय इतिहास में विधायिका की तत्परता का एक दुर्लभ उदाहरण है। यह हमारे कुछ राजनीतिज्ञों के शिक्षा के प्रति अगाध लगाव एवं समर्पण का भी परिचायक है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एवं दूरवर्ती शिक्षा

नोट

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 स्पष्ट रूप से मुक्त विश्वविद्यालय की ओर दूरवर्ती अधिगम तथा संचार माध्यमों की भूमिका के महत्व को मान्यता प्रदान करती है। मुक्त विश्वविद्यालय के बारे में राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रतिवेदन में स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि–

"The Open University System has been initiated in order to augment Opportunites for higher education and as an instrument of democratising education. The Indira Gandhi National Open University, established in 1985 in fulfilment of these objectives will be strenghened. Theis powerful instrument will have to be diveloped with care and extend with education." -NPE(1986)

अत: राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार मुक्त विश्वविद्यालय का प्रारम्भ उच्च शिक्षा के लिए अवसरों के विस्तार तथा शिक्षा के लोकतंत्रीकरण के एक प्रभावशाली साधन के रूप में किया गया है। 1985 ई॰ में स्थापित इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय को इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सुदृढ़ किया जायेगा। इस शक्तिशाली साधन का विकास एवं विस्तार बहुत सावधानीपूर्वक एवं अच्छी देखरेख के साथ किया जाना होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के विकास समानता के लिए शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, महिला शिक्षा, तकनीकी एवं प्रबन्ध शिक्षा, शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाने, शिक्षा की विषयवस्तु एवं प्रक्रिया को नया मोड़ देने तथा शिक्षा की प्रबन्धन व्यवस्था का पुनर्गठन करने पर विशेष बल प्रदान किया गया है। इन कार्यक्रमों के दूरवर्ती शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

दूरवर्ती शिक्षा परिषद्

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय का एक प्रमुख उद्देश्य सम्पूर्ण देश में दूरवर्ती शिक्षा का उच्च संस्थान है। इस संस्थान के द्वारा कार्यों के समुचित निष्पादन एवं उद्देश्यों की पूर्ति के बारे सतत् मुल्यांकन एवं समीक्षा हेतु 1982 ई॰ में एक संवैधानिक संस्थान के रूप में 'दूरवर्ती शिक्षा परिषद्' की स्थापना की गई है। इस परिषद् में निम्नलिखित प्रतिनिधि होते हैं–

1. इग्नू के प्रबन्ध बोर्ड के प्रतिनिधि,
2. भारत सरकार के शिक्षा विभाग के प्रतिनिधि,
3. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रतिनिधि,
4. राज्य मुक्त विश्वविद्यालयों के प्रतिनिधि,
5. परम्परागत विश्वविद्यालयों के पत्राचार संस्थानों के प्रतिनिधि तथा
6. कुछ प्रख्यात शिक्षाविद्।

दूरवर्ती शिक्षा परिषद् के कार्य

इस दूरवर्ती शिक्षा परिषद् के कार्य निम्नलिखित हैं–

1. राज्य मुक्त विश्वविद्यालयों के लिए निर्देश तैयार करना,
2. सेवारत व्यक्तियों की सतत् शिक्षा एवं उनकी शैक्षिक उन्नति की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कार्यक्रम तैयार करना,
3. स्व:रोजगार से सम्बन्धित क्षेत्रों में शिक्षा एवं प्रशिक्षण के कार्यक्रमों की व्यवस्था करना,

नोट

बीच में छोड़ना पड़ा हो।

2. भौगालिक दृष्टि से दूर-दराज के क्षेत्रों में रहने वाले विथार्थी;
3. ऐसे विद्यार्थी जिन्हें अभियोग्यता एवं अभिप्रेरणा के अभाव में औपचारिक शिक्षा छोड़नी पड़ी हो किन्तु अब वे शिक्षा के लिए स्वत: अभिप्ररित हो; और उच्च शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक हों।
4. ऐसे विद्यार्थी जो आवश्यक न्यूनतक योग्यता रखते हुए भी सीटों की कमी के कारण विश्वविद्यालयों में वांछित पाठ्यक्रम में प्रवेश नहीं पा सकें हो;
5. ऐसे व्यक्ति जो शिक्षा को जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया के रूप में देखते हैं तथा अपने वर्तमान विषय के ज्ञान में वृद्धि करना चाहते हैं अथवा किसी नवीन क्षेत्र का ज्ञान करना चाहते हैं तथा
6. सेवारत व्यक्ति जो उच्च शिक्षा प्राप्त करके अपनी शैक्षिक एवं व्यावसायिक उन्नति करना चाहते हैं।

दूरवर्ती शिक्षा के इस प्रारम्भिक रूप अर्थात् पत्राचार शिक्षा की क्षमताओं एवं सम्भावनाओं से प्रभावित होकर भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) ने भी इस प्रणाली को सुदृढ़ बनाने हेतु अपनी संस्तुति प्रदान की है। आयोग ने इस सम्बन्ध में कहा है कि– "पत्राचार अथवा गृह अध्ययन पाठ्यक्रम एक अच्छी तरह आँकी एवं परखी हुई प्रणाली है। संयुक्त राज्य अमेरिका, स्वीडन, सोवियत रूस, जापान एवं आस्ट्रेलिया जैसे विश्व के दूसरे देशों में इस प्रणाली को एक लम्बे समय से प्रयोग किया जा रहा है। उनके द्वारा प्राप्त सफलता हमें यह संस्तुति करने को प्रेरित करती है कि भारत में व्यापक उद्देश्यों के लिए इस प्रणाली का पूरी तरह उपयोग किया जाना चाहिए। ऐसा कोई आधार नहीं है जिससे पत्राचार पाठ्यक्रम को औपचारिक शिक्षा से कम माना जा सके। दूसरे देशों के अनुभव एवं भारत में किये गये प्रयोगों के परणिाम पत्राचार शिक्षा प्रणाली को सुदृढ़ करने की ओर ही संकेत करते हैं।.....अत: सायंकालीन कक्षाओं एवं पत्राचार पाठ्यक्रम के माध्यम से अंशकालीन शिक्षा के यथासम्भव अधिक से अधिक अवसर प्रदान किये जाने चाहिए। इस पाठ्यक्रम के अन्तर्गत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की शिक्षा के पाठ्यक्रमों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए। ये पाठ्यक्रम नामांकन बढ़ने पर शिक्षा की लागत को एक सीमा तक कम कर सकेंगे। जो लोग अपनी आर्थिक आवश्यकताओं के कारण स्कूली शिक्षा के बाद ही रोजगार/कार्य करने को विवश होते हैं किन्तु आगे अध्ययन करने की इच्छा रखते हैं, उन्हें उच्च शिक्षा प्रदान करने का यह सबसे अच्छा अवसर है। अत: हम सुझाव देते हैं कि सन् 1986 ई॰ तक उच्च शिक्षा के सम्पूर्ण नामांकन का कम से कम एक तिहाई पत्राचार पाठ्यक्रम प्रणाली एवं सायंकालीन कक्षाओं के माध्यम से उच्च शिक्षा प्राप्त करने का लाभ प्राप्त करें।"

उपर्युक्त सुझावों से प्रोत्साहित होकर अनेक उच्च शिक्षा संस्थानों द्वारा पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारम्भ किये गये। शिक्षा आयोग की संस्तुति के अनुसार 1986 ई॰ तक उच्च शिक्षा में कुल नामांकन का एक तिहाई का लक्ष्य पत्राचार शिक्षा के अन्तर्गत सम्मलित तो नहीं किया जा सका किन्तु उस समय तक 34 विश्वविद्यालयों द्वारा पत्राचार शिक्षा की सुविधा प्रदान जाने लगी तथा बी॰ए॰, एम॰ए॰, एम॰कॉम॰, बी॰एस॰सी॰, एम॰एस॰सी॰, एम॰एड॰, एल॰एल॰बी॰ (शैक्षिक) तथा कुछ व्यावसायिक पाठ्यक्रम जैसे–एम॰बी॰ए॰, बी॰टेक॰, आदि पाठ्यक्रम भी प्रदान किये जाने लगे।

आवश्यकताओं के अनुरूप सफल सिद्ध नहीं हो पा रही है। अत: इसे अधिक स्वायत्तता की आवश्यकता है।

2. सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक आवश्यकताओं के प्रति शिक्षा का दायित्व मुख्य रूप से समाज के स्वरूप तथा उसे स्वीकार्य विकास के प्रकार पर निर्भर करता है। इस दृष्टि से वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था, रूढ़िवादी भारतीय समाज की ओर ही संकेत करती है। अत: इसमें कोई मूलभूत परिवर्तन तब तक स्वीकार्य नहीं हो सकता है जब तक कि 'प्रतिनिधि सामाजिक-राजनैतिक समूहों' के मूल्य पूर्वकालीन प्रतिबन्धों से मुक्त नहीं हो पाते तथा भविष्य के लिए नये विकल्पों से युक्त नहीं हो जाते हैं।
3. एक विकाशील समाज में सभी के लिए शिक्षा की सुलभता आवश्यक है जिससे शिक्षा को विकास से जोड़ा जा सके तथा प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक उन्नति में भागीदारी सुनिश्चित हो सके। अत: इस के लिए शिक्षाविदों द्वारा अच्छे भावी समाज के निर्माण के प्रति उपयुक्त दृष्टिकोण अपनाने पर बल दिया जाना चाहिए।

नोट

उपर्युक्त बिन्दुओं पर विचार करने से स्पष्ट है कि हमारी वर्तमान परम्परागत शिक्षा प्रणाली नवीन भारतीय समाज की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम नहीं है। अत: किसी विकल्प की आवश्यकता है। दूरवर्ती शिक्षा ऐसा ही विकल्प है जो हमारी नवीन मांगों को पूर्ण कर सकता है तथा सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति सम्भव हो सकती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि दूरवर्ती शिक्षा में वर्तमान अवरोधों की चुनौतियों को स्वीकार करके उनका सम्यक् उत्त देने की पर्याप्त क्षमता है। यह उपलब्ध संसाधनों का अधिक से अधिक उपयोग करके आवश्यक अनुदेशनात्मक सामग्री प्रदान करने में सक्षम है। यह प्रमुख अवरोधों जैसे–विद्यालय भवनों की कमी, वित्तीय संकट, कुशल शिक्षकों का अभाव तथा औपचारिक शिक्षा के अनेक प्रतिबन्धों आदि चुनौतियों का सामना कर सकती है।

इस प्रकार दूरवर्ती शिक्षा हमारी अनिवार्य आवश्यकताओं का सम्यक् समाधान है। अत: शिक्षा नीति निर्धारण में इस पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। भारत में पत्राचार शिक्षा के विकास हेतु विभिन्न आयोगों की संस्तुतियाँ

भारत सरकार के तत्कालीन मंत्री डॅ० के०एल० श्रीमाली द्वारा 1962 ई० में भारत में पत्राचार शिक्षा के शुभारम्भ के समय इसके उद्देश्यों को निम्नलिखित रूप में दिया था–

1. राष्ट्रीय विकास के सन्दर्भ में उच्च शिक्षा के स्तर पर एक सक्षम कम खर्चीली शिक्षण प्रणाली प्रदान करना।
2. उन सभी योग्य एवं इच्छुक व्यक्तियों को उच्च शिक्षा ग्रहण करने हेतु अवसर प्रदान करना जो व्यक्तिगत एवं आर्थिक कारणों अथवा किसी अन्य कारण से नियमित विश्वविद्यालयों शिक्षा हेतु प्रवेश नहीं ले सके थे।
3. रोजगार में लगे हुए शिक्षित लोगों को उनके रोजगार या कार्य में बिना कोई बाधा पहुँचाये शैक्षिक उन्नति के अवसर प्रदान करना।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भी पत्राचार शिक्षा प्रारम्भ करने हेतु बल प्रदान करते हुए कहा है कि ये पाठ्यक्रम निम्नलिखति श्रेणी के विद्यार्थियों की अपेक्षाओं को सफलतापूर्वक पूर्ण कर सकते हैं–

1. ये विद्यार्थी जिन्हें आर्थिक एवं कुछ दूसरे कारणों से अपनी औपचारिक शिक्षा को

माध्यम से प्रस्तुत कर एक समर्थ और सम्पन्न विश्वविद्यालय के रूप में इस विश्वविद्यालय को राष्ट्रीय शिक्षा पटल पर प्रस्तुत किया।

नोट

सन् 1887 में इंदिरा मुक्त विश्वविद्यालय के पूर्व उपकुलपति प्रो. जी. रामा रेडडी जो तत्कालीन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष थे, उनके प्रयासों से कोटा मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। क्योंकि राजस्थान के दूरवर्ती क्षेत्रों के लिए यह आवश्यक था कि एक ऐसा विश्वविद्यालय हो जो वहां की सामान्य जनता की उच्च शिक्षा सम्बन्धी मांग को पूरा कर सके। अतः राज्य सरकार के अधिकारियों के दल ने समय-समय पर प्रो. जी॰ रामा रेडडी से गोष्ठी कर तथा इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के अन्य अधिकारियों से मुलाकात कर राजस्थान में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना के विचार की अत्यधिक छानबीन कर, 1987 में इसकी स्थापना करने में सफलता प्राप्त की तथा 1985 में स्थापित पत्राचार अध्ययन संस्थान, जयपुर को कोटा मुक्त विश्वविद्यालय के लिए स्थानान्तरण कर दिया। इस विश्वविद्यालय को राजस्थान विधानसभा ने अपने कानून में वैधानिक अधिकार 1987 में प्रदान कर दिये। तथा इसके उद्देश्य भी अन्य मुक्त विश्वविद्यालयों जैसे विकसित कर लागू किये गये।

यशवंत राव चव्हाण मुक्त विश्वविद्यालय महाराष्ट्र के लिए उन्हीं उद्देश्यों के साथ खोला गया किन्तु इसके कुछ उद्देश्य भिन्न हैं यथा–

जनसंख्या के एक बड़े भाग को व्यवसायिक तथा तकनीकी शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराना, ग्रामीण जनता को समान अवसर शिक्षा के क्षेत्र में, संस्थान, राज्य और छात्र की आवश्यकताओं के अनुरूप पाठ्यक्रमों का गठन आदि।

इस विश्वविद्यालय में पाठ्यक्रम मराठी में भी उपलब्ध है इसका मुख्य लक्ष्य वयवसायिक और तकनीकी विकास है।

प्रस्तुत अध्ययन भली-भांति स्पष्ट करता है कि व्यवहारिक योजनायें जो कि कार्यवाही योजना के रूप में निर्मित की गई हैं, औपचारिक नियोजन के अभिलेख होने के साथ-साथ किसी विश्वविद्यालय संस्थान की स्थापना की पूर्व-पृष्ठ-भूमि भी होती है।

भारतीय शिक्षा नीति निर्धारण में दूरवर्ती शिक्षा का महत्व

किसी राष्ट्र की शिक्षा नीति केवल संसाधनों एवं प्राथमिकताओं से सम्बन्धित बातों पर ही प्रकाश नहीं डालती है अपितु यह सामाजिक मांगों से सम्बन्धित प्रश्नों से बहुत गहराई तक जुडी हुई होती है। इन मांगों को समाज क प्रभावशाली समूहों के निहित स्वार्थों एवं उनकी राजनैतिक शक्ति तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहायता प्रदान करने वाले अभिकरण तंत्र से भी अलग नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार किसी भी शैक्षिक कार्यक्रम पर सामाजिक लक्ष्यों की परिधि में ही चर्चा की जा सकती है। सामाजिक आवश्यकताओं पर प्रकाश डालने के साथ-साथ शैक्षिक नियोजन में यर्थाथवादी दृष्टिकोण भी होना चाहिए। इसके लिए शैक्षिक नियोजन में केवल उपलब्ध विकल्पों पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए।

अतः भारतीय शिक्षा नीति निर्धारण में निम्नांकित बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए–

1. भारतीय शिक्षा पूर्वकाल में ही थोपे गये अनेक प्रतिबन्धों एवं समझौते से बहुत अधिक प्रभावित हुई है जिसके कारण यह समाज में हो रहे परिवर्तनों एवं नवीन

नहीं कर पाती वहीं उसकी इकाइयाँ भी असंतुलित हो जाती हैं। अच्छे समन्वय के अभाव में अन्तर्विभागीय संघष भी पाया गया है। समन्वय भी एक जटिल प्रक्रिया है जिसे एक कुशल प्रबन्धक अपनी विशिष्ट प्रबन्धन क्षमता द्वारा समन्वित करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि उच्च शिक्षा प्रणाली में प्रबन्धकीय कौशल, कार्य योजना, नियन्त्रण और समन्वय, प्रबन्धन प्रणाली और उसकी कार्य-विधि के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं।

नोट

दूरवर्ती शिक्षा की योजनाएँ

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भारत में पत्राचार अध्ययन के प्रसार के लिए 1967 में सर्वप्रथम, एक कमेटी का गठन, दिल्ली विश्वविद्यालय की परियोजना के आधार पर किया। यह दूरवर्ती शिक्षा की ओर बढ़ने का प्रथम वैधानिक प्रयास था। 1968 में पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाल में भी एक पृथक निदेशालय पत्राचार के लिए गठित किया गया। इसके आगामी दस वर्षों मे पत्राचार अध्ययन के कई संस्थान विकसित होकर राष्ट्रीय स्तर में आये जिनकी संख्या 26 हो गई, इस के बाद शनैः शनैः जहाँ यह संस्थान विकसित हुये वहीं इन्ही सस्थाओं में दूरवर्ती शिक्षा का विकास हुआ।

सन् 1969 में पहली ओपन यूनिवर्सिटी ब्रिटेन में स्थापित की गई। यह शुभारम्भ था जो व्यावहारिक योजना को कार्यवाही का सम्पादन कर सरकार कर दिखाना था। दिसम्बर 1970 में शिक्षा मंत्रालय, प्रसारण एवं सूचना मंत्रालय तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के संयुक्त तत्वावधान में एक संगोष्ठी का आयोजन किया तथा ब्रिटिश विशेषज्ञ इसमें आमंत्रित किय गये। तत्कालीन शिक्षा मंत्री प्रो. वी०के०आर० राव ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा था कि विकासशील राष्ट्र में मुक्त शिक्षण की अवधारणा न सिर्फ सभी को शिक्षित करने में सफलता प्रदान करेगी अपितु शिक्षा पलायन को रोकेगी तथा शिक्षा की आपूर्ति करेगी। 1975 में मुक्त विश्वविद्यालय को आरम्भ करने की सम्भावना का पता लगाने के लिए प्रो. जी० पार्थसारथी की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई। कारण था गांवों में सामाजिक जन जागरण किन्तु शिक्षा का अभाव/उपरान्त प्रो.नूरुलाहसन जो तत्कालीन शिक्षा मंत्री थे इस बात की वकालात की थी कि भारत जैसे प्रगति पथ पर बढ़ने वाले विकासशील राष्ट्र को मुक्त विश्वविद्यालय की अत्यन्त आवश्यकता हैं कोठारी आयोग (1964-66) ने पत्राचार संस्थान की स्थापना के लिए जो बलपूर्वक संस्तुति की थी व लागू तो नहीं हो पायी किन्तु यह वह अवधाारणा थी जो बाद में दूरवर्ती शिक्षा विश्वविद्यालय की स्थापना की नींव के रूप में सामने आई।

सन् 1982 में देश की प्रथम मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना आंध्रप्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय के रूप में हैदराबाद में हुई जो बाद में भीमराव अम्बेडकर मुक्त विश्वविद्यालय के रूप में जानी गई। यह वह समय था जि समय इसकी या ऐसे विश्वविद्यालय की उद्देश्य रचना जटिलता को भली भांति प्रकाशित करना और समझना था। अतः ऐसे विद्यार्थियों को शिक्षा उपलब्ध कराना जो किसी भी कारण से उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं कर पायें हैं, प्रदेश की जनसंख्या के एक बड़े हिस्से को समान उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करना, बिन लिंग भेद और आयु भेद के सभी को लचीले तौर पर शिक्षा प्रदान करना तथा, सभी उपलब्ध प्रादेशिक विश्वविद्यालय के समकालीन स्तर, राष्ट्रीय पर एक उच्च मानदण्ड (शैक्षिक) प्रदान करना, शोध तथा ज्ञान की अभिवृद्धि के लिए प्रयास करना राज्य की तत्कालीन शैक्षिक प्रवृत्तियों से समंजस्य स्थापित करना आदि, व्यवहारिक योजना के जो मुद्दे उस समय शैक्षिक परिवेश में, आंध्रप्रदेश सरकार के पास थे, उन्हें कार्यवाही-कार्यक्रम के रूप में इस विश्वविद्यालय के

छात्र क्रियाकलाप

1. शिक्षा प्रशासन की चर्चा कीजिए?

2. शिक्षा व्यवस्था प्रणाली क्या है?

शिक्षा में नियन्त्रण और समन्वय

उच्च शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में नियन्त्रण और समन्वय महत्वपूर्ण तत्व हैं।

नियन्त्रण

नोट

नियन्त्रण में मुख्य दो पूर्व-अपेक्षित तत्व है योजना तथा संरचना।

1. योजना–नियन्त्रण पूर्णतया नियोजित या योजनाबद्ध होना चाहिए। क्योंकि निश्चित योजना संगठन की प्रगति के लिए अधिक प्रभावशाली होती है।
2. संरचना–संगठन तथा योजना दोनों की संरचना नियन्त्रण के अनुकूल होनी चाहिए अथवा इनमें एक निश्चित समन्वय अपेक्षित है।

नियन्त्रण के निम्न प्रमुख गुण हैं–

1. उचित नियन्त्रण द्वारा किसी संगठन की योजना को मूर्तरूप दिया जाता है। प्रबन्धक द्वारा बनाई गई योजना एक पर्यवेक्षक के लिए अनुपयुक्त होती है। ठीक उसी प्रकार शैक्षिक प्रभाग के लिए नियत नियन्त्रण, प्रशासनिक प्रभाग के लिए अनुपयुक्त होता है।
2. रीति-नीति सम्बन्ध नियन्त्रण एक आव्यूह उद्देश्य को लेकर चलता है जो नकारात्मक एवं सकारात्मक अपवादों की भी व्याख्या करता है।
3. स्वीकार्य नियन्त्रण, नियंत्रित द्वारा भी स्वीकार्य होना चाहिए।
4. विश्वसनीय तथा वस्तुनिष्ठ नियन्त्रण निष्पक्ष तथा विश्वसनीय होना चाहिये।
5. लागत को प्रभावित करने वाला –नियन्त्रण से, उस पर आने वाली लागत की अपेक्षा लाभ अधिक होता है।

नियन्त्रण से अन्य लाभ भी हैं तथा इसके द्वारा निर्धारित मानकों की स्थापना की जा सकती है, मजदूरों के काम करने के ढंग का मापन किया जा सकता है, सफलता को प्राप्त किया जा सकता है, आदि।

शिक्षा में समन्वय

उच्च शिक्षा के लिए समन्वय एक अति महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। दूरवर्ती शिक्षा हमें उच्च शिक्षा के लिए प्रत्येक अध्ययन-केन्द्र पर एक समन्वयक की व्यवस्था की जाती है किन्तु यह समन्वय है क्या इसे स्पष्ट किया है–

किसी भी संगठन में, जो संगठनात्मक स्वरूप होता है उसका आशय अकेले काम का बंटवारा मात्र ही नहीं होता, अपितु ना ही श्रमिकों/श्रमिक दलों को विभाजित करना होता है, समन्वय के द्वारा सभी कार्य समूहों अथवा श्रमिक दलों के बीच वह अन्तरगत स्थापित करना होती है जिसके द्वारा, संगठन एक परिवार का रूप विकसित कर सकें। किसी संस्था या संगठन के विभिन्न प्रभागों के अलग अलग कार्यों के होते हुए भी एक सूत्र में बांधकर किसी अन्य रूप में समन्वित होना जैसे–इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की विभिन्न विद्यापीठों, कम्प्यूटर इकाई, छपाई-मुद्रण प्रभाग, प्रशासनिक प्रभाग, दूर शिक्षा प्रभाग आदि-आदि प्रभागों के विभिन्न कार्य होते हुए भी वे सभी इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के लिए कार्य करते हैं। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा में समन्वय और नियन्त्रण का उत्तम उदाहरण है। अच्छे समन्वय के अभाव में जहाँ संस्था अपना कार्य सुचारू रूप से

नोट

फ्रैड सी॰ अय्यर के अनुसार–"पर्यवेक्षण समस्त शैक्षिक प्रयासों में सर्वश्रेष्ठ तथा गत्यात्मक है। यह अत्यन्त श्रेष्ठ इसलिये है क्योंकि यह सर्वाधिक सृजनात्मक है।"

"Supervision is the most noble and dynamic of all educational endeavour. It is the most noble because it is the most creative."

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) के अनुसार–"हमारी दृष्टि में निरीक्षक की वास्तविक भूमिका (जिसे हम शैक्षिक परामर्शदाता कहना अधिक उपयुक्त समझते है) प्रत्येक विद्यालय की समस्याओं का अध्ययन करना है तथा इसके समस्त कार्यों के विषय में विस्तृत दृष्टिकोण अपनाना हैं इसके अतिरिक्त शिक्षकों की सहायता भी इस प्रकार करना है जिससे वे परामर्शदाता के परामर्श तथा संस्तुतियों को मान सकें।

"In our view the true role of an inspector for whom we would prefer the term Educational Advisor-is to study the functions and to help the teacher to carry our his advice and recommendations."

शैक्षिक पर्यवेक्षण की उपर्युक्त सभी परिभाषाओं में शिक्षण प्रक्रिया में सुधार करना शिक्षकों की क्षमताओं को विकसित करना, सीखने की दशाओं का मूल्यांकन करना, पाठ्यक्रम में सुधार करना, छात्रों की योग्यताओं में वृद्धि करना आदि का समावेश है। वास्तव में शैक्षिक पर्यवेक्षण शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिये एक महत्वपूर्ण साधन है। उत्तम शैक्षिक पर्यवेक्षण वही है जो शिक्षकों, छात्रों तथा विद्यालय की समस्त परिस्थितियों को उत्पन्न करता है। सारांश रूप में शैक्षिक पर्यवेक्षण को निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता है–

"शैक्षिक पर्यवेक्षण ऐसी विशिष्ट सेवा है जो शिक्षकों को कार्य-कुशलता तथा व्यावसायिक नेतृत्व प्रदान करती है, पाठ्यक्रम में सुधार करके शिक्षण स्तर को ऊँचा करती है। तथा छात्रों को समाज में उपयुक्त आचरण करने का प्रशिक्षण देती है।"

शैक्षिक नियन्त्रण

यह प्रबन्धन का अन्तिम घटक होता है। नियन्त्रण का आधार पर्यवेक्षण तथा मूल्यांकन होता है। किसी भी संस्था में जितनी गतिविधियाँ चलती हैं, उन्नति के लिये जितने कार्य किये जाते हैं तथा संगठन में जितने व्यक्ति रखे जाते हैं उनकी बुराई-भलाई तथा उरकी कार्य क्षमता या मापन नियन्त्रण की प्रक्रिया द्वारा ही सम्भव होता है। व्यक्तियों को उचित निर्देशन भी मूल्यांकन के पश्चात् ही दिया जा सकता है तथा दुर्बलताओं की पहिचान करने के पश्चात् सुधार के लिये प्रयास किया जा सकता है। शिक्षण संस्थाओं में शिक्षण प्रणाली तथा शिक्षकों के कार्यों का मूल्यांकन करने के अतिरिक्त पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, पाठ्य पुस्तकें, निर्देशन सामग्री, पाठ्येत्तर क्रियाएं, आदि सभी का मूल्यांकन किया जाता है। शिक्षा संस्था की उन्नति में जो क्रिया सहायक एवं उपयोगी है केवल उसे ही प्रोत्साहन दिया जाता है। किसी भी व्यक्ति के अनुचित तथा उच्छृंखल व्यवहार को रोका जा सकता हैं कौन व्यक्ति किसी सीमा तक अधिकारों का उपयोग करेगा, वास्तव में इसका निर्धारण नियन्त्रण प्रक्रिया के बिना नहीं हो सकता है। इस सम्बन्ध में 'सीयर्स' का भी कथन है–

"कोई भी जब तक सम्बन्धित व्यक्तियों, वस्तुओं अथवा लक्ष्यों पर भली प्रकार नियन्त्रण न कर ले तब तक वह किसी क्रिया के सम्बन्ध में निर्देशन नहीं दे सकता।" सीयर्स का यह कथन उपयुक्त प्रतीत होता है क्योंकि किसी भी संस्था का संचालन करने में कुछ उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है, उसका समुचित ज्ञान मूल्यांकन द्वारा ही सम्बन्ध होता है।

अतएव शैक्षिक पर्यवेक्षण का शिक्षकों, सीखने की परिस्थितियों तथा छात्रों की उन्नति से गहरा सम्बन्ध होता है। छात्र अध्ययन की क्रिया में किस प्रकार प्रगतिशील हों, शिक्षक नवीनतम शिक्षण सामग्री का किस प्रकार प्रयोग जुटाया जाये, आदि अनेक लाभकारी कार्यों की शैक्षिक पर्यवेक्षण के अन्तर्गत योजना बनाई जाती है एवं इनकी सफलता-असफलता का मूल्यांकन किया जाता है। सारांश यह है कि, शैक्षिक पर्यवेक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जो शिक्षकों के व्यावसायिक विकास में, शिक्षण संस्था की निरन्तर उन्नति तथा छात्रों की सर्वांगीण उन्नति में पूर्ण सहायक होती है।

नोट

अमरीका के राष्ट्रीय शिक्षा संगठन (N.E.A.) के प्राथमिक स्कूल के प्राचार्यों ने शैक्षिक पर्यवेक्षण के अर्थ निम्न प्रकार स्पष्ट किये हैं–

1. शैक्षिक पर्यवेक्षण शिक्षकों के शिक्षण में सुधार, छात्रों को समझने, शिक्षण सामग्री का विकास करने में सहायक होता है।
2. इसके द्वारा पाठ्यक्रम में सुधार तथा निर्माण के लिये शोध पर बल दिया जाता है। क्रियात्मक अनुसन्धान को बढ़ावा देते हैं।
3. शैक्षिक पर्यवेक्षण के द्वारा शिक्षण की कुशलता तथा छात्रों की आवश्यकता के ज्ञान हेतु सीखने की परिस्थितियों का मूल्यांकन किया जाता है।
4. इसके द्वारा शिक्षकों को व्यावसायिक नेतृत्व एवं सहायता प्रदान की जाती है।

शिक्षा पर्यवेक्षण की परिभाषाएँ

शिक्षा पर्यवेक्षण के अर्थ को स्पष्ट करने के लिये विभिन्न विद्वानों एवं शिक्षाविदों द्वारा दी गई परिभाषायें निम्नलिखित हैं– एडेम्स तथा डिक्के के अनुसार–"शैक्षिक पर्यवेक्षण शिक्षण को सुधारने का एक सुनियोजित कार्यक्रम है।"

"Educational Supervision is a planned programme for the improvement of the instruction"

बार० बर्टन तथा ब्रेकनर के अनुसार–"पर्यवेक्षण एक कुशल तकनीकी सेवा है जो उन अवस्थाओं का अध्ययन करने तथा उनमें उन्नति करने से सम्बन्धित होती है जो सीखने तथा छात्र विकास के चारों और व्याप्त होती है।"

"The term Supervision is only used when a Principal, Headmaser of a senior teacher of a school supervises the Classroom instruction of others to give suggestions for improvement."

डब्ल्यू० किम्बाल के अनुसार–"पर्यवेक्षण एक अच्छे शिक्षण एवं सीखने की परिस्थितियों के विकास मे सहायक होता है।"

"Supervision is assistance in the development of a better teaching learning situations."

चेस्टर टी० मैकनव के अनुसार–"पर्यवेक्षण शिक्षण प्रक्रिया का आलोचनात्मक मूल्यांकन करने तथा निर्देशन देने की एक विधि है। पर्यवेक्षण का अन्तिम उद्देश्य छात्रों को उत्तम शिक्षण सेवा द्वारा सभी स्तरों पर योग्य बनाना होना चाहिये।"

"Supervisior, is the procedure of giving direction and providing critical evaluation of the instructional process. The ending result of all supervision should be to provide students at all levels with better educational sevices."

शैक्षिक तकनीकी में इन्हीं स्वरूपों को समझने पर विशेष बल दिया जाता है।

व्यवस्था के प्रत्यय में स्थायित्व, पूर्व-कथन तथा स्वरूपों को अधिक महत्व देने से उद्योग तथा प्रबन्ध अधिक प्रभावित हुए हैं। यह विचारधारा 'शैक्षिक तकनीकी' के अर्थ के लिये भी अधिक उपयोगी तथा सार्थक है। शैक्षिक उपलब्धियों के सम्बन्ध में पूर्व-कथन किया जाता है और सीखने के स्वरूपों के लिये साधनों एवं युक्तियों को निर्धारित किया जाता है। इस प्रकार शैक्षिक-तकनीकी शिक्षा-व्यवस्था में स्थायित्व लाती है। व्यवस्था का सीधा सम्बन्ध मानव से रहा है, इसलिये मानव प्रकृति की धारणायें इस प्रत्यय को प्रभावित करती रही हैं।

नोट

शिक्षा व्यवस्था की परिभाषा

जब हम शैक्षिक प्रशासन की चर्चा करते हैं तो यह स्वाभाविक हो जाता है कि व्यवस्था के रूप में विवेचना किया जाये। आरम्भिक काल में समाज सरल थे, शिक्षा की व्यवस्था शिक्षक, छात्र तथा स्थान तक सीमित रहता था। कालान्तर में समाज के जटिल काम विकसित होने पर काल के अन्य संगठनों की भाँति शिक्षा के संगठन में भी परिवर्तन आया है। संगठन व्यवस्थित रूप का विकास होता है। मानव शक्ति का सही उपयोग होता है।

शिक्षा निर्देशन या पर्यवेक्षण

शिक्षा पर्यवेक्षण का अर्थ

'पर्यवेक्षण' शब्द अंग्रेजी भाषा के Supervision शब्द का पर्याय है। पर्यवेक्षण दो शब्दों परि (Super) + अवेक्षण (Vision) से मिलकर बना है। Super का अर्थ 'असाधारण', 'अलौकिक' अथवा 'दिव्य' होता है तथा Vision का अर्थ 'दृष्टि' अर्थात ऐसी दृष्टि जो दिव्य अथवा अत्यन्त सूक्ष्म हो, यह पर्यवेक्षण के अन्तर्गत आती है। कुछ विद्वानों ने इसको 'पर्यवेक्षण' भी कहा है जिसका अर्थ चारों ओर देखना है। किसी संस्था के चहुँमुखी दिशाओं का ध्यानपूर्वक अवलोकन करना तथा विकास के लिये सुझाव देना ही पर्यवेक्षण कहा जाता है।

अतएव पर्यवेक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा दूसरे के कार्यों का अवलोकन करके उन्हें उचित निर्देशन भी प्रदान करना है।

जॉन ए० बार्टकी के अनुसार–"उत्तम पर्यवेक्षण का सदैव शिक्षकों के विकास, छात्रों की उन्नति तथा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सुधार से सम्बन्ध होता है।"

"Good Supervision is always concerned with the development of teacher, the growth of the pupil and impovement5 of the teaching learning process." -John A. Bortki

ऐसा पर्यवेक्षण जो शिक्षा में किया जाता है, शैक्षिक पर्यवेक्षण कहलाता है। शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक, प्राचार्य एवं छात्र तथा कर्मचारी सम्मिलित होते हैं।

"शिक्षकों की उत्तम विधि, पुस्तकालय तथा प्रयोगशाला की सुविधा, क्रीड़ा क्षेत्र को सुव्यवस्था, प्राचार्य का निरीक्षण" आदि सभी कार्यों का उद्देश्य शिक्षण संस्था मे पढ़ने वाले छात्रों की सर्वांगीण उन्नति में सहायता करना होता है।

"प्रधानाचार्य वरिष्ठ अध्यापक एवं शिक्षाधिकारी जब अपने सुझावों द्वारा शिक्षण सामग्री, शिक्षण विधि, मूल्यांकन आदि का स्तर उन्नत करने के लिये कार्य करते हैं तब ये पर्यवेक्षण की भूमिका निभाते हैं।"

फाक्स, बिश तथा रफन के अनुसार–"शैक्षिक प्रशासन एक ऐसी सेवा करने वाली गतिविधि है जिसके माध्यम से शैक्षिक प्रक्रिया के लक्ष्य प्रभावकारी ढंग से प्राप्त किये जाते हैं।

नोट

"Educational Administration is a service activity through which the objectives of the educational process may be effectively realized." -Focks Wish &Rufner.

शिक्षा व्यवस्था

जेम्स के अनुसार–"प्रशासन एक संगठन है और किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मनुष्य एवं सामग्री का प्रयोग है। यह उन प्रबन्धकों का विशेष कार्य है जिनको संगठन में योग्यता प्राप्त है और जो मनुष्यों और सामग्री का उसी निपुणता से प्रयोग करते हैं, जिसका इन्जीनियर भवन-निर्माण में तथा डॉक्टर मनुष्य के रोग को निदान करने में प्रयोग करते हैं।"

शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षा प्रशासन, संचालन एवं संगठन का विशेष महत्व है। शैक्षिक प्रशासन के अभाव में शिक्षा प्रक्रिया का उचित संचालन करना संभव नहीं है। शैक्षिक प्रशासन का प्रत्यय नवीन होते हुए भी प्रारम्भ से ही इसका क्षेत्र निरन्तर विस्तृत होता जा रहा है। शिक्षा के अंगों में समन्वय स्थापित करने में, शिक्षालयों की व्यवस्था को नियन्त्रित करने में, शिक्षकों की नियुक्ति करने, राष्ट्रीय शिक्षा नीति का निर्धारण करने के अतिरिक्त विद्यालय वातावरण में मानवीय सम्बन्धों का सार्थक उपयोग करने की दृष्टि से भी विद्यालय प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। इसके अभाव में शैक्षिक प्रक्रिया का सफलतापूर्वक सम्पन्न हो पाना नितान्त असम्भव ही है। यही कारण है कि प्राय: प्रत्येक देश की शैक्षिक व्यवस्था के अन्तर्गत शैक्षिक प्रशासन को विशिष्ट महत्व प्रदान किया जा रहा है।

व्यवस्था का अथ्र

मानव आदि जीवन को अच्छा बनाने के लिये संघर्ष करता आया है, उसने अपनी कठिनाइययों को हल करने के लिये साधनों और स्रोतों का अधिकतम प्रयोग करने का प्रयास किया है। साधनों तथा स्रोतों को समुचित रूप में प्रयोग करने को 'व्यवस्था' कहते हैं। परम्परागत विचारधारा के अनुसार 'व्यवस्था' का अर्थ होता है साधनों एवं स्रोतों को निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये प्रयोग करने के स्वरूप को 'व्यवस्था' कहते हैं। व्यवस्था के अन्तर्गत प्रमुख तीन युक्तियों को प्रयुक्त किया जाता है–

1. प्रयासों तथा स्रोतों में समन्वय स्थापित किया जाता है।
2. कार्य एवं क्रियाओं का विभाजन किया जाता है।
3. अधिकार एवं उत्तरदायित्व को आरोह क्रम में निर्धारित किया जाता है।

स्काट ने भी 'व्यवस्था' की व्याख्या की है। उनके अनुसार व्यवस्था का अंतिम उद्देश्य 'विवाद को कम करना' है। व्यवस्था के द्वारा उस वस्तु तथा व्यक्ति के महत्व को कम किया जाता है जिससे नियोजन की सफलता में बाधा होती है। इस प्रकार व्यवस्था के द्वारा अनिश्चितता को कम करके निश्चितता तथा स्थायित्व में वृद्धि की जाती है। व्यवस्था के आधार पर वास्तविक उपलब्धियों के सम्बन्ध में पूर्व कथन दिया जाता है। उदाहरण के लिये पाठ्य-पुस्तकों, पाठ्य-योजनाओं तथा अभिक्रमित-अनुदेशन की व्यवस्था की जाती है, जिससे सीखने के विशेष उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है, परन्तु इसके द्वारा पाठ्यवस्तु के आन्तरिक स्वरूप तथा छात्रों के सीखने के व्यवहार स्वरूपों के सम्बन्ध में बहुत कम जानकारी होती है।

5. प्रतिभाशाली छात्रों हेतु समृद्धि तथा मन्द बुद्धि एवं पिछड़े बालकों हेतु मार्गदर्शन व परामर्श की व्यवस्था करना,
6. पाठ्य-पुस्तकें तथा सहायक सामग्री की व्यवस्था करना,
7. जन सम्पर्क एवं अन्य सम्बन्धितों क्षेत्र का विस्तार करना।

नोट

शिक्षा प्रशासन

शिक्षा प्रशासन का अर्थ

शैक्षिक पशासन का सम्बन्ध मुख्यत: शिक्षा से ही होता है। अतएव शिक्षा के क्षेत्र में संगठन जिस ढाँचें या तन्त्र को खड़ा करता है, शैक्षिक प्रशासन उसे कार्यान्वित करने में संहायक होता है जिससे शैक्षिक उद्देश्यों की अधिकाधिक प्राप्ति सम्भव होती है। शैक्षिक प्रशासन को आज केवल शिक्षा की व्यवस्था करना ही नहीं समझा जाता अपितु शिक्षा के सम्बन्ध में योजना बनाना, संगठन पर ध्यान देना, निर्देशन तथा पर्यवेक्षण आदि अनेक कार्यों से इसका गहरा सम्बन्ध है। शिक्षा के क्षेत्रों में अनेक व्यक्ति अपनी-अपनी भूमिका निभाते हैं। कक्षाभवन, पुस्तकालय, क्रीड़ा-स्थल, कार्यालय, पाठ्येत्तर क्रियाओं का सफलतापूर्वक संयोजन करना और निरन्त प्रगति के लिये प्रयत्न करना शैक्षिक प्रशासन का की कार्य होता है। शिक्षा के सम्पूर्ण ढाँचे कौन व्यक्ति कितनी लगन से कार्य कर रहा है इसका ठीक प्रकार से पर्यवेक्षण करना भी शैक्षिक प्रशासन का कार्य है। सभी व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धों को मधुर बनाना तथा उनकी कार्यक्षमता को उचित प्रोत्साहन देना, सहयोगपूर्ण ढंग से कार्य करना, प्रशासन के कार्यों में ही सम्मिलित है। विद्यालयों के प्रधानाचार्य, प्रबन्धक, शिक्षक, विद्यार्थी; अन्य कर्मचारी, जिला विद्यालय निरीक्षक, निर्देशक, उपनिदेशक आदि सभी मिलकर शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास करते हैं। इन सभी सम्बन्धित व्यक्तियों के कर्त्तव्यों तथा अधि कारों को ठीक प्रकार से समझने तथा उन्हें कार्यन्वित करना प्रशासन का ही कार्य है।

शिक्षा प्रशासन की परिभाषा

शिक्षा प्रशासन की प्रमुख परिभाषायें निम्नलिखित हैं–

ब्रुक एडम्स के अनुसार–"शैक्षिक प्रशासन में अनेक को एक सूत्र में बाँधने की क्षमता होती है। शैक्षिक प्रशासन प्राय: परस्पर विरोधियों तथा सामाजिक शक्तियों को एक ही संगठन में इतनर चतुराई से जोड़ता है कि वे सब मिलकर एक इकाई के समान कार्य करते हैं।"

"Administraiton is the capacity ot coordinate many and often conficting, social energies in a single organism, so jointly that they shall operate as an unity." -Brook Adams

एस॰एन॰ मुखर्जी के अनुसार–"शैक्षिक प्रशासन वस्तुओं के साथ-साथ मानवीय साधनों की व्यवस्था से सम्बन्धित है अर्थात् व्यक्तियों के मिलजुल कर और अच्छा कार्य करने से सम्बन्धि त है। वास्तव में, इसका सम्बन्ध मानवीय जीवों से अपेक्षाकृत अधिक है तथा अमानवीय वस्तुओं से कम।"

"Educational Administration is concerned with the mangement of things as well as with human relationship, i.e. the better working together of people. In fact, It is more concerned with human beings and less with inanimate things." -S.N. Mukerji.

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो बालक को भविष्य के लिये तैयार करती है शिक्षा का स्वरूप इस प्रकार का होना चाहिए जो भावी समाज और राष्ट्र की आवश्यकताओं एवं समस्याओं के समाधान की क्षमताओं को विकसित कर सके और भावी जीवन के समर्थ बना सकें। यह तभी सम्भव हो सकता है जब शिक्षा का नियोजन सूझ-बूझ के साथ भावी समाज और राष्ट्र तथा विश्व के विकास की दृष्टि से किया जाये।

नोट

शिक्षा समस्त प्रगतिशाली देशों के विकास के मूल में निहित है। किसी भी देश की प्रगति का शिक्षा सर्वोत्तम साधन है। न केवल शिक्षा, वरन् समस्त क्षेत्रों में विकास की योजनायें व उनका क्रियान्वयन ही देश को उन्नति की ओर ले जाता है। इसलिये वर्तमान युग में नियोजन के अभाव में देश किसी भी क्षेत्र में प्रगति नही कर सकता है। नियोजन के अर्थ को निम्नलिखित परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट किया जाता है।

हार्नल व श्वार्ज–"नियोजन विकल्पों का चुनाव है। यह यात्रा से पहले यात्रा मार्ग का निधारिण है। यह कार्यपालकों एवं उनके संगठन द्वारा सम्भावित परिणामों की पहिचान है।" आक्सफोर्ड शब्द कोष–"नियोजन का आशय, उन कार्यों की रूपरेखा से है, जिनको किया जाना है।"

"Planning is to design some action to be done before hand" -Oxford English Dictonary.

फिलिप्स–"नियोजन का अर्थ साधन एवं साध्य के बीच अग्रिम क्रियान्वयन निर्धारण से है।"

"Planning is the process of setting out in advance a pattern of action to bring about over all national policies by the closest possible articularion of means and end." -Philips

शिक्षा नियोजन की विशेषताएँ

शिक्षा नियोजन की विशेषतायें निम्न प्रकार से हैं–

1. नियोजन चिन्तन की प्रक्रिया है।
2. यह भावी जीवन हेतु उपलब्ध साधनों के माध्यम से उत्तम विकल्पों का चुनाव है।
3. नियोजन उद्देश्य, प्रगति के विभिन्न विकल्पों में से एक अथवा अनेक का चुनाव है।

शैक्षिक नियोजन की आवश्यकता कोठारी आयोग (1964-66) ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि–"भारत में शैक्षिक नियोजन की समस्या यही है कि शैक्षिक क्षेत्र मं एक राष्ट्रीय नीति का विकास करना है, जबकि संविधान में शिक्षा प्रमुखत: राज्य के अधीन विषय है तथा विभिन्न स्तरों के अनेक शिक्षा अधिकारियों द्वारा इस क्षेत्र के समस्त पक्षों पर निर्णय दिया जाता रहा है। यह कार्य सहज नहीं है तथा हमारे मार्गदर्शन हेतु वैसा कोई अनुभव नहीं है। इसलिये अधिकांश विषयों में हमें विधियाँ सुधारनी होगीं। यह भी आवश्यक सुधार करें।" हमारे देश में शिक्षा नियोजन की आवश्यकता अधोलिखित क्षेत्रों में है–

1. शैक्षिक अनुसन्धान,
2. परीक्षा में सुधार करना,
3. आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहितय सृजन करना,
4. सेवाकालीन प्रशिक्षण एवं पर्यवेक्षण तकनीक में सुधार करना,

5. प्रबन्धन एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है–जीवन तथा समाज का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जिसमें प्रबन्धन की आवश्यकता न हो। सामाजिक कुशलता के निर्माण में प्रबन्ध न को एक सार्वभौम प्रक्रिया के रूप में जाना जाता है।

नोट

शिक्षा प्रबन्धन के क्षेत्र

शैक्षिक प्रबन्धन एक व्यापक प्रक्रिया है इसमें देश की आवश्यकता, संसाधन, मानव शक्ति नियोजन आदि निहित होते हैं। प्रबन्धन के क्षेत्र की व्याख्या करते हुए हेनरी फेयोल ने कहा है–'प्रबन्धन एक सार्वभौमिक विज्ञान है जो वाणिज्य, उद्योग, राजनीति, धर्म, युद्ध, या जन कल्याण सभी पर समान रूप से लागू होता है।' टेलन के शब्दों में–'वैज्ञानिक प्रबन्धन के आध ारभूत सिद्धान्त हमारे साधारण से साधारण व्यक्तिगत कार्यों को लेकर हमारे विशाल निगमों के कार्यों तक लागू होते हैं।' इस दृष्टि से शैक्षिक प्रबन्धन के नौ क्षेत्र हैं। यह इस प्रकार हैं–

1. उत्पादक प्रबन्धन–इसके अन्तर्गत उत्तम शैक्षिक उपलब्धि को दृष्टिगत रखा जाता है।
2. वित्तीय प्रबन्धन–शिक्षा संस्थाओं के संचालन के लिये वित्तीय प्रबन्धन किया जाता है।
3. विकास प्रबन्धन–विद्यालयों को प्रोन्नत करने के लिये विकास की व्यवस्था की जाती है।
4. वितरण प्रबन्धन–विद्यालीय संसाधनों का वितरण किया जाता है।
5. क्रय प्रबन्धन–विद्यालयों में सामान्य क्रम करने का प्रबन्ध किया जाता हैं
6. परिवहन प्रबन्धन–विद्यालय में सामान, छात्रों स्टाफ के लाने-ले-जाने की व्यवस्था की जाती है।
7. संस्थापन प्रबन्धन–संस्था के भवन, उपकरण, अन्य साधनों का प्रबन्धन किया जाता है।
8. सेवा वर्गीय प्रबन्धन–शिक्षक, कर्मचारी आदि की व्यवस्था, पद एवं भूमिका का निर्धारण किया जाता है।
9. कार्यालय प्रबन्धन–प्रत्येक विद्यालय में आलेख की व्यवसाि करने के लिये कार्यालय होता है जिसके प्रबन्ध की आवश्यकता होती है।

शिक्षा प्रबन्धन के घटक

प्रबन्धन के प्रमुख पाँच घटक निम्नलिखित हैं–

1. शिक्षा नियोजन
2. शिक्षा प्रशासन ,
3. शिक्षा संगठन ,
4. शिक्षा निर्देशन तथा
5. शिक्षा नियंत्रण ।

प्रबन्धन के प्रमुख घटकों का विवरण निम्नलिखित है–

शिक्षा नियोजन

शिक्षा नियोजन का अर्थ एवं परिभाषा

3. प्रबन्धन एक लोक समूह है–प्रबन्धन की अवधारणाओं में यह है कि यह एकलंक समूह है। विद्यालय में प्रबन्धक, प्रधानाचार्य, अध्यापक, छात्र, अन्य कमचारी होते हैं। ये सभी अपने-अपने क्षेत्रों में प्रबन्धन करते हैं। आधुनिक प्रबन्धन शास्त्र में तीन व्यवस्थायें पाई जाती हैं। (1) पैत्रिक अथवा पारिवारिक (2) राजनीतिक (3) पेशेवर। पैत्रिक प्रबन्धन वंशानुक्रम तथा परिवार की परम्पराओं के अनुसार चलता है। औद्योगिक घरानों में इसी प्रकार का प्रबन्धन पाया जाता है। राजनीतिक प्रबन्धन, सरकार उपक्रमों (Government undertakings.) में पाया जाता है। इनमें सत्तारूढ़ दल अपने हितैषियों की नियुक्तियाँ करते हैं। पेशेवर प्रबन्धन में, प्रबन्धन का प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति संस्थाओं का प्रबन्धन करते हैं।
4. शैक्षिक प्रबन्धन एक समन्वयकारी संसाधन है–शैक्षिक प्रबन्धन, शिक्षा के विभिन्न साधनों में समन्वय करता है तथा एकीकरण के द्वारा वह शिक्षा की प्रक्रिया को सफल बनाता है। एच॰एल॰ सिस्क के शब्दों में–'प्रबन्धन, नियोजन प्रक्रिया, संगठन प्रक्रिया, निर्देशन तथा नियंत्रण के द्वारा निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने का संसाधन संयोजन है।
5. शैक्षिक प्रबन्धन एक समूह वाचक संज्ञा है–शैक्षिक प्रबन्धन में एक व्यक्ति या संस्था निहित नहीं होते, शैक्षिक प्रबन्धन में समूह निहित होते हैं जो अपनी-अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं। प्रबन्धन एक जटिल अर्थ वाली प्रक्रिया है इसका सम्बन्ध अधिकारियों से है, यह एक विज्ञान है और साथ ही यह एक प्रक्रिया भी है। प्रबंन्धन में अधीनस्थों में यह एक विज्ञान है और साथ ही यह एक प्रक्रिया भी है। प्रबन्धन में अधीनस्थों से काम कराया जाता है।
6. प्रबन्धन मूल रूप से व्यावहारिक क्रिया है–शैक्षिक प्रबन्धन मूल रूप से वह क्रिया है जो कार्य का सम्पादन करती है इसका सम्बन्ध मानवीय सम्बन्ध भौतिक संसाधन तथा निष्पत्ति से होता है। प्रबन्धन व्यक्तियों से काम लेने की क्रिया है।
7. प्रबन्धन एक उद्देश्यपूर्ण क्रिया है–प्रबन्धन किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये किया जाता है। बच्चों की शिक्षा देने के उद्देश्य से स्थान, सामान, कर्मचारियों, उपकरणों की व्यवस्था की जाती है, इन सकबा उद्देश्य लक्ष्य प्राप्त करना है।
8. प्रबन्धन एक सामाजिक क्रिया है–लारेन्स एप्पले के अनुसार–प्रबन्धन, व्यक्तियों का विकास है न कि वस्तुओं का निर्देशन, प्रबन्धन वास्तव में कर्मचारी प्रशासन है, विद्यालयों में इसीलिये अनेक व्यक्ति अनेक प्रकार के कार्य करते हैं जो विद्यालय में शैक्षिक वातावरण का सृजन करते हैं।
9. प्रबन्धन का दायित्व निर्वाह कराना है–शैक्षिक प्रबन्धक स्वयं कार्य न करके, कार्य कराता है प्रधानाचार्य स्वयं बहुत कम पढ़ाते हैं किन्तु प्रत्येक शिक्षक से कार्य लेते हैं और गैर शैक्षिक कर्मचारियों द्वारा शैक्षिक सुविधायें जुटाने एवं वातावरण का निर्माण कराने में सहयोग लेते हैं।
10. शैक्षिक प्रबन्धन एक अदृश्य कौशल है–शैक्षिक प्रबन्धन कोई दिखाई देने वाला तत्व नहीं है। यह तो कौशल है जिसे उसके परिणाम से जाना जाता है किसी विद्यालय में लोग अपने बच्चों को प्रवेश दिलाने के लिये इसलिये लालायित रहते हैं कि वहाँ परिणाम उत्तम रहता है। परिणाम का उत्तम रहना, उत्तम प्रबन्धन कौशल पर निर्भर करता है।

नोट

नोट

कहलाती है तो शिक्षा के क्षेत्र में यह प्रक्रिया प्रशासन कहलाती है। प्रशासन की प्रक्रिया मं व्यक्ति अपने पद के अनुसार अपनी भूमिका का निर्वाह करता हैं इसलिये प्रबन्धन तथा प्रशासन को समानार्थी कहा जाता है। प्रचलित अवस्था में 'प्रबन्धन' शब्द उद्योग तथा व्यवसाय के क्षेत्र में उपयोग किया जाता है। शिक्षा-प्रबन्धन की प्रमुख परिभाषायें इस प्रकार हें–

1. किम्बाल एवं किम्बाल–प्रबन्धन उस कला को कहते हैं जिसके द्वारा किसी उद्योग में मनुष्यों और माल को नियंत्रित करने के लिये चालू आर्थिक सिद्धान्त को प्रयोग में लाया जाता है।
2. कुन्ट्ज–औपचारिक समूहों में संगठित लागों से काम कराने की कला का नाम ही प्रबन्धन है। व्यक्तियों से काम लेने को प्रबन्धन कहते हैं।
3. स्टेन्लेवेन्स–प्रबन्धन सामान्य रूप से निर्ण लेने एवं मानवीय क्रियाओं पर नियन्त्रण रखने की विधि है जिससे पूर्व निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सके।
4. पीटरसन तथा प्लोमैन–प्रबन्धन का आशय उस तकनीक से है जिसके द्वारा एक विशेष मानवीय समूह के उद्देश्यों का निर्धारण, स्पष्टीकरण तथा क्रियान्वयन किया जाता है। व्यक्तियों से काम लेने से विशिष्ट उद्देश्य प्राप्त किए जाते हैं।

शिक्षा प्रबन्धन की सामान्य विशेषताएँ

सन् (1970) से शिक्षा प्रबन्धन तथा प्रशासन के क्षेत्र में नये युग का सूत्रपात हुआ इस सूत्रपात से परिवर्तन आ रहे हैं वे इस प्रकार हैं–

1. शिक्षा प्रबन्धन के सिद्धान्त तथा व्यवहार में परिवर्तन आ रहा है।
2. सैद्धान्तिक स्तर पर नवीन शब्दावली का निर्माण हो रहा हे।
3. शैक्षिक प्रशासन के लिए शैक्षिक प्रबन्धन, शैक्षिक संगठन जैसे शब्दों का प्रयो किया जाता है।
4. शैक्षिक प्रबन्धन ज्ञान की नवीन शाखा के रूप में विकसित हो रहा है।
5. वाणिज्य तथा उद्योग को क्षेत्र में जिसे प्रबन्धन कहते हैं, शिक्षा के क्षेत्र में उसे शैक्षिक प्रबन्धन कहते हैं।

इस दृष्टि से थिया हेमेन ने प्रबन्धन की अवधारणा इस परिभाषा से स्पष्ट की है–'प्रबन्धन के तीन अर्थ है : प्रबन्धन उच्च स्तरीय प्रबन्धको का एक समूह है, प्रबन्धन एक विज्ञान है, प्रबन्धन एक सामाजिक क्रिया है, प्रबन्धन काम लेने की कला है, शिक्षा प्रबन्धन की सामान्य विशेषतायें इस प्रकार हैं।

1. प्रबन्धन उत्पादन का एक आर्थिक संसाधन है–आर्थिक क्रियाओं में भूमि, श्रम, पूँजी, साहस तथा विनिमय प्रमुख घटक हैं। ये सभी घटक स्वतन्त्र होते हुए भी प्रबन्धन के अधीन हैं। प्रबन्धन के साधनों के अभाव में उत्पत्ति के सभी साधन अपूर्ण एवं निष्क्रिय हैं।
2. प्रबन्धन एक अधिकार प्रणाली है–किसी भी क्षेत्र में प्रबन्धन, अधिकार के रूप में प्रयुक्त होता है। शिक्षा के क्षेत्र में प्रबन्धक तथा प्रबंधित, दो वर्ग होते हैं। प्रबन्धक वर्ग के अधिकार अधिक होते हैं और वे अपने अधीनस्थों से कार्य लेते हैं। प्रबन्धक भी उच्च, मध्यम एवं पर्यवेक्षीय स्तर के होते हैं। सभी के अपने पदों के अनुरूप अधिकार होते हैं तथा भूमिकायें होती हैं। ये अपने अधीनस्थों का मार्ग दर्शन करते हैं। नियंत्रण, सामान्वय तथा नेतृत्व करते हैं।

अनय व्यवसायों में लाभ व्यक्ति या संस्था को मिलता है और कर्मचारियों को केवल सेवा मूल्य प्राप्त होता है। शिक्षण-व्यवसाय में प्रबन्धन का विशेष महत्व है। शैक्षिक प्रबन्धन की अवधारणा को हम इस प्रकार स्पष्ट करते हैं–

नोट

शिक्षण एक व्यवसाय है

हैनरी के शब्दों में–'व्यवसाय वस्तुओं तथा सेवाओं के उस नियमित क्रय-विक्रय, हस्तान्तरण अथवा विनिमय को कहते हैं जो लाभ कमाने के लिये किया जाता है।

Management is the corrdination of all resources through the process of planning, organising, directing and controlling in order to attain stated objectives. -Henary

इस परिभाषा के अनुसार शिक्षा एक व्यवसाय है इसमें शिक्षक अपने ज्ञान तथा कौशल की सेवायें, धन के बदले, छात्रों को देता है। छात्र, शिक्षण द्वारा प्रदान किये गये ज्ञान तथा कौशल का उपयोग करके अपनी क्षमताओं का विकास करते हैं। व्यवसाय में क्रय-विक्रय, विनिमय, सेवाओं का लेन-देन, लाभ, प्रयोजन तथा प्रतिफल की अनिश्चितता, जोखिम एवं विनिमय में निरन्तर के लक्षण पाये जाते हैं उद्योग तथा व्यवसाय में, लाभ उत्पादक को मिलता है। शिक्षा में उक्त सभी लक्षण पाये जाते हैं किन्तु इसमें जोखिम कम हैं इसका लाभ व्यक्ति तथा समाज को मिलता है।

शिक्षा एक प्रबन्धन

शिक्षा, यद्यपि जीवन-पर्यन्त चलने वाल प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया की सफलता उत्तम प्रबन्धन पर निर्भर करती है। यदि प्रबन्धन निरंकुश है तो शिक्षा की प्रक्रिया में अवरोध आयेंगे। यदि वह अधिनायकवादी है तो एक व्यक्ति या संस्था का वर्चस्व रहेगा। यदि मुक्त है तो अराजकता की संभावना बढ़ेगी। इसलिये शिक्षा-उद्योग अर्थात् शिक्षा संस्थाओं की सफलता उसके प्रबन्धन पर निर्भर करती हैं। ओलीवर शैल्डेन के शब्दों में–'प्रबन्धन, उद्योग (विद्यालय तथा शिक्षा) की वह जीवनदायिनी शक्ति है जो संगठन को शक्ति देता है, संचालित करता है एवं नियंत्रित करता है।' इसकी प्रकार थियोहेमेन ने लिखा है–प्रबन्धन एक विज्ञान के रूप में, प्रबन्धन एक उच्च स्तरीय प्रबन्धन समूह के रूप में तथा प्रबंन्धन एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में व्यक्त किया जाता है।' दूसरे शब्दों में प्रबन्धन एक कार्यकारी समूह है, यह समूह कार्य का संचालन, निर्देशन, नियन्त्रण एवं समन्वय करता है। इसलिये वह (प्रबन्धक) प्रशासक कहलाता है। प्रबन्धक या प्रशासक छः तत्वों (1)मानव (2) मशीन (3)माल (4) मुद्रा बाजार (5) प्रबन्धन (6) तता संगठन का समन्वय करता है। पीटर ड्रोकर के अनुसार–'प्रबन्धक, प्रत्येक व्यवसाय का गत्यात्मक तथा जीवनदायी अवयव है। इसके नेतृत्व के अभाव में उत्पादन के साधन, केवल साधन मात्र ही रह जाते हैं, कभी उत्पादन नहीं बन पाते हैं।'

विद्यालयी प्रबंन्धन में मानव (शिक्षक, छात्र), मशीन (विद्यालयी उपकरण) माल (शैक्षिक प्रक्रिया) तथा निष्पात्ति, मुद्रा बाजार (शुल्क, अर्थ व्यवस्था तथा मानव शक्ति नियोजन), प्रबन्धन (समन्वय) तथा संगठन (प्रबन्धक, प्रधानाचार्य, शिक्षक, कर्मचारी, छात्र, अभिभावक साधन) आदि निहित हैं। इन सबको गतिशील बनाये रखने में प्रबन्धक की भूमिका महत्वपूर्ण है।

शैक्षिक प्रबन्धन एक विशेष क्रिया है। मानव समूह तथा संस्थाओं के संचालन के लिये अर्थात् विद्यालय के कर्मियों तथा विद्यालयी संस्था के संचालन के लिये शैक्षिक प्रबन्धन का होना अत्यन्त आवश्यक है। उद्योग तथा व्यापार के क्षेत्र में व्यवस्था की यह प्रक्रिया प्रबन्धन

प्रबन्धन एवं प्रणाली

नोट

मानवीय क्रियाओं के संचालन हेतु प्रबन्धन की आवश्यकता होती हैं प्रबन्धन का सम्बन्ध प्रणाली से होता है। मनुष्य प्रणाली तथा उप-प्रणालियों का विकास करता है। प्रबन्धन की प्रभावशीलता एवं कार्यक्षमता प्रणाली पर आधारित होती है। मानव द्वारा जिन प्रणालियों का विकास किया गया हे उनमें कोई प्रणाली पूर्ण नहीं है प्रत्येक मे सुधार एवं विकास की आवश्यकता होती है। प्रबन्धन को एक कला तथा विज्ञान मानते हैं। प्रबन्धन की प्रणाली का अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से किया जाता है। इसमें पृष्ठपोषण प्रविधि का प्रयोग किया जाता है और प्रणाली के स्वरूप का विश्लेषण भी किया जाता है जिससे 'अनदेशनात्मक-अभिकल्प' की संज्ञा दी जाती है। इस अध्याय में इसी प्रत्यय के तत्वों का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। यह शिक्षा तकनीकी की प्रमुख पाठ्वस्तु है।

टी॰आर॰ रिओरडन (1971) के अनुसार–"प्रबन्धन का सम्बन्ध विविध प्रकार के वैकल्पिक नियोजनों तथा प्रस्तावों में से प्रभावी नियोजन का चयन करना है, जिससे अपेक्षित उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके और निहित अपेक्षाओं की पूर्ति की जा सके। प्रबन्धन में उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु आव्यूहों का भी चयन किया जाता है।"

"Management refers to conscious preference from variety of alternative plans and proposals and further the more that such choices involve purposeful commitment to recognize and desire objectives. Management employs strategies to realize the objectives" -T.R. Riordan (1971)

शिक्षण के अन्तर्गत व्यापक रूप से अनुदेशन की प्रारूप को सम्मिलित किया जाता है। शैक्षिक अभियन्त्रण के विकास में अनुदेशन-प्रणाली को वैज्ञानिक रूप दिया और शिक्षण को कला की अपेक्षा विज्ञान अधिक माना है। शैक्षिक तकनीकी की यह धारणा है कि शिक्षण एक कला नहीं है अपितु एक विज्ञान है। शिक्षक जन्मजात से नहीं होते अपितु प्रशिक्षण संस्थायें प्रभावशाली शिक्षकों को तैया करती हैं।

राबर्ट ग्लेसर (1968) का कथन है कि शैक्षिक तकनीकी की यह विशेषत है कि अनुदेशन के प्रारूप की सहायता से व्यावसायिक क्षमताओं का विकास किया जा सकता है। इतना ही नहीं, विशेषज्ञ इस क्षेत्र में शोध कार्य कर रहे हैं कि किस स्तर तक व्यावसायिक क्षमताओं का विकास किया जा सकता है। एल॰कारटर (1966) ने शोध कार्यों के निष्कर्षों में यह पाया कि अनुदेशन के प्रारूप का प्रयोग एक व्यक्ति की अपेक्षा समूह की व्यावसायिक क्षमताओं के विकास के लिये अधिक प्रभावशाली होता है। ग्लेसर ने अनुदेशन के प्रारूप के कार्यों का उल्लेख किया है–

शिक्षा प्रबन्धन का अर्थ एवं परिभाषा

मनुष्य द्वारा की जाने वाली प्रत्येक क्रिया किसी न किसी प्रक्रिया द्वारा सम्पन्न होती है। यह प्रक्रिया इतनी व्यवस्थित होती है कि यदि इसमें किसी प्रकार शिक्षा की अव्यास्था हुई है तो यह दो अवधारणा में परिवर्तन से है–(1) शिक्षा, मानव विकास की सशक्त प्रक्रिया के साथ-साथ राष्ट्र विकास एवं जनशक्ति नियोजन का आधार बन गई है। (2) यह एक मानवीय व्यवसाय के रूप में विकसित हो रही है। यह व्यवसाय, अन्य व्यवसायों से भिन्न है। इसमें शिक्षक, शिक्षा के द्वारा मानव विकास के लिये किये गये श्रम का मूल्य लेता है यह व्यवसाय एक मिशन (सेवा कार्य) के रूप में है जिसका सम्पूर्ण लाभ समाज तथा राष्ट्र को मिलता है।

1. नियोजन
2. संगठन,
3. प्रशासन,
4. निर्देशन तथा
5. नियंत्रण के कार्य होते हैं।

नोट

प्रबन्धन की विशेषताएँ

इन परिभाषाओं की समीक्षा से प्रबन्धन की अधोलिखित विशेषताओं का बोध होता है अर्थात प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं–

1. प्रबन्धन व्यक्तियों से कार्य कराने की कला तथा विज्ञान है।
2. इसमें व्यक्तियों तथा कार्यकर्त्ताओं को समूह में संगठित रूप में कार्य कराया जाता है। सामूहिक क्रियाओं को बढ़ा दिया जाता है।
3. प्रबन्धन को कार्य कराने की ज्ञान की एक शाखा अथवा अनुशासन माना जाता है।
4. प्रबन्धन में मानवीय तथा भौतिक स्रोतों में समन्वय स्थापित करने की प्रक्रिया है।
5. प्रबन्धन पर्यावरण को बनाये रखने तथा उसे बनाने का कार्य करता है।
6. प्रबन्धन को मानव विकास की प्रक्रिया भी मानते हैं।
7. प्रबन्धन में निम्नांकित प्रक्रियायें सम्मिलित होती हैं–
   a. नियोजन की प्रक्रिया,
   b. उद्देश्यों का प्रतिपादन,
   c. व्यवस्था करना,
   d. निर्देशन करना,
   e. नियुक्तियाँ करना,
   f. सम्पादन तथा समन्वय करना,
   g. मूल्यांकन तथा नियन्त्रण करना तथा सुधार एवं विकास करना तथा
   h. कार्यकर्त्ताओं को प्रोत्साहित करना ।

इन सभी क्रियाओं तथा प्रक्रियाओं को उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रबन्धन में सम्पादित करते हैं।

प्रबन्धन की प्रकृति

प्रबन्धन की प्रकृति बदलती रहती है। पहले 'प्रबन्धन' तथा 'स्वामित्व' को एक ही अर्थ मे प्रयुक्त करते थे परन्तु आज तकनीकी एवं औद्योगिक युग में इनके अर्थ एवं प्रकृति भिन्न हैं। प्रबन्धन की प्रकृति इस प्रकार है–

1. प्रबन्धन एक कला तथा विज्ञान है और एक अध्ययन का क्षेत्र भी है।
2. प्रबन्धन एक विकास का साधन तथा अधिकार प्रणाली भी है।
3. प्रबन्धन व्यक्तियों से कार्य कराने की सार्वभौमिक प्रक्रिया है।
4. प्रबन्धन व्यक्तियों के संगठित समूह से कार्य कराने का एक तन्त्र है।
5. प्रबन्धन एक व्यवसाय/पेशा है इसकी अपनी आचार-संहिता है।
6. प्रबन्धन सामाजिक पर्यावरण की गुणवत्ता बनाये रखने का कार्य है।

छात्र क्रियाकलाप

1. दूरवर्ती-शिक्षा के प्रबन्धन का अर्थ बतायें?

2. प्रबन्धन को परिभाषित करें?

"Management is the co-ordination of human and physical resources towards objectives accomplishment."

"प्रबन्धन वह है जो एक प्रबन्धक कर्त्ता करता है।"

"Management is what a manager does,."

नोट

लारेन्स ए. एप्ले के अनुसार–"प्रबन्धक क्रियाओं का नियोजन तथा निर्देशन नहीं अपितु मनुष्यों का विकास करता है।" राबर्ट अल्वानेस के अनुसार–"प्रबन्धन पर्यावरण को बनाये रखने तथा उसे बनाने का कार्य है, जिसमें व्यक्ति अपने लक्ष्यों को कुशलता एवं प्रभावशाली ढंग से प्राप्त कर सकें।"

"Management is the work of creating and maintaining environments in which people can achieve his goals efficiently." -Robert Albance

पीटर एफ॰ ड्रोकर के अनुसार–"प्रबन्धन ज्ञान की एक शाखा अर्थात अनुशासन किया जाने वाल एक कार्य है, प्रबन्धक इस ज्ञान का कार्यों के सम्पादन में प्रयोग करते हैं और विशेष कार्यों को पूरा करते हैं।"

"Management is a function, adiscipline, a task to be done; and managers practice this discipline. carry out the functions and complete these task." -Peter F. Drucker

एफ॰ डब्लू टेलर के अनुसार–"प्रबन्धन यह जानने की कला है कि आप व्यक्तियों से वास्तव मे क्या काम लेना चाहते हैं? और फिर यह देखना कि वे उसको एबसे मितव्ययी तथा उत्तम ढंग से पूरा करते हैं।"

"Management is an art of knowing exaxtly what you want men to do and then seeing that they do it in the best and economical way" -F.W.Taylor

"प्रबन्धन की व्यावहारिक परिभाषा आर॰एस॰डेवर ने की है-इसमें प्रबन्धन के स्वरूप तथा सम्पादन की जाने वाल क्रियाओं का उल्लेख किया गया है। "प्रबन्धन के अन्तर्गत उद्देश्यों का प्रतिपादन करना, उनको प्राप्त करने का नियोजन करना, संगठन स्थापित करना, कर्मचारियों की व्यवस्था करना, उन्हें निर्देशन देना, समन्वित करना, उनके कार्यों का मूल्यांकन करना, नियन्त्रण करना उन्हें प्रोत्साहन देना और सभी क्रियाओं में सामंजस्य स्थापित करना है।"

"Management involves the formulation of objectives, the process of planning, organizing, staffing, executing, coordinating evaluating, controlling, motivating with view to attain the objectives and finally involving to improve the functioning for future. -R.S.Davar

इसी प्रकार जेम्स लुण्डे ने प्रबन्धन की परिभाष दी है–"प्रबन्धन मुख्य रूप से किसी विशिष्ट उद्देश्य के लिए प्रयासों को नियोजित, समन्वित, अभिप्रेरित एवं नियन्त्रित करने की कला है।"

"Management is principally an art of planning, organizing, coordinating, motivating the task and effort of other persons to realize a specific objective." - James Lundy

आर॰एस॰ डेवर तथा जेम्स लुण्डे की परिभाषाओं को एक आकृति की सहायता से भी प्रस्तुत किया गया है जिसमें प्रबन्धन के अर्थ को समझने में सरलता होती है।

इस आकृति से विदित होता है कि प्रबन्धन एक व्यापक प्रक्रिया तथा कार्य है, जिसके अन्तर्गत

नोट

शिक्षक उनकी कठिनाइयों का सरलतम ढंग से समझाने का प्रयास करता है। छात्रों को साथ लेकर चलता है। शिक्षक अधिक धैर्य से काम करता है।

2. सामान्य कक्षा-शिक्षण शिक्षक-केन्द्रित होता हे, जबकि अनुवर्ग-शिक्षण छात्र-केन्द्रित होता है। अनुवर्ग-शिक्षण में निर्देशन तथा परामर्श भी दिया जाता है। व्यक्तिगत अन्तः प्रक्रिया अधिक होती है। छात्र तथा शिक्षकों के निकट के सम्बन्ध होते है। सामान्य कक्षा-शिक्षण में यह सब कुछ सम्भव नहीं होता है।
3. अनुवर्ग शिक्षण में छात्रों की अभिवृत्तियों तथा भावात्मक समस्याओं, तथा भौति कमजोरियों को भी ध्यान में रखना होता है। इस प्रकार की समस्याओं के लिए परामर्श दिया जात है। सामान्य कक्षा-शिक्षण में इस प्रकार समस्याओं पर ध्यान देना सम्भव नहीं होता है।

इस विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अनुवर्ग-शिक्षण में 'व्यक्तिगत अधिगम' को अधिक महत्व दिया जाता है। जबकिं सामान्य कक्षा-शिक्षण में 'अनुवर्ग अधिगम' होता है। अनुवर्ग-शिक्षण में अब कम्प्यूटर का भी प्रयोग किया जाने लगा है।

दूरवर्ती-शिक्षा के लिए कार्यक्रम (Programme for Education through Distance Mode)

दूरवर्ती-शिक्षा का प्रबन्धन

मानव जीवन के विकास से पूर्व मनुष्य की आवश्यकतायें सीमित थीं, उनकी पूर्ति व्यक्ति स्वयं अपने प्रयास से कर लेता था, परन्तु मानवी विकास के साथ आवश्यकताओं में वृद्धि हुई जिससे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करना कठिन हो गया और उसे अपने कार्यों को पूरा करने के लिये दूसरों की सहायता की आवश्यकता हुई आज हमारे चारों ओर विविध प्रकार के संगठन हैं यह संगठन औपचारिक एवं अनौपचारिक, आर्थिक, सामाजिक, व्यवसायिक, प्रशासनिक, राजनैतिक आदि हैं। संगठन व्यक्तियों का एक समूह होता है जिसके निश्चित उद्देश्य होते हैं उन्हें प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इन संगठनों को निर्देशित, समन्वित तथा एकीकृत करने के लिए 'प्रबन्धन' की आवश्यकता होती है। प्रबन्धन का सरल शब्दों में 'अर्थ) संगठन में व्यक्तियों से कार्य कराना है। अंग्रेजी शब्द 'मैनेज-मैन-टेक्टफुली' को मैनेजमेंट कहते हैं। प्रबन्धन का अर्थ 'व्यक्तियों से कार्य लेना' है।

प्रबन्धन का अर्थ एवं परिभाषा

प्रबन्धन एक व्यापक तथा जटिल प्रत्यय है। इसकी परिभाषा देना असम्भव तो नहीं कठिन अवश्य है, यहाँ प्रबन्धन की कुछ परिभाषायें दी गई हैं– "एक संगठन में कार्यरत व्यक्तियों के प्रयासों से निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये नियोजन, निर्देशन एवं समन्वित करने को प्रबन्धन कहते हैं।" हरोल्ड कीजन के अनुसार–"औपचारिक रूप में संगठित समूहों में व्यक्तियों से मिलकर कार्य करने की कला ही प्रबन्धन है।"

"Management is an art of getting things done through the people formally organized group." -Harold Keentz

"प्रबन्धन मानवीय एवं भौतिक साधनों की उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये समन्वय करना है।"

होमबर्ग ने इस सम्बन्ध में चार परिकल्पनाओं का प्रतिपादन किया है–

1. निर्देशन प्रक्रिया जितनी बलशाली होगी, छात्रों की भावनायें उतनी ही शक्तिशाली होती है। सहायक व्यवस्था भी अधिक शक्तिशाली होती है।
2. छात्रों की भावनायें जितनी अधिक शक्तिशाली होती है, सहायक व्यवस्था प्रणाली भी उतनी ही अधिक रोचक होती है और पाठ्स-सामग्री भी सार्थक होती है। छात्रों की अध्ययन में लगन होती है।
3. छात्रों की सशक्त भावनाओं के अनुरूप ही छात्रो की अभिप्रेरणा होती है। तथा अधिगम की प्रक्रिया प्रभावशाली होती है। सहायक व्यवस्था से व्यक्तिगत विकसित होते हैं।
4. छात्र यदि स्वाध्यायी तथा अनुभवी हो तब निर्देशन प्रक्रिया अधिक प्रभावी नहीं होती है।

नोट

अनुवर्ग शिक्षण

हारपर ने संयुक्त राज्य अमेरिका में एक सौ वर्ष पूर्व (1886) पत्राचार-शिक्षा विकास किया था और उनका कहना था कि "दूरवर्ती शिक्षक अधिक परिश्रमी, धैर्यवान, सहानुभूतिपूर्ण तथा सचेत होना चाहिए। कक्षा-शिक्षण में जो शिक्षक क्रियायें करता है, दूरवर्ती-शिक्षक के लिए वे क्रियाये नगण्य होती है, अपितु उसे विभिन्न प्रकार की अन्य क्रियायें करनी होती हैं।"

शिक्षक को दूरवर्ती-छात्र की आवश्यकताओं, समस्याओं तथा कठिनाइयों को ध्यान में रखन होता है। छात्रों को व्यकितगत रूप में अध्ययन हेतु प्रोत्साहित करना पड़ता है। दूरवर्ती शिक्षा संस्थायें छात्रों को व्यक्तिगत रूप में प्रोत्साहित करने के लिए सम्पर्क कार्यक्रम में अनुवर्ग शिक्षण की व्यवस्था करती हैं। अनुवर्ग शिक्षण में छात्रों की कठिनाइयों के अनुसार शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। नियमित कक्षा-शिक्षण से जो पाठ्यवस्तु छात्रों की समझ में नहीं आती है, परन्तु दूरवर्ती शिक्षा में जो अनुदेशन पाठ सामग्री छात्रों को अध्ययन हेतु भेजी जाती है, उसके समझने में छात्रों की जो कठिनाइयाँ होती हैं, उसके लिए सम्पर्क कार्यक्रम में अनुवर्ग-शिक्षा में जो अनुदेशन पाठ सामग्री छात्रों को अध्ययन हेतु भेजी जाती है, उसके समझे में छात्रों की कठिनाइयों का निदान किया जोता है ओर उपचारात्मक अनुदेशन पाठ सामग्री भी तैयार की जाती है। अनुवर्ग-शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए आवश्यक होता है–

1. छात्र तथा शिक्षक के मध्य व्यक्तिगत अन्तः प्रक्रिया अधिक हो,
2. अध्ययन हेतु समुचित वातावरण उत्पन्न किया जायें प्रत्येक प्रकार छात्र को सीखना सुगम हो,
3. छात्रों में आपस में तथा शिक्षक से निकट के सम्बन्ध विकसित हों।

इन तीनों प्रक्रियाओं से अनुवर्ग शिक्षण को उत्तम तथा सार्थक बनाया जा सकता है, अनुवर्ग-शिक्षण की कक्षा में 10 से 15 छात्र ही होने चाहिए, जबकि सामान्य कक्षा-शिक्षण में 30 से 100 तक छात्र रहते हैं। इनके प्रारूप में सार्थक अन्तर होता है।

1. सामान्य कक्षा-शिक्षण में शिक्षक की यह धारणा रहती है कि सामान्य स्तर के छात्र नवीन पाठ्यवस्तु सीखने हेतु बैठे हैं। इसलिए शिक्षक अपने ढंग से पाठ्वस्तु का प्रस्तुतीकरण करता है और सीमित समय में अपने पाठ को पूरा करने का प्रयास करता है। अनुवर्ग-शिक्षण में एक विशिष्ट प्रकार के छात्र होते हैं जिन्होंने उस पाठ्यवस्तु को पहले पढ़ लिया है, परन्तु उनकी समझ में नहीं आया है। इसलिए

5. छात्रों को भौतिक चिंतन के लिए प्रेरणा देनी चाहिए और उनकी समस्याओं तथा कठिनाइयों का समाधान करना चाहिए।
6. छात्रों में अध्ययन के प्रति सही अभिवृत्ति एवं अभिरूचियों का विकास करना चाहिए।

नोट

दूरवर्ती-शिक्षक की इन क्रियाओं की पूर्ति हेतु पूर्व आवश्यकतायें हैं, जिनसे इनके सम्पादन में सहायता मिलती है। वे इस प्रकार हैं।

1. दूरवर्ती-शिक्षण में शिक्षक तथा छात्रों को एक दूसरे को जानने का प्रयास करना चाहिए। इस प्रणाली में एक दूसरे से दूर रहते हुए परस्पर कार्यों द्वारा प्रभावित करते हैं।
2. दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली में पत्राचार के माध्यम से निरन्तर सम्पर्क रहना चाहिए। यद्यपि सम्पर्क एक-मार्गीय होता है।
3. इस प्रणाली में गृहकार्यों को मुक्त रूप में दिया जाना चाहिए, जिसमें छात्र भी प्रश्न पूछ सकें तथा कठिनाइयों का समाधान भी प्राप्त कर सकें। इस क्रिया से छात्रों को अधिक उत्साह मिलता है। और अपनी अभिप्रेरणा को बनाये रखते हैं।

दूरवर्ती शिक्षा संस्थायें इन पूर्व आवश्यकताओं की व्याख्या नहीं कर पाती हैं। इन संस्थाओं में शिक्षकों तथा छात्रों के सम्पर्क को बनाया जा सके, ऐसी कोई व्यवस्था नहीं की जाती है। दूरवर्ती-शिक्षक तथा छात्र एक दूसरे से अपरिचित ही रहते हैं। दूरवर्ती-शिक्षक सदैव अपने शिक्षण को सार्थक बनाने का प्रयास करता है। पश्चिमी देशों में इस प्रकार की संस्थाओं में शिक्षक तथा छात्रों में पत्राचार के माध्यम से निरन्त सम्पर्क रखने का प्रयास किया जाता है।

गृह-कार्यों को जमा करना

छात्रों द्वारा गृहकार्यों को पूरा करके भेजने से यह प्रगट होता है कि वे अध्ययन में लगे रहते हैं। छात्र के कितने गृहकार्य भेजे हैं, इससे उसके अध्ययन के घण्टों का अभास होता है। गृहकार्यों की सघनता छात्र के अध्ययन का परिचायक है तथा छात्र एवं शिक्षक का सम्पर्क भी अधिक होता है। छात्रों की निष्पत्ति में वृद्धि होती है। कुछ शौध कार्यों के भी यह निष्कर्ष हैं। गृहकार्यों के माध्यम से छात्रों एवं शिक्षक के मध्य द्वि-मार्गीय सम्प्रेषण होता है। गृहकार्यों के पूरा करने के अधोलिखित लाभ होते हैं–

1. छात्रों को अध्ययन हेतु प्रोत्साहन मिलता है।
2. पाठ्यवस्तु की व्यवस्था भी समुचित ढंग से की जा सकती है।
3. छात्र पाठ्यक्रम के प्रति तत्पर रहता है।
4. छात्र का संस्था तथा शिक्षक से निकट सम्बन्ध होता है।
5. छात्र को अपने अध्ययन में सुधार का अवसर तथा निर्देशन मिलता है।
6. छात्र को पुनर्बलन मिलता है।
7. अध्ययन की समस्याओं एवं कठिनाइयों का समाधान मिलता है।
8. पाठ्यक्रम सम्बन्धी महत्वपूर्ण प्रकरणों की जानकारी हाती है।
9. पाठ्यवस्तु को दुहराने अथवा अभ्यास का अवसर मिलता है, जिससे बोधगम्यता होती है।
10. गृहकार्यों को लिखने से प्रश्नों के उत्तर लिखने का अभ्यास होता है। छात्रों की लिखने की गति में वृद्धि भी होती है।

पत्राचार द्वारा परामर्श

सबसे अधिक परामर्श प्रक्रिया पत्र व्यवहार से अधिक होती है। दूरवर्ती शिक्षा के लिए भी यह माध्यम सबसे अधिक उपयोगी है। अन्य माध्यमों द्वारा इतना सम्प्रेषण नहीं होता है। इसकी अपनी सीमायें हैं। इस परामर्श की प्रक्रिया धीमी गति से होती है। द्वितीय परामर्श प्रक्रिया एक-मार्गीय होती है। हाव-भाव की अभिव्यक्ति पत्र द्वारा सम्भव नहीं है, परन्तु परामर्शदाता को सोचने-विचारने को अधिक समय मिल जाता है।

नोट

दृश्य-श्रव्य कैसिट द्वारा परामर्श

आर्थिक कारणों से दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली में श्रव्य कैसिट्स का प्रयोग अधिक किया जाने लगा है। दृश्य-कैसिट्स का प्रयोग करने का भी प्रयास किया गया है। परामर्श की प्रक्रिया में भी इनका प्रयोग किया जाने लगा है। परीक्षा के सम्बन्ध में, गृह कार्य के सम्बन्ध में कैसिट्स तैयार तथा गृह कार्यों के सम्बन्ध में परामर्श दिया जाता है।

प्रसारण द्वारा परामर्श

दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली में प्रसारण के द्वारा भी परामर्श दिया जाता है। प्रसारण द्वारा परामर्श एक-मार्गीय होता है। अन्त:प्रक्रिया का अवसर नहीं होता है। छात्रों के अनुभवों तथा भावनाओं के सम्बन्ध में जानकारी दी जाती है इसमें समस्याओं के समाधान का अवसर नहीं होता है। व्यक्तिगत समस्याओं का समाधान नहीं हो पाता है।

कम्प्यूटर द्वारा परामर्श

क्षेत्रीय केन्द्रों पर कम्प्यूटर सेवायें भी उपलब्ध होती हैं। कम्प्यूटर के कार्यक्रमों में अन्त:प्रक्रिया सरलता से होती है। समस्याओं का समाधान भी किया जाता है। छात्र कम्प्यूटर द्वारा परामर्श अधिक प्रभावशाली होता है। नौकरियों सम्बन्धी सूचनाये छात्रों को दी जाती हैं। उच्च-शिक्षा के अध्यापकों, समाज कल्याण, वकील तथा सेवाओं के सम्बन्ध में जानकारी दी जाती है। छात्र इस पर मनोरंजन भी करते हैं, तथा यह उपयोगी अधिक है।

सहायक सम्प्रेषण

इस अध्याय में सहायक प्रणाली की छोटी-बड़ी समस्याओं तथा उनके महत्व का विवेचन किया है, परन्तु अधोलिखित समस्याओं तक ही सीमित रखा है–

दूरवर्ती शिक्षक के काय

दूरवर्ती शिक्षक को अधोलिखित कार्य करने की कुशलता होनी चाहिए–

1. दूरवर्ती-शिक्षक को अपने छात्रों को अभिप्रेरित करना चाहिए। पाठ्य-वस्तु सम्बन्धी हर प्रकार की सहायता करनी चाहिए।
2. दूरवर्ती-छात्रों को व्यक्तिगत रूप में निर्देशन तथा परामर्श देना चाहिए। उन्हें पृष्ठपोषण भी देना चाहिए।
3. दूरवर्ती-छात्र की सफलता पर प्रोत्साहित करना चाहिए। नवीन ज्ञान की उपयोगिता भी बतलानी चाहिए।
4. दूरवर्ती-छात्र के अकेलेपन को भी दूर करना चाहिए, ऐसी भावना विकसित की जाये कि वह यह अनुभव करने लगे कि शिक्षकों की पूरी सहानुभूति उनके साथ है।

छात्र क्रियाकलाप

1. दूरवर्ती-छात्र हेतु पुस्तकालय सेवाओं का वर्णन करें?

2. परामर्श के माध्यम की चर्चा करें?

सुना जा रहा है। परामर्शदाता में विश्वास की भावना विकसित होगी तथा परामर्शदाता उसके कथनों के आधार पर समस्या का निदान भी कर सकता है।

3. **स्वरूप विकसित करना:** सुनने के आधार पर कारणों को पहिचान लेगा, निदान हेतु अपनी क्रियाओं का स्वरूप विकसित करेगा। समुचित प्रारूप विकसित करने पर ही समस्या का समाधान किया जा सकता है।

नोट

परामर्शदात जो छात्र से प्रश्न करे वह प्रश्न स्पष्ट होने चाहिए। छात्रों की अनुक्रिया तथा उत्तरों का अनुमोदन करते रहना चाहिए। प्रश्नों के उत्तरों को चुप रहकर सुनते रहना चाहिए, अपितु साथ-साथ उनका अनुमोदन करते रहना आवश्यक होता है। सुनने की क्रिया में परामर्शदाता को अपनी प्रतिक्रिया भी करते रहना चाहिए। उदाहरण से अधिक स्पष्ट रूप में समझने का प्रयास करना चाहिए। प्रारूप में उसके प्रश्नों का उत्तर देना चाहिए तथा उसकी सभाओं का समाधान भी आवश्यक होता है।

इसके अन्तर्गत तीन क्रियायें करनी चाहिएं–स्पष्टीकरण किया जाये, तथा छात्र के उत्तरों की जाँच भी करते रहना चाहिए। बीच-बीच में कुछ प्रश्न भी किये जायें। छात्रों के विचारों से सहमति प्रकट करनी चाहिए, परन्तु स्वयं इनमें निष्कर्ष निकालने का प्रयास करना चाहिए। छात्र का साक्षात्कार भी किया जाना चाहिए।

परामर्श का माध्यम

परामर्श देन की प्रक्रिया दूरवर्ती-छात्रों की भिन्न प्रकार की होगी, क्योंकि इसमें अनेक प्रकार के माध्यमों का उपयोग किया जाता है। परामर्श के सम्बन्ध में तीन अवधारणायें हैं–

1. छात्र एवं परामर्शदाता के मध्य द्वि-मार्गीय सम्प्रेषण होता है।
2. परामर्श व्यक्तिगत रूप में दिया जाता है।
3. परामर्श का स्वपक्रम या तो परामर्शदाता या छात्र द्वारा किया जाता है।

इसके अतिरिक्त अन्य अवधारणायें भी होती हैं। यहाँ पर माध्यमों का उल्लेख किया गया है–

आमने-सामने का परामर्श

अब तक परामर्श के समबन्ध में जो कुछ कहा गया है वह इसी प्रकार के परामर्श प्रक्रिया में आता है। यह प्रक्रिया अधिक महँगी होती है, इसमें समय भी अधिक लगता है। यह सबसे महत्वपूर्ण परामर्श का माध्यम है।

सामूहिक परामर्श

जब किसी समूह की एक समस्या होती है तब इस माध्यम का प्रयोग किया जाता है। समूह में कितने ही छात्रों की संख्या हो सकती है। इसमें एक पर एक का नियम नहीं लागू होता है। इस माध्यम में उपरोक्त कौशलों की आवश्यकता होती है।

टेलीफोन द्वारा परामर्श

इसमें एक पर एक का नियम ही लागू होता है, परन्तु आमने-सामने की प्रक्रिया से भिन्न होता है। इसमें एक दूसरे को देख नहीं पाते। इसलिए मुख मुद्रा का सही अनुमान नहीं होता है। बात-चीत के आधार पर ही परामर्श दिया जाता है। कुछ बातें आमने-सामने पर होने पर भी नहीं हो पाती, जिन्हें टेलीफोन कहते हैं। इस माध्यम की लाभ हानि समान होती हैं।

के साथ समायोजन कर सके ताकि उसकी गहराई की खोज करना है। मानयवादी मनोविज्ञान सहायता करते हैं कि समस्या को समझकर उसका समाधान करते हैं।

नोट

मानयवादी मनोवैज्ञानिकों के कई समूह हैं जिनमें आपस में ही मतभेद है जिनमें प्रमुख हैं–रोगेरियन जिसके प्रवर्तक कार्ल रोजर्स हैं। यह सिद्धान्त बहुत सरल है इसे अप्रत्यक्ष-निर्देशन भी कहते हैं। बात-चीत के माध्यम से समस्या का स्पष्टीकरण किया जाता है। इससे परामर्श का कार्य किया जाता है। वह अपने ढंग से समस्या का उपचार करता है। इसके लिए विशिष्ट कौशल की आवश्यकता होती है।

परामर्शदाता की विशेषतायें

रोजर्स ने एक प्रभावशाली परामर्शदाता की विशेषताओं की पहिचान की है, जिनमें प्रमुख विशेषतायें हैं–सच्ची लगन, स्वीकृति, यर्थाथता तथा सहानुभूति।

सच्ची लगन

इसमें परामर्शदाता सच्ची लगन से छात्र का स्वागत करता है जिससे वह अपने महत्व को समझने लगे। बड़े उत्साह एवं प्रसन्न मुद्रा में स्वागत करना चाहिए। इस व्यवहार में स्वाभाविकता होनी चाहिए।

स्वीकृति

अन्य व्यक्तियों के विचारों तथा भावनाओं को भी स्वीकृति देनी चाहिए। आलोचना तभी करनी चाहिए जब उनकी भावनाओं तथा विचारों से हानि तथा कष्ट की सम्भावना हो।

यर्थाथता

परामर्शदाता के सुझाव में यर्थाथता होनी चाहिए। तथ्यों को स्पष्ट रूप में रखना चाहिए। बचाव पक्ष के रूप में नहीं रखना चाहिए। छात्र तथ्यों की यर्थाथता को समझ सकें तथा अनुभव भी करने लगें।

सहानुभूति

छात्र तथा अन्य व्यक्तियों की भावनाओं तथा अनुभवों को पूर्णरूप से सराहना करनी चाहिए। यहाँ सहानुभूति का अर्थ है कि दूसरे व्यक्तियों के अच्छे व्यवहारों की मुक्तण्ठ से प्रशंसा करनी चाहिए।

दूरवर्ती-शिक्षकों में यह गुण होते हैं। तब वे इस शिक्षा प्रणाली की ओर छात्रों को आकर्षित करते हैं। परामर्शदाता चुनौतियों को सहर्ष स्वीकार करता है।

परामर्शदाता के कौशल

साधारणत: एक कुशल परामर्शदाता में प्रमुख तीन कौशल होते हैं–चयन करना, सुनना तथा स्वरूप विकसित करना–

1. **चयन करना:** इस अवस्था में किस प्रकार की अनुक्रिया की जाये, इनके चयन का कौशल होना आवश्यक होता है, जिससे समुचित ढंग से परामर्श दिया जा सके।
2. **सुनना:** छात्रों के व्यवहारों, अनुक्रियाओं तथा कथनों को ध्यान से सुनना चाहिए, जिससे छात्र में यह भावना विकसित होगी कि हमारी बात को कितने ध्यान से

परम्परागत विश्वविद्यालयों की पुस्तकालय की सुविधा का लाभ छात्रों, शोधकर्त्ताओं तथा अध्यापक को ही दिया जाता है। जबकि दूरवर्ती संस्थाओं के पुस्तकालयों का लाभ हजारों विभिन्न वर्गों के छात्रों को लाभ मिलता है। केन्द्रीय पुस्तकालय को इसकी व्यवस्था हेतु अनेक चुनौतियों का सामना करना होता है। केन्द्रीय पुस्तकालय को छात्रों को सुविधाओं के साथ क्षेत्रीय पुस्तकालयों तथा अध्ययन केन्द्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति करनी होती है। कम स्रोत तथा साधनों में अधिकतम सेवायें प्रदान करनी होती हैं।

नोट

राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय मुक्त विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों को अधिक समस्याओं को हल करना पड़ता है। अध्ययन केन्द्रों की सुविधाओं को प्रारूप समुचित रूप में विकसित नहीं किया है। साधन सीमित हैं, स्थाई रूप से कर्मचारी नहीं है संस्थायें इसे आय का स्रोत मानती हैं। क्षेत्रीय तथा अध्ययन केन्द्र महाविद्यालों तथा शिक्षा संस्थाओं में स्थापित किये गये हैं। इस कारण इन केन्द्रों पर पर्याप्त स्थान नहीं है जिससे अध्ययन कक्ष तथा पुस्तकालय कक्ष की व्यवस्था की जा सके। इसके अतिरिक्त यहाँ पर स्थायी कार्यकर्त्ता भी नहीं होते हैं। जो छात्रों को अपेक्षित जानकारी तथा सूचना की जानकारी दे सकें। इसलिए पुस्तकालय तथा सूचना सेवाओं की व्यवस्था नहीं की जा सकती है। दूरवर्ती-छात्र जो आन्तरिक क्षेत्रों में रहते हैं उन्हें इन सुविधाओं का लाभ नहीं हो सकता है। भारत में विभिन्न भाषाओं के छात्र होते हैं। सभी भाषाओं में पुस्तकों को उपलब्ध नहीं कराया जा सकता है। मुक्त विश्वविद्यालयों के छात्रों की यह अपेक्षायें होती हैं कि अध्ययन सामग्री उन्हीं की क्षेत्रीय भाषा में भेजी जाये। विज्ञान, तकनीकी, प्रौद्योगिकी विषयों में अच्छी पुस्तकें क्षेत्रीय भाषा में उपलब्ध नहीं है।

परामर्श सेवाएँ

दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली के विकास की सहायक क्रिया परामर्श सेवायें होती हैं। मासलों के अनुसार परामर्श का अर्थ है–

1. "स्वयं तथा पर्यावरण के मध्य क्रमबद्ध खोज है जिसे परामर्शदाता स्वयं समझकर उसके व्यवहार परिवर्तन के लिए वैकल्पिक वातावरण के लिए परामर्श देता है। यह निर्णय या परामर्श ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्षों की समझ के आधार पर होता है"

इस खण्ड में परामर्श के सिद्धान्त, परामर्शदाता की विशेषताओं, कौशल, विधियों तथा परामर्श के माध्यमों का विवेचन किया गया है।

परमार्श के सिद्धान्त

सामान्य रूप से परामर्श मनोविज्ञान की एक शाखा है। एक डॉक्टर भी बीमार का मनोवैज्ञानिक उपचार भी करता है। सामान्य बीमारियों का उपचार मनोवैज्ञानिक ढंग से ही करता है। और मरीज ठीक हो जाता है। उपचार के सिद्धान्त की प्रकृति मनोविज्ञानिक तथा भौतिक दोनों ही होती हैं।

मनोवैज्ञानिक उपचार 'फ्राइड' ने सर्वप्रथम दिया था उसके मनोविश्लेषण सिद्धान्त पर आधारित है। बीमारियाँ अचेतन मस्तिष्क के दबाव का ही परिणाम होता है। आवश्यकताओं की सन्तुष्टि न होने का अचेतन में दब जाती हैं।

'मानवादी मनोविज्ञान' ने मनोविश्लेषण का खण्डन किया है मानवादी विचार-धारा के समर्थकों का कहना है। कि मनोवैज्ञानिक उपचार उसे इस योग्य बनाता है कि यह वातावरण

नोट

सूचना सेवाओं की आवश्यकता

दूरवर्ती शिक्षा में छात्रों के लिए सभी प्रकार की सूचनाओं की व्यवस्था पुस्तकालय में होनी चाहिए। पुस्तकालय अध्यक्ष प्रशिक्षित होना चाहिए, जिससे पुस्तकालय में उपलब्ध साहित्य की व्यवस्थ समुचित ढंग से कर सके। पुस्तकालय के कर्मचारियों को सभी सूचनायें देने की योग्यता होनी चाहिए।

1. सन्दर्भ पुस्तकों की सूची पुस्तकें, पत्र-पत्रिकायें, अमुद्रित-सामग्री, कैसिट्स,
2. स्वत: अध्ययन अनुदेशन सामग्री, बहु माध्यम सामग्री तथा प्रशिक्षण की सुविधायें।
3. विभिन्न प्रकार की संस्थाओं सम्बन्धी सूचनायें जो शिक्षा तथा प्रशिक्षण देती है।, तथा
4. केन्द्रीय क्षेत्रीय तथा अध्ययन केन्द्रों सम्बन्धी सूचनायें तथा निर्देशन व परामर्श सेवाओं सम्बन्धी सूचनायें, ग्रीष्म कालीन विद्यालय, पुस्तकालय तथा प्रयोगशाला सम्बन्धी सूचनाओं की सुविधा होनी चाहिए।

उपयोग हेतु सेवाओं की आवश्यकता

प्रौढ़ तथा स्वाध्याय करने वाले छात्रों को व्यवसाय सम्बन्धी निर्देशन की आवश्यकता होती है। इस प्रकार की सुविधायें भी पुस्तकालय में उपलब्ध होनी चाहिए–

1. पुस्तकालय के संकलन का उपयोग करना,
2. पुस्तकालय की उपलब्ध सामग्री का उपयोग करने की सुविधा होना,
3. शिक्षण सहायक सामग्री का चयन करना,
4. सिखाने का नियोजन करना,
5. अध्ययन कौशल तथा स्वाध्याय का उपयोग करना।

इन क्रियाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पुस्तकालय के कर्मचारियों के सहयोग की आवश्यकता होती है। पुस्तकालयाध्यक्ष को अनुदेशन सामग्री तथा व्याख्यानों की व्यवस्था समुचित ढंग से करनी चाहिए। पुस्तकालय के उपयोग सम्बन्धी निर्देशन भी छात्रों को दिये जायें। पोस्टर, नियमावली को सूचनापट्ट पर लगा देना चाहिए। छात्रों को पुस्तकालय के उपयोग हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए।

दूरवर्ती-छात्र हेतु पुस्तकालय सेवाएँ

दूरवर्ती छात्रों के लिए पुस्तकालय तथा सूचना सेवाओं की सुविधा की व्यवस्था होना अधिक महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि ऐसी ही सुविधायें नियमित छात्रों के लिए अलग होती हैं। विभिन्न दूरवर्ती शिक्षा विश्वविद्यालयों की पुस्तकालय नीति अलग-अलग होती हैं। भारत में 40 से अधिक विश्वविद्यालयों में पत्राचार-शिक्षा की व्यवस्था की जाती है, परन्तु किसी भी विश्वविद्यालय में बाहरी छात्रों को पुस्तकालय की सुविधा नहीं है। दक्षिणी-अफ्रीका तथा इंग्लैण्ड में पुस्तकालय की सुविधा दूरवर्ती-छात्रों को दी जाती हैं। आस्ट्रेलिया तथा दक्षिणी प्रशांत महासागर के महाद्वीपों में पुस्तकालय की सुविधा नियमित छात्रों की भाँति दी जाती है। भारतीय मुक्त विश्वविद्यालयों में छात्रों को डाक द्वारा पुस्तकें उधार लेने की व्यवस्था की गई है। कुछ विश्वविद्यालयों में फोटो कापी की सुविधा है। इसके लिए छात्रों से कोई अतिरिक्त फीस नहीं ली जाती है। कुछ संस्थायें अध्ययन केन्द्र के समीप की सरकारी पुस्तकालय का भी उपयोग करते हैं। थाइलैण्ड (श्याम) में दूरवर्ती-छात्रों को पुस्तकालय तथा सुचना सेवाओं की सुविधायें अधिक प्रसिद्ध हैं।

छात्र क्रियाकलाप

1. अध्ययन केन्द्रों की विशेषताएँ बतायें?

2. दूरवर्ती-छात्रों को पुस्तकालय की आवश्यकता की चर्चा करें?

सिखाना तथा ज्ञान प्रदान करना है। जिसमें नवीन सम्प्रेषण साधनों का उपयोग होता है। इस प्रणाली में ऐसे दूरवर्ती-छात्रों को उच्च शिक्षा ग्रहण का अवसर दिया जाता है। जो किसी कारण से वंचित रह गये।

नोट

पुस्तकालय का उद्देश्य

पुस्तकालय के प्रमुख उद्देश्य अधोलिखित हैं–

1. विभिन्न विषयों सम्बन्धी पुस्तकों तथा अन्य साहित्य का संकलन करना, जिससे छात्रों की अध्ययन सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति की जा सके।
2. छात्रों को अध्ययन की सुविधायें प्रदान करना, छात्रों को पुस्तकों तथा अन्य साहित्य को घर के लिए पढ़ने हेतु अवदान की व्यवस्था हो।
3. दूरवर्ती शिक्षा की पुस्तकों का संकलन करना तथा अन्य साहित्य पत्र-पत्रिकाओं तथा सन्दर्भ पुस्तकों केन्द्रीय तथा क्षेत्रीय स्तर पर छात्रों को अध्ययन हेतु उपलब्ध करना।
4. छात्रों को व्यवसाय सम्बन्धी विज्ञापन तथा छात्रों के भावी जीवन और रूचियों से सम्बन्धित पुस्तकों को उपलब्ध कराना। मुक्त विश्वविद्यालय तथा दूरवर्ती-शिक्षा सम्बन्धी साहित्य भी होना चाहिए।

दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली में केन्द्रीय पुस्तकालय मुख्यालय पर होना चाहिए। इसके अलावा क्षेत्रीय पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों पर पुस्तकालय की सुविधा होनी चाहिए। इसके लिए नियमित संस्थाओं का भी सहयोग लिया जा सकता है।

दूरवर्ती-छात्रों को पुस्तकालय की आवश्यकता

दूरवर्ती-छात्र स्वत:अभिप्रेरित होता है, प्रौढ़ तथा परिपक्व होता है और विभिन्न सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा भाषाओं से सम्बन्धित होता है। दूरवर्ती छात्रों की आयु, शैक्षिक योग्यताओं, अभिरुचियों, अभिवृत्तियों तथा मूल्यों में भारी विविधता होती हैं। अधिकांश छात्र सेवारत, विवाहित, घरेलू महिलायें होती हैं। इसलिए अध्ययन की क्रियायें अंश कालिक होती हैं। जब उन्हें समय मिलता है। दूरवर्ती-अध्ययन केन्द्रों पर समूह में अध्ययन का अवसर कुछ समय के लिए मिल जाता है। उनके अध्ययन के ढंगों में भारी विषमता होती हैं छात्रों की विषमताओं की दृष्टि से पुस्तकालयों में तीन प्रकार की अध्ययन सामग्री होनी चाहिए।

पाठ्यवस्तु तथा सुविधाओं की आवश्यकता

दूरवर्ती छात्र को आवश्यकता पाठ्यवस्तु सम्बन्धी पुस्तकों तथा अन्य साधनों की सुविध ा की होती हैं उन्हें जो पाठ्यवस्तु सामग्री भेजी जाती है वह अपने पर्याप्त होती है। फिर भी उन्हें अतिरिक्त सामग्री तथा अध्ययन की आवश्यकता होती है। दूरवर्ती छात्रों को अधोलिखित सामग्री तथा सुविधाओं की आवश्यकता होती है–

1. सन्दर्भ पुस्तकें तथा पाठ्य-पुस्तकें,
2. स्वाध्याय अनुदेशन सामग्री तथा पाठ्य सम्बन्धी अध्ययन सामग्री,
3. दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री तथा अमुद्रित सामग्री,
4. रिकॉर्डस दृश्य तथा श्रव्य दोनों प्रकार के, तथा
5. छात्रों को बैठकर पढ़ने का कमरा तथा कैसिट आदि देखने के लिए अलग से कमरा होना चाहिए।

अध्ययन केन्द्रों पर इस प्रकार की सुविधाओं के सम्बन्ध में यह सुनिश्चत नहीं कर सकते कि सभी दूरवर्ती छात्र इन स्रोत तथा साधनों का लाभ उठा सकेंगे, क्योंकि छात्रों को यातायात, रहने तथा बैठने आदि की व्यवस्था स्वयं करनी होगी। यदि वे सेवारत हैं तब दूरी के छात्रों को अवकाश लेना होगा। इस प्रकार के अध्ययन केन्द्र के समीपवर्ती-छात्र ही पूरा-पूरा लाभ उठा सकते हैं।

नोट

अन्य छात्रों से सम्पर्क

औपचारिक शिक्षा के छात्रों का आपस में सम्पर्क निरन्तर बना रहता है और एक-दूसरे को अध्ययन में कई प्रकार से सहायता करते रहते हैं। छात्रों के आपसी सम्पर्क से उनके अनुभवों में वृद्धि होती है। तथा आत्म विश्वास का विकास होता है। परीक्षा की तैयारी तथा गृह-कार्यों को पूरा करने में भी सहायता मिलती है। दूरवर्ती-छात्र आपसी सम्पर्क तथा अन्त:प्रक्रिया से वंचित रहता है। यह सुविधा तथा अवसर अध्ययन केन्द्रों पर उन्हें मिल पाता है। इसके अतिरिक्त थोड़े समय के लिए व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम में अन्त:प्रक्रिया होती है। इसलिए छोटे समूह बनाकर वाद-विवाद की व्यवस्था करनी चाहिए। जिससे आपस में अन्त: प्रक्रिया थोड़े समय में भी अधिक हो सके, क्योंकि बड़े समूह में अन्त:प्रक्रिया सम्भव नहीं होती है।

इस सन्दर्भ में यह कहना उचित होगा कि छात्रों को छोटे समूह में स्वयं सहायता करनी होती है। बिन शिक्षक के भी आपस में पाठ्य-वस्तु सम्बन्धी कठिनाइयों तथा समस्याओं की चर्चा करते हैं। इस प्रकार वे परस्पर सम्पर्क से अधिक सीखते हैं। शिक्षक को इस प्रकार के समूहों के महत्व को आरम्भ में ही बतला देना चाहिए।

प्रशासनिक क्रियायें

अध्ययन केन्द्रों की शैक्षिक क्रियाओं तथा साधनों का वर्णन किया गया, परन्तु केन्द्रों के संचालन हेतु प्रशासनिक क्रियाओं का विशेष महत्व है। दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं की प्रशासनिक क्रियाओं में भिन्नता अधिक होती है। प्रशासनिक क्रियायें केन्द्रीय तथा क्षेत्रीय स्तर पर की जाती हैं। स्थानीय अध्ययन केन्द्रों पर छात्रों से सम्बन्धित रिकॉर्ड रखा जाता है। छात्रों का नामांकन भी करते हैं। स्थानीय छात्रों को अध्ययन सम्बन्धी सामग्री का वितरण करते हैं। कार्य संचालन के लिए स्थानीय शिक्षकों की नियुक्तियाँ भी करते हैं तथा परीक्षा की भी व्यवस्था करते हैं।

अध्ययन केन्द्रों पर परामर्श सेवायें

अध्ययन केन्द्रों पर कई प्रकार की क्रियायें की जाती हैं। एक या दो सप्ताह सम्पर्क के बाद छात्र जब वह अपने घर लौटता है तब उसे कई प्रकार के सुझाव तथा परामर्श दिया जाता है। अध्ययन केन्द्रों पर दूरवर्ती-छात्रों को सभी प्रकार के निर्देशन तथा परामर्श की सेवाओं की व्यवस्था की जाती है। विषय विशेषज्ञों द्वारा अध्ययन कौशल, सूचनाओं सम्बन्धी सहायता दी जाती है। अध्ययन केन्द्रों पर सम्पर्क-कार्यक्रम जैसा वातावरण रखा जाता है। दूरवर्ती-छात्रों को सीखने के अवसर दिये जाते हैं। विभिन्न माध्यमों को प्रयोग किया जाता है।

दूरवर्ती शिक्षा के पुस्तकालय

दूरवर्ती शिक्षा तीसरी सहायक क्रिया पुस्तकालय की सुविधा है। शैक्षिक विकास हेतु पुस्तकालय का उपयोग शक्तिशाली उपकरण है। दूरवर्ती शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य छात्रों को

के अनुभव के आधार पर विवरण देता है। स्थानीय शिक्षक को छात्रों की कठिनाइयों तथा समस्याओं का ही ज्ञान होता है, क्योंकि छात्रों की संख्या अधिक होती है और समय कम होता है। इसलिए छात्र एवं शिक्षक सम्पर्क अनौपचारिक तथा कभी-कभी ही होता है।

नोट

स्रोतां का उपयोग

अध्ययन केन्द्रों को शिक्षण सामग्री से सुसज्जित करना अधिक महंगा होता है। इसलिए अध्ययन केन्द्रों पर कम से कम आवश्यक शिक्षण सामग्री की व्यवस्था की जाती है। दूरवर्ती-छात्रों को पाठ्य-पुस्तकें, दूरदर्शन तथा रेडियो की सुविधायें उपलब्ध होनी चाहिए। इनकी सुविधा अध्ययन केन्द्रों पर भी उपलब्ध कराई जा सकती है, परन्तु छात्रों की उपस्थिति अनिवार्य की जा सकती है, क्योंकि दूरदर्शन के कार्यक्रमों के समय उन्हें वहाँ उपस्थित रहना चाहिए, तभी माध्यमों का लाभ मिल सकता है। छात्र के लिए इसका विकल्प भी तैयार किया जा सकता है। पाठ्य-सामग्री का प्रारूप नए ढंग से तैयार किया जा सकता है।

अध्ययन केन्द्र छात्रों के लिए वैकल्पिक व्यवस्था भी करते हैं। इसलिए छात्रों हेतु अतिरिक्त स्रोत कहते हैं। दूरवर्ती-छात्रों को अध्ययन सामग्री जो घर पर भेजी जाती है। उसके लिए अध्ययन केन्द्र पूरक सामग्री का कार्य करते हैं।

प्रथम अतिरिक्त स्रोत साधन पाठ्यक्रम के सम्बन्धित होते हैं, जो पाठ्य-सामग्री घर पर भेजी जाती है। उसकी पूरक होती है। जिससे छात्रों के अध्ययन की अतिरिक्त आवश्यकताओं की पूर्ति होती है या जिनकी शिक्षकों द्वारा संस्तुति की जाती है, जो उनसे सम्बन्धित होती है या जिनकी शिक्षकों द्वारा संस्तुति की जाती है। अध्ययन केन्द्रों पर पुस्तकालय की सुविधा होनी चाहिए और इस प्रकार की सहायक पुस्तकों को रखा जाए। छात्रों को बैठकर पढ़ने की सुविध ा भी दी जानी चाहिए। अध्ययन केन्द्रों पर महत्वपूर्ण पुस्तकों को रखा जाए, जिन्हें विश्वविद्यालय स्तर पर पढ़ाया जाता है। दूरवर्ती-छात्र जो आन्तरिक क्षेत्रों में रहते हैं, और पुस्तकें तथा पुस्तकालय देखने का कभी अवसर नहीं मिलता है। पुस्तकों का मूल्य भी अधि क होता है, इसलिए अध्ययन केन्द्रों की पुस्तकालय में इन्हें उपलब्ध कराया जाए। छात्रों को भेजी जाने वाली पाठ्य-सामग्री इस दृष्टि से पूर्ण होनी चाहिए, जिससे छात्रों को अतिरिक्त अध्ययन की आवश्यकता कम से कम हो।

अध्ययन केन्द्रों पर रिकॉर्डिंग की भी सुविधा होनी चाहिए, जिन पाठ्यक्रमों को दूरदर्शन तथा रेडियो से प्रसारण किया जाता है, उनका रिकॉर्डिंग कर लिया जाए और आवश्यकता पड़ने पर छात्रों को पुनः दिखाया या सुनाया जा सकता है। जो छात्र वंचित रह गये, उन्हें भी उसका लाभ दिया जा सके। कुछ पाठ्क्रमों के लिए विशिष्ट सामग्री की आवश्यकता होती है, उसे भी अध्ययन केन्द्रों पर उपलब्ध होनी चाहिए। विज्ञान विषयों के लिए प्रयोगशाला होनी चाहिए।

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी पाठ सामग्री होनी चाहिए, जो छात्र के भावी जीवन के लिए उपयोगी होती हैं, जिससे छात्र अपनी अभिरुचि तथा अभिवृत्तियों को विकसित कर सकें। छात्र अपने भावी जीवन के सम्बन्ध में निर्णय ले सकें। इसके लिए सामान्य व्यावसायिक सन्दर्भ पुस्तकें तथा अन्य विज्ञापनों सम्बन्धी सूचनायं भी रखी जायें, जिससे वे आवेदन कर सकें। इसके अतिरिक्त आगामी कक्षाओं के लिए पाठ्यक्रमों का चुनाव कर सकें। पुस्तकालय से छात्रों को पुस्तकें घर पढ़ने के लिए देने की भी सुविधा भी होनी चाहिए। पुस्तकालय में छात्रों हेतु पुस्तकों के अवदान की सुविधा हो।

है या अन्य माध्यमों द्वारा प्रस्तुत किया है।

सम्पर्क कार्यक्रम के शिक्षण में गृह-कार्यों के उत्तर किस प्रकार लिखें जायें, यह भी स्पष्ट किया जाता है। परीक्षा सम्बन्धी प्रश्नों को किस प्रकार लिखा जाये। इस प्रकार की जानकारी भी शिक्षण द्वारा छात्रों को दी जाती है, परन्तु किसी प्रश्न के उत्तर का मॉडल नहीं दिया जाता है। इस प्रकार के निर्देशन से अध्ययन कौशल का विकास होता है।

नोट

माध्यमों के द्वारा कुछ प्रकरणों का प्रस्तुतीकरण कठिन होता है, ऐसे प्रकरण के लिए शिक्षण आवश्यक हो जाता है। शिक्षण द्वारा भावात्मक अध्ययन को बढ़ावा मिलता है, जो अन्य माध्यमों द्वारा सम्भव नहीं होता है। शिक्षण द्वारा अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास किया जाता है। अध्यापक-छात्रों की अन्त:प्रक्रिया द्वारा छात्रों के भावात्मक पक्ष का विकास किया जाता है; जिन तथ्यों का स्पष्टीकरण अनुदेशन सामग्री से नहीं होता है, उन्हें प्रयोग द्वारा तथा प्रदर्शन के द्वारा स्पष्ट किया जाता है, परन्तु दूरदर्शन माध्यम से भी प्रदर्शन किया जा सकता है, परन्तु यह सुविधायें सभी दूरवर्ती-छात्रों को उपलब्ध नहीं होती हैं। इसलिए शिक्षण द्वारा इनकी पूर्ति की जाती है। अनुभवी छात्रों की चर्चा की जाती है। गृह-कार्यों सम्बन्धी समस्याओं पर भी चर्चा की जाती हैं प्रयोग-प्रदर्शन का विवरण सोपान के क्रम में किया जाता है। प्रवचन-विधि का भी अनुसरण किया जाता है। इसमें छोटे समूहों को रखा जाता है। छात्र अध्ययन के परस्पर भी एक दूसरे की सहायता करते हैं। इस प्रकार की क्रियाओं को शिक्षक प्रोत्साहित करता है।

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण के समय यह सभी क्रियायें करनी होती हैं। शिक्षण से पूर्व छात्रों की उपस्थिति भी ली जानी चाहिए, जो छात्र नियमित रूप से कक्षा में उपस्थित नहीं रह सकते हैं, उन्हें अन्य विकल्प से सहायता देनी चाहिए।

शिक्षण में माध्यमों का उपयोग

कुछ दूरवर्ती शिक्षा संस्थायें शिक्षण में अन्य माध्यमों का भी प्रयोग करते हैं। केसिट का प्रयोग अधिक किया जाने लगा है। इसे शिक्षा की शक्तिशाली विधि मानते हैं, क्योंकि यह छात्रों के नियन्त्रण में होते हैं, इन्हें जब चाहे सुविधानुसार प्रयोग करते हैं।

अध्ययन केन्द्रों को इस प्रकार स्रोत तथा माध्यमों की जानकारी होनी चाहिए। इसके लिए प्रशिक्षण की तथा निर्देशन की आवश्यकता होती है। इस प्रकार के माध्यमों का उपयोग सेमीनार तथा सामूहिक वाद-विवाद में किया जा सकता है, इन्हें जब चाहे तब बन्द कर सकते हैं तथा आवश्यकतानुसार पुनरावृत्ति भी की जा सकती है। इन माध्यमों का उपयोग प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है। इनका उपयोग स्थानीय शिक्षकों द्वारा किया जा सकता है। पर्यवेक्षक स्वयं भी सीख सकता है और सामूहिक वाद-विवाद की व्यवस्था कर सकते हैं।

व्यक्तिगत शिक्षण

दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली में पत्राचार के माध्यम से व्यक्तिगत सम्पर्क ही होता है, विशेष रूप से जब शिक्षक गृह-कार्यों की जाँच करता है। पत्राचार से पृष्ठपोषण देना महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है। पत्राचार में शिक्षण उत्तम प्रकार का होना चाहिए, क्योंकि दूरवर्ती शिक्षा संस्थायें इस पर अधिक ध्यान देती हैं। पत्राचार-शिक्षा में इस तथ्य का विवेचन किया गया है।

पत्राचार का शिक्षक स्थानीय अध्ययन केन्द्र पर कार्य करता है, इसलिए छात्रों से सम्पर्क भी होता है। साधारणत: यह अन्य शिक्षकों से भिन्न प्रकार के होते हैं। इसका अर्थ यह होता है कि जब छात्र शिक्षक से व्यक्तिगत जानकारी चाहता है, तब वह अपने व्यक्तिगत सम्पर्क

कठिनाई नहीं होती है, फिर भी दूरवर्ती-छात्रों को अध्ययन केन्द्रों की सुविधा देना आवश्यक होता है। अध्ययन केन्द्रों तथा साधनों की व्यवस्था में आर्थिक पक्ष को भी ध्यान में रखा जाता है। केन्द्रों के निर्धारण में आर्थिक पक्ष प्रमुख मानदण्ड होता है।

नोट

अध्ययन केन्द्रों के कार्य

अध्ययन केन्द्रों के कार्य, परम्परागत शिक्षा से बिल्कुल भिन्न प्रकार के होते हैं। एक अच्छी दूरवर्ती शिक्षा संस्था की प्रमुख विशेषता यह होती है कि परम्परागत शिक्षण के समान अध्ययन के अवसर दे सकें, परन्तु इस शिक्षण में सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु का अध्ययन नहीं किया जाता है, अपितु कुछ चुने हुए ही प्रकरणों का शिक्षण किया जाता है, अधिकांश समय शिक्षण के अतिरिक्त क्रियाओं में किया जाता है। दूरवर्ती शिक्षा में अध्ययन केन्द्रों की एक क्रिया शिक्षण की होती है, जबकि परम्परागत में शिक्षण ही प्रमुख क्रिया होती है, अन्य क्रियायें गौण मानी जाती हैं। इस प्रकार शिक्षण एक प्रमुख मानी जाती है।

शिक्षण समूह

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण की क्या आवश्यकता है? जबकि पाठ्यवस्तु सामग्री इस प्रकार लिखी जाती है, जिससे छात्र की अध्ययन सम्बन्धी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। शिक्षण एक अतिरिक्त क्रिया है, जो अध्ययन की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण होती है। इसकी पाँच प्रमुख विशेषतायें होती हैं–

1. शिक्षण से अध्ययन कौशल का विकास होता है, जो दूरवर्ती-छात्रों के लिए अधिक आवश्यक होती है।
2. पाठ्यवस्तु सम्बन्धी कठिनाइयों तथा समस्याओं का समाधान किया जाता है, जिससे विषय को अधिक बोधगम्य किया जाता है।
3. छात्रों को प्रयोगात्मक कार्य का अवसर दिया जाता है।
4. छात्रों को समूह में रहकर अध्ययन का अवसर मिलता है।
5. व्यक्तिगत शिक्षण भी किया जाता है भावात्मक पक्षों का विकास शिक्षण के सम्पर्क से ही होता है। अनुदेशन सामग्री से नहीं किया जाता है।

अध्ययन केन्द्रों पर सेमीनान तथा सामूहिक वाद-विवाद की व्यवस्था की जाती है। छात्रों को अध्ययन में आत्म-विश्वास का विकास होता है, कि वे कुछ कर रहे हैं, वह बिल्कुल ठीक है। छात्रों में उत्साह बढ़ाता है, पुनर्बलन दिया जाता है, पृष्ठपोषण मिलता है। शिक्षण द्वारा छात्रों को अध्ययन सम्बन्धी निर्देशन तथा परामर्श भी दिया जाता है।

अध्ययन केन्द्रों पर छात्रों के समूहों के बनाने में उनकी कठिनाइयों तथा समस्याओं को ध्यान में रखा जाता है। समूहों में इस प्रकार की सजातीयता रखी जाती है। कमजोर छात्रों को अधिक सहायता की आवश्यकता होती है। छात्रों की आयु-वर्ग को विशेष महत्व दिया जाता है। प्रौढ़ छात्रों का समूह बनाया जाता है, क्योंकि सीखने तथा अध्ययन की क्रियायें भिन्न होती हैं। युवा छात्रों में अभिप्रेरणा की कमी होती है, उन्हें अध्ययन के लिए अभिप्रेरित करना होता है। प्रौढ़ छात्रों में स्वत: अभिप्रेरणा अधिक होती है। सम्पर्क कार्यक्रम द्वारा उनकी अभिप्रेरणा को बनाए रखना होता है।

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण में अतिरिक्त पाठ्य-सामग्री का प्रस्तुतीकरण नहीं किया जाता है, अपितु उसी पाठ्य सामग्री को पढ़ाया जाता है जिसे पाठ्य-सामग्री के रूप में उन्हें भेजा

आवश्यकता होती है। अध्यापकों को स्थानीय परिसर से नियुक्त करना चाहिए। जिससे उन्हें आवश्यकता के समय बुलाया जा सके। शिक्षा-संस्था के योग्य अध्यापकों को पारिश्रमिक के रूप मे काम दिया जाए, जिससे अधिक रुचि लेंगे। जिन विषयों के अध्यापक उपलब्ध न हों, उन्हें बाहर से आमन्त्रित किया जा सकता है। या सेवा निवृत्त अध्यापकों को अंशकालिक नियुक्तियां की जा सकती हैं।

नोट

योग्य शिक्षकों तथा विशेषज्ञों की नियुक्तियों से व्यय अधिक होता है। इसे कम करने के लिए पर्यवेक्षक कार्य हेतु स्थानी शिक्षकों से काम लिया जा सकता है। इन अध्यापकों से कई कार्य लिये जा सकते हैं, शिक्षण, पर्यवेक्षण, तथा गृह-कार्यों की जाँच भी कराई जा सकती है, सामूहिक वाद-विवाद में भी काम कर सकते हैं स्थानीय अध्यापकों को सूक्ष्म प्रशिक्षण देना चाहिए, जिससे कार्यक्रम से अवगत हो सकें तथा अपनी भूमिका तथा उत्तरदायित्वों को भी समझ सकें। इनका प्रमुख काम्र सहायक रूप में होना चाहिए। शिक्षकों को पाठ्यवस्तु का स्वामित्व होना आवश्यक होता है, साथ ही अपने शिक्षण-विषय के उद्देश्यों की भी जानकारी होनी चाहिए। दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं को अपनी एक परिनियमावली भी तैया करनी चाहिए, जिसमें क्रियाओं, भूमिका तथा उत्तरदायित्वों की जानकारी दी गई हो। शैक्षिक रेड़ियों कार्यक्रमों की भी व्यवस्था करनी चाहिए। औपचारिक शिक्षक की अपेक्षा दूरवर्ती-शिक्षक को अधिक उत्तरदायित्वों को निभाना होता है।

उच्च-शिक्षा की संस्थाओं को यह कठिनाई होती है, उन्हें योग्य तथा विशेषज्ञों के द्वारा ही कार्य होता है। उच्च-शिक्षा प्राप्त शिक्षक ही अध्यापन कार्य कर सकता है तथा पाठ्य-सामग्री को लिख सकता है। वास्तव में उच्च-शिक्षा में समुचित निर्देशन, पर्यवेक्षण तथा परामर्श योग्य शिक्षकों की आवश्यकता होती है।

अध्ययन केन्द्रों पर सहायक कर्मचारियों की भी आवश्यकता होती है। जैसे रिकॉर्ड के लिए लिपिक, प्रयोगशाला के लिए तकनीशियनों की आवश्यकता होती है, इन्हें भी शिक्षण संस्था से ही लिया जाता है।

अध्ययन केन्द्रों की विशेषताएँ

अध्ययन केन्द्रों की स्थापना इसलिए की जाती है, जिससे दूरवर्ती-छात्रों को अध्ययन की सुविधायें दी जा सकें। यह भी सहायक प्रणाली का अंग माना जाता है। इस प्रकार के केन्द्रों को शिक्षा संस्थाओं में भी स्थापित किया जाता है। जिससे दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं को कम व्यय करना होता है। अध्यापक केन्द्रों की विशेषतायें अधोलिखित होती हैं–

1. स्थानीय शिक्षा संस्थाओं में अध्ययन केन्द्र स्थापित किए जाते हैं, जिससे अध्ययन का वातावरण भी छात्रों को दिया जा सके।
2. शिक्षण सामग्री की सुविधायें भी सुगमता से मिल जाती हैं।
3. विभिन्न विषयों के शिक्षक तथा विशेषज्ञ भी उपलब्ध हो जाते हैं।
4. अध्ययन केन्द्रों के खुलने का समय, अवकाश के दिनों में तथा सायंकाल का होता है।
5. दूरवर्ती छात्रों को सरलता से मिल जाता है। खोजने में कठिनाई नहीं होती है।

इस विवरण से विदित होता है कि अध्ययन केन्द्रों को स्थान के निर्धारण में, शिक्षण-सामग्री की व्यवस्था में तथा शिक्षकों तथा अन्य कर्मचारियों की व्यवस्था में अधिक

नोट

यें उपलब्ध नहीं होती हैं। सामान्यत: अधोलिखित शिक्षण-सामग्री अध्ययन केन्द्रों पर सुलभ होनी चाहिएं–

1. पाठ्य पुस्तकें तथा सहायक पुस्तकें तथा सन्दर्भ पुस्तकें उपलब्ध हों,
2. विज्ञान तथा तकनीकी प्रयोगशाला विषयों के अनुसार उपलब्ध हों,
3. दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्र, रेडियों, दूरदर्शन भाषा प्रयोगशाला की सुविधा हो,
4. अन्य सूचनाओं सम्बन्धी सामग्री का होना,
5. कार्यालय सम्बन्धी सामग्री का होना।
6. कक्षा-शिक्षण की सामग्री आदि का उपलब्ध होना,
7. स्टेशनरी तथा कार्यालय सम्बन्धी सामग्री का होना,
8. फोटो कॉपियर की सुविधायें आदि उपलब्ध होना।

अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त में से कुछ ही सामग्री उपलब्ध होती है, परन्तु न्यूनतम शिक्षण सामग्री उपलब्ध होनी चाहिए जो अधिकांश छात्रों के लिए उपयोगी होती है। सभी सामग्री का उपयोग कुछ ही छात्र करते हैं। न्यूनतम सामग्री में शिक्षण-कक्ष, मेज, कुर्सी, श्यामपट्, चाक तथा डस्अर होना चाहिए। अध्ययन केन्द्र पर विशिष्ट सामग्री में पाठ्य-पुस्तकें, दृश्य-श्रव्य सामग्री, मानचित्र आदि की सुविधा भी होनी चाहिए।

इसके अतिरिक्त शिक्षण सामग्री को होना कठिन होता है। उसके लिए वित्तीय साधन तथा विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है, क्योंकि अध्ययन केन्द्र के साथ इन्हें स्रोत केन्द्र का भी कार्य करना होता है। पुस्तकालय तथा प्रयोगशाला की भी सुविधायें उपलब्ध होनी चाहिएं। औपचारिक शिक्षा संस्थाओं की अध्ययन सामग्री का उपयोग किया जा सकता है, जो मित्तव्ययी होता है। ग्रामीण अध्ययन केन्द्रों की अपेक्षा नगरीय अध्ययन केन्द्रों पर अध्ययन सामग्री सरलता से उपलब्ध हो जाती है, और दूरवर्ती-छात्रों को आकर्षित करती हे। ग्रामीण अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त सुविधायें उपलब्ध नहीं होती तथा छात्र भी आकर्षित नहीं होते हैं। इस प्रकार सभी अध्ययन केन्द्रों पर समान अध्ययन सुविधायें उपलब्ध नहीं होती हैं।

अध्ययन सामग्री के भण्डारण की समस्याएँ

अध्ययन केन्द्रों में शिक्षण सामग्री का अक्सर अभाव होता है, क्योंकि भण्डारण की समस्या होती है। इसलिए अध्ययन सामग्री को किराये पर लाना होता है, जिसमें व्यय अधिक होता है। अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त सभी सामग्री उपलब्ध होनी चाहिए, तब अधिक किराया देना होगा, यह स्थायी व्यय हो जायेगा। इसका दूसरा विकल्प यह है कि प्रमुख केन्द्रों पर अध्ययन सामग्री का भण्डारण किया जाये और आवश्यकता के समय अन्य केन्द्रों को दे दिया जाये। इस प्रक्रिया में यातायात पर व्यय आवश्य करना होगा जो पहले की अपेक्षा कम होगा। अध्ययन सामग्री का भण्डारण केन्द्र पर किया जाये और आवश्यकता के समय अन्य केन्द्रों को दिया जाये। अध्ययन सामग्री के भण्डारण के लिए स्थान तथा कमरों की सुविधा होनी चाहिए।

शिक्षक तथा अनय कर्मचारी

दूरवर्ती शिक्षा संस्थायें अंशकालिक कर्मचारियों से अध्ययन केन्द्रों पर काम चलाती हैं। सर्वप्रथम संयोजक प्रशासक तथा पर्यवेक्षक की आवश्यकता होती है। संयोजक को अध्ययन केन्द्र के समीप ही रहना चाहिए। शिक्षण कार्य तथा सेमिनार के लिए अध्यापकों की

कौशल, कठिनाइयों का निराकरण तथा पृष्ठपोषण व अभ्यास इन्हीं केन्द्रों पर किया जाता है। अध्यापक छात्रों से अपनी टिप्पणियों के सम्बन्ध में ज्ञात करते हैं कि छात्रों की क्या प्रतिक्रिया है? इसके आधार पर शिक्षक छात्रों को परामर्श देते हैं। सम्पर्क कार्यक्रम के समय छात्रों की सहायता करते हैं। नियमित छात्रों की भाँति इस प्रकार की सुविधायें दूरवर्ती-छात्रों को निरन्तर अध्ययन केन्द्र पर दी जाती है।

नोट

अध्ययन केन्द्र निरन्तर छात्रों के अध्ययन के लिए खुले रहते हैं। छात्र सेमिनार, अध्ययन तथा परामर्श हेतु अध्ययन केन्द्र पर आते रहते हैं। इन केन्द्रों के खुलने का समय निर्धारित किया जाता है। इसमें छात्रों की सुविधा हो, तथा जो भवन किराये पर लिए गए हैं उनकी उपलब्धता को भी ध्यान में रखा जाता है शिक्षक तथा अन्य कर्मचारी भी अंश कालिक होते हैं और परम्परागत शिक्षा संस्थाओं में इनकी व्यवस्था की जाती है। अध्ययन केन्द्र अवकाश के दिनों में अथवा सामान्य समय के अतिरिक्त समय में खोले जाते हैं। इस प्रकार सायंकाल तथा रविवार को यह केन्द्र खोले जाते हैं। दूरवर्ती शिक्षा में सेवारत छात्र होते हैं। इसलिए अवकाश के दिनों में इन केन्द्रों को खोला जाता है।

अधिकांश इस प्रकार के अध्ययन केन्द्र विद्यालयों तथा शिक्षा संस्थाओं में होते हैं। दूरवर्ती-छात्रों का शिक्षण सायंकाल तथा अवकाश के दिनों में ही किया जाता है। अध्ययन-कक्ष पूर्णत: आवश्यक शिक्षण सामग्री से सुसज्जित रहता है। अलग से कोई व्यवस्था नहीं करनी पड़ती है। माध्यमिक विद्यालय तथा महाविद्यालयों में यह केन्द्र अधिक उपयोगी होते हैं, क्योंकि दूरवर्ती-छात्र अधिकांश प्रौढ़ होते हैं।

शिक्षा संस्थाओं के अतिरिक्त अन्य प्रकार की संस्थाओं पर इस प्रकार अध्ययन केन्द्रों का संचालन किया जाता है, परन्तु इन संस्थाओं पर शिक्षण सामग्री की व्यवस्था करनी होती हैं। इसलिए इन्हीं संस्थाओं पर अध्ययन केन्द्रों का संचालन प्रत्येक दृष्टि से उचित तथा मित्तव्ययी होता है।

दूरवर्ती शिक्षा के निर्धारण के लिए कुछ मानदण्डों को ध्यान मे रखना चाहिए। अमुक अध्ययन केन्द्र पर अनुमानित छात्रों की संख्या कितनी होगी जो उस केन्द्र पर अध्ययन हेतु आयेंगे। उस केन्द्र पर पहुँचने के लिए छात्रों को कितनी दूरी तय करनी होगी तथा पहुँचने के साधन उपलब्ध होंगे अथवा नहीं होंगे। यात्रा व्यय छात्रों को कितना करना होगा, उनकी पहुँच के अन्तर्गत होना आवश्यक होता है, तभी अध्ययन केन्द्रों का लाभ दूरवर्ती-छात्रों को मिल सकेगा। दूरवर्ती-छात्र कब-कब अध्ययन के लिए आना चाहेंगे। इन सभी प्रश्नों के उत्तरों के बाद ही निर्णय करना होगा कि अमुक विद्यालय को अध्ययन केन्द्र बनाया जाये अथवा नहीं, परन्तु प्रत्येक छात्रों के लिए किसी भी स्थान को सुगम बनाना सम्भव नहीं है। अत: अधिकांश छात्रों की सुविधओं को ही ध्यान में रखा जा सकता है। इस प्रकार के छात्रों के लिए अन्य माध्यमों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

शिक्षण सामग्री

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण सामग्री तथा अन्य सुविधाओं की भी आवश्यकता होती है, प्रधानाचार्य तथा विद्यालय के शिक्षकों की सहमति तथा सहयोग भी अपेक्षित होता है, क्योंकि विद्यालय की प्रयोगशाला तथा अन्य शिक्षण सामग्री मानचित्र, चार्ट आदि का भी उपयोग किया जाता है। शिक्षा संस्थाओं में ही यह सुविधायें उपलब्ध होती हैं। अन्य संस्थाओं में यह सुविध

नोट

परन्तु इस प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था संस्थाओं द्वारा नहीं हो पाती हैं। इसलिए भी छात्र इस कार्यक्रम का लाभ नहीं उठा पाते हैं। जिन केन्द्रों पर इस प्रकार की सुविधायें उपलब्ध होती हैं वहाँ अकिांश छात्र इस कार्यक्रम का लाभ उठाते हैं। दूरवर्ती-छात्रों को रहने के लिए आवास की कठिनाई रहती है।

व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम की व्यवस्था में इन समस्याओं का ध्यान रखना होगा तभी दूरवर्ती-छात्र इसका पूरा लाभ उठा सकते हैं। सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था छुट्टियों के दिनों में की जानी चाहिए, जिससे सेवारत छात्रों को अवकाश न लेना पड़े, सम्पर्क कार्यक्रमों के केन्द्रों की संख्या भी अधिक होनी चाहिए।

व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम की अवधि

पत्राचार शिक्षा के विद्यार्थी सम्पर्क कार्यक्रम के महत्व की सरहाना करता है कि उन्हें इस कार्यक्रम से पाठ्यवस्तु को समझने में सरलता एवं सुगमता मिलती है। दूरवर्ती छात्रों का यह भी सुझाव होता है कि इसकी अवधि कम है, इस अवधि को बढ़ा देना चाहिए। भारतवर्ष में विभिन्न दूरवर्ती शिक्षा की संस्थाओं के सम्पर्क कार्यक्रम के अवधि में भारी भिन्नता है। 2-3 दिन से लेकर 15 दिन तक की अवधि के लिए सम्पर्क क्रम किये जाते हैं कुछ संस्थायें पाठ्यवस्तु की आवश्यकता की दृष्टि से 20 से 30 दिन की अवधि के लिए सम्पर्क कार्यक्रमों का आयोजन करती है। अवधि का समय अधिक कर देने से छात्रों को अवकाश की कठिनाई होती है। यदि छात्रों को आवासीय तथा यातायात की सुविधायें उपलब्ध कर दी जायें तब छात्रों की संख्या निश्चित रूप से अधिक हो सकती है। सभी छात्रों को सम्पर्क कार्यक्रम का लाभ मिल सकता है।

प्रयोगशाला, पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों की सुविधायें

दूरवर्ती शिक्षा संस्थायें विज्ञान तथा तकनीकी विषयों के शिक्षण की भी व्यवस्था करने लगी है, जिसके लिए उन्हें प्रयोगशाला को सुविधा देनी होती है। इसके लिए अपनी स्वयं की प्रयोगशाला स्थापित करनी होती है या अन्य संस्थाओं की प्रयोगशाला की सहायता लेनी होती है। इस प्रयोगशाला का उपयोग दूरवर्ती-छात्र अवकाश के दिनों में ही करते हैं। विज्ञान तथा तकनीकी विषयों को समझाने की दृष्टि से प्रयोग किए जाते हैं। सम्पर्क कार्यक्रम में प्रदर्शन भी किए जाते हैं। इन विषयों के शिक्षण हेतु प्रयोगशाला की सुविधा होना आवश्यक होता है।

दूरवर्ती शिक्षा के लिए पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों की भी स्थापना करना आवश्यक होता है। सम्पूर्ण कार्यक्रम में शिक्षक अध्यापन सम्बन्धी जो निर्देशन देता है। उसकी पूर्ति पुस्तकालयों से की जा सकती है। कुछ संस्थाओं ने इस प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था अध्ययन-केन्द्रों पर की है। शिक्षा संस्थाओं के पुस्तकालय का भी उपयोग करते हैं।

अध्ययन केन्द्र

अध्ययन केन्द्रों का स्वरूप एवं कार्य विभिन्न संस्थाओं से अलग-अलग होते हैं। फिर भी इनकी उपयोगिता की दृष्टि से सामान्य विशेषतायं होती हैं–

अध्ययन केन्द्रों का अर्थ

अध्ययन केन्द्र दूरवर्ती शिक्षा की सहायक प्रणाली का ही अंग होता है। इस प्रणाली की अध्ययन सम्बन्धी मूल सहायता इन्हीं केन्द्रों द्वारा दी जाती है। पाठ्यवस्तु सम्बन्धी सहायता,

छात्र क्रियाकलाप

1. दूरवर्ती शिक्षा की सहायक प्रणाली का अर्थ बतायें?

2. दूरवर्ती-शिक्षा प्रबन्ध और छात्रों की सहायता सेवा क्या है? बतायें।

नोट

व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम

दूरवर्ती शिक्षा में 'व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम' सहायक प्रणाली का कार्य करता है। इस प्रकार के कार्यक्रमों की व्यवस्था इसलिए की जाती है। जिससे छात्रों एवं शिक्षकों के मध्य अन्त:प्रक्रिया हो सके और छात्र अपनी कठिनाइयों हेतु निर्देशन तथा समाधान प्राप्त कर सकें। इन कार्यक्रमों से छात्रों को शैक्षिक लाभ होता है। और शिक्षकों से सम्पर्क होता है। छात्रों की भावनाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, जिससे उन्हें स्वास्थ्य हेतु पुनर्बलन तथा मार्गदर्शन मिलता है।

सम्पर्क कार्यक्रमों में छात्रों की अध्ययन सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास किया जाता है, परन्तु इस कार्यक्रम का छात्रों को तभी लाभ होता है जब छात्रों ने पाठ्यक्रम सामग्री का पहले स्वाध्याय किया हो अध्ययन सम्बन्धी विशिष्ट कठिनाइयों का ही स्पष्टीकरण किया जाता है। सम्पर्क कार्यक्रम की अवधि सीमित होती है। इसलिए सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु का शिक्षण करना सम्भव नहीं होता है।

सम्पर्क कार्यक्रम में उपस्थित

कुछ व्यावसायिक पाठ्यक्रमों तथा पुस्तकालय डिप्लोमा पाठ्यक्रम को छोड़ कर अन्य सभी पाठ्यक्रमों में छात्रों की उपस्थिति अनिवार्य नहीं होती है। छात्रों की इच्छा पर निर्भर करता है, वह चाहे तो सम्पर्क कार्यक्रम में सम्मिलित हों अथवा न हों। कुछ संस्थायें सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था भी नहीं करती हैं। विभिन्न संस्थायें सम्पर्क कार्यक्रम की प्रभावशीलता अपने-अपने ढंग से देखती हैं। कुछ इसे आवश्यक समझती हैं, कुछ नहीं समझती हैं।

जहाँ तक सम्पर्क-कार्यक्रम की उपयोगिता और प्रभावशीलता का प्रश्न है, सभी इसे मानते हैं, परन्तु संस्थाओं की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। वित्तीय साधनों का अभव होने तथा पर्याप्त शिक्षक उपलब्ध न होने के कारण व्यवस्था नहीं कर पाते हैं।

दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं के समक्ष विभिन्न प्रकार की कठिनाइयाँ तथा बाधायें होती हैं, जिस कारण से 'सम्पर्क कार्यक्रम' की व्यवस्था नहीं करते हैं–

अपर्याप्त वित्तीय सहायता

सामान्य रूप से व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था उन्हीं स्थानों पर की जाती है। जिन स्थानों पर छात्रों की संख्या 200 के लगभग हो। इसलिए सम्पर्क केन्द्रों की संख्या भी सीमित होती है। इस कारण अधिकांश छात्रों को सम्पर्क कार्यक्रम का लाभ नहीं होता है। यदि वित्तीय सहायता पर्याप्त उपलब्ध हो तो सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था अधिक स्थानों पर की जा संकती है।

अवकाश न मिलने की कठिनाई

दूरवर्ती शिक्षा में अधिकांश छात्र सेवारत होते हैं, इसलिए उन्हें सम्पर्क कार्यक्रम हेतु अवकाश की आवश्यकता होती है। इतने लम्बे समय का अवकाश नहीं मिलता है। परिणाम यह होता हे कि अवकाश न मिलने के कारण कार्यक्रम के लाभ से वंचित रह जाते हैं।

यातायात तथा आवास की समस्या

सम्पर्क कार्यक्रम के लिए छात्रों को यातायात तथा आवासीय सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए,

तथा माध्यमों हेतु तकनीशियनों की आवश्यकता होती हैं। परन्तु इस प्रकार के कर्मचारियों की नियुक्तियाँ नहीं की जाती हैं। औपचारिक शिक्षा के कर्मचारियों से वेतनमान भी कम होते हैं।

सम्पर्क सेवाओं का भुगतान

नोट

दूरवर्ती शिक्षा की आदर्श परिस्थिति यह होती है, कि समस्त क्रियाओं की व्यवस्था संस्था के अन्तर्गत की जाए, परन्तु 'विश्वविद्यालय अनुदान आयोग' तथा विश्वविद्यालय के स्वरूप के अन्तर्गत सभी क्रियाओं हेतु सुविधायें तथा अर्थव्यवस्थ नहीं की गई है। इसलिए पत्राचार-शिक्षा के अनेक कार्य सम्पर्क कार्यक्रम सेवाओं के माध्यम से किए जाते हैं, जैसे–मुद्रणन का कार्य, व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम, सम्पर्क सेवाओं से ही किया जाता है। इनका भुगतान समय पर नहीं होता है। या निम्न दर से किया जाता है। इसलिए इसकी क्रियाओं में गुणवत्ता नहीं रहती है। भुगतान हेतु कोई मानक भी विकसित नहीं हुआ है।

पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों का विकास

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने इस प्रकार केन्द्रों के विकास पर बल दिया है। तथा मानक भी निर्धारित किया गया है। इस प्रकार के केन्द्रों का लक्ष्य यह है, पाठ्य-सामग्री के अतिरिक्त अच्छी पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं तथा निर्देशन व परामर्श की सुविधाओं को दूरवर्ती-छात्रों को उपलब्ध करा सकें। इसके लिए अच्छा भवन, कक्षायें तथा शिक्षक आदि की सुविधायें मूल आवश्यकतायें हैं।

शैक्षिक दृष्टि से दूरवर्ती-छात्रों के लिए इस प्रकार की सुविधायें अत्याधिक उपयोगी होती हैं। इन सुविधाओं से औपचारिक शिक्षा के अभव की पूर्ति होती है। अध्ययन केन्द्रों तथा पुस्तकालय की सुविधायें परास्नातक छात्रों के लिए अधिक उपयोगी होती हैं, परन्तु दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं द्वारा जो अध्ययन सामग्री भेजी जाती हैं, वह छात्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करती है।

जनसमूह माध्यमों से सोफ्टवेयर तथा हार्डवेयर का विकास

कुछ विशेषज्ञों का विचार है कि दूरवर्ती-शिक्षणे हेतु शैक्षिक दूरदर्शन का उपयोग करना चाहिए। अध्ययन सामग्री को टेप करके अध्ययन केन्द्रों पर पहुँचना चाहिए। पूना विश्वविद्यालय इस दिशा में अधिक प्रयास कर रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की समिति ने इसके शैक्षिक कार्यक्रमों का अवलोकन किया तथा स्नातक स्तर के छात्रों के लिए संस्तुति भी की है। शिक्षा के प्रसार तथा संचार हेतु दृश्य-टेप प्रयुक्त किये जायें। इसके लिए सोफ्टवेयर सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है। इस विचार को व्यावहारिक बनाने हेतु आर्थिक सहायता की आवश्यकता होती है।

व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम

दूरवर्ती शिक्षा की प्रमुख सहायक प्रणाली व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम है। शैक्षिक दृष्टि से यह आवश्यक है कि शिक्षक पाठ्यवस्तु को तैयार करके सम्पर्क कार्यक्रम शिक्षण करे।

दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं के शिक्षकों को इस कार्यक्रम के आयोजन की स्वतंत्रता होनी चाहिए। शिक्षक कार्यक्रम स्वयं तैयार करे और छात्रों की सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों को भी ध्यान में रखें। इसमें संस्था को पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। छात्रों की आवश्यकतानुसार विषयों की शिक्षण अवधि को निर्धारित करना चाहिए।

नोट

दूरवर्ती शिक्षा की सहायक प्रणाली

दूरवर्ती शिक्षा परम्परागत शिक्षा प्रणाली का एक विकल्प मानते हैं प्रत्येक शिक्षा प्रणाली की अपनी व्यवस्था तथा अपना स्वरूप होता है। पिछले अध्यायों में दूरवर्ती शिक्षा के अर्थ, सिद्धान्त माध्यम, व्यवस्था तथा अनुदेशन प्रणाली का वर्णन किया गया है, प्रत्येक शिक्षा प्रणाली की सहायक व्यवस्था महत्वपूर्ण पक्ष माना जाता है। इसका विकास शिक्षण समस्याओं के सुधार तथा कठिनाइयों के निराकरण हेतु किया गया है। प्रत्येक शिक्षा प्रणाली अपना लक्ष्य, स्वरूप, सामाजिक प्रणाली, सहायक प्रणाली तथा मूल्यांकन प्रणाली होती है।

सहायक प्रणाली का अर्थ

शिक्षा की सहायक प्रणाली सामान्य स्वरूप से अतिरिक्त आवश्यक होती है। इसका सम्बन्ध छात्र शिक्षक अन्त:प्रक्रिया से होता है। इसके अन्तर्गत छात्रों को निर्देशन दिया जाता है। तथा छात्रों की कठिनाइयों के लिए सुधारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। अध्ययन केन्द्रों पर छात्रों को पुस्तकालय की सुविधा दी जाती हे। अनुवर्ग शिक्षण किया जाता है।

दूरवर्ती शिक्षा की सहायक प्रणाली का वर्णन इस प्रणाली की समस्याओं की दृष्टि से किया गया है। इन समस्याओं को दो वर्गों में विभाजित किया गया है–

1. दूरवर्ती शिक्षा की व्यापक समस्याएँ,
2. दूरवर्ती शिक्षा की विशिष्ट/सूक्ष्म समस्याएँ।

दूरवर्ती शिक्षा की विकासात्मक समस्याएँ

दूरवर्ती शिक्षा की विकासात्मक अनेक समस्यायें हैं, परन्तु कुछ प्रमुख समस्याओं का उल्लेख यहाँ किया गया है–

शैक्षिक कार्यकर्त्ता

दूरवर्ती शिक्षा की स्वतन्त्र संकाय होनी चाहिए, जिसके अन्तर्गत प्रोफेसर, रीडर तथा प्रवक्ता नियुक्त किये जायें। इन पदों के चयन के समय विशिष्ट प्रवणता के अभ्यर्थियों को नियुक्त किया जाये, तथा अध्ययन तथा अनुदेशन सामग्री को लिखने का कौशल होना चाहिए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को दूरवर्ती शिक्षा के अलग से शैक्षिक कार्यकर्त्ताओं के लिए रूपरेखा तैयार करनी चाहिए, इन्हें विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, इसके लिए भी अलग से व्यवस्था की जानी चाहिए।

गैर-शैक्षिक कर्मचारी

दूरवर्ती शिक्षा में गैर-शैक्षिक कर्मचारी डाक व्यवस्था में कुशल होने चाहिए। अभी तक इस दिशा में गम्भीरता से विचार नहीं किया गया है। इसके लिए कोई मानक भी विकसित नहीं हुआ है।

गैर-शैक्षिक कर्मचारियों को अध्ययन सामग्री, तथा गृह-कार्यों को भेजना और पुस्तकालय व अध्ययन केन्द्रों की व्यवस्था के मुख्य कार्य होते हैं। इसके अतिरिक्त व्याख्यानों को रिकॉर्ड करना होता है। परीक्षा तथा मूल्यांकन का आयोजन करना होता हैं इसके लिए अलग से कोई नियुक्तियाँ भी नहीं होती हैं, और इन्हें कोई विशिष्ट प्रशिक्षण भी नहीं दिया जाता है।

पत्राचार शिक्षा के लिए प्रूफ रीडर, कार्टोग्राफर, डिजाइनर, पाठ्य-सामग्री को रखने वाले

क्षेत्रीय व अध्ययन केन्द्र

नोट

विद्यार्थियों को अध्ययन में सहयोग देने के उद्देश्य से प्रशिक्षण केन्द्रों तथा शिक्षण क्षेत्रों का एक जाल सा फैलाया गया हे। पूरा क्षेत्र पाँच क्षेत्रों (रीजन्स) में बाँटा गया है। उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम तथा केन्द्र का भाग। अभी तक 60 केन्द्र हैं जिन्हें 100 तक बढ़ाने का निणय लिया गया है। एक स्टैडी सैण्टर किसी शिक्षा संस्था में बनाया जाता हे उसमें एक पुस्तकालय, एक दृश्य श्रव्य उपकरण तथा एक कॉन्सलर होता है जिसका कार्य इस सैण्टर प्रधान एक समन्वयक होता है जिसका कार्य अध्ययन केन्द्र का प्रबन्ध करना होता है। मुख्य अध्ययन केन्द्र निम्नलिखित हैं–

1. दक्षिण में हैदराबाद, त्रेवेन्द्रम, बैंगलौर, मद्रास मुख्य अध्ययन केन्द्र हैं। इसमें हैदराबाद से जुड़ा हुआ तिरूपति तथा विजयवाड़ा के केन्द्र हैं तथा मद्रास से जुड़ा हुआ कोयम्बटूर का केन्द्र है।
2. पूर्व में, गुहाटी, कलकत्ता, भुवनेश्वर व कटक के मुख्य प्रशिक्षण केन्द्र हैं तथा गुहाटी से जुड़े हुए इम्फाल तथा शिलांग के केन्द्र हैं।
3. पश्चिम में अहमदाबाद का मुख्य केन्द्र तथा उससे जुड़ा हुआ बड़ोदरा का केन्द्र है। बम्बई का मुख्य केन्द्र तथा जुड़ा हुआ मारगोआ एवं पूना का केन्द्र है।
4. उत्तर में श्रीनगर, जम्बूतावी, चण्डीगढ़, शिवाजी कॉलिज दिल्ली, विश्व युवक केन्द्र नई दिल्ली, तथा श्री वेंकटेश्वर कॉलिज नई दिल्ली के मुख्य केन्द हैं तथा शिमला, कुरुक्षेत्र, जयपुर, देहरदून के जुड़े हुए उपकेन्द्र हैं।
5. केन्द्र में पटना, भोपाल, जबलपुर, वाराणसी के मुख्य केन्द्र एवं ग्वालियर, दूर्ग, लखनऊ, इलहाबाद, कानपुर आगरा बरेली उपकेन्द्र हैं।

इन प्रशिक्षण केन्द्रों का कार्य क्षेत्रीय केन्द्रों से सम्बन्ध बनाए रखना है। क्षेत्रीय केन्द्रों का अध्यक्ष क्षेत्रीय निदेशक होता है जिसकी सहायता के लिए पूर्ण-कालिक कार्यकर्त्ताओं को रखा जाता हे। विद्यार्थियों को छूट है कि वे किसी भी कार्यरत शिक्षण संस्था को अपने गृह कार्य और प्रत्युत्तर भेजने के लिये चयन कर लें। क्षेत्रीय केन्द्रों का कार्य विद्यार्थी द्वारा भेजे गये उत्तरों तथा सूचनाओं जिज्ञासाओं का निवारण करना है। विद्यार्थियों की कठिनाइयों को हल करने के लिये दो या दो से अधिक दिनों का एक कार्यक्रम सप्ताह में एक बार रखा जाता है जिसमें उनसे मिलकर कार्य किया जाता है। कुछ 'अ-अध्ययन केन्द्र' भी हैं जिनमें विद्यार्थियों द्वारा भेजे गये गृह कार्यों की जाँच करके भेजा जाता है।

पाठ्य-सामग्री की रचना

सर्वप्रथम एक कार्यक्रम को नामांकित किया जाता है फिर उसकी रचना दूसरे विश्वविद्यालयों के विशेषज्ञों की सहायता से की जाती है। एक बार कार्यक्रम की अनुमति के बाद एक विषय दल की नियुक्ति की जाती है, जिसमें एक लेखक और एक एडीटर होता है, जिसका कार्य समन्वय करना है। विषय-वस्तु पारम्परिक विश्वविद्यालयों के विशेषज्ञों के दल के द्वारा तैयार किया जाता है। उनकी सहायता के लिये शिक्षा तकनीकी के विशेषज्ञ होते हैं, जो दूरवर्ती शिक्षा विभाग से चुने जाते हैं। दृश्य-श्रव्य सामग्री का (पैकेज) भी उन्हीं के द्वारा निश्चित किया जाता है।